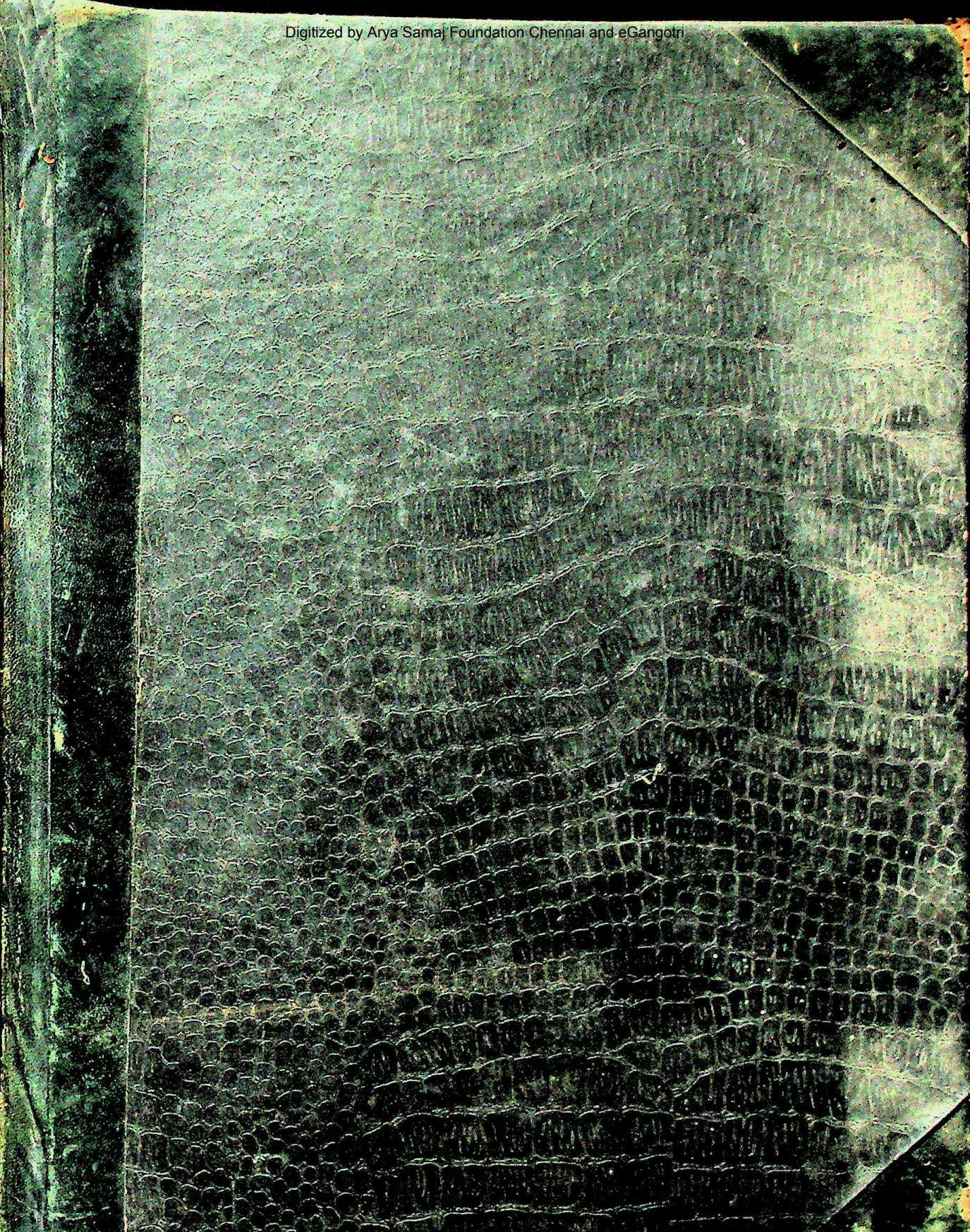




131667



131667

रजिस्टर्ड नं० पेंल० ८५३

100

उषा

लाहौर ।



131667

वार्षिक मूल्य ३)

सम्पादक--सन्तराम बी. ए.

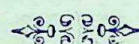
प्रति संख्या 1)

लेख-सूची ।

(१) मनुष्य समाज की वृद्धि—(१)ले० श्रीयुत बाल- कृष्ण एम. ए. F.R.S.S., M.S.S.A.etc. प्रोफेसर गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार ...	४१
(२) मातृ-भूमि (पद्य)—ले० पं० लोचनप्रसाद पाण्डेय	४५
(३) व्याघ्राचार्य बृहल्लिंगूल (कथा)—ले० राय बहादुर बाबू बंकिमचन्द्र चटर्जी बी.ए.,सी.आई.ई.४७	४७
(४) काम-रहस्य—ले० पं० विजयानन्द तिवारी, भैरवी, काशी धाम ...	५४
(५) ऋतुराज वसन्त (गीत)—ले० पं० दीनानाथ शर्मा शास्त्री ...	५७
(६) गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार—ले० म० गोपाल- दासजी बी. ए. ...	५८
(७) बीज परम्परा का नियम (Heredity)— (२) ले० श्रीयुत कर्मनारायणजी एम. एस. सी. ६१	६१
⊗ नारी उपयोगी पृष्ठ ⊗	
(८) धर्म-पत्ति के नाम पत्र—ले० श्रीयुत श्री भगवान बी. ए. ...	६५
(९) बच्चों की बढ़ती हुई मृत्यु—डाक्टर यू. एल. देसाई एम. डी. ...	६७
(१०) स्त्रियों की शारीरिक अवस्था—	६७
(११) ऊनी कोयों को धोना—	७०
(१२) कपड़े धोने का देशी साबन बनाने की विधि	७१
(१३) फिरंगी—	७२
(१४) बेटी की विदा (पद्य)—ले० श्रीयुत कामता- प्रसाद गुरु ...	७२
(१५) विविध-विषय—	७४

उपा के नियम ।

- १-‘उपा’ प्रति मास प्रकाशित हुआ करेगी ।
- २-मूल्य सदा पहले लिया जायगा ।
- ३-‘उपा’ में छपन के लिये सब लेख सम्पादक,
उपा, लाहौर, के पते पर आने चाहिये ।
- ४-लेखों के काटने, छानने, छापने या न
छापने का सम्पादक को पूरा अधिकार होगा
- ५-अस्वीकृत लेख टिकट आने पर ही लौटोय
जा सकते हैं ।
- ६-पत्र लिखते समय ग्राहकों को अपनी ग्राहक
संख्या अवश्य लिखनी चाहिये । और नये
ग्राहकों को अपना नाम और ठिकाना साफ
साफ अक्षरों में लिखना चाहिये ॥



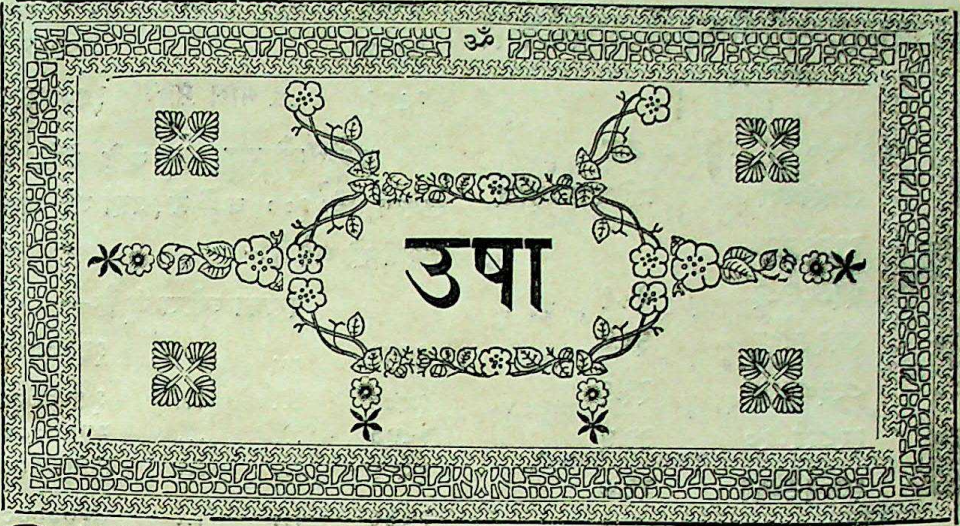
उपा में विज्ञापन की छपाई के नियम ।

प्रतिमास प्रतिवर्ष

- | | | |
|---------------------|---------------------|----------|
| १ पृष्ठ | या दो कालम के लिये | ३) ३०) |
| $\frac{1}{2}$ पृष्ठ | या एक कालम के लिये | १।।) १६) |
| $\frac{1}{4}$ पृष्ठ | या आधा कालम के लिये | १) ८।।) |
- नोट—एक कालम से कम स्थान में विज्ञापन
छपाने वाले को उपा बिना मूल्य नहीं दी जाती।
पत्र व्यवहार निम्न लिखित पते से कीजिये:-

प्रबन्धकर्त्ता—“उपा”,

लाहौर रोड, लाहौर ॥



उषा

मासिक पत्रिका

भाग १

फाल्गुण १९७०—फरवरी १९१४

संख्या २

मनुष्य समाज की वृद्धि जनसंख्या-वृद्धि की विचित्रता ।



सार में जितने जीवधारी पदार्थ हैं उनमें सन्तानोत्पत्ति की महाशक्ति विद्यमान है । यदि कोई बाधक कारण न हो तो एकाकी एक ही पदार्थ इस भूमि पर सम्पूर्णतया फैल जावे—प्रत्येक पौदे में

भी इसी प्रकार की महती शक्ति वर्तमान है । देखिये जानवरों में हाथी बहुत शनैः उत्पादक जीव है, यदि उस की उत्पादक शक्ति ३०-९०

वर्ष पर्यन्त समझी जावे और इन ६० वर्षों के समय में ६ वस्त्रे उत्पन्न हों तो भी ७३० वर्षों के अन्तर में इस भूमि पर एक जोड़े से १ कोटि ९० लक्ष की संख्या में हाथी हो जावेंगे !! मनुष्य बड़ा शीघ्र उत्पादक जीव है—अपरिमित शक्ति सम्पन्न मनुष्य प्रतीत होता है—यदि थोड़े विघ्न जन संख्या के बाधक हों जैसे अमेरिका में, तो १२ से २५ वर्षों के अन्तर में जन संख्या द्विगुण हो जावेगी । निरन्तर १५० वर्षों तक अमेरिका वासियों की जन संख्या २५ वर्षों में दुगुनी होती गई, अब ४० वर्षों में दुगुनी हो रही है ॥

संयुक्त प्रान्त अमैरीका में जनसंख्या की वृद्धि ।

१७९० से १८०० तक

वर्ष	जनसंख्या	प्रतिशतकवृद्धि
१७८०	३९२९२१४	
१८००	५३०८४८३	३५.१
१८१०	७२३८८८१	३६.४
१८२०	८६३८४५३	३३.१
१८३०	१२८६६०२०	३३.५
१८४०	१७०६८४५३	३२.७
१८५०	२३१८१८७६	३५.८
१८६०	३१४४३३२१	३५.६
१८७०	३८५५८३७१	२२.६
१८८०	५०१५५७८३	३०.१
१८९०	६२६२२२५०	२४.९
१९००	७५५६१६८६	२०.७

जापान जैसे विजयी देश की जनसंख्या

१८८१ई० से इस प्रकार बढ़ी है ।

१८८८	...	...	३८६०००००
१८८३	...	...	४१४००००००
१८०३	...	...	४६७३२१२८
१८०८	...	...	४८३३००००

अर्थात् २० वर्षों में ही १००००००० जीवों की वृद्धि हुई । यदि जन वृद्धि की यही मात्रा रहे तो लग भग ७८ वर्षों में जापान की आवादी दुगुनी हो सकेगी ॥

इङ्ग्लैण्ड में १८०० से १८०१ तक ४ गुणा जन संख्या हो गई अर्थात् ५० वर्षों में दुगुनी होती गई ।

इसका व्यौरा यूं है ।

१८०१	...	...	८८९२५३६
------	-----	-----	---------

१८५१	...	...	१७८२७६०८
१८०१	...	...	३२५२७८४३
१८११	...	...	३६०७५२६८

सारे योरुप में यदि देखें तो पता लगेगा कि १०० वर्षों में वहां भी जन संख्या दुगुनी हो गई है:-

इसका व्यौरा यूं है:-

१७६२	...	...	१३०००००००
१८००	...	...	१७५००००००
१८५०	...	...	२५५००००००
१८८६	...	...	३४५७०००००
१९०५	...	...	४२०००००००

गत १०० वर्षों में भूगोल की जन वृद्धि का चित्र मनोरञ्जक होगा, उससे स्पष्ट ज्ञात होगा कि १०० वर्षों से भी कम काल में दुगुनी से भी अधिक आवादी भूगोल में हो गयी है । नीचे के अंकों में ०००००० छोड़ दिये हैं ।

नाम देश	१८१०	१८२८	१८४५	१८७४	१८८६	१९०५
गोथा				बेहम	लेवेसार	...
बाल्बी				वैगनर		
मिचेलो						
योरुप	१८०	२१४	२४५	३०१	३४७	४२०
अमैरीका	२१	४०	५०	८५	११२	१६०
एशिया	३८०	४८१	६२०	७६८	८२२	८५०
ऐफ्रीका	९९	१०९	९०	२०३	१८७	१३०
आस्ट्रेलिया	२	३	४	४	५	५
	६८२	८४७	१००९	१३९१	१४८३	१६१०

भारतवर्ष—अपने निर्धनी भारत में

भी १८२० से १८९१ तक ११ कोटि जीवों की वृद्धि हुई है—वस्तुतः यह जन संख्या-वृद्धि की घटना बड़ी विचित्र है ! कल्पना करो कि कतिपय बाधक कारणों के दूर हो जाने से आर्य-वर्त की आबादी १०० वर्षों में द्विगुण होने लगे तो आगामी १००० वर्षों में वृद्धि का व्योरा यूँ होगा :—

वर्ष	जन संख्या
१९००	३१० ००० ०००
२०००	६२० ००० ०००
२१००	१२४० ००० ०००
२२००	२४८० ००० ०००
२३००	४९६० ००० ०००
२४००	९९२० ००० ०००
२५००	१९८४० ००० ०००
२६००	३९६८० ००० ०००
२७००	७९३६० ००० ०००
२८००	१५८७२०००० ०००
२९००	३१७०४०००० ०००

अर्थात् भारत की जन संख्या १००० वर्षों में १००० गुणा हो सकती है, यदि १०० सालों में भी दुगनी हो जावे ! इस समय संसार की आबादी भारत से केवल ५ गुणा अधिक है इसलिये केवल १ हजार वर्षों में भारत की फैली हुई आबादी अब के संसार की सम्पूर्ण आबादी से २०० गुणा अधिक हो सकती है ॥

जन वृद्धि के विषय में विदेशितया सम्माने की आवश्यकता है क्योंकि—

जन संख्या

वृद्धि के प्रश्न

के महत्व के

कारण

क—भूमि परिमित है उस का $\frac{3}{4}$ भाग जलस्थ है और स्थल का भी पर्याप्त भाग पर्वतों, नदियों, मरुस्थलों दलदलों आदिने घेर रक्खा है। ऐसा होते हुए मनुष्य

में सन्तान वृद्धि की महती शक्ति विद्यमान है। अर्थात् भूमि की परिमिति तथा सन्तान वृद्धि में विरोध है।

ख—मनुष्य में एक बात देखी जाती है जो अन्य प्राणियों में नहीं देख पड़ती। हम कह चुके हैं कि प्रत्येक जानवर तथा वृक्ष में इस सम्पूर्ण पृथ्वी को ढाँप लेने की गुप्त शक्ति है। यह भी उस दशा में जबकि इन दोनों जीवों पर (Law of the survival of the Fittest)

‘योग्यों के बचने का नियम’ बल पूर्वक लगता रहता है अर्थात् अयोग्य निर्बल, रोगी, वृद्ध सब दूसरों से हनन किये हुए मर जाते हैं। परन्तु

मनुष्य उपर्युक्त नियम के आधीन नहीं है : मनुष्य में धर्माधर्म की विवेचना, दया, प्रेम आदि शुभ गुण हैं उनसे प्रेरित हुआ मनुष्य अन्य अयोग्यों निर्बलों रोगियों को कष्ट सह कर बचाता है, बलिष्ठ स्वयं मर कर क्षीणों को बचाता है नकि उनका हनन कर देता है ऐसी अवस्था में जन संख्या वृद्धि खूब हो सकती है ॥

ग—भूमि के परिमित होते हुए उस की उत्पात्ति पर क्रमागत हास नियम लगता है। यदि कृषि में बहुत प्रकार की उन्नतियाँ होती जावें और

कृषि सम्बन्धी शिल्पों में भी, तो भी यह कहना कठिन है कि २५ वर्षों में दुगुनी, ५० वर्ष में तिगुनी, ७५ में चौगुनी उत्पत्ति भूमि से कर लेंगे। सुप्रसिद्ध माल्थूस ने कहा कि जन संख्या की वृद्धि द्विगुणित अनुपात से होती है यथा

२, ४, ८, १६, ३२, ६४, १२८, २५६, ५१२, १०२४. परन्तु अनाज की वृद्धि व्यक्ति अनुपात (Arithmetical progression) से होती है,

२, ४, ६, ८, १०, १२, १४, १६, १८, २०.

भारत के लिये जन संख्या के प्रश्न का महत्व भारत के लिये यह तीसरा प्रश्न और भी आवश्यक है— अन्य सब देश वासियों को अपने देश से निकल कर अन्य देशों में जा बसने के लिये कोई बाधाएं नहीं। इंग्लैण्ड, फ्रांस स्पेन, इटली आदि देशों की जन संख्या के बढ़नेपर वहां के कुछ वासी अपने देशों को छोड़कर अमैरीका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका आदि देशों में जा बसते हैं अतः उन देशों में जन संख्या के बढ़ने से कोई घोर परिणाम नहीं निकल सकते। इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष सामाजिक धन तथा वैयक्तिक आय बढ़ती चली जाती है, अतः जन-संख्या-वृद्धि से उन्हें हानि की अपेक्षा लाभ ही लाभ है। किन्तु भारतकी दशा विचित्र है इस देशके वासियों को बाहर जाके बसने का अधिकार प्राप्त नहीं। अमैरिका, आस्ट्रेलिया, अफ्रीका निवासी आज तक कि चीन वासी भी यहां के वासियों

को धिक्कारते हैं। अतः यहां जितनी भी जन संख्या बढ़ेगी वह भारत की चार दिवारी ही में रहसकती है बाहर नहीं जा सकती, साथ ही यहां के वासियों की वैयक्तिक आय कईयों के विचारानुसार घटती जाती है और यहां की भूमि पर अधिक २ निवासियों का आधार होने के कारण तथा अन्य देशों के लिये भूमिज पदार्थों को भेजने के लिये बाधित होने के कारण भूमि पर क्रमागत हास नियम लग रहा है। भूमि का सत्य चूसा जा रहा है। अतः बढ़ी हुई जन संख्या के पास खाने का सामान भी होगा वा न यह प्रश्न भी आधुनिक जनता के सामने होना चाहिये, भारत के सम्बन्ध में यह तीसरी कठिनाई उक्त दो के विरुद्ध प्रतीत होती है। यह विरोधिनी घटना है कि इस देश में मुसलमानों और हिन्दुओं आदि भिन्न २ मत मतान्तरों का वास है। विशेषतया हिन्दू मुसलमानों का परस्पर बड़ा झगड़ा रहता है। पिछले दस सालों की जन संख्या रिपोर्ट (Report) के देखने से पता लगता है कि हिन्दू मुसलमानों से कम बढ़े हैं—ऐसी अवस्था में समय आ सकता है जब कि भारत में हिन्दू मुसलमानों की जन संख्या सम हो जावे, तब परस्पर ईर्ष्या द्वेष रखने वाले असंघटित और भ्रातृभाव-शून्य होते हुए हिन्दु लोग मुसलमानों के साथ कभी मुकाबला नहीं कर सकते, तब तो हिन्दू सर्वदा ही दासत्व के

रसातल में पड़ने के पात्र होंगे । अतः यदि
जन संख्या वृद्धि हो तो भोजन पदार्थ नहीं
मिलेंगे ! यदि हिन्दुओं की वृद्धि न हो तो
तीव्ररी कठिनाई (हिन्दुओं की न्यूनता तथा
सर्वनाश) उपस्थित होती है—एवं भारतरूपी
नौका बड़ी डाँवाडोल है ।

बालकृष्ण

(अपूर्ण)

मातृ-भूमि ।

(१)

पाया जन्म जहाँ हम तुम ने
वर्द्धित हुई जहाँ यह देह,
जहाँ जनक जननी रहती है
जहाँ शान्तिमय अपना गेह ।
जहाँ बन्धु बान्धव हैं अपने,
भाई, भगनी प्यारी है ।
मातृ-भूमि वह देव दुर्लभा,
भारत भूमि हमारी है ॥

(२)

उत्तर में है जहाँ हिमालय,
औषधियों का वर भण्डार ।
दक्षिण में मलयाचल सुन्दर,
चन्दन वन सौरभ सुखसार ।
विन्ध्य माल्य नीलादिक गिरि की
जहाँ प्रकृति छवि न्यारी है,
मातृ-भूमि वह देव दुर्लभा
भारत भूमि हमारी है ॥

(३)

गङ्गा यमुना की धारयें
पावन करती जिस का अङ्ग,
कृष्णा, सिन्धु, नर्मदा सरयू
जहाँ दिखाती लहर उमङ्ग ।
महानदी बहती है जिस में
जल जिसका रुज हारी है,
मातृ-भूमि वह देव-दुर्लभा
भारत भूमि हमारी है ॥

(४)

जहाँ छहों ऋतु यथा समय हैं
कमलः प्रकटाती निज रूप,
जहाँ विचरते वन कानन
उपवन में खग मृग वृन्द अनूप ।
जहाँ ललित कुंजों में कोयल
गान श्रवण सुखकारी है,
मातृ-भूमि वह देव-दुर्लभा
भारत भूमि हमारी है ॥

(५)

विविध रूप धारण कर हरिने
लिये जहाँ थे शुभ अवतार,
तिर्थ तपो वन जहाँ अमित है
महिमा जिन की अपरम्पार ।
जहाँ तपस्वी-कुल सु-यशस्वी
रहता जन हितकारी है ।
मातृ भूमि वह देव दुर्लभा
भारत भूमि हमारी है ॥

(६)

जिस के अन्न दुग्ध खा करके
होते मुग्ध हमारे प्राण,

जिस में रह कर हम कहलाते
 बुध वर आर्यों के सन्तान
 जिस का हम तुम सब पर भाई
 प्रीति पुण्य ऋण भारी है ।
 मातृ भूमि वह देव दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥

(७)

गो माता का पूजन घर घर
 जहां सविधि करते सब लोग,
 घृत गोरस वर दही तफ हैं
 हरते जहाँ विविध विध रोग ।
 वर्णाश्रम है जहां चतुष्टय ।
 द्विज-कुल धर्माचारी है ।
 मातृ भूमि वह देव दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥

(८)

वेद रूप ईश्वर की वाणी
 जहां सनातन है सुखमूल,
 षट् दर्शन के मुक्ति सुधा वर्षण
 से भव के मिटते शूल ।
 भारत रामायण शिक्षासूत
 जहां त्रिविध तप हारी है,
 मातृ भूमि वह देव दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥

(९)

आयुर्वेद धनुर्विद्या कृषि
 कला जहां की लख संसार
 होता है आश्चर्य चकित, है
 भरा जहां भाषा-भण्डार ।
 जिस के कवि पण्डित शूरों की
 प्रतिभा की बलिहारी है,

मातृ भूमि वह देव-दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥
 (१०)

सेवन करती जहां प्रजा थी
 निज नृपाल को पिता स्वरूप,
 प्राणों तक को तुच्छ समझते
 जहां प्रजाओं के हितभूष ।
 जहां प्रजा हित गई सगर्भा
 त्यागी जनक-कुमारी है ।
 मातृ भूमि वह देव-दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥
 (११)

ईश-भक्ति की राज-भक्ति की,
 देश-भक्ति की जो है भूमि,
 पितृ-भक्ति की मातृ-भक्ति की
 त्याग-शक्ति की जो है भूमि,
 “जहां सत्य जय वहां” जहां के
 नर-गण यह व्रतधारी है ।
 मातृ भूमि वह देव-दुर्लभा
 भारत भूमि हमारी है ॥

पाण्डेय लोचन प्रसाद

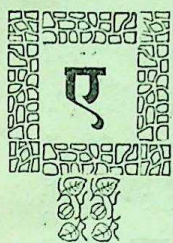
आचार्य हक्सले का अमूल्य वचन ।

सर्व साधारण की बुद्धियों को चाहे आप
 कितना ही विकासित कर दें, शिक्षा और अभ्यास
 के द्वारा चाहे उन्हें, कितना ही निपुण और चतुर
 बना दें, परन्तु यदि इन बाह्य आडम्बरों को छोड़
 कर वे वस्तुतः सर्वाङ्ग-पूर्ण मनुष्य नहीं बनें,
 यदि उनके अन्दर भलाई करने के लिये प्रबल
 इच्छा उत्पन्न नहीं हुई तो जानों आप का सारा
 परिश्रम सर्वथा निष्फल गया ॥

* व्याघ्राचार्य १ वृहत्पञ्चल ।

(वावू बंकिमचन्द्र चैटरजी वी० ए०, सी० आई० ई०

की एक कहानी का अनुवाद)



एक समय सुदूर वन के जङ्गल में
सिंहों की सहती सभा जुड़ी ।
वन के मध्य में एक उठे हुए रम्य
स्थान पर सिंहों की पङ्क्तियाँ
बैठीं । घने वन में उनके चमकते

हुए दान्त वीरता को प्रकट कर रहे थे । सर्व
सम्मति से अमितोदर नामक एक वृद्ध सिंह
सभापति नियत हुए । माननीय अमितोदर महो-
दय ने अपनी पूँछ के सहारे बैठकर बड़े गम्भीर
भाव से इस प्रकार सभा को सम्बोधन किया ॥

“ आज का दिन हमारी जाति के इतिहास
में चिरकाल तक स्मरण रहेगा । आज मैं अपने
सामने अपनी जगद्विख्यात, मांसभोजी, अति
प्राचीन तथा वनवासी जाति के प्रसिद्ध २ सभा-
सदों को सर्व हितकारक विषयों पर विचार
करने के लिये इकट्ठा हुआ देखता हूँ । शोक है
कि ईर्ष्या की अग्नि में जलने वाले कई दूसरे
निन्दक पशुओं ने ऐसा अपवाद फैलाया हुआ
है कि हम में परस्पर का मिलाप और एकता
नहीं, सब जङ्गल के अपने २ भाग में ही अलग-
रहते हैं । इस अपूर्व सभा का एक बड़ा प्रयोजन
यह है कि इस असार और नीच अपवाद को
भूट सिद्ध किया जाए । हमारी सभ्यता इतनी
तेज़ी से उन्नति कर रही है कि हम शीघ्र ही
वह दिन देखेंगे जब कि हमारी जाति संसार

भर में सब से ज्यादा सभ्य और सुशील गिनी
जायगी । मेरी बड़ी अभिलाषा है कि इस प्रकार
सभा में मिलकर विचार करने से हम अपने
पूर्वजों की तरह दूसरे पशुओं का सुख और
शान्ति से आखेट करने के योग्य हो जायें ।
(पूँछों को पृथ्वी पर मारने से हर्ष सूचक
ध्वनि) । प्रिय वन्धुवर्ग ! अब मैं आप को वह
विशेष कार्य बताता हूँ जिस के लिये आप
यहाँ बुलाये गये हैं । आप सब को मालूम होगा
कि कुछ काल से हमारी जाति के अन्दर शिष्टा-
चार की शिक्षा गिर रही है । यह एक ऐसी
बात है जिस की सत्यता में किसी को भी सन्देह
नहीं होसका, और इसका इलाज भी सहज ही
है । हमारे अन्दर शिक्षा के लिये एक सच्ची
अभिलाषा उत्पन्न हो चुकी है । यह कहने की
आवश्यकता नहीं कि इस समय अन्य सब जातियों
के पशु शिक्षित हैं । क्यों न हम इस उत्तम
उदाहरण का अनुकरण करें ? यह सभा अपनी
जाति की विद्या-सम्बन्धी आवश्यकताओं पर
विचार करने के लिये बुलाई गई है । इन थोड़े
से शब्दों के साथ मैं सभा की कार्यवाही को
आरम्भ करने की आज्ञा देता हूँ और आशा
करता हूँ कि जो जो आवश्यक विषय आपके
संमुख रखे जायेंगे आप उनपर अपने विचार
प्रकट करेंगे ” ॥

श्रोतागण ने अपनी ऊँची दहाड़ों और च-
ढ़ाड़ों से इस सन्क्षिप्त सी वक्तृता पर सन्तोष
प्रकट किया । तत्पश्चात् बहुत से प्रस्ताव पेश
हुए और अतीव लम्बी वक्तृताओं से उनका अनु-
मोदन हुआ । इन वक्तृताओं की भाषा यद्यपि

* शेरों का गुरु १ वड़ी पूँछ वाला ।

व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध और ललित्य पूर्ण थी तथापि यह मानना पड़ता है कि उनका उच्चारण बड़ा भयानक था। सच तो यह है कि इन धूआं धार वक्तृताओं से सारा वन गूंजता था। जब दूसरी बातें समाप्त हो चुकीं तो सभापतिजी पूंछ के बल उठ बैठे और बोले:—“निःसन्देह आप सब जानते हैं कि इस सिंह जाति में एक बड़े विद्वान् पण्डित जिन का शुभ नाम बृहल्लाङ्गूल है इन वनों में रहते हैं। इन्होंने बड़ी कृपा से आज रात को “मनुष्य का प्राकृतिक इतिहास” शीर्षक विषय पर एक लेख पढ़ना स्वीकार किया है”॥

“मनुष्य” का शब्द सुनते ही सभा में बैठे हुए कई नवयुवक सिंहों को भूक प्रतीत होने लगी, परन्तु प्रीति भोजन की सामग्री न देखकर उन्हें अपने मनोवेग को रोकना पड़ा। सभापति की आज्ञा पाकर माननीय व्याख्याता (लेक्चरर) विनीत भाव से घुरघराते हुए उठे, और एक ऐसी ऊंची स्वर से जिसे सुनकर कि पथिकों का कलेजा फटता था, निम्न लिखित भाषण करने लगे ॥

“सभापति महोदय, देवियों और सभ्यगण! एक लिहाज से मनुष्यों को हम दोपाए कह सकते हैं। परन्तु उनके पङ्क नहीं होते इसलिये वे पत्नी नहीं कहला सकते। दूसरी ओर चारपाओं से उनकी बहुत सी बातें मिलती हैं। उनके अङ्गों और हड्डियों का ढंग चौपायों जैसा है। यदि उनके शरीर की साधारण बनावट को देखा जाए तो मेरा विचार है कि उन्हें चौपाये पशु कहने में कोई हर्ज नहीं। इस में

सन्देह नहीं कि वे दूसरे चौपाए पशुओं जैसे सुन्दर और बलवान नहीं होते, परन्तु केवल इतनी ही बात के कारण उन्हें पत्नी या दूसरे दोपायों में गिनना उन के साथ अनर्थ करना है॥

चौपाये पशुओं में सब से ज्यादा वे वन्दरों से मिलते हैं। विज्ञानी लोग हमें बताते हैं कि पशुओं के लिये यह सम्भव है कि कई पीढ़ियों के पीछे वे अपने लुप्त हुए अङ्गों और गई हुई शक्तियों को पुनः प्राप्त कर लें और इस प्रकार प्राणि समाज में अपनी पदवी को उच्च बना लें। हम आशा कर सकते हैं कि मनुष्य भी अपने बढ़ते हुए विकास के द्वारा किसी दिन पूंछ को प्राप्त कर लेंगे और वन्दर की पदवी पा लेंगे ॥

कदाचित् आप सब को मालूम ही है कि मनुष्य बड़े स्वादु होते हैं और जल्दी पचजाने वाला तथा पुष्टिकारक भोजन हैं”। (इन शब्दों को सुनकर श्रोतागण अपनी जीहों को चाटने लगे) “आप यह भी जानते होंगे कि हमारी कुलीन जाति उनका सुगमता से ही शिकार कर सकती है। मृग की तरह वे तेज़ नहीं दौड़ सकते, और हमारे वनों के भैंसों की नाई न ही उनके पास सींग हैं और ना ही उनसे काम लेने की उनमें शक्ति। किसी भी समझदार व्यक्ति को इस में सन्देह नहीं हो सकता कि दयालु परमात्मा ने उन्हें सिंहों के खाने के लिये ही बनाया है इसीलिये तो उनको रक्षा या बचाओ की कोई सामग्री नहीं दी। यदि इस स्पष्ट कारण को न माना जायें तो यह सम्भव नहीं आता कि विधाताने ऐसी निर्बल और जीवन संग्राम के अयोग्य जाति को किस प्रयोजन की

पूर्ति के लिये उत्पन्न किया है । अच्छा अब अधिक विवाद न करते हुए इस बात को मान-लेते हैं कि मनुष्य भोजन के लिये अच्छी वस्तु हैं । सब से बड़ी आश्चर्य जनक बात यह है कि यह जन्तु हमारी जाति को भी उतना ही अधिक चाहते हैं जितना कि हम उन्हें चाहते हैं । यदि उपस्थित महाशयों में से किसी को इस में सन्देह हो तो इस विषय में मैं अपना अनुभव सुनाय देता हूँ । किसी प्रकार का अभिमान न जतलाते हुए मैं कह सकता हूँ कि तहकीकात करते समय जितना देश भ्रमण मैं ने किया है उतना आप में से किसी ने नहीं किया होगा । अपने भ्रमण में मुझे सुन्दरवन के उत्तर भाग की ओर जाने का इतफाक हुआ मैंने वहाँ जाकर एक ऐसी धरती देखी जिसपर गाय, मनुष्य, और अन्य अहिंसक जीव रहते थे । वहाँ दो प्रकार के मनुष्य थे, एक तो काले रंग के और दूसरे गोरे रंग के । मुझे एक दिन वहाँ किसी काम के लिये बाहर जाना पड़ा । ”

* महादंष्ट्रा नामक एक जिज्ञासु सिंह ने प्रश्न किया, क्या व्याख्याता महोदय यह बताने की कृपा करेंगे कि “ काम ” से उन का क्या अभिप्राय है ॥

व्याख्याता ने उत्तर दिया “ भोजन की तलाश का छोटा नाम ‘काम’ है । सभ्य जातियाँ आजकल भद्दी बात को भी मधुर शब्दों में ही वर्णन करती हैं, हाँ यह मुझे जरूर मानना पड़ता है कि इस सार्वजनिक व्यवसाय के लिए सदा ही इसी परिभाषा का प्रयोग नहीं हो सकता । मा-

ननीय तथा उच्च श्रेणी के लोगों के सम्बन्ध में यह यथार्थतया ‘काम’ कहला सकता है । जब छोट्टे लोग ‘चारे’ की तलाश में जाते हैं तो उन का काम चोरी करना, सेवा करना, या भीक माँगना बन जाता है । वैश्वमान लोगों का ‘काम’ साधारणतया ‘चोरी’ कहलाता है, जो लोग बलात्कार चुराते हैं वे लुटेरे कहलाते हैं । परन्तु ‘लुटेरे’ शब्द का प्रयोग बिना सोचे समझे हर एक पर नहीं कर देना चाहिये । किसी २ समय इस की जगह ‘वीर’ शब्द भी रखना होता है । चीनने को ‘डाका’ केवल उसी समय कहते हैं जबकि कानूनी तौर पर यह दण्डनीय होजाए इस व्यवसाय के शेष सब प्रकार वीरता कहलाते हैं । मेरी प्रार्थना है कि सभ्य समाज में वर्तित करते समय इन भेदों का अवश्य ख्याल रखना चाहिये, नहीं तो डर है कि कहीं लोग हमें असभ्य न कहने लग जायें । जो मुझ से पूछो तो मैंने तो अपने आप में निश्चय करलिया हुआ है कि यह सब भेद अनावश्यक हैं, केवल एक “उदर पूजा” के शब्द के अन्दर यह सब बातें आजाती हैं ॥

अस्तु, जो कुछ है सो है, मैं आगे चलता हूँ और पुनः कहता हूँ कि मनुष्य सिंहों को बहुत पसन्द करते हैं । जैसा कि मैं पहले कह आया हूँ एक दिन ‘काम’ के लिए मैं मनुष्यों की बस्ती में गया । कदाचित् आपने सुना होगा कि कुछ वर्ष हुए यहाँ सुन्दर वन में एक * बन्दर कैनिंग कम्पनी बनी थी ॥ ”

* मतला नदी पर जो कि हुगली की अपेक्षा जहाजों के आने जाने के लिये अधिक अच्छी है, कलकत्ते का

* बड़े दान्तों वाला

महादंष्ट्रा ने फिर टोका और पूछा कि बन्दर कैनिङ्ग कम्पनी किस प्रकार का पशु था ॥

व्याख्याता ने स्वीकार किया कि “सचपूछो तो मैं नहीं कह सकता कि मुझे उसका पूरा ज्ञान है। मैं कभी भी यह जांच नहीं सका कि उसका वाह्य दृश्य कैसा था या जीवित प्राणियों की किस श्रेणी से उस का सम्बंध था। परन्तु मुझे इतना पता है कि इसे मनुष्यों ने उत्पन्न किया था और यह मनुष्यों के हृदयों का लहू पीती थी और खा खा कर बहुत मोटी हो गई थी। मैं यह कह देना आवश्यक समझता हूँ कि मनुष्य जाति बड़ी ही अदूरदर्शी है। मनुष्य सदैव अपने नाश की ही विधियाँ सोचते रहते हैं। जिन शस्त्रों का वे प्रयोग करते हैं वे इस सचाई का प्रमाण हैं। मैं ने सुना है कि वे सहस्रों की संख्या में खुले मैदान में इकट्ठे होते हैं और इन्हीं शस्त्रों से एक दूसरे का वध करते हैं। मेरा अपना विचार है कि यह बन्दर कैनिङ्ग कम्पनी एक बला थी जिसे कि मनुष्यों ने अपने पारस्परिक नाश के लिये उत्पन्न किया था ॥

परन्तु इस बात का मेरे व्याख्यान से कोई सम्बन्ध नहीं इसलिये मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे बीच में रोकना न जाये। मेरे पास समय बहुत थोड़ा है और कहने के लिये बातें बहुत हैं। मेरा विचार है कि सभापति जी मेरे साथ इस बात में सहमत होंगे कि सभ्य समाजों में इस प्रकार का रोकना बुरा समझा जाता है ॥

एक नया बन्दर बनाने के विचार से एक कम्पनी बनाई गई थी। परन्तु वह अतृप्तिपूर्ण रही और हिस्से दारों को सख्त लुकसान उठाना पड़ा ॥

देवियों और महाशयों ! मैं कह रहा था कि मैं इस बन्दर कैनिङ्ग कम्पनी के निवास स्थान, मतला में ‘काम’ के लिये गया। मुझे वहाँ एक नर्म और सुन्दर मेमना मज़बूत बांस के एक विचित्र घर में दीख पड़ा। द्वार खुला था, मैं ऐसा स्वादु भोजन चखने के लिये अन्दर घुसा। अन्दर जाकर मैंने देखा कि यह एक जादू का मुकान है, क्योंकि मेरे अन्दर जाते ही इस का द्वार अपने आप बन्द हो गया। उसी वक्त कई मनुष्य प्रकट हुए। यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा था कि वे मुझे अपने में आया देखकर बहुत प्रसन्न हुए हैं। वे सब हर्ष से हंसते, कूदते और शोर मचाते थे। मैं भलीभान्ति समझ रहा था कि वे मेरे बल और सौन्दर्य की प्रशंसा कर रहे हैं। फिर वे मेरे दान्तों, पंजों और सब से अधिक मेरी पूंछ को देखकर तो लट्टू ही होगये। कई कई तो सच मुच ही प्यार से मुझे ‘साला’ कह कर पुकारने लगे ॥

आखिरकार उन्होंने अत्यन्त सम्मान से मेरे क्षणिक मुकान सहित (जिसे कि वे अपनी भाषा में ‘फन्दा’ कहते हैं) मुझे ऊपर उठाकर दा सफद वैलों की जोड़ी वाले छकड़े पर रख दिया। मुझ यह स्वीकार करना आवश्यक है कि इन पशुओं को देखने मात्र से ही भूक ने मुझे दुःख देना आरम्भ कर दिया, परन्तु उस जादू के ‘फन्दे’ से निकलने का कोई मार्ग न देख लाचार मुझे अपने फन्दकों के कृपापूर्वक दिये हुए मेमने पर ही गुज़ारा करना पड़ा। इस प्रकार आश्रोभक्त से यात्रा करते हुए और छत्तीस व्यञ्जन खिलाते हुए मुझे नगर में एक

गोरे मनुष्य के घर लेजाया गया। वह मेरे स्वागत के लिये बाहर अपने द्वार पर आया और आते ही उसने मेरे रहने के लिये लोहे की सुन्दर सिलाखों से सजा हुआ एक मुकान नियत कर दिया। इस स्थान में वह प्रति दिन मुझे सजीव या ताज़ा काटी हुई भेड़ बकरी का चढ़ावा देकर तृप्त करता था। नाना जातियों और अवस्थाओं के अन्य मनुष्य भी मेरे दर्शनों के लिये आते और दर्शन करके अपने को कृतार्थ समझते थे। मैं चिरकाल तक उस सुख और शान्ति के घर में रहा। मेरे चारों ओर आराम और दिलचस्पी के इतने सामान थे कि मेरा चित्त घड़ी भर के लिए भी उचाट नहीं होता था। परन्तु कुछ समय पीछे मुझे जन्म भूमि की याद दुःख देने लगी। जब कभी भी इस पवित्र मातृ-भूमि की सुन्दर मूर्ति का ख्याल आता मैं हृदय वेधक गर्जों से अपने दिल के गुबारों को बाहर निकालता था। हा, सुन्दरवन रूपी मातृ-भूमि, क्या मैं तुम्हें कभी भूल सकता हूँ?। तेरे सुहावने वनों का ख्याल आते ही मैं भेड़ बकरी का मांस खाना छोड़ देता था। ठीक पूछो तो, मैं उनकी खालों और हड्डियों को छोड़कर और अपनी पूँछ को जोर से हिलाकर उत्सुक दर्शकों पर अपने मन की घबराहट को प्रकट करता था। अहा! प्यारी जन्म भूमि! जबतक मैं तुझ से दूर रहा मैंने कभी कुछ नहीं खाया सिवाय उस समय के जबकि मैं भूक से व्याकुल हुआ, मैं कभी नहीं सोया जबतक कि वस्तुतः ही मुझे निद्रा ने नहीं आ दवाया। मैं अपने दुःख का इस से बढ़कर क्या प्रमाण दूँ कि मैंने कभी भी पेट भरने से अधिक या बड़ी हद इस से एक आध

सेर ऊपर से, ज्यादा कभी नहीं खाया। इस से अधिक हरगिज़ २ नहीं खाया” ॥

इन बातों की स्मृति से व्याख्यानदाता इतने प्रभावित हुए कि कुछ काल तक बोल न सके। बल्कि कहते हैं कि वह रोपड़े और दो चार आसू भी सामने की शुष्क मट्टी पर गिर पड़े। परन्तु साथ ही यह भी सम्भव है कि देश निकाले के दिनों में जो स्वादिष्ट भोजन उन्हें नित्य प्रति मिलते थे उन की याद आजाने से उन के मुँह में पानी भर आया हो और उसी का यह परिणाम हो। अस्तु, फिर सचेत होकर वह बोलने लगे:—

“मैं इस बात के विस्तारपूर्वक बताने की आवश्यकता नहीं समझता कि उस मनोहर आश्रम को मैंने कैसे छोड़ा। एक दिन नौकर ने मेरे कमरे को साफ करने के पीछे दरवाज़ा खुला छोड़ दिया, मुझे यह पता नहीं कि उसने जन्म-भूमि के बिछोड़े के कारण मेरी आन्तरिक वेदना को समझकर ऐसा किया था वैसे ही असावधानता से। अस्तु, मैंने अवसर ना खोया, बाहर निकलकर एक पास खड़े अत्यन्त बलहीन माली को पकड़ लिया और अपनी प्यारी जन्म-भूमि का मार्ग लिया। मेरा अपने अद्भुत कामों को विस्तारपूर्वक वर्णन करने का अभिप्राय केवल यही जतलाना है कि मुझे मनुष्य जाति को भलीभान्ति देखने और उस के विशेष गुण-वर्णों को प्रयत्न से जांचने का पर्याप्त अवसर मिला है। मैं आप को कोई भी ऐसी बात नहीं बताऊँगा जो मैंने आप न देखी हो। मुझे और यात्रियों की भान्ति मन घड़त बातें सुनाने का स्वभाव नहीं। मैं आप से एक बार कह देता हूँ

कि मनुष्यों के स्वभाव और रीतियों के सम्बन्ध में जो हमारे हां नाना बातें मशहूर हैं, मैं उन को बिल्कुल नहीं मानता । उदाहरण की रीति से देखिये कि हम लोग यह बात सुनते आये हैं कि मनुष्य यद्यपि निर्बल हैं परन्तु अपने लिये ऊँचे और विशाल भवन तैयार कर लेते हैं । मैं इस विषय में केवल इतना ही कहूँगा कि कम से कम मैंने उन्हें ऐसे भवन खड़े करते कभी नहीं देखा । इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि वे अपने लिये ऐसी कन्दराएं बना सकते हैं । मैं तो यह समझता हूँ कि उन के मुकान वस्तुतः पहाड़ हैं जिन्हें प्रकृति ने बनाया है और मनुष्यों में से कई बुद्धिमानों ने इन में बहुत सी कन्दराएं देखकर वहां बसना आरम्भ कर दिया है ॥

मनुष्य जाति द्विभोजी है अर्थात् वे मांस और कन्द मूल दोनों प्रकार की वस्तुएं खा लेते हैं । वे बड़े २ वृत्त नहीं खा सकते, परन्तु छोटे २ पौदे, जड़ें इत्यादि सब खा लेते हैं । छोटे पौदों को वे इतना पसन्द करते हैं कि उन्हें वे सुरक्षित स्थानों में जिन्हें कि बाग़ या खेत कहा जाता है उगाते हैं । एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य के खेत में चरने की आज्ञा नहीं ॥

इस बात को तो अब सब मान गये हैं कि वे फल, जड़ें बेलें, और भाड़ियां खाते हैं परन्तु मैं यह निश्चित रूप से नहीं कह सकता कि वे घास भी खाते हैं या नहीं । मैं ने कभी किसी मनुष्य को घास खाते नहीं देखा । इस विषय में मुझे कुछ संदेह है । गोरे मनुष्य और काले धनी मनुष्य घास के स्थल जिन्हें वे 'तृणभूमि (लान)' बोलते हैं तैयार करते हैं । सम्भव है

वहां की घास खाने के लिये होती हो । वस्तुतः एक बार मैं ने एक काले मनुष्य को कहते सुना था:—देश का नाश हो रहा है, सब साहब लोग और बड़े आदमी आलसी बनकर *घास खा रहे हैं' । इस से हमें कुछ कुछ विश्वास होता है कि बड़ी श्रेणि के मनुष्य घास खाते हैं ॥

जब मनुष्य अप्रसन्न होकर धवरा जाते हैं तो वे पूछते हैं "क्या तुम समझते हो कि मैं *घास खाता हूँ?" सारी की सारी जाति का यह विशेष गुण है कि जिस व्यवसाय (पेशे) से वे अपनी उपजीविका प्राप्त करते हैं उसे हर वक्त छुपाते रहते हैं । अतः हम यह परिणाम निकालनेमें भूल नहीं करते कि जो मनुष्य घास खाने के सन्देह पर लज्जित हो जाते हैं वे वस्तुतः तृण भोजी (घास खाने वाले) हैं ॥

मनुष्य पशुओं की पूजा करते हैं । मैं आप को अभी बता चुका हूँ कि मुझ ऐसे अयोग्य का वे लोग कैसा सत्कार करते थे । वे घोड़ों की भी पूजा करते हैं । उन के लिये सुन्दर भवन बनाते हैं, नित्य उत्तम चारा देते हैं, और उन के शरीर के बनाव चुनाव का हरवक्त ध्यान रखते हैं । निःसन्देह ऐसी बातों के देखने से घोड़ों का महत्व प्रकट होता है ॥

इस के अतिरिक्त मनुष्य भेड़ बकरी और गाय भैंस को भी पालते हैं । मैंने स्वयं गाय के प्रति उनका एक विचित्र व्यवहार देखा है । वे उस का दूध पीते हैं । हमारे प्राचीन विज्ञानी इसे इस बात का प्रमाण मानते थे कि वे अवश्य

* बंगाली में इस का मतलब है कि वह गधे हैं, और देश-हित का ध्यान नहीं रखते । † मैं गधा हूँ ? ।

ही पहले वच्छड़े होते होंगे । मैं यह तो नहीं कह सकता, परन्तु उन के गाय का दूध पीने से यह जरूर विदित होता है कि उन की मानसिक अवस्था बैलों से मिलती है । अच्छा जो सही मांस भोजन की सामग्री को सुगमता से प्राप्त करने के लिये मनुष्य भेड़, बकरी और गृह पशु पालते हैं । यह एक अत्युत्तम रीति है । मैं उस दिन को देख रहा हूं जबकि हम भी “मनुष्यों के वाड़े” तय्यार करेंगे जहां इन उपयोगी पशुओं को खाने के लिये पाला जायगा और इन की सन्तान वृद्धि की जायगी ॥

मैं आप को अभी बता चुका हूं कि भेड़, बकरी और गृह पशुओं को वे कैसे यत्न से पालते हैं । परन्तु वे हाथी, ऊंट, गधे, कुत्ते, बिल्लियां जहां तक कि पक्षी भी पालते हैं । अतः यदि यह कहा जाए कि मनुष्य दूसरे सब सजीव पशुओं के स्वाभाविक दास और नौकर हैं तो सर्वथा सत्य होगा ॥

मैंने मनुष्यों की वस्तियों में कई बन्दर देखे यह बन्दर दो प्रकार के हैं, एक तो पूंछ वाले, दूसरे बिना पूंछ के । पूंछ वाले बहुधा मुकानों की छत्तों और वृक्षों की शाखाओं पर रहते हैं । इस में सन्देह नहीं कि मैंने कई पृथ्वी पर भी देखे हैं, परन्तु उन में से बहुत सारे प्रायः ऊंचे स्थानों पर ही रहते हैं । मालूम होता है कि उन के अन्दर अपनी जाति की बड़ाई का झूठा अभिमान घुसा हुआ है ॥

मनुष्यों का आचार व्यवहार बड़ा ही मनोरञ्जक है । परन्तु उन के राजनैतिक प्रबन्ध भी बड़े आश्चर्य-जनक हैं । मैं उन को विस्तारपूर्वक वर्णन करता हूं ॥

योग्य व्याख्याता यहां तक पहुंचा था कि सभापति महोदय को दूर वन में एक मृग का बच्चा दृष्टिगोचर हुआ । वह भट सभापति के आसन पर से कूद कर उस के पीछे भाग गये । (मैं यह कहना भूल गया था कि वह अपनी दृष्टि के अधिक तेज होने के कारण ही सभापति बनाये गये थे) यह जान कर कि सभापति महोदय उन के भाषण को ध्यान पूर्वक नहीं सुनते, लेकरार महाशय बड़े अप्रसन्न हुए । यह देखकर श्रोतागण में से एक बोला:-

“हमारे पूज्य सभापति के इस प्रकार भट पट भाग जाने से कृपया क्रुद्धित ना हूजिए । वह एक अत्यावश्यक “काम” के कारण गये हैं । हिरणों का एक रेवड़ आरहा है । मुझे उनकी गंध आरही है ? ” ॥

इन शब्दों को सुनते ही श्रोतागण पूंछों को ऊपर उठाये हुए “काम” के लिये तितर बितर होकर भाग गये ; तब व्याख्याता ने भी उन का अनुकरण किया । इस प्रकार उस दिन की सभा अकाल समाप्त होगई । दूसरी बार सभा के लगने से पूर्व सब ने पेट भर कर खाले का ख्याल कर लिया । उस समय व्याख्यान का शेष भाग बिना रोक टोक के समाप्त होगया । उस की कार्यवाही का पूरा वृत्तान्त शायद किसी और अवसर पर देना अच्छा होगा

माहर्न रीव्यू.

मातृ भाषा के प्रेमियो, ‘उषा’ आप से बहुत आशाएं रखती है । इसके ग्राहक मण्डल को बढ़ाइये ॥

काम रहस्य

(लेखक—श्री०पं० विजयानन्द तिवारी, भदौना-काशी धाम)

“धर्मा विरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि
भरतर्षभ” । भगवद्गीतायाम्



पहिले होचुका है, जो इस समय होरहा है, या जो आगे होगा, सो सब सुख के लिये हुआ, सुख के लिये हो रहा है, और सुख के लिये होगा । सुख के लिये संसार

पागल है । ईश्वर की भक्ति की जाती है सुख के लिये, क्लिष्ट विद्याएं पढ़ी जाती हैं सुख के लिये, अनेक व्यापारों में पसीना गिराया जाता है सुख के लिये, रोम हर्षण युद्धों में अपना खून बहाया जाता है सुख के लिये । कहां तक कहें आत्म हत्या भी सुख के लिये ही की जाती है । सुख के लिये मनुष्य बड़े २ दुःखों को भी दुःख नहीं गिनता, मृत्यु को मृत्यु नहीं मानता । सुख की आशा से ही जीता है, सुख की आशा के एक वारगी टूट जानेसे हृदय पर वह धक्का पहुंचता है कि या तो रक्ताशय (bloodvessel) को तोड़ कर तुरन्त मृत्यु सुख में पहुंचाता है, या देह के बन्धनों की जड़ ऐसी हिला देता है कि फिर सुधरने की आशा नहीं । डाक्टर, वैद्य, हकीम सब हैरान—कोई दवा काम नहीं करती । और काम करे क्योंकि ?—यहां तो हृदय का दिवाला निकल गया, और धीरे २ वे दिन

करीब आगये हैं, जबकि उस के प्रेमी उस की असमय की मृत्यु पर आंसू बहाएं ॥

कहना नहीं होगा सुख ही जीवन है, सुख ही प्राण है; यह बात दूसरी है कि कोई सङ्कीर्ण सुख को ही सुख मानता हो, या किसी के सुख की भूमि का आधार आशाओं पर हो । पर सुख सब चाहते हैं । सब प्रयोजनों (मतलबों) का प्रयोजन सुख है । सुख ही सम्पूर्ण इच्छाओं का एकमात्र लक्ष्य है इसी सुख के लिये जो प्रवृत्ति (मैलान) है उसे काम कहते हैं । मीठे गान सुनने की इच्छा, मीठी खूशबू लेने की इच्छा, गुलगुले बिछौने पर लेटने की इच्छा, सुन्दर दृश्य देखने की इच्छा, मजेदार चीजों के चखने की इच्छा, सब काम के अन्तर्गत हैं ॥

धर्म और अर्थ सुख के साधन हैं । क्यों धन के लिये संसार व्यग्र है ? क्यों रात्रि दिन भर २ कर लोग धन कमाते हैं ? क्यों बड़े २ दुष्कर्म, जिन की कथा सुनने से रोंगटे खड़े हों, लोग धन के लिये करते हैं ? इस का सीधा सा उत्तर यही है कि धन को लोग काम का प्रधान साधन मानते हैं ॥

क्यों भोज्य पदार्थ से भरे हुए घरों में ब्रतो-पवास किया जाता है ? क्यों हवन में सुन्दर भोग के पदार्थ—घी चीनी को अग्नि में स्वाहा कर देते हैं ? क्यों ठंडे २ स्थानों के होते हुए भी लोग ग्रीष्म में पञ्चाग्नि तापते हैं ? क्यों कठिन परिश्रम से उपार्जित किया हुआ घर का द्रव्य अपरिचित दीन दुःखियों में वितरण करते हैं ? ॥

उत्तर यही है कि इस लोक या परलोक के सुख की कामना से । भगवान् याज्ञवल्क्य ने कहा कि

‘हे मैत्रेयी ! पति के लिये पति प्रिय नहीं है, अपनी ही कामना के लिये पति प्रिय है, स्त्री की कामना के लिये स्त्री प्रिय नहीं है, अपनी ही कामना के लिये स्त्री प्रिय है ॥

अतएव यह सिद्ध है कि जितने कार्य होते हैं सो सब सुख के लिये, अर्थात् कार्य मात्र का लक्ष्य (निशाना) सुख है, पर सुख का लक्ष्य दूसरा कुछ नहीं हो सकता। सुख आप अपने लिये है, इसी सुख की परिपक्वता को आनन्द कहते हैं ॥

आनन्द की एक दशा ऐसी भी होती है, जिस में मनुष्य को तन वदन की सुख नहीं रह जाती; मन न जाने कहां उस क्षण के लिये लीन हो जाता है। पर ऐसी दशा क्षण नहीं पलों के लिये होती है। संसार में सब को इस दशा से कभी न कभी इत्तफाक पड़ता है। यह दशा आनन्द की घनावस्था की है ॥

वेदान्ती ब्रह्म को सच्चिदानन्द कहते हैं, पौराणिक ईश्वर को आनन्दमय कहते हैं। हिन्दू ही क्यों किसी मज़हब वाले को ईश्वर के आनन्दमयत्व के मानने में बाधा नहीं है, क्योंकि कोई भी अपने ईश्वर को दुःखमय मानने के लिये तय्यार नहीं है। नास्तिक भी यद्यपि ईश्वर नाम से कोई वस्तु विशेष नहीं मानते, पर आनन्द के अनादर करने की उन्हें भी सामर्थ्य नहीं ॥

सच तो यह है कि आनन्द को छोड़ कर कोई वस्तु ईश्वर होने योग्य नहीं है, आनन्द ही सब के हृदय सिंहासन का एकमात्र देवता है। इसी आनन्द में यदि बाधा न पड़े, यदि

घनानन्द एक रस रहे यदि उस का अन्त न हो तो ऐसी अवस्था ही ब्रह्म प्राप्ति या ब्रह्मानन्द है। पर क्या ऐसा आनन्द सम्भव है ? क्या दुःख का विच्छेद कभी सुख से हो सकता है ? जहां सुख है वहां दुःख है, और जहां दुःख है वहां सुख भी अवश्य है, क्योंकि विना दुःख के सुख नहीं और विना सुख के दुःख नहीं। यह दुनियां दोरझी है, एकरङ्ग पर नहीं रह सकती। दिन के साथ रात है, जाड़े के साथ गरमी है, पेट के साथ पीठ है और एक सिरे के साथ दूसरा सिरा भी है। यह नियम सदा जागरूक (जागता) है इस में बाधा कहीं देखी नहीं जाती ॥

देखने से तो ऐसा ही जान पड़ता है। पर उद्योग शील पुरुष देख कर ही चुप नहीं रह जाते, वे तो कटहल के पेड़ से विना अनारदाना निकाले कहां मानने के। जब उपाय से विष भी अमृत होता है, और अमावास्या की रात्रि में भी जेठ की दो पहर की भान्ति उपाय-शील के घर में रौशनी दिखाई पड़ती है, तो कौन जाने कोई ऐसा भी उपाय निकल आवे जिससे यह बाधा भी दूर हो सके।

यह तो पहिले ही कहा जा चुका है कि विना सुख के कोई जी नहीं सकता, सो सुख का लेश जबतक जीवन है दुःख से भी दुःख में बना ही रहेगा। और यह भी स्मरण रहे कि सुख किसी वस्तु विशेष में नहीं है, यह तो मन में होता है जिसे कल फांसी पड़ना है उसे संसार का कोई भोग सुख नहीं दे सकता, यदि उन वस्तुओं में सुख होता तो उसे भी अवश्य सुख मिलता। तो सुख कैसे मिलता है, पहिले यही विचार करना चाहिये ॥

विज्ञान से भी सिद्ध है कि जगत् में जितनी शक्तियाँ हैं, उनके मूलान्वेषण से तीन शक्तियाँ ही सब शक्तियों की मूलभूता मालूम पड़ती हैं।

१-संसर्ग शक्ति रजोगुण (Attractive force)

२-भेद शक्ति या तमोगुण (Repulsive force)

३-समान शक्ति या सत्वगुण (Harmony)

और इन्हीं शक्तियों के न्यूनाधिक्य के तारतम्य से तीन वृत्तियाँ मन की भी हैं:—

(१) घोरा (२) भूढ़ा और (३) शान्ता ।

इन में से रजोगुणी वृत्ति तृष्णास्नेह राग आदि घोरा वृत्ति हैं, और तमोगुणी वृत्ति प्रमाद, आलस्य, संमोह आदि मूढ़ा वृत्ति और सत्वगुणी वृत्ति, उदारता, वैराग्य आदि शान्ता वृत्ति ॥

‘सत्वगुण में आनन्द है’ इस बात के प्रमाण की आवश्यकता नहीं। क्षमा में जो आनन्द है, किसी दुःखी के दुःख मिटाने में अपने को जो आनन्द मिलता है, सो आनन्द उदार चेता पुरुषों से अपरिचित नहीं है, पर यदि सत्वगुणी वृत्ति में ही आनन्द है रजोगुणी और तमोगुणी वृत्ति में यदि आनन्द नहीं है तो तमोगुण प्रधान कार्य भोजनादि में सुख कहाँ से मिलता है !

इस विषय का रहस्य यह है कि एक गुण दूसरे गुण को छोड़ कर नहीं रहता। रहेंगे तीनों, उनमें से प्रबल चाहे जो रहे। प्रायः रजोगुण और तमोगुण चित्त की सात्विकी वृत्ति को ढकी रखते हैं। उस में जब रजोगुण विशेष जोर पकड़ता है अर्थात् जब तृष्णादि दोष प्रबल हो उठते हैं तो चित्त दुःखी हो जाता है और उनकी वृत्ति का उपाय करता है और उनकी शान्ति के लिये जब तमोगुणी प्रयोग किया जाता है तो रजोगुणी वृत्ति और तमोगुणी वृत्ति

आपस में लड़ करके परस्पराभिभूत होती हैं तब अकस्मात् अवकाश मिलने से कुछ क्षण या पल के लिये सत्व का उदय होता है। और सत्व के उदय होते ही आनन्द होता है ॥

दूसरी बात यह कि इच्छित वस्तु की प्राप्ति से बाहिर्मुख चित्त, एकाग्र हो कर अन्तर्मुख होता है। और एकाग्र हो कर अन्तर्मुख होने से ढके हुए सत्व के आनन्द की झलक उसको मिलजाती है, और वह मूर्खता से यह समझता है कि तामसी अथवा राजसी व्यवहार से सुख मिला पर, सुख मिला सत्व से ॥

सो तर्क से भी यही उपाय ठीक जंचता है कि यदि कोई राजसी और तामसी वृत्ति को दबाये रहे तो सुख की मात्रा स्थायी होगी, इसी को महा पुरुषो ने कृपाण की धारा कहा है कहीं बाजीगर ऐसा खेल करते हैं कि तलवारों पर सो जाते हैं, उसपर चलते हैं कि क्या मजाल कि किसी ओर दूसरे ओर से विशेष भार हो जाय, अतएव वे तलवार की धार पर सही सलामत बने रहते हैं, ज़रा सी भी जुम्बश वेढझी हुई कि धार ने रक्तपात किया ॥

इसी भांति सदा आनन्द ही में रहने वाले पुरुषों को, उस बाजीगर की भांति सावधान रहकर रजोगुणी और तमोगुणी वृत्ति को बराबर दबाये रहना पड़ता है ॥

पर ‘बराबर दबाये रहना’ यह स्वयं ही कौनसा कम कष्ट है ? परन्तु यह भी कष्ट अभ्यास और वैराग्य से दूर हो जाता है। जैसे एक आसन से अचल बैठने वाले को बड़ा कष्ट होता है, पर धीरे-२ वह कष्ट निवृत्त हो जाता है, और फिर वह जबतक चाहे उसी आसन पर बना रहै, उसे

फिर कष्ट तो तभी होगा जब वह फिर उस आसन को छोड़ना चाहेगा । तब उसे मालूम होगा कि उसके बिना जाने ही प्राणों ने मानो उसके पैरों को छोड़ दिया था इस पीड़ा को लोग झुन झुनी कहते हैं । जो बहुत देरतक एक ढंग से बैठ रहने से होती है ॥

इसी प्रकार तम और रज को द्वाय २ सत्व के उदय से जो आनन्द मिलता है वह घना होता जाता है, और यदि यह प्रकृया तबतक जारी रहे जबतक कि वह पुरुष घनानन्द अवस्था में स्वयम् अपने को न भूल जाये, तो उसको बराबर रज और तम को द्वाये २ ऐसी अवस्था आ जायगी कि उक्त प्रयत्न का अनुभव ही नहीं होगा । और जब उस अवस्थामें वह अपने को भी भूल गया तो उस अवस्था को सत्व के भी अधीन कहना जबरदस्ती है । जो अपने स्थिति को भी भूलकर अपने आप में लय हो गया, वह किसी के भी अधीन में नहीं है । इसी को निस्त्रैगुण्य-वस्था कहते हैं । या इसको सब अवस्थाओं से परे कहिये तो भी उचित ही है ॥

अधर्म अर्थात् रजो गुणी तथा तमो गुणी वृत्तियों के संघर्षण से जो सुख वा काम है सो इसलिये निन्दनीय है कि उस में भादों की अमा वास्या में विजली की धमक की भांति आनन्द की अच्छी झलक तो आजाती है पर फल उसका ऐसा बुरा होता है कि आंखों के लिये अन्धकार और भी घना हो जाता है तमोगुण और भी बढ़ जाता है ॥

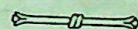
पर जो सुख या काम कि सत्व अर्थात् धर्म के विरोधी रज और तम के कारणों से नहीं उत्पन्न हुआ है बल्कि उनको दवा कर उत्पन्न

हुआ है, वह सुख या काम साधारण नहीं है, वह आनन्दमय परमात्मा है ॥

रज और तम ही अधर्म है, यही दुःखरूप हैं, इनके अवाधित रहते सुख कहाँ? अवश्य इन को सदा के लिये बाधित कर देना परम पुरुषार्थ है पर यह परम पुरुषार्थ सबके पूरे का नहीं है, विरले ही सच्चे दिल से इस रास्ते पर कदम रखते हैं । और जिन्होंने ने कदम रक्खा है उन विरलों में से भी विरले ही कृतकार्य होते हैं ॥

अतएव उन लोगों के लिये, जिन को कि इस प्रकार का व्यापार असम्भव बोध होता है, या जो कम से कम अपने लिये असम्भव समझते हैं, ऐसे विधान की आवश्यकता है जिस से यदि आनन्द सदा के लिये न हो सके, तो थोड़ा विशेष स्थायी हो और उसका उदय भी शीघ्र २ हुआ करे ॥

यदि पाठकों को मेरे गुरुमुखोद्गीर्ण शिष्टा का अनुभव रुचिकर मालूम होगा तो मैं उपर्युक्त दूसरे विधान के वर्णन का भी साहस करूंगा ॥



* ऋतुराज वसन्त *

(गीत)

ऋतुराज वसन्त, आज सखे आवत है-टेक आवत है, मन भावत है ॥ १ ॥

सरसों फूली विकसित वदना, मनहु वसन्त प्रिय प्रीति दिखलावत है ।

दिखलावत है दिखलावत है ॥ २ ॥

बिन पल्लव, अहो नीरस वृक्षः,

नव किशलय कलि लावत है,

लावत है, महिकावत है ॥ ३ ॥

कायवीर भय पीतता छोड़ा,

पुष्प वस्त्र पर जावत है,

जावत है, श्रिति पावत है ॥ ४ ॥

भीम युधिष्ठिर पञ्चमी आवत,

मनहु वसन्त निज हर्ष दिखावत है,

दिखावत है, हिन्दु उत्सव मनावत है ॥ ५ ॥

विकसित सहकार मञ्जु मञ्जरी,

कोकिलस्वर मञ्जु से गावत है ।

मञ्जु वाणी सिखावत है ॥ ६ ॥

नाति शीत बहु आतप नापि,

मन्द वायु पथिमलय बहावत है,

बहावत है, चित्त भ्रमण को चाहवत है ७

शीते स्फूर्ति मुख लालिमा नापि,

देखो वसन्त मुख विम्ब सुहावत है ।

सुहावत है, जन स्फूर्ति को पावत है ॥ ८ ॥

सजत साज निज पुष्प रसीले,

पुष्प वाण जनु विजय को धावत है,

धावत है, मानो मान घटावत है ॥ ९ ॥

हरित शस्य तरुणायित कुसुमा,

देख जीव यश ईश्वर गावत है ।

गावत है दीनानाथ बतावत है ॥ १० ॥

दीनानाथ शर्मा

आचार्य हक्सले का अमूल्य वचन ।

यह संसार दुःख और अज्ञान से भर पूर है इसलिये हम सबका यह परम कर्तव्य है कि कम से कम उस क्षेत्र को जिसे कि हम प्रभावित करते हैं—चाहे वह क्षेत्र कितना ही छोटा क्यों न हो—अपने आगमन के समय की अपेक्षा कुछ कम दुःखी और कम अज्ञानावृत छोड़ जायें ॥

गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार ।



ज से बारह वर्ष पूर्व पञ्चाव की आर्य प्रतिनिधि सभा ने प्राचीन शिक्षा प्रणाली को पुनर्जीवित करने के लिये श्री गङ्गाजी के तट पर गुरुकुल विद्यालय स्थापित किया

था । इस के संचालकों को क्या क्या कष्ट तथा विपत्तियाँ सहन करनी पड़ीं उनके जताने की इस समय कोई आवश्यकता नहीं, केवल इतना लिख देना ही अनुचित न होगा कि इस गुरुकुल के संस्थापक महात्मा मुन्शीराम जी को अपना सर्वस्व त्यागना पड़ा । इस पुण्यात्मा ने जहाँ तन और मन से इस गुरुकुल रुपी वृक्ष को सींचा वहाँ अपने रक्त से संचित किये हुए धन तथा सम्पत्ति को भी इसी ही के अर्पण कर दिया । भारत के भाग्य जाग उठे यदि दस ऐसे स्वार्थ त्यागी महात्मा इस धर्म भूमि में उत्पन्न हो जायें । यह इसी ही त्याग का फल है कि आज यह गुरुकुल देश देशान्तरों में सुप्रसिद्ध है और अनेकानेक विद्वानों से प्रतिष्ठा पा चुका है । इतनी भूमिका के पश्चात् प्रश्न होता है कि गुरुकुल कांगड़ी में कौनसी विशेषता है जो दूसरे कालिजों और स्कूलों में नहीं पायी जाती आज हम ने केवल इसी प्रश्न का उत्तर देना है सुन लीजिये ॥

१-मनुष्य को शिक्षा ऐसी मिलनी चाहिये जो उसे पूरा मनुष्य बना सके । जो शिक्षा बुद्धि को तीव्र करने में तो समर्थ है परं शारी-

रिक तथा धार्मिक अवस्था को उन्नत करने में अशक्त है, वह मनुष्य को पूरा मनुष्य नहीं बना सकती, अतएव काजिजों तथा गुरुकुल की शिक्षा-प्रणाली में यही बड़ा भेद है कि गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली जहां बुद्धि की शक्तियों को बढ़ाती है वहां दूसरी ओर शारीरिक तथा मानसिक दशा को भी सुधारने का यत्न करती है। सम्भव है कि काजिजों में व्यायाम इत्यादि का प्रबन्ध गुरुकुल की अपेक्षा अच्छा हो परन्तु विद्यार्थियों पर कोई ऐसा दण्ड नहीं जो उन के अन्दर व्यायामादि के लिये प्रेम उत्पन्न कर सके दूसरी ओर गुरुकुल के विद्यार्थी व्यायाम आदि के नियम से कदापि नहीं बच सकते। धार्मिक अवस्था का तो कहना ही क्या है। आचार व्यवहार में तो काजिजों के विद्यार्थियों को खुली छुट्टी है—उन को इस विषय में कोई रोक टोक नहीं—चाहे वह “लच्छी के गीत” गावें वा हीर रांभा के किस्से पढ़ें, चाहे वह परस्पर वार्त्तालाप में अप-शब्दों का प्रयोग करें व रात्रि को थिएटर आदि देखें, काजिजों के विद्यार्थियों के लिये कोई प्रबन्ध नहीं—परं दूसरी ओर गुरुकुल के विद्यार्थियों को इन बातों का स्वप्न भी नहीं आता होगा—गुरुकुल के प्रबन्धकर्त्ता विशेष करके लड़कों के आचार का अधिक ख्याल रखते हैं। अतएव पहली विशेषता जो गुरुकुल में हम देखते हैं वह यह है कि गुरुकुल से पढ़े हुए विद्यार्थी पूरे मनुष्य बन कर निकलेंगे ॥

२- दुर्भाग्य है इस भारत के जहां शिक्षा का माध्यम (medium) मातृभाषा नहीं है यदि हम में से कोई जर्मनी आदि सभ्य देशों

में जाकर जर्मनवालों को कहे कि तुम्हारी शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी या फ्रेंच होना चाहिये तो सिवाय हमारी मूर्खता पर हंस देने के वे कोई उत्तर नहीं देंगे। परं भारत ही ऐसा देश है जहां भारत वर्ष का इतिहास अंगरेज़ी में पढ़ाया जाता है जहां शिक्षा का माध्यम अंगरेज़ी बना हुआ है। कई महाशय प्रश्न उठाया करते हैं कि हमारे अन्दर भाषा की पुस्तकें नहीं हैं अच्छे अच्छे ग्रन्थ सब अंगरेज़ी में पाये जाते हैं। निस्संदेह यह कथन सत्य है मगर हम यह पूछते हैं कि क्या कभी यह तजख्वा शुरू भी किया जावेगा या नहीं। ‘necessity is the mother of invention’ (जरूरत ईजाद की मां है) इस वक्तव्य पर भी यदि पूरा पूरा ध्यान दिया जावे तो उनका प्रश्न स्वयं ही हल हो जाता है। गुरुकुल ने यह तजख्वा शुरू किया है और वह कुछ हद तक इस में कामयाम भी हो चुका है—हर साल आप देखते हैं कि कोई न कोई अच्छी पुस्तक गुरुकुल के उपाध्याय गण निकालते ही रहते हैं और सारे विषय आर्यभाषा द्वारा ही पढ़ाये जाते हैं। यदि हम इस गुरुकुल को सहायता देते रहे तो कोई दिन ऐसा आवेगा जबकि योरूप के विद्वानों की अच्छी अच्छी पुस्तकें इसी गुरुकुल से ही आर्यभाषा में अनुवादित हो कर समीक्षा समेत निकलाकरेंगी। मातृभाषा में शिक्षा देने से देश को तथा विद्यार्थियों को क्या क्या लाभ हो सकते हैं इस विषय पर फिर हम अपने विचार प्रकट करेंगे। आज केवल इतना कह देना ही यर्याप्त समझते हैं कि विद्यार्थियों में स्वतन्त्र विचार पैदा करने के लिये मातृभाषा

में शिक्षा देना एक अत्युत्तम साधन है। अतएव गुरुकुल इस साधन का प्रयोग करता है और मातृभाषा ही में शिक्षा प्रदान करता है। सो यह गुरुकुल की दूसरी विशेषता है ॥

२-दूसरी जातियों के गुणों को ग्रहण करना कोई बुरी बात नहीं परन्तु उनका अन्धाधुन्ध अनुकरण करना बहुत बुरा है। हमारी सभ्यता तो कोट, बूट, पतलून के पहनेन तक ही समाप्त हो जाती है। हमें न अब अपना पहरावा अच्छा लगता है और न ही अपना खाना भाता है। दूसरी जातियों की बाहर की चमक दमक ने हमारी आंखों को चुन्धिया दिया है—और इसी चमक दमक के कारण हम अपना सारा समय वन ठन में व्यतीत कर देते हैं, परन्तु उन जातियों में जो वास्तविक गुण हैं उनकी ओर हमारा किञ्चिन्मात्र भी ध्यान नहीं। एक गुरुकुल ही ऐसी संस्था है जहां जातीयता का भाव प्रत्येक विद्यार्थी तथा अध्यापक में पाया जाता है। वहां आधा तीतर आधा बटेर नहीं बनाया जाता। सात्विक भोजन, सादा पहरावा, और उत्तम तथा सूक्ष्म विचार यह तीन हमारी जाति के परम चिन्ह हैं, सो यह तीनों गुरुकुल में विद्यमान हैं—अतएव यह गुरुकुल की तीसरी विशेषता है, कि वह जातीयता का भाव उत्पन्न करता है ॥

४-सामाजिक अवस्था के विगड़ जाने के कारण हमारी जाति की संख्या प्रति वर्ष कम हो रही है। इसका मुख्य-कारण बाल्यावस्था का विवाह है। और इस अवस्थामें गृहस्थमें प्रविष्ट होने से निःसन्देह सन्तान इन्द्रिय-हीन और बलहीन होती है जो थोड़ा ही काल ज़िन्दा रह

कर परलोक को सिधार जाती है। इस कुरीति को दूर करने के लिये गुरुकुल में न्यून से न्यून पच्चीस वर्ष तक प्रत्येक विद्यार्थी को ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता है। इस व्रत के पालन करने से जहां वर्णाश्रम ठीक होगा—वहां जाति की संख्या भी बढ़ेगी, क्योंकि ऐसे विद्यार्थी और उनकी सन्तान निस्सन्देह बलिष्ठ होंगे और चिर काल तक ज़िन्दा रहेंगे। अतएव गुरुकुल जहां शारीरिक, धार्मिक तथा मानसिक उन्नति का केन्द्र है वहां यह सामाजिक दशा के सुधारने का भी एक परमोपयोगी साधन है। यह चौथी विशेषता है ॥

५-भारत अपनी फ़िलासफी के लिये प्रसिद्ध है। और पश्चिम विज्ञान के लिये नाम पा चुका है। यदि आप वर्त्तमान कालिजों में जावें तो आप को पता लगेगा कि विद्यार्थी हक्सले और डार्विन के नामों से सम्यक् प्रकार से परिचित रहते हैं परं शङ्कराचार्य तथा व्यास की फ़िलासफी से सर्वथा शून्य हैं। यह गुरुकुल को ही सौभाग्य प्राप्त है कि वह पूर्व और पश्चिम को मिलादे, विद्यार्थियों को जहां पश्चिमी विज्ञान पढ़ाया जाता है वहां उन को उपनिषदों दर्शनों तथा वेदों तक की शिक्षा भी दी जाती है। यह गुरुकुल की पांचवी विशेषता है। अब प्राणीमात्र का कर्तव्य है कि वह एक ऐसी उत्तम संस्था की रक्षा करे। क्या ईसाई क्या मुसलमान और क्या आर्य्य सब को एक होकर इस संस्था की सहायता करनी चाहिये। यदि यह संस्था धन के अभाव से बन्द हो गई तो भारत वासियों के शिर पर हमेशा के लिये एक कलङ्क रहेगा।

गोपालदास बी० ए०

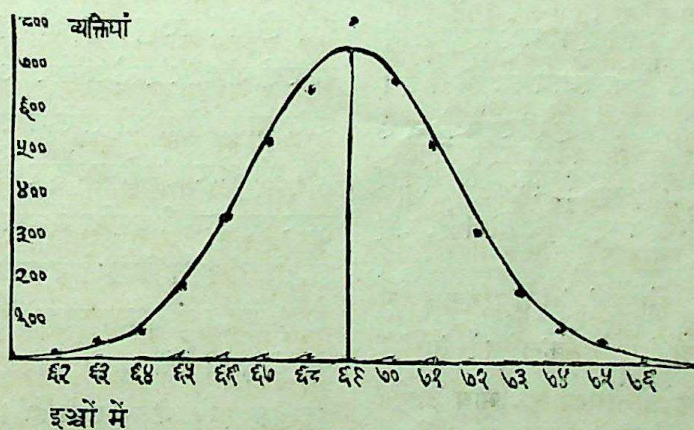
बीज परम्परा का नियम (Heredity.)

(२)

पिछले अङ्क में हम ने माता पिता और उन की सन्तान में सदृशता व भेद की वास्तव थोड़ी सी साधारण बातों का वर्णन किया था और यह भी बताया था कि वच्चा या उस का मूल तत्त्व केवल पिता के एक वीर्याणु और माता के एक अण्ड के सम्भोग से बनता है। अब हम ने इस बात पर विचार करना है कि माता पिता व सन्तान में कहां तक भेद और कहां तक सदृशता होती है और सदृशता व भेद का कारण क्या है ? ॥

पहली प्रकार का विरसा जिस का हम ने वर्णन किया था वह यह था कि साधारण तौर

पर एक लम्बे पिता की सारी सन्तान सर्वथा ठीक उतनी ही लम्बी नहीं होती कई बच्चे पिता से कम लम्बे और कई अधिक लम्बे भी होते हैं परन्तु सब के सब की लम्बाई सब से लम्बे से लेकर सब से छोटे तक एक लगातार क्रम में लिखी जा सकती है। एक मनुष्य के बहुधा ५ या ६ बच्चे होते हैं और भेद का अनुमान करने के लिए यह संख्या थोड़ी है, इस लिए एक ही जाति के बहुत से जीवों के लक्षणों की परीक्षा की जाती है। कैम्ब्रिज विश्व-विद्यालय (Cambridge University) में ४४२६ विद्यार्थियों की लम्बाई का माप किया गया था और निम्नलिखित चित्र में इस माप का नतीजा दिखाया गया है :—



मूल-रेखा (base line) पर इंचों में लम्बाई लिखी हुई है और लम्बी-रेखा (vertical line) पर विद्यार्थियों की संख्या है। इस वक्र (curve) से विदित है कि ८०० के लगभग विद्यार्थियों की लम्बाई ६९ इंच थी और बाकियों की इस से कम या अधिक थी बहुत थोड़े विद्यार्थी ऐसे

थे जिन की लम्बाई ६२, ६३ या ६४ इंच जितनी थोड़ी हो और इसी प्रकार ७३, ७४ या ७५ इंच जितनी बहुत लम्बाई वाले भी बहुत थोड़े थे। वक्र को पढ़ते हुए ज्यों २ हम मध्यममान (औसत average) ६८ इंच की लम्बाई के निकट जाते जायें त्यों २ विद्यार्थियों की संख्या भी

बढ़ती जाती है और सब से अधिक संख्या ८०० उन विद्यार्थियों की है जिन की लम्बाई मध्यममान ६९ इंच है। लम्बाई के इस वक्र से दो बातें स्पष्ट हैं एक तो यह कि यदि हम लम्बाई के लक्षण को लेकर बहुत सारे मनुष्यों की परीक्षा करें तो उन में से बहुत सी संख्या की लम्बाई मध्यममान होगी और दूसरी बात यह कि ज्यों २ इस औसत से न्यूनता तथा अधिकता की ओर जावें तो क्रमशः मनुष्यों की संख्या में घटती होती जाती है। इस उदाहरण से मनुष्यों में परस्पर भेद का अनुमान होसकता है इस प्रकार के भेद को “निरन्तर भेद” (continuous variation) कहते हैं, क्योंकि भेद की राशि एक लगातार क्रम में लिखी जा सकती है। इस प्रकार के व्यक्तिक भेद बहुधा सब जीवों में ही पाए जाते हैं। कई मनुष्यों में हाथ की पांच उँगलियों के स्थान छः होती हैं। सरसों के फूल की साधारण तौर पर चार पङ्क्तियां होती हैं। परन्तु कई फूल ऐसे देखने में आते हैं जिन की पांच पङ्क्तियें होती हैं, यह दो उदाहरण “विच्छिन्न भेद” (discontinuous variation) के हैं, इन में भेद थोड़ा २ नहीं परन्तु बड़ी २ छलाने हैं।

कहा जाता है कि अधिक गुणवान माता पिता की सन्तान कई बेर बहुत साधारण सी होती है और साधारण माता पिता की सन्तान कई बेर बहुत गुणवान निकल पड़ती है। पाठक गण ! अपने अनुभव से इस कथन के कई उदाहरण जानते होंगे। पुराने ग्रन्थकारों ने भी इस बात पर ध्यान दिया है और कहा है कि

परिवारों में विशेष उच्च-गुण पीढ़ी दर पीढ़ी घटते जाते हैं और बाप दादा की अपेक्षा संतान बहुत अधम दर्जे की निकलती है। परन्तु हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कई बेर सन्तान बाप दादा से बहुत अधिक गुणी भी होती है। सर फ्रैंसिस गाल्टन (Sir Francis Galton) ने १५० परिवारों के लक्षणों की परीक्षा की है और “सन्तान प्रत्यावर्तन” (Filial regression) नामक नियम स्थापित किया है और वह यह है कि सन्तान मध्यमता की ओर प्रवृत्ति रखती है। माता पिता चाहे बहुत गुणी हों अथवा निर्गुण हों सन्तान का झुकाव जाति के मध्यममान गुणों की ओर होगा। यदि जाति की मध्यममान लम्बाई ६९ इंच है, तो ६२ या ६३ इंच लम्बाई वाले माता पिता की सन्तान ६२ या ६३ इंच नहीं होगी। परन्तु उस की प्रवृत्ति ६६ इंच की ओर होगी और इसी प्रकार ७४ या ७५ इंच वाले माता पिता की सन्तान का भी झुकाव ६९ इंच की ओर ही होगा। यह नियम जिसके अनुसार सन्तान की प्रवृत्ति मध्यमता की ओर होती है, किसी गुण के पूर्ण संक्रमण में बहुत बाधक है। बहुत गुणवान माता पिता की सन्तान में से थोड़े ही बच्चे गुणी निकलते हैं, बाकी के मध्यम दर्जे के ही होते हैं। वास्तव में माता पिता जितने अधिक गुणी होंगे उतनी ही संभावना कम होगी कि उन की सन्तान माता पिता जितनी गुणी हो और इस सौभाग्य की तो संभावना बहुत ही कम होगी कि उन की सन्तान कहीं माता पिता से भी अधिक गुणी निकल पड़े। साधारण सन्तानोत्पत्ति में बच्चा माता पिता दोनों की ओर से अपने गुण लेता है।

क्योंकि उस की उत्पत्ति में दोनों हिस्सा लेते हैं कई वेर बच्चे में माता और पिता दोनों के लक्षण मिले जुले होते हैं कई वेर एक ओर के गुण प्रधान होते हैं और दूसरी ओर के बहुत थोड़े होते हैं और कई वेर ऐसा भी होता है कि एक ओर के गुण सर्वथा गुप्त रहते हैं और केवल एक ही ओर के प्रत्यक्ष होते हैं । इन बातों के होते हुए भी गाल्टन ने बहुत से मनुष्यों की लम्बाई और कुत्तों के रङ्ग की परीक्षा करके और उन के बाप दादा में भी इन्हीं गुणों की परीक्षा करके एक नियम स्थापित किया है और वह यह है कि प्रत्येक मनुष्य अपने विरसे का आधा हिस्सा माता पिता से लेता है और बाकी का आधा और पूर्वजों से । निम्नलिखित चित्र में एक बच्चे का विरसा दिखलाया गया है

माता ($\frac{1}{8}$)	नानी $\frac{1}{8}$ $\angle$	माता
	१६	पिता
	नाना $\frac{1}{8}$ $\angle$	माता
	१६	पिता
पिता $\frac{1}{8}$ ४	दादा $\frac{1}{8}$ $\angle$	माता
	१६	पिता
	दादी $\frac{1}{8}$ $\angle$	माता
	१६	पिता

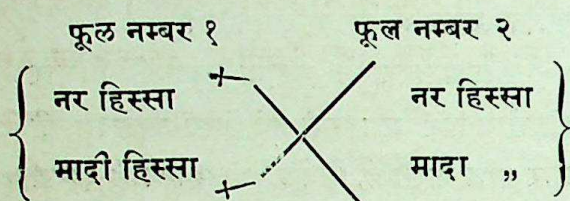
आधा माता पिता से है ($\frac{1}{8}$ पिता से और $\frac{1}{8}$ माता से) चौथा हिस्सा नाना, नानी दादा और दादी से लिया हुआ है आठवां हिस्सा दूर

पूर्वजों से लिया हुआ है इत्यादि इत्यादि । इस नियम से यह सिद्ध होता है कि विरसा केवल माता पिता से ही नहीं, परन्तु सब पूर्वजों से आता है और पूर्वजों की दूरी के अनुसार विरसे का परिणाम भी घटता जाता है ॥

बीज परम्परा के गणना सम्बन्धी विचार को छोड़ कर अब हम प्रयोगिक अध्ययन की ओर रुचि करते हैं, विरसे के सम्बन्ध में १८६६ ई० में मेंडल (Mendel) नामी एक पादरी ने प्रयोग करने आरम्भ किये । वह कई वर्ष धीरता से मटर के पौदे पर प्रयोग करता रहा और अन्त में बड़े लाभदायक नतीजे पर पहुँचा । इस नतीजे की वैज्ञानिकों ने उस समय बहुत परवाह न की क्योंकि डार्विन का सिद्धान्त अभी नया ही निकला था और उस पर बहुत विचार और चर्चा हो रहा था, किसी को मेंडल के नतीजे पर विचार करने का ध्यान न हुआ सब डार्विन के सिद्धान्त में लगे हुए थे । सन १८०० ई० में डी व्रीस (De Vries) नामक वनस्पति-शास्त्रवेत्ता ने मेंडल साहिब वाले प्रयोगों को स्वतः किया और उसी नतीजे का प्रकाश किया और यह नतीजा आजकल मेंडलिज्म (Mendelism) के नाम से प्रसिद्ध है ॥

कदाचित् कई पाठकगण इस बात को सुन कर हैरान होंगे कि क्या पौदों में नर (पुरुष) व मादा (स्त्री) होते हैं? वास्तव में साधारण फूलों में (गुलाब, सरसों इत्यादि) नर व मादा दोनों हिस्से विद्यमान होते हैं और दोनों के मिलाप से ही बीज उत्पन्न होता है । परन्तु हमें याद रखना चाहिए कि एक ही फूल के नर व मादा हिस्सों का आपस

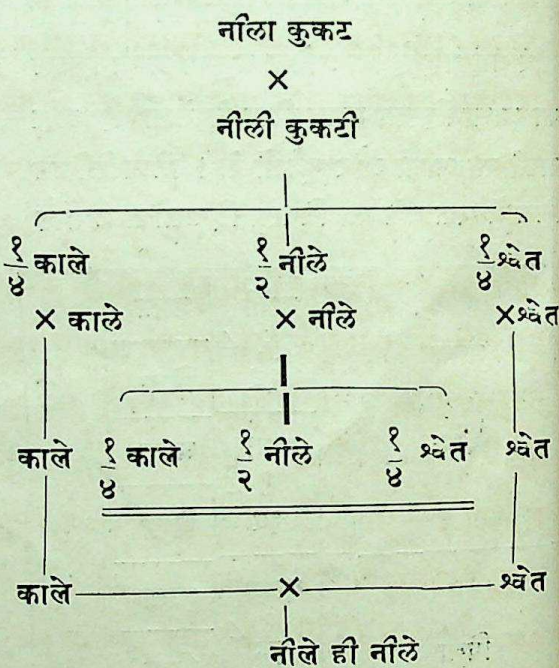
में संयोग नहीं होता, एक फूल के नर हिस्से का दूसरे फूल के मादा हिस्से से संयोग होता है और उस के मादा हिस्से का इस के नर हिस्से के साथ जैसे नीचे दिखाया गया है:—



यही नियम साधारण पौदों में वीजोत्पत्ति का है। मैंडल ने इस नियम को जान कर कई भिन्न २ प्रकार के मटरों के पौदों पर प्रयोग किए जिन का वर्णन हम अभी करेंगे। मैंडल के प्रयोगों को समझाने के लिए पहले हम एक सीधे से प्रयोग का वर्णन करते हैं ॥

एक नीले रङ्ग का कुकट होता है जिसे ऐण्डेलूसिया का (Andalusian) कुकट कहते हैं, यह जाति दोगली है। जब इस जाति के एक नर व एक मादा का जोड़ा बनाया जाए तो इन की सारी सन्तान नीले रङ्ग की नहीं होती, परन्तु केवल आधे बच्चे नीले रङ्ग के होते हैं। बाकी आधों में से एक चौथाई बिल्कुल काले होते हैं और बाकी एक चौथाई श्वेत रङ्ग के हैं केवल थोड़े से काले धब्बे उन पर होते हैं यदि ४ बच्चे उत्पन्न हों तो उन में से दो नीले एक काला और एक सफ़ेद होगा। अब यदि इन एक चौथाई काले कुकटों को आपस में जोड़ा जाए तो उन की सन्तान काली ही काली उत्पन्न होती है और इसी प्रकार यदि श्वेत कुकटों को (कुकट और कुकटियों को) आपस

में जोड़ा जाए तो उन की सन्तान सारी सफ़ेद होगी। परन्तु यदि नीले कुकटों को आपस में जोड़ा जाए तो इन में से फिर आधे नीले, एक चौथाई काले और एक चौथाई सफ़ेद निकलेंगे। अब यदि कालों की सन्तान में से एक कुकट या कुकटी का सफ़ेदों की सन्तान में से एक कुकटी या कुकट से जोड़ा मिलाया जाए तो सारी की सारी सन्तान नीले रङ्ग की उपजेंगी। निम्नलिखित वंशावली से इन प्रयोगों का तत्त्व विदित है:—



नोट—X जोड़ा मिलाने का चिन्ह है।

कर्मनारायण

(असमाप्त)

नारी उपयोगी पृष्ठ

धर्म-पति के नाम पत्र ।

(लेखक—श्रीयुत श्रीभगवानजी वा० ए०)

हमारे पड़ोस में एक महाशय रहते हैं । उन का शुभ नाम है परिणत सुखानन्दजी । आप कानपुर में एक स्कूल के हेड-मास्टर हैं । श्रीमती प्रेमदेवी—उन की धर्म पति—बड़ी सुशीला देवी हैं । मैं उन्हें सदा बहिन प्रेमदेवी कहकर पुकारा करता हूँ । परमात्मा ने इन के हां चार पुत्र और तीन पुत्रियां दी हैं । घर में बच्चों के लड़ने भिड़ने और रोने पीटने से तज्ञ आकर एक दिन प्रेमदेवीजी ने अपने पति को पत्र लिखा कि मैं बड़े क्लेश में फंसी हूँ । बच्चे बहुत सताते हैं । इस पर पं० सुखानन्दजी ने जो उत्तर दिया वह बड़ा ही शिक्षा प्रद है । बहिनजी की आज्ञा से उसे नीचे लिखता हूँ । आशा है दूसरी बहिनें भी इस से लाभ उठावेंगी ॥

पत्र ।

कानपुर

२८ फरवरी १९१४

प्राणों से प्यारी प्रेमदेवीजी, नमस्ते !

आप का प्रेम भरा पत्र मिला, देखने मात्र से ही चित्त गद्गद् प्रसन्न हुआ । मालूम होता है आजकल आपको बच्चों का रोना और

शरारतें करना सता रहा है । आप कहती हो कि मन दुःखी रहता है । प्रिये ! मन को दुःखित करने वाली बात ही कौनसी है ? । बच्चे सब जगह ही रोते और शरारतें करते हैं । उन का रोना और चिल्लाना देखकर मन को दुःखी कर लेने से उन का स्वभाव नहीं सुधर सकता । हां उपाय करने से बच्चे सुशील और घर सुखधाम बन सकता है । सुनिये !

शैशव काल (बचपन) में बोलना न जानने के कारण बच्चे रोने के सिवाय किसी और प्रकार से अपनी तकलीफ और जरूरत को दूसरों पर प्रकट नहीं कर सकते । इसलिये रोना उन के लिए जरूरी होता है । समझदार माता को चाहिये कि बच्चे के रोने का कारण मालूम करे, कि सर्दी लग रही है या गर्मी, भूका है या कोई और तकलीफ है । जब कारण को दूर कर दिया जावेगा तो बच्चा उसी वक्त चुप हो जायगा । कुछ महीनों के बाद बच्चे को समझ आ जाती है । इस समय बहुत से बच्चों को प्रायः रोने का स्वभाव सा हो जाता है, अर्थात् उन्हें तकलीफ तो कोई नहीं होती, केवल स्वभाव पड़ जाने से ही यूँ ही रोते रहते हैं । इसलिए मां को चाहिये कि शुरू से ही खयाल रखे कि बच्चों को कोई बुरी आदत न पड़ जाये । बहुत से बच्चों को हरवक्त गोद में रहने की आदत पड़ जाती है, ज़रा गोद से

अलग किया और रो पड़े। समझदार माताएं ऐसी आदतें बच्चों में पड़ने ही नहीं देती, क्योंकि एक बार जो आदत पड़ जाए फिर उस का दूर करना बड़ा कठिन हो जाता है। स्वाभावतः ही माता को अपनी सन्तान से बड़ी सहृदयता होती है, और वह नहीं चाहती कि बच्चे को किसी प्रकार का कष्ट हो, परन्तु ज़रा सा जी पक्का कर लेने से बच्चों में अच्छी २ आदतें पड़ सकती हैं जिससे माता और सन्तान दोनों सुख में रह सकते हैं। जिस समय बच्चे पहले पहल अन्न खाना शुरू करते हैं तब से लेकर ५-६ वर्ष की उम्र तक साधारणतया (आम तौर पर) वे बड़े हठीले और उपद्रवी (शरीर) होते हैं। इस उम्र में उन का परचाना और फुसलाना बड़ा कठिन होता है। वैसे तो वे हर बात पर हठ करते हैं, परन्तु खाने पर तो हद ही हो जाती है। इस का एक इलाज यह है कि खाने के लिए वक्त बांध रखने चाहियें, और समय पर पेट भर कर खाना खिला देना चाहिये, फिर कोशिश करनी चाहिए कि इन वक्तों के बीच में खाने की कोई भी चीज बच्चों की नजर न पड़े। जब खाने की चीज ही दृष्टि गोचर न होगी तो बच्चे कभी भी उसके लिये हठ न करेंगे। यद्यपि इतना प्रबंध (इन्तजाम) होना है तो कठिन परन्तु यत्न करने से आदत बहुत कुछ सुधर सकती

है। जिस वक्त बच्चे हठ करें, उस समय एक बात का ध्यान रखना जरूरी है और वह यह है कि उन्हें कभी भी मारा न जाए। मारने से बच्चे कदापि नहीं सुधरते। इसके अतिरिक्त उनपर किसी प्रकार का डर भी नहीं बठलाना चाहिये। मारने और डर बिठलाने से उनके कोमल कोमल हृदयों पर बड़ा बुरा असर पड़ता है। बहुधा ऐसा करने से सुधरने के स्थान में वे निर्लज्ज (वेशर्मा) हो जाते हैं। प्यार और दिलासे से उन्हें दश में रखना चाहिये। नमी से उनका ध्यान उस बात से फेर लेना चाहिये जिस के लिये वे हठ कर रहे हैं। ऐसा करने से थोड़े दिनों में ही वे आज्ञाकारी बन जाते हैं और हर एक बात को झट पट करने लग पड़ते हैं। कई बच्चे नमी और दिलासे से भी नहीं मानते और रोते ही जाते हैं। उनका इलाज यह है कि उन्हें एक ओर एकान्त में बिठादो और उनसे बात मत करो, थोड़ी देर में आप ही रोना बन्द कर देंगे, और कुछ देर अलग पड़ा रह कर अपने आप ही मां की गोदी में चले आएंगे। इस वक्त उन्हें प्यार से समझाना चाहिये। जब बच्चे यह देख लेते हैं कि उनके अकार्थ रोते रहने से काम नहीं चलता और कोई भी रोते वक्त उन्हें नहीं मनाता तो वे आप ही रोने का स्वभाव छोड़ देते हैं ॥

बच्चों के हठ की कोई गिनती नहीं, इस लिये उनके परचाने के विषय पर जितना लिखा जावे उतना ही थोड़ा है। परन्तु यदि माता विद्यावती हो, धवराहट को छोड़ कर सावधानता से काम लेनेवाली हो, और दिल को जरा सख्त बना सकती हो तो बच्चे बहुत कुछ ठीक रह सकते हैं। मेरे कहने का सारांश यह है कि बच्चों को रोने नहीं देना चाहिये, और रोना बन्द कराने के लिये मार पीट या डर डरावे से काम लेना बहुत हानि कारक है। जिन बच्चों को ज्ञान ही नहीं उन्हें मारने से क्या लाभ !

आशा है उपरोक्त बातों पर चलने से आप को बहुत कुछ सफलता प्राप्त होगी ॥

आपका स्नेही

सुखानन्द

बच्चों की बढ़ती हुई मृत्यु ।

वैसे तो भारत वर्ष में सब नर-नारी प्रायः छोटी उम्र में ही मरते हैं परन्तु बच्चों की मौतें तो खास कर बढ़ रही हैं। इसके यूँ तो बाल विवाह, गरीबी आदि कई कारण हैं किन्तु उन में चार मुख्य हैं। १-लोगों का गर्भवती स्त्रियों के शरीर की रक्षा पर ध्यान न देना और स्वास्थ्य (तन्दुरुस्ती) के नियमों को न जानना। २-बच्चा पैदा होने के वक्त जच्चा

और बच्चा की रक्षा के सम्बंध में दाई और डाक्टरों की भूल। ३-बच्चा पैदा हो चुकने पीछे जच्चा-बच्चा के खान-पान में खराबी। ४-बच्चे की हर प्रकार की बीमारी के इलाज का माता पिता को मालूम न होना, और डाक्टर, वैद्य, दाई और हकीमों का आलस्य।

गर्भिणी की शरीर रक्षा—कई प्रान्तों में यह स्वाज है कि गर्भिणी हो जाने पर स्त्री अपने मां-बाप के घर चली जाती है यह बड़ी उत्तम रीति है। गर्भवती स्त्री के पति के पास रहने से गर्भ के बिगड़ जाने का डर रहता है। सुसराल में वह बहुत ज्यादा दूसरों के आधीन रहती है। चाहे ताकत न भी हो तब भी उसे काम करना ही पड़ता है। जैसी इच्छा हो वैसा भोजन नहीं मिलता, और सुसराल वालों के व्यवहार से दुःखी रहना पड़ता है। इन बातों का बच्चे पर बहुत बुरा असर पड़ता है। गर्भवती नारी को साफ हवा मिलनी चाहिये, उसका चित्त सदा प्रसन्न रहे, उसका मन घरेलू झगड़ों से चिन्ता में न रहे। उसके पास मौसम के अनुकूल पहनने ओढ़ने, और बिछाने के कपड़े हों और उसे हलका परन्तु पुष्टिकारक भोजन मिलना चाहिये। जिस घर में सास-पतोहू और देवरानी-जेठानी में लड़ाई रहती है, उस घर में अच्छा बालक उत्पन्न नहीं हो सकता ॥

प्रसूत काल (बच्चा पैदा होन

के वक्त) जच्चा और बच्चा की रक्षा—
बच्चा पैदा होने से आठ आठ दस दस दिन पहले प्रसव-वेदना (पीड़ा) होनी शुरू हो जाती है। यह दो प्रकार की होती है एक सच्ची और दूसरी झूठी। कई मूर्ख दाइयाँ और डाक्टर झूठी पीड़ा को सच्ची समझ कर हाथ डाल देते हैं जिस से बहुत हानि पहुँचती है। बच्चा पैदा कराने में शस्त्रों की कभी सहायता नहीं लेनी चाहिये। प्रसूत अपने आप होने देना चाहिये। बच्चा पैदा होने पर दाई को जल्दी ही यह दो आवश्यक काम करलेने चाहियें। १—नाल-च्छेदन (नाडू-काटना) २—प्रसूता के शरीर की रक्षा। नाडू काट चुकने पर बच्चे के पेट पर पतले तनजेब का एक टुकड़ा बान्ध देना चाहिये और नहलाते समय ख्याल रखना चाहिये कि कहीं नाल न खिंच जाय। बहुत सी बीमारियाँ नाल के बुरी तरह खिंच जाने से ही उत्पन्न होती हैं ॥

बच्चा पैदा होने पर प्रसूता स्त्री के ओढ़ने और बिछौने के सब कपड़े दो तीन घण्टे बाद बदल देने चाहियें। प्रसूता के कमरे में शान्ति रहनी चाहिये और उसे आराम से सोने देना चाहिये ॥

जच्चा बच्चा का खान-पान—

जच्चा-बच्चा के खान-पान में हमारे देश में जरूरत से बढ़कर सख्ती की जाती है, जो कि ठीक नहीं। बच्चा पैदा होने के २४ घण्टे बाद शुद्ध तरकारी के साथ हलके अन्न-जैसे बाजरा-की रोटी दी जा सकती है। छः दिन भीत जाने पर उसे दूध देने से हानि नहीं। छः दिन तक हलका अन्न देने का मतलब यह है कि तीसरे चौथे दिन प्रसूता के स्तनों (थनों) में दूध के उतरने से उसे ज्वर आ जाता है। भारी अन्न खाने से ताप के विगड़ जाने का डर है। यह ताप छूटे सातवें दिन जाता रहता है ॥

माता का दूध बच्चे के लिए सब से अच्छी खुराक है, परन्तु इस देश में स्त्रियाँ अकसर किसी न किसी रोग में फंसी रहती हैं, इसलिये उनका दूध भी अच्छा नहीं रहता। अतएव जन्मते ही बच्चे को पहले गाय का दूध ही पिलाना चाहिये। फिर कभी गाय का कभी माता का इस प्रकार अदल बदल करते रहना चाहिये। अंग्रेजी बोतल से दूध पिलाना नुकसान देता है क्योंकि उसका साफ रखना कठिन है। इसलिये चान्दी के चम्मच से ही दूध पिलाना अच्छा है। ६ महीने तक जितना दूध हो उतना ही उस में गर्म पानी मिलाकर और थोड़ा सा मीठा डालकर पिलाना चाहिये ॥

ज्यों ही माता को फिर रजो दर्शन (स्त्रियों का मासिक धर्म) होने लगे, त्योंही बच्चे को दूध पिलाना बन्द कर देना चाहिये। गर्भवती स्त्री का दूध तो भूलकर भी बच्चे को नहीं देना चाहिये। जब तक बच्चा दूध पीता रहे तब तक स्त्री को सदा पुरुष से दूर रहना चाहिये ॥

जिन गरीबों से ऊपर लिखी बातों पर चला न जाये उन्हें चाहिये कि जन्मते ही बच्चे को पहले माता का दूध न पीने दें। चमचे से गाय का दूध पिलाकर बीच बीच में माता का पिलाया जाय। जिन के बच्चे नहीं जीते उन्हें यह बात न भूलना चाहिये। दूध में आधा गरम पानी जरूर मिला लेना चाहिये ॥

बच्चे की बीमारियों का इलाज— बच्चों की सारी बीमारियां पेट और आन्तों में गड़बड़ होने से ही होती हैं। माता के खान पान का बच्चे के स्वास्थ्य (तन्दरुस्ती) पर बड़ा असर पड़ता है। मैंने बच्चों की कोई ऐसी बीमारी नहीं देखी जिसे चमचा भर अरिण्डी के तेल (कैस्टर आलय) से आराम न हो सकता हो। तेज अंग्रेजी दवाएं बच्चे को भूल कर भी नहीं देनी चाहियें। केलोमिल, जाल्प, सेंटोनाइन, और ब्रोमाइड्स-इन चार दवाओं को छोड़कर तीन वर्ष के बच्चे को और कोई भी अंग्रेजी दवाई न देनी चाहिये। हिन्दुस्तानी

दवाओं में सनाय, काला नमक, छोटी पीपल, आंवला, गन्धक आदि कुछ औषधियां अच्छी हैं ॥

एक वैद्य ने कहा है कि बच्चों के पेट पर वृत्तों के पत्तों को गर्म करके सेक देना दश वैद्यों के बराबर है। और छोटी हड़ का खिलाना दश माताओं के सेवा करने के समान है ॥

डाक्टर यू० ऐल० दसाई एम० डी० के सरस्वति में छपे एक लेख का भाव ॥

स्त्रियों की शारीरिक अवस्था

लगडन की स्वास्थ्य-रक्षा—समिति में डाक्टर मर्रे लज़ली ने “नारी जीवन में अत्यन्त परिश्रम” पर व्याख्यान देते हुए कहा कि—वर्तमान शिक्षा प्रणाली के अनुसार बच्चों को जो पुस्तकें रटना और पारस्परिक मुकाबला करना पड़ता है इस का अतीव हानिकारक परिणाम निकलता है। स्त्रियों से यह आशा करना कि पढ़ाई और खेलों आदि में पुरुषों का मुकाबला करें, स्त्री-जाति और मनुष्य समाज के साथ अनर्थ करना है। इसी लिए आजकल जो स्त्रियों में स्वतन्त्रता और उद्धार की पुकार मच रही है, इस का भयानक परिणाम है। मताभिलाषिणी स्त्रियों (सफरेजदस) को सफलता प्राप्त होजाने से नारियों को जीवन संग्राम में सख्त परिश्रम करना

पड़ेगा । जबतक लड़की बढ़कर पूर्ण रीति से युवावस्था को प्राप्त न हो जाय उस पर मानसिक परिश्रम का भार नहीं डालना चाहिए ॥

यौवन के आरम्भ में कन्याओं का जीवन शान्ति-पूर्ण होना चाहिए—अर्थात् सोना, खुली वायु में व्यायाम करना, उत्तम भोजन और नियम-पूर्वक बदल बदलकर पहना और खेलना उन की दिनचर्या हो । स्कूल में लड़की को गणित महोपाध्याय, या साहित्याचार्य बनाने के स्थान में एक उत्तम पाचिका (रसोइया) बनाना अधिक लाभदायक है । कोई भी तंग कपड़ा भिचकर नहीं पहनना चाहिये, क्योंकि इस से शरीर में लहू की गति, सांस के आने जाने और भोजन के पचने में रुकावट पड़ती है । बाल्यावस्था में कमर, छाती या किसी और भाग पर कभी भी तंग कपड़ा नहीं पहनने देना चाहिये । इस से गर्भाशय (कुख) उतर जाता है, और पिछली आयु में असंख्यात रोग खड़े होजाते हैं ॥

विवाह और मातृ-धर्म के सम्बन्ध में आपने कहा कि स्त्री-पुरुष-संयोग सम्बन्धी रोगों का अन्वेषण (तहकीकात) करने के लिए जो सरकारी कमिशन नियत हुआ है उस से तब ही कुछ लाभ होसकता है यदि यह कानून बन जाए कि विवाह से पहले प्रत्येक स्त्री और पुरुष डाक्टर से सर्टिफिकेट (सनद) लावे कि उस

में छूत की कोई बीमारी नहीं, या विवाहों को रजिस्टर में लिखने वाले सरकारी रजिस्ट्रार के सामने अथवा किसी और माननीय पुरुष के सामने इसी प्रकार का कानूनी तौर पर ब्यान दें । जिसे कोई ऐसी परम्परा गत बीमारी हो उसे कदापि विवाह की आज्ञा न दी जाए ॥

डाक्टर महोदय ने कहा—कि यदि तमाम अवस्थाओं में मृत्यु की औस्त निकाली जाए, तो स्पष्ट मालूम हो जाएगा कि अविवाहिता रहने वाली स्त्रियां ब्याही हुई स्त्रियों की अपेक्षा ज्यादा मरती हैं, यद्यपि इन का अन्तर इतना बड़ा नहीं जितना कि अविवाहित रहनेवाले पुरुषों की और ब्याहे हुए पुरुषों की मौत में है । इङ्गलिस्थान के मौतों के रजिस्टर को देखने से मालूम होता है कि एक मास से कम आयु वाले बच्चों में मौतों का परस्पर सम्बन्ध १३० लड़कों के लिये १०० लड़कियों का है । उन्होंने यह भी कहा कि बड़ी उत्तम बात होगी यदि हमारे स्वास्थ्य-रक्षा विभाग के अफसर बहुत से ऐसे मनुष्य नियत करें, जो लड़का उत्पन्न होने पर लोगों के घर जाकर उसे भली भान्ति देखें ॥

ऊनी कोटों का धोना ।

बच्चों के ऊनी गरम कोट धोने के लिये सब से अच्छा दिन वह है, जबकि खूब हवा

चल रही हो, ताकि जहां तक हो सके कोट जल्दी ही सूख जाए। एक तोला सूखे अमोनिया की डली (Jump ammonia), कपड़े धोने का कतरा हुआ साबन, और कोई छटांक भर पिसा हुआ सुहागा लो। एक बड़ी वाल्टी या पतीले में काफी पानी डाल लो। यदि कोट नया हो तो उसे एक वाल्टी में गर्म पानी डालकर और उस में बड़ी चुटकी भर नमक और अमोनिया घोलकर कोट को आध घण्टा तक भिगोकर खूब मलो, ताकि उस में लगी हुई सारी 'पान' निकल जाए। यदि 'पान' इस प्रकार न निकाली जायगी तो धोते समय मैल निकलती ही रहेगी ॥

साबन को बारीक कतर कर गरम पानी में भली भान्ति घोल लो ताकि कोई न घुला टुकड़ा न रह जाए। फिर वाल्टी में और गरम पानी डाल कर सारी को भर लो और उस पानी में पिसा हुआ सुहागा मिलादो। तब कोट को आहिस्ता से निचोड़ कर उस साबन वाले पानी में डालदो और भली भान्ति पांछों या हाथों से मलो जहां तक कि रत्ती भर भी मैल न रह जाय। यदि कोट बहुत मैला हो तो साबन वाले पानी के दो भाग करके पहले आधे में फिर वहां से निचोड़ कर दूसरे में भलीभान्ति मला जाए (पंजाबी-मण्डना) ॥

कोट को साबन वाले पानी से निकाल

कर गरम पानी से दो बार धोया जाए ताकि जरासा भी साबन लगा न रहे, नहीं तो सूख कर कपड़ा सुकड़ जायगा। जब अन्तिम बार खाली गरम पानी से धोने लगो तो उस में चमचा भर सिरका मिला लो, इस से कपड़ा निखर आएगा ॥

तब कपड़े को खूब तरह से निचोड़ कर हाथ में पकड़ो और भली भान्ति लटकाकर झड़काओ ताकि बल निकल जाएं। फिर सीवन (जहां कपड़े के दो किनारे मिला कर सिले होते हैं) को ठीक तरह से बिठा दो और गोदाम लगाकर खूटी पर सूखने के लिये लटकादो, और कभी २ जहां नीचे पानी उतर कर इकट्ठा होगया हो निचोड़ कर निकालदो। इस प्रकार कपड़ा ठीक तरह सूखता है और बल नहीं रहते। शाम को उठाकर अन्दर लटका देना चाहिये ॥

कपड़े धोने का देशी साबन बनाने की विधि।

एक विद्वान का कथन है कि देश की सभ्यता का पता इस बात से लगता है कि उस में साबन की कितनी खपत होती है। यह चाहे सर्वांश सत्य न हो, परन्तु इस में सन्देह नहीं कि विद्या के प्रचार के साथ २ साबन

की खपत भी बढ़ रही है । नीचे हम एक आसान तरीका लिखते हैं जो कि अनुभव सिद्ध है और हर कोई इस प्रकार साबन बना सकता है :—

*कास्टिक सोडा १ पाव, मीठातेल ३॥
साढ़े तीन पाव, गेहूं का मैदा १ पाव, पानी १ सेर यह चार चीजें लेलो । फिर सोडे को पानी में डाल कर रखदो ताकि घुल जाए । उधर मैदे को तेल में भली प्रकार घोल दो, जहांतक कि कोई गटी न रह जाए । फिर घुले हुए कास्टिक को तेल में आहिस्ता-दाल कर पीतल या लोहे की कड़खी या लकड़ी के ढण्डे से जल्दी २ खूब हिलाओ । हिलाते २ साबन जम जाएया । तब टिकियां काटी जा सकती हैं । कास्टिक-सोडे को हाथ नहीं लगाना चाहिये, क्योंकि पानी में लगनेसे जलन पैदा होती है ॥

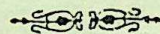


फिरणी ।

फिरणी एक बड़ी स्वादु चीज़ है । इस के बनाने की विधि निम्न लिखित है ।

१. छटांक चावल रात को पानी में भिगो रखो । प्रातः उठकर कूएडी ढगडे से उसे

खूब घोट लो । तब उन पिसे हुए चावलों को एक सेर दूध में मिलाकर खीर की तरह आग पर पकाओ और साथ २ कड़खी से हिलाते भी जाओ ताकि गिलटी न बंध जाय । जब फालूदे की तरह गाढ़ा होजाए तो खाण्ड या बूरा मिलाकर नीचे उतार लो । और मिट्टी की छोटी २ कोरी प्यालियों में डाल कर ठण्डी जगह रख छोड़ो । फिरणी के ऊपर बादाम, पिस्ता, इलायचीदाना, चान्दी के बर्क इत्यादि लगा देनेसे और भी स्वादिष्ट हो जाती है । जब ठण्डी हो जाय तो चमचे से खाओ ॥



बेटी की विदा

(कविता-कुमुम-माला से उद्धृत)

“कमला के पत्र ” के एक अंग्रेजी पद्य का अनुवाद । विवाह हो जाने पर लड़की की माँ, लड़के की माँ को अपनी लड़की सौंप रही है । मूल अंग्रेजी कविता दक्षिण की है । वहाँ यह चाल है ॥

प्यारी बहिन ! सौंपती हूँ मैं अपना तुम्हें खिजाना ।
हे इस पर अधिकार तुम्हारे बेटे का मनमाना ॥
रक्त मांस और हाड हमारा है यह बेटी प्यारी ।
करो इसे स्वीकार हुई यह अब सब भाँति तुम्हारी ॥ १ ॥
पूजे कई देवता हमने तब इसको है पाया ।
प्राण-समान पालकर इसको इतना बड़ा बनाया ॥
यही आत्मा आज हमारी हम से बिछुड़ रही है ।
समझाती हूँ जी को तो भी धरता धीर नहीं है ॥ २ ॥

* कास्टिक-सोडा बाज़ार में अंग्रेजी दवाई बेचने वालों के पास से सस्ता ही मिल सकता है ॥

बहिन ! डिटाई माता की तुम मन में नेक न धरियो ।
 इस कोमल बिरवा की रक्षा बड़े चाव से करियो ॥
 है यह नम्र मेमने से भी भीरु मृगी से बढ़कर ।
 कड़ी बात या चितवन से यह कैप जाती है थर थर ॥ ३ ॥
 है गँवार यह भोली भाली, नहीं शिथला जाँने ।
 तौ भी यह गुरु-जन की आज्ञा बड़े प्रेम से मानै ॥
 सौँच में तुम इसे ढालियो, कभी ना यह तड़केगी ।
 बहिन ! सिखाने से चतुराई, बेटी सीख सकेगी ॥ ४ ॥
 यह गुड़िया, यह लक्ष्मी अपनी जीवन-मूल दुलारी ।
 हृदय थाम कर करती हूँ मैं अब आँखों से न्यारी ॥
 माता-नेह सोच तुम मन में दुःख मेरा अनुमानो ।
 छुपै नहीं है प्रीति छुपाए, बहिन ! सत्य यह जानो ॥ ५ ॥
 इसका रूप निहार दिव्य मैं पल पल सुख पाती थी ।
 गान समान सुरीली बोली इसकी मन भाती थी ॥
 बहिन ! तुम्हें भी ये सब बातें जान पड़ेंगी अगे ।
 अपने नैन रखोगी इस पर जब तुम नित अनुरागे ॥ ६ ॥
 इसकी मंद हंसी से मेरा सुख अति बढ़ जाता था ।
 कठिन घाव भी इस से दुःख का अच्छा हो जाता था ॥
 इसे उदास देख आँखों में भर आता था पानी ।
 छुपी नहीं है बहिन ! किसी से माता-प्रेम कहानी ॥ ७ ॥
 बड़ी लालसा भी निज मन की इसने नहीं बताई ।
 कर संकोच कठिन पीड़ा भी अपनी सदा छुपाई ॥
 तौ भी मैं सब लख लेती थी इसके बिना कहें ही ।
 योंही तुम इसकी सब बातें, लखियो, बहिन स्नेही ॥ ८ ॥
 अपना मांस-पिण्ड देती हूँ मैं तन से कर न्यारा ।
 है यह जीवन मेरे जी का आँखों का है तारा ॥
 इस अनाथ बच्चे का पालन माता-सम तुम कीजो ।
 मेरी इस बल-हीन दशा में बहिन ! बाँह गह लीजो ॥ ९ ॥

करो बहिन ! स्वीकार दिया कर मेरी इतनी बिनती ।
 बच्चों में अपने तुम करियो इस बेटी की गिनती ॥
 दीजें बहिन ! भरोसा मुझको हाथ हाथ में देकर ।
 बेटी-सम पालोगी इसको हम माता-सम होकर ॥ १० ॥
 मेरी यह आँखें पीती थीं नित जो रूप मनोहर ।
 क्या इसके दर्शन का मुझ को फिर न मिलेगा अवसर ॥
 जिस बोली से धीरे धीरे इस बुलाती थी मैं ।
 क्या वह भी अब मूक रहेगी रख जी की जी ही मैं ॥ ११ ॥
 हा मेरी अनमोल लाडली ! प्राणाधार ! दुलारी !
 क्या तू मुझे नहीं समझेगी अब अपनी महतारी ! ॥
 तुझे नई माता मिलती है, मैं तुझको खोती हूँ ।
 यही सोच सुख में भी तेरे बेटी ! मैं रोती हूँ ॥ १२ ॥
 हाय ! आज से हुआ हमारा यह घर भरा अन्धेरा ।
 होकर निपट निरास न क्यों अब हृदय फटेगा मेरा ॥
 अब मेरे इस सुने घर को उजला कौन करेगी ।
 कौन मधुर बातों से मेरा रीता हृदय भरेगी ! ॥ १३ ॥
 कौन सुरीली बान बजाकर, मधुर गीत गावेगी ।
 घर में कौन लड़कियाँ छोटी न्योत न्योत लावेगी ॥
 सखियों के संग कौन खायगी, खेलेंगी, झूलेंगी !
 किस को सुन रामायण पढ़ते यह छाती फूलेंगी ॥ १४ ॥
 हा बेटी ! हा गुड़िया मेरी ! हा मेरी सुकुमारी !
 तेरे बिना हृदय यह मेरा पावेगा दुःख भारी ॥
 केवल देव दयामय जो दुःख जान सकें है जन का ।
 वही धीर दे दूर करेगा संकट मेरे मन का ॥ १५ ॥
 जाकर दूर वहां है बेटी ! मुझे भूल मत जाना ।
 कभी कभी इस दूखिया की भी सुध निज मन में लाना ॥
 रो मत, बेटी ! जा अपने घर, संग नई माता के ।
 लीजें बहिन ! इसे अब मुझसे, देती हूँ सिर नाके ॥ १६ ॥
 कामता प्रसाद गुरु ।

विविध विषय

लण्डन से पीकन तक पांच दिन में

जिस तेजी के साथ आजकल आकाशचारी विमानों को उन्नत करने में विज्ञान लग रहा है, उसे देखकर एक फ्रांसीसी विज्ञानी कहता है कि पांच बरस के अन्दर अन्दर मनुष्य वायु मार्ग से पैरिस नगर से लण्डन तक दो घण्टों में, एडनवर्ग और बर्लिन तक पांच घण्टों में, मास्को १६ घण्टों में और पीकन (चीन की राजधानी) तक ५ दिन में पहुँच सकेंगे ॥

संसार के सब से ऊँचे वृक्ष

पहले ख्याल किया जाता था कि अमैरिका का Sequoia Wellingtonia सीकोआ वलिङ्गटोनिया नामक वृक्ष सब से ऊँचा है परन्तु अब पता लगा है कि आस्ट्रेलिया के गम नामक जाति की एक यूक्लिप्टस अमिगडलीना नामक उपजाति के वृक्ष उस से अधिक ऊँचे हैं। डण्डेनाङ्ग धार में यह वृक्ष ४८० फुट ऊँचा मिलता है। इन में कई वृक्षों की परिधि ५३ फुट है। आस्ट्रेलिया के एक वनस्पति शास्त्रज्ञ ने खोज की है कि इस की परिधि ३०० बरसों में ६ फुट बढ़ती है। इस से पता लगता है कि इन वृक्षों की उम्र एक दो सहस्र वर्ष से कम नहीं होगी ॥

विमान द्वारा संसार यात्रा

अमरीका के सान फ्रांसिस्को नगर में जो १९१५ ई० में एक बड़ी प्रदर्शनी (नुमायश) होने वाली है उसके सम्बंध में Aero Club एअरो क्लब ने २०,००० पौण्ड का पारितोषिक (इनाम) उस मनुष्य को देने की घोषणा की है जो ६०

दिन में विमान पर चढ़कर वायु के मार्ग से सारे संसार की यात्रा समाप्त करेगा ॥

प्रो० राममूर्ति लुट गये—२ फरवरी को समस्ती पुर (विहार) में प्रो० राममूर्ति का मैडल कोट किसी ने उड़ा लिया। उस कोट में ९८ सोने के पदक (तमगे) एक सोने की घड़ी और चैन, तथा एक पांच हजार रुपये का चन्द्रहार था। पता लगाने वाले को प्रोफेसर साहब ५०० रुपये का इनाम देंगे ॥

स्त्रियों की कांग्रेस—यूरोप के भिन्न २ देशों की स्त्रियों ने मिलकर एक सर्वराष्ट्रीय महासभा बनाई है। उन्होंने ने अपने कामों को निम्नलिखित भागों में बांटा है। दीन दुखियों की सहायता, आरोग्यता (तन्दरुस्ती) के नियमों के ज्ञान का फैलाना, शिक्षा का प्रचार, नीति, मेहनत, सम्मति अधिकार (राये देने का हक), साहित्य और शान्ति। इन देवियों का उत्साह सराहनीय है ॥

दहेज न देसकने से आत्य हत्या—कलकत्ते में एक चौदा वर्ष की स्नेहलता नामक ब्राह्मण कन्या की एक विद्यार्थी के साथ मङ्गनी हुई थी। लड़के वाले दो हजार रुपये दहेज माङ्गते थे। लड़की का बाप हीरेन्द्रचन्द्र मुकरजी अपना मुकान रहन (गहने) रखकर रुपया प्राप्त करने की चिन्ता में था। लड़की मुकान रहन रखने के विरुद्ध थी। उसे इस से इतना संघट्ट (शोक) हुआ कि जलकर मर गई। और पिता को विवाह की घोर चिन्ता से मुक्त कर गई। हिन्दुओं को इस देवी के देह त्याग से कुछ शिक्षा लेनी चाहिये ॥

लकड़ी के बुरादे से शक्कर बनाना—चक-
न्दर और आलू की चीनी तो बनती ही थी।
अब लकड़ी के बुरादे से भी शक्कर और खाण्ड
बना करेगी। मिस्टर क्लासन ने एक ऐसी विधि
निकाली है जिस से सौ मन बुरादे से २५ मन
उत्तम खाण्ड तैयार हो सकेगी। इस २५ मन
खाण्ड से २० मन शराब बनाई जा सकती है।
इस से बुरादे की कीमत बढ़ जायगी ॥

दुर्लभ टिकटों का मूल्य—लार्ड क्राफर्ड
ने अपने इकठ्ठे किये हुए टिकट ३ लाख रुपये
को बेचे हैं। एक व्यक्ति ने अपने टिकट ४५
हजार पौण्ड को बेचे थे। सब से ज्यादा टिकट
एक फ्रांसीसी के पास हैं। यह १८६० ई० से
जमा करने लगा था। इस वक्त वह ८ लाख २०
हजार भिन्न २ प्रकार के टिकट जमा कर चुका
है। इनके इकठ्ठा करने पर उसका तीन लाख
पौण्ड खर्च आ चुका है। टिकटों का एक समूह
तीन हजार पौण्ड को और दूसरा ८ हजार
पौण्ड को मोल लिया था। उनका मूल्य आज
२० हजार और पचास हजार पौण्ड है ॥

६२ बच्चों का बाप—स्काटलेण्ड में एक
जुलाहे और जुलाही के ६२ बच्चे हैं जिन में ५०
जवान हो चुके हैं। इन के दस बच्चे औरों ने
गाद ले लिये, शेष इन्हीं ने अपने आप पाले।
एक रुसी पिता के ८७ बच्चे हो चुके हैं। उसकी
दो स्त्रियाँ थीं। पहली स्त्री से ६९ बच्चे हुए।
पहली स्त्री से चार बार चार चार बच्चे, सात
बार तीन तीन बच्चे, और सोलह बार दो दो
इकठ्ठे बच्चे हुए ॥

छोटे से छोटा एंजन—भाप का ऐसा
छोटा एंजन बनाया गया है जिस का भार गेहूँ
के चार दानों के बराबर है। यह इतना छोटा है
कि साधारण मक्खी भी इस से बड़ी लगती है
यह सोने और लोहे का बना हुआ है। आध
सेर में ऐसे २००० एंजन चढ़ सकते हैं। इसका
चक्र एक मिनट में ६००० चक्कर लगाता है। इस
के चक्कर दीख नहीं पड़ते, मच्छर जैसा शब्द
सुनाई देता है। इस एंजन में एक घोड़े की
शक्ति है ॥

हिन्दू यूनिवर्सिटी—महाराजा बीकानेर ने
अपना एक लाख का चन्दा दे दिया है, अब
यूनिवर्सिटी के पास ४३ लाख रुपये वसूल
हो गये हैं ॥

पृथ्वीराज रासो—कविवर चन्दबरदायी
की प्रसिद्ध पुस्तक 'पृथ्वीराज रासो' के नाम से
पाठक अपरिचित न होंगे। अब एक महाशय
नन्हूराम भाट जो कि अपने को रचयिता के
वंशीय बताते हैं कहते हैं कि जो रासो आजकल
मिलता है वह चन्द कृत नहीं, उसके लड़के भल्लू
का लिखा हुआ है। असली रासो के कुछ पत्र
उन के पास हैं। बङ्गाल की रायल एशियाटिक
सोसाइटी के कहने पर इस रासो तथा राजपू-
ताने और गुजरात की बोलियों में लिखे हुए और
पेतिहासिक ग्रंथों के सम्पादन के लिए सरकारने
इटली देश के साईनर टेस्सिटीरी नामक विद्वान
को बुलाया है ॥

सम्बन्धीनतार का वाणिज्य को लाभ—
केला एक अति स्वादु और पुष्टिकारक फल है।
परन्तु यह केवल गरम देशों में ही होता है और

वहां से ही जहाजों के जहाज भर कर इङ्गलि-स्थान आदि देशों में जाता है। केले को जब कि वह आधा पक चुका हो तोड़ कर बन्दकर भेजते हैं ताकि दूसरे देश में जाते तक पक जाये। कई बार ऐसा होता था कि समुद्र में आन्धी के आजाने के कारण जहाज रास्ते में ही रुक जाते और कई कई दिन लंगर डाले पड़े रहते थे, जिस से फल सड़ जाते थे। अब हर एक सौदागरी जहाज पर सम्बंधहीन तार का यंत्र लग गया है। जब मौसम खराब हुआ झट तार द्वारा समाचार भेज कर सहायता के लिये दूसरे जहाज बुला लिये जाते हैं ॥

लाहौर मैडीकल कालेज के छात्रों की स्त्रायक—लाहौर मैडीकल कालेज के छात्रों ने अपने अध्यापकों के बुरे सलूक से तंग आकर एक दम कालेज जाना बन्द कर दिया है। और नियम पूर्वक अपनी सब तक्कीफों का व्यौरा प्रार्थना पत्र सहित प्रिन्सिपल साहब के पास भेजा है। परन्तु अभी तक न ही प्रिन्सिपल साहब ने उनकी तक्कीफों को दूर करने की प्रतिज्ञा की है और न ही विद्यार्थी कालेज में गये हैं। यह घटना एक भयानक रूप धारण करती जा रही है ॥

देवी स्नेहलता का अन्तिम पत्र—स्नेहलता नामक जिस बंगाली कन्या की आत्महत्या का समाचार पाठक ऊपर पढ़ चुके हैं वह अपने कपड़ों को आग लगाने से पूर्व निम्नलिखित चिट्ठी अपने पिता के नाम लिखकर छोड़ गई। चिट्ठी के पढ़ने से करुणारस का समुद्र उमड़ पड़ता है और पाषाण हृदय भी द्रवीभूत हो जाता है:—

परम पूज्य पिता जी !

मैं इस बात को सहन नहीं कर सकती कि आप मेरे विवाह के कारण अपने घर को गहने (रहन) रखने के विचार तक को भी अपने मनमें लाएं। नहीं आप को ऐसा नहीं करना पड़ेगा। आप को ऐसा करने की कुछ आवश्यकता प्रतीत न होगी, क्योंकि प्रातः उषा काल से पूर्व ही आप की कन्या की आत्मा जिस ने आप के घर न जाने किस अशुभ घड़ी में जन्म लिया है, किसी ऐसे स्थान में जा पहुंचेगी जहां इस मर्तलोक की आवाजें नहीं पहुंच सकतीं जहां सब प्रकार की शान्ति का ही राज्य है ॥

आप ने मुझे हर प्रकार के प्रेम का पात्र बनाया, और मेरे स्नेह की कोमल और सूक्ष्म लता को अपने हृदय में लिपटने की आज्ञा दी मैं अपने लाड प्यार करने वाले माता पिता के प्रेम से ही ऐसे आनन्द में रही कि वह आनन्द राजकुमारियों को कभी स्वप्न में भी प्राप्त नहीं हो सकता। तो क्या मैं आप के इस समग्र प्रेम भण्डार का आपको यह प्रतिफल दूँ कि मेरे प्यारे पिता जी, आप को और सब घर वालों को मेरे कारण घर से निकल कर भिखारियों की नाई आयु पर्यन्त दुःखी और दरिद्र रहना पड़े ॥

परसों जब आप प्रातः काल के घर से निकले हुए थकान से चिकना चूर हो कर घायल पैरों के साथ बहुत रात गये लौटे तो मैं ने आप के मुख मण्डल पर संसार भर के कष्ट क्लेशों, दुःख और चिन्ताओं को देखा और अपने कानों आप के मुँह से यह हृदय वेधक शब्द “सर्वनाश

हो गया" सुने। उस समय से आप की आकृति का चित्र सदैव मेरे नेत्रों के आगे रहा है और यह शब्द मेरे कानों में गूँजते रहे हैं। मैं ने इस हृदय विदारक कथा को आदि से अन्त तक सुना कि किस प्रकार वह महत्व पूर्ण बात जिस के विषय में आप को पूर्ण आशा थी कि आप के द्वारा हो जायगी, और जिस से आप को मेरे विवाह के खर्चों को पूरा करने के लिये धन मिलने का विचार था, ठीक अन्तिम समय में आप के हाथ से निकल गई, और किस प्रकार मेरे विवाह के खर्चों से छुटकारा पाने का अब अन्तिम उपाय केवल यही रह गया है कि आप अपनी जायदाद को गहने रखकर इस पर रुपया प्राप्त करें ॥

प्यारे पिता जी ! मैं यह विचार सहन नहीं कर सकती। यह विवाह मेरे लिये इस के अति रिक्त और क्या है कि मेरे विषय में चिन्ता का जो भारी बोझ हर वक्त आप की छाती पर सवार रहता है वह दूर हो जाये। मेरे अब तक कैवारे रहने पर बरादरी में आप ने कौन २ से ताने सहन नहीं किये। आप ने मेरे लिये योग्य वर ढूँढने में कौन सा कठिन से कठिन यत्न नहीं किया, चाहे आप को इन में से किसी में भी सफलता प्राप्त नहीं हुई ॥

नहीं नहीं, मेरे पूर्वजों के आंगन में दूसरे लोग पांव नहीं रख सकेंगे। और इस की दीवारें अपरिचित ध्वनियों से नहीं गूँजेंगी। प्यारे पिता जी ! मैं आप की बलि नहीं होने दूंगी बल्कि अपने आप को स्वाहा कर दूंगी ॥

हे प्यारे जन्म दाता, आज्ञा दो, विदा करो,

अपने आप को स्वाहा करने का समय आगया है। सारा संसार, स्वयं प्रकृति-माता शान्ति पूर्वक सो रही हैं, और ज्यादा देर होने से पहले ही मैं भी ऐसी प्रगाढ़ निद्रा में सो जाऊंगी जिस से फिर कोई जागना जानता ही नहीं। विचित्र आनन्द-दायक अशान्ति मुझ पर छाई जा रही है। और अब मैं ऊपर अपने नवीन घर में देवी माता के चरण-कमलों में निवास करने के लिये जाती हूँ, जहाँ मैं ऐसे ही आराम से रहूंगी जैसे कि आप की प्रेम भरी छाती पर लेटती थी। मुझे केवल कुछ काल के लिए जबतक आप और माताजी वहाँ न पहुँचें आप के दर्शनों के लिये प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ॥

आप की अभागिनी पुत्री
स्नेह-लता

उपरोक्त पत्र पर किसी टिप्पणी की आवश्यकता नहीं। केवल इतना लिख देना ही पर्याप्त है कि देवी का बलिदान निष्फल नहीं गया। बंगालियों जैसी प्रत्येक सामाजिक सुधार की विरोधिनी जाति भी इस हत्या से कांप उठी है। कलकत्ते में सभाएं हुई हैं, जहाँ बहुत से नव-युवक बंगालियों ने प्रतिज्ञा की है कि हम लड़की के माता पिता से उन की इच्छा के विरुद्ध और उन की सामर्थ्य से बढ़कर दहेज कभी नहीं लेंगे ॥

भूकम्पों का देश-भूकम्प (भूचाल)
जितने जापान देश में आते हैं उतने संसार भर के किसी भी अन्य देश में नहीं आते। जापान के सारे साम्राज्य में एक साल के अन्दर प्रायः एक हज़ार चार सौ बार और अकेले टोकियो नगर में औस्तन ५० बार भूकम्प होता है। इस-

लिये जापानी लोगों ने अपने घर ही ऐसी वैज्ञानिक रीति से बनाए हुए हैं कि पृथ्वी के कम्पन से उन्हें बहुत ही कम हानि पहुंचती है ॥

आश्चर्य की बात है कि जापान में जो पुराने पगोडे (मन्दिर) हैं उन में भी वर्तमान भूकम्प विद्या से काम लिया गया है। अर्थात् एक स्थान पर जमा रहन वाला और सर्क जाने वाली दो प्रकार की इमारत (भवन) को इस प्रकार जकड़ा जाता है कि दोनों के मिलने से एक बराबर तुला हुआ मुकान बन जाता है जिस पर कि भूकम्प का कुछ असर नहीं होता। पांच छत्तों वाले हर एक पगोडे के अन्दर छत के साथ एक भारी शहतीर, बाहर निकली हुई जिब्हा की भान्ति, लटका रहता है। जब भूकम्प का धक्का लगता है तो यह पैण्डूलम आहिस्ता से झूलता है मकान हिलता है परन्तु फिर अपने स्थान पर ही आ ठहरता है। जापान के घण्टा घर भी इसी प्रकार बने हुए हैं उनका घण्टा पैण्डूलम का काम देता है ॥ ———

प्राचीन मन्दिर में एक नवीन सम्प्रदाय ।

कलियुग मतमतान्तरों का युग है। इस संसार में जितने मत फैल रहे हैं, उन की गिनती करना भी एक कठिन कार्य है। अब एक नये मत का पता लगा है। इसका नाम है “मनुष्यों की सन्तान” । कहते हैं कि वास्तव में यह तिब्बत देश से निकला है, १८०६ ई० से इस के अनुयाई इंग्लिस्थान अन्तर्गत स्टोनहंज (Stonehenge) नामक एक अति प्राचीन

पत्थरों के चक्र में जिसे कि साधारणतया सूर्य का मन्दिर ख्याल किया जाता है, पूजा करते चले आ रहे हैं। इस नवीन-सम्प्रदाय ने उत्तरायण पक्ष को सूर्य नारायण की पूजा के लिये नियत किया है। पैरिस का ‘ला नेचर’ नामक पत्र लिखता है कि “पहली बार २२ जून १०८६ को ५-६ एशिया निवासी मनुष्य सालिसबरी के मैदान में साष्टांग होकर अपनी २ भाषा में विचित्र प्रकार की प्रार्थनाएं करते हुए देखे गये थे। उस समय पत्रों में इस बात का कुछ चर्चा न हुआ, परन्तु यह लोग प्रति वर्ष अधिक और अधिक संख्या में सदा २१ या २२ जून को ही आते रहे। तब पत्रों का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ और निम्नलिखित वृत्तान्त प्रकाशित हुआ:—

यह यात्री जिन में कि हिन्दू, अरबी, फारसी लोग थे, अपेक्षाकृत एक नवीन मत के अनुयाई थे। इन के मत के नाम का अर्थ है, “मनुष्यों की सन्तान की सार्व-देशिक समिति” यद्यपि यह मत तिब्बत से निकला, परन्तु एशिया में, विशेषकर भारत, अरब और फारस में उच्च-श्रेणि के लोगों में इस का बहुत प्रचार हो गया, अब योरुप में भी इस के मानने वालों की कमी नहीं। इंगलिस्थान में इस के अनुयाईयों की संख्या दो तीन हजार है। इन लोगों ने बहुत से घरों को मन्दिर बना

लिया है, उन में ही इन की सभाएं लगती हैं। ऐसे घर लण्डन में दो मानचस्टर में एक और लिवरपूल में एक हैं ॥

उत्तरायण में इन लोगों की पूजा होती है इन के पुरोहित जिन्हें कि “पांच-पवित्र” कहा जाता है, केशरी रङ्ग के वस्त्र जिन पर सफेद और सुनहरी जुब्बे थे पहरे थे। शिर पर विचित्र प्रकार की पगड़ियां थीं। इन में से दो तो स्पष्टतया अंग्रेज़ थे ॥

उपा-काल (सूर्य निकलने से पूर्व) से पहले यह लोग उन पत्थरों में इकट्ठे हुए। जबतक सूर्य भगवान के दर्शन न हुए यह सब स्त्री पुरुष अपनी २ भाषा में प्रार्थनाएं पढ़ते हुए पत्थरों की ऊंची वेदी के सामने साष्टांग लेटे रहे। इन की एक प्रार्थना का अनुवाद इस प्रकार है :—

“मेरा विश्वास है कि यह प्रकृति शक्तियों की विशेषतया इस महान् समष्टि के पीछे जो सर्व शक्तिमान बल है उस की महिमा का प्रतिबिम्ब है ॥

सर्व-शक्तिमान बल में विश्वास रखने से मैं उस अनन्त को जिसे कि अल्ला (परमात्मा) कहते हैं जो कि सार्व-भौम तेज और सत्य है, जो कि अनन्त प्रेम है और जिस का निवास स्थान हमारा हृदय है मानता हूं। मेरा विश्वास है कि संसार की प्रत्येक वस्तु भलाई की ओर जा

रही है, और सब वस्तुओं का विकाश उन्नति की ओर हो रहा है ॥

जब सूर्य की किरणें पहलीवार पत्थरों पर पड़ीं तो “पांच-पवित्रों” में से मुखिया बड़े ऊंचे स्वर से बोला—भाइयो, आप जानते हो आज हम सब इस समय इस पवित्र स्थान में किस लिये इकट्ठे हुए हैं ?” तब श्रद्धालु बड़े गम्भीर भाव से बोले—हम “पांच-पवित्र” महान् आत्माओं की आज्ञानुसार जोकि अल्ला (ईश्वर) की ओर से “मनुष्यों की सन्तान” के लिये दिव्य दूत बनकर आये हैं, उस अनन्त प्रेम, सत्य स्वरूप विश्वात्मा, जगत् पति परमेश्वर की शक्ति पर अपने विश्वास को प्रकट करने के लिये एकत्र हुए हैं ॥

यह संस्कार सूर्य के अस्त होने तक बराबर होता रहा। बहुत से लोग इस विचित्र कार्यवाही को देखने के लिये उन के चारों ओर इकट्ठे हो गये थे, परन्तु न ही “पांच-पवित्रों” में से और न ही श्रद्धालु अनुयाइयों में से कोई व्यक्ति लोगों के मखौलों से घबराया ॥

पीड़ा रहित बन्दूक की गोली।

पिट्सवर्ग निवासी अलग्ज़ेण्डर ऐफ हम्फ्रे नामक एक मनुष्य ने एक निद्राजनक गोली तैयार की है। इस में उसने कुछ ऐसी औषधियां मिलाई हैं कि जब गोली किसी प्राणि

के शरीर में जाकर लगती है तो उसे पीड़ा नहीं होती, और गोली की प्राणघातक शक्ति भी कम नहीं होती। यदि डाकू के इसका छर्चा लग जाय तो वह भाग नहीं सकता क्योंकि नींद का पहाड़ उस पर टुट पड़ता है और वह वहीं सो जाता है। सिंह, हाथी, सुगर, रीछ इत्यादि जो साधारण गोली खाकर मारने वाले की ओर भागते थे और शिकारी को अपने प्राण बचाने कठिन हो जाते थे वे सब अब इस निद्राजनक गोली से घायल होते ही वहीं के वहीं सो जाया करेंगे। गोली में एक प्रकार का अफीम का सत मिलाया गया है जिस के ज़रा से भी लहू में चले जाने से झटपट नींद आजाती है। लड़ाई में जिस सिपाही के इस गोली का ज़रा सा भी घाव लग जायगा वह बिना पीड़ा सहन करने के प्राण त्याग देगा ॥

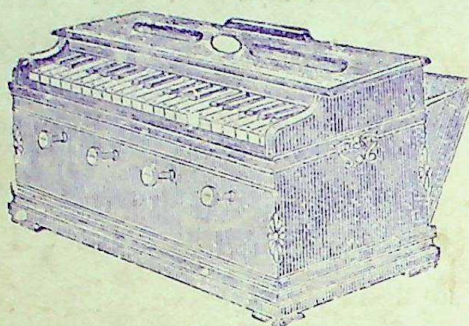
बाबल का अति प्राचीन बुर्ज मिल गया।

बायबल और कुरान आदि पुस्तकों में लिखा है कि अति प्राचीन समय में लोगों ने बाबल नगर में एक आकाश-भेदी बुर्ज बनाया था ताकि उस पर चढ़कर स्वर्ग में चले जाएं। परन्तु जब बुर्ज पूरा होने को आया तो परमात्मा ने उन मनुष्यों की भाषा में गड़बड़ डाल दी जिस से वे एक दूसरे की बात को समझने में अशक्त हो गये और बुर्ज अधूरा का अधूरा रह गया। आज तक इस बुर्ज की कथा कल्पित समझी जाती थी, परन्तु हाल ही में फ्रांसीसी पुरातत्त्व-वेत्ताओं ने भूमि को खोद कर इस बुर्ज के खण्डरात निकाल लिये हैं। इस आविष्कार से ऐतिहासिक संसार में हलचल सी मच गई है। इन खण्डरात में से ईसा से कोई इक्कीस सौ वर्ष पूर्व के मिश्र के वर्तन और मूर्तियां मिली हैं। ननवा नगर के खण्डरात की खुदाई में राजा असुरवनीपाल के महल से एक भारी पुस्तकालय निकला

है। इस में बहुत से पेटे मिले हैं जिन पर असुरवनीपाल का नाम है। वहां से गणित, वर्ग-मूल, घन के पटों, पक्षियों पौदों की सूचियों और भूगोल की पुस्तकों का मिलना उस समय के विद्या प्रचार को प्रकट करता है। एक पेट पर जल प्रलय का वर्णन है। इस में लिखा है कि जलप्लावन मनुष्यों को दण्ड देने के लिये आया था। इस प्लावन में जिस नौका का वर्णन है उस के बनाने वाले का नाम यहाँ शमस नपिस्ती (अर्थात् जीवित सूर्य) दिया गया है। जल-प्लावन की कथा (जो हमारे पुराणों में भी पाई जाती है) प्राचीन इब्रानी कथा से बहुत मिलती है। जितना भेद है वह देश और काल के कारण है ॥

अर्थ शास्त्र—हमारी भाषा का साहित्य अभी बड़ा थोड़ा है। जो है उस में भी उपयोगी विषयों पर बहुत ही कम पुस्तकें हैं। सच तो यह है कि हम लोगों ने अभी अपने साहित्य भण्डार को भरने का यत्न ही नहीं किया। अब हमें यह देखकर बड़ा ही हर्ष हुआ है कि गुरुकुल कांगड़ी के प्रोफेसर म० बालकृष्ण जी एम० ए० ने जो कि अपनी योग्यता के कारण Fellow of the Royal Statistical Society, Fellow of the Royal Economic Society (London), Fellow of the Royal Philological Society (London), Member of the American Statistical Association, and Member of the American Economic Association हैं अर्थ शास्त्र नामक एक पुस्तक लिखी है पुस्तक का बहुत सा भाग छप चुका है। हमारे छपे हुए पत्र देखे हैं, और हम कह सकते हैं कि हिन्दी भाषा में यह अपने ढंग की एक अपूर्व पुस्तक होगी। अर्थ शास्त्र जैसे गूढ़ विषय को समाज वड़ी ही रोचक और सरल भाषा में लिखा गया है। कालेज के विद्यार्थियों के लिये यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। इस मातृ-भाषा की सेवा के लिये प्रोफेसर महोदय हिन्दी प्रेमियों के धन्यवाद के पात्र हैं ॥

पुरुता और सुरीले हारमोनिय बाजे



सज्जनजन, आपने भी तो हर प्रकार के लम्बे २ हृदय-रोचक लेखों के विज्ञापन पढ़े होंगे, जिन्होंने आजकल सत्य को भी कांच के सदृश मिला रक्खा है। परन्तु सच्ची वस्तु अपने आप ही मुंह से उच्चारण करती है, कि मैं प्रतिज्ञा से कह सकती हूँ कि मेरा बनाने वाला सत्य का ही व्यवहार करता है, सो हमारा कार्यालय बहु-काल से चल रहा है। इसलिये हमारे हारमोनियम

बाजे सब से अच्छे, सुरीले पायेदार और लासानी हैं, एकबार अवश्य मंगवाकर परीक्षा कीजिये हमारे बाजे थिएटर कम्पनियों, सभाओं, संगीत-पाठशालाओं में प्रशंसा पाए हुए हैं ॥

वी० मोहनसिंह ऐंडसन्स

प्रोप्राइटर हारमोनियम कार्यालय,

अमृतसर (पंजाब)

(सज्जनजन आर्डर देते समय अखाबार का हवाला अवश्य दें)

७००) रु०, इनाम ३००) इनाम, २००) इनाम ।

१.—श्रीवाल्मीकि रामायण की जो टीका हिन्दी में पं० राजारामजी प्रोफेसर डी० ए० वी० कालेज लाहौर ने लिखी है, वह ऐसी उत्तम बनी हुई है, कि उस पर पं० जी को गवर्नमिन्ट और यूनिवर्सिटी से ७००) रु० तक इनाम मिला है। १.—मूल संस्कृत भी साथ है (२) टीका श्लोक २ की अलग है ३.—कठ करने योग्य श्लोकों पर निशान दिये हैं, मूल्य ५।) श्रीमद्र-गवद्गीता—इस पर पं० जी को ३००) रु० इनाम मिला है। शब्दार्थ, भावार्थ, भाष्य, सब खोल कर लिखा गया है मूल्य २) रु० ३.—बाल व्याकरण—इस पर २००) इनाम मिला है। इस में व्याकरण के नियम बड़े सरल लिखे हैं, ॥ ४.—ग्यारह उपनिषदें भाष्य समेत ईश =) केन =) कठ =) प्रश्न ॥) मुण्डक और माण्डूक्य ॥) तैत्तिरीया =) तैत्तिरीय =) छान्दोग्य २.—बृहदारण्यक १.॥ =) प्रश्न ॥) ॥ ग्यारह इकट्ठी ५।) ५.—शंकराचार्य और कुमारिलभट्ट का जीवन चरित्र ॥) ६.—प्रार्थनापुस्तक —) वेद और रामायण के उपदेश —) वेद और महाभारत के उपदेश —) वेद मनु और गीता के उपदेश —) उपदेश सप्तक १.—) ॥

पता—मनेजर—आर्य-ग्रन्थावली, लाहौर ।

भाई अमरसिंह के प्रबंध में मॉडल प्रेस, अनारकली लाहौर में श्रीयुक्त सन्तराम वी० ए० पब्लिशर के लिये मुद्रित व प्रकाशित हुई ॥

मई १९१४

रजिस्टर्ड नं० पेट० ८५३

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषं ज्योतिरामाचित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विभवा । शुक

उषा

लाहौर

वार्षिक मूल्य ३)

सम्पादक—सन्तराम बी. ए.

प्राति संख्या १)

लेख-सूची

- (१) बच्चों की शिक्षा— १६१
 (२) हमारी दशा—ले० श्री लोचनप्रसाद पाण्डेय १६४
 (३) निराशा की घड़ी (कहानी)—लेखक “शुक” १६५
 (४) एक फ्रांसीसी कन्या का अद्भुत मातृ भाषा प्रेम—ले० प्रो० महेशचरणसिंह ऐम० ए०, बी० एस० सी० १७१
 (५) पुस्तकालय में बलबा—ले० “पुस्तकानंद” १७७
 (६) उषा (पद्य)—ले० श्री बालाप्रसाद १७७
 (७) वनस्पति विवाह— १७८
 (८) वृद्धिशीला उषा—ले० पं० लोकनाथ शर्मा १८१
 (९) भूख संशोधन—ले० प्रो० बालकृष्ण ऐम० ए० १८३
 (१०) नारायण शतक—ले० पं० नारायणप्रसाद वेताब १८३

* नारी उपयोगी पृष्ठ *

- (११) स्त्री पुरुषों का सम्मिलित समाज— १८४
 (१२) मातृ-हीन बच्चों का पालन पोषण—ले० डाक्टर विक्रमाजीत साहनी एल० आर० सी० पी० एण्ड एस (एडनवर्ग) डी० पी० एच (लंडन) १८६
 (१३) बच्चों को आराम दिलाना— १८७
 (१४) बच्चों का डरना— १८८
 (१५) चुटकले— १८८
 (१६) तोड़े हुए फूलों की रक्षा— १९०
 (१७) क्या पशु पक्षियों में मनुष्यों की तरह जीवात्मा नहीं?—ले० श्री चम्पालाल जैनी १९१
 (१८) विविध विषय— १९३
 (१९) पुस्तक परिचय— १९८

ज्वर ।

बाटली वाला का एग्यू मिक्सचर

या एग्यू पिल्स ज्वर की अनुभव सिद्ध दवाई है । मूल्य हर एक का १ रु० । बाटली वाला की टानिक गोलियां पीले लोगों के लिये अधिक परिश्रम से थके हुए मस्तिष्क, निर्वलता, ज्वर रोग (तपदिक) की पहली अवस्था, और बदहजमी आदि की सब बीमारियों में एक असमूल्य औषधि है । मूल्य १॥)

बाटली वाला का दन्त मंजन-वैज्ञानिक रीति से ‘मेयाफल’ और अंग्रेजी प्रतिनाशक औषधि के साथ मिलाया हुआ । मूल्य १॥) प्रति ।

बाटली वाला की दद्र की मर्हम-दद्र, धोव की खुजली इत्यादि को एक दिन में आराम करदेती है मूल्य १॥) प्रति ।

यह सब अंग्रेजी दवाई बेचने वालों या डाक्टर पेच० एल० बाटली वाला, जे० पी० वारली, दादर, बम्बई, के पते से मिल सकती हैं

FAIR SEX.

स्त्री जाति ।

केसरी का लोघ्र,

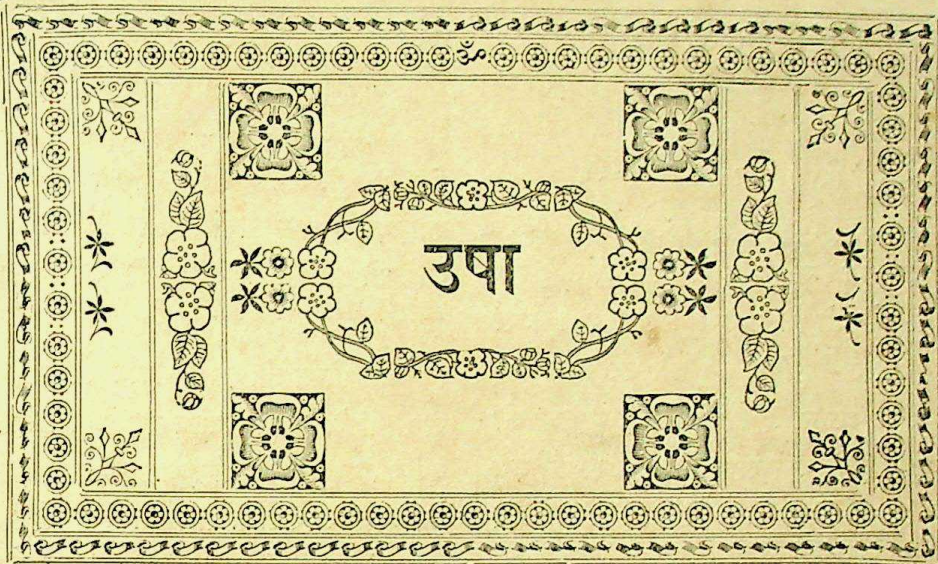
गर्भाशय के रोगों के लिये सब से अच्छी टानक स्त्रियों के सब प्रकार के रोग जैसे मासिक धर्म की खराबियां, ऋतुओं का दर्द आना, ल्यूकोरिया, ऋतु का कम आना, ज़्यादा आना या बिल्कुल न आना, कबज, लहू की कम और अन्य कई गुप्त रोग जिन से प्रायः नारियां पीड़ित रहती हैं इस से भट दूर हो जाते हैं मूल्य बड़ी बोतल ३), छोटी १॥=) मिलने पर पता—डाक्टर के० एन० केसरी,

“ केसरी कुटीरम”,

सचा
दवा
जा की
अधिक
चय
और
एक
रति
मौपशि
धोव
मारा

तो य
० पी
की हैं

वक है
ने नि
दर्द है
ज्याव
की क
राशि
हैं
ने



मासिक पत्रिका

भाग १

ज्येष्ठ १९७१—मई १९१४

संख्या ५

बच्चों की शिक्षा ।



सार में सभ्यता २ की पुकार बहुत मच रही है, प्रत्येक जाति अपने आप को सभ्य समझ कर दूसरी जातियों को असभ्य अथवा अर्द्ध सभ्य कहती है। परन्तु सभ्यता का प्रमाण क्या है इस पर भिन्न-भिन्न सम्मतियां हैं। किसी धर्माचार्य से पूछा जाए तो वह कहेगा कि एक जाति ने प्रकृति को जितना अधिक आत्मा के अधीन कर लिया है, उतनी ही वह सभ्य है। किसी तत्व-वेत्ता या विज्ञानी की

सम्मति ली जाए तो वह कहेगा कि एक देश में समाज जितनी अधिक पेचीदा होगई है, उतना ही अधिक वह देश सभ्य है। कई ऐसे व्यक्ति भी मिलेंगे जो किसी जाति की सभ्यता उस की स्त्रियों की सामाजिक स्थिति से ही जांचते हैं। किसी रसायनी से प्रश्न करने पर यह उत्तर मिलेगा कि जाति में सावन और गन्धक के तैलाव की जितनी ज्यादा खपत है उतनी ही वह जाति अधिक सभ्य है। इनके अतिरिक्त ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो जाति की सभ्यता का अनुमान उस के धन दौलत, और सेना की संख्या से ही करते हैं। परन्तु इन में से किसी एक से भी पूर्णतया सहमत न होते

हुए हम समझते हैं कि एक जाति अपने सन्तानों की सुशिक्षा पर जितना अधिक ध्यान देती है उतनी ही अधिक वह सभ्य है। जो जाति अपने बच्चों की शिक्षा पर बिल्कुल ध्यान नहीं देती, वह महामूर्ख और परले दर्जे की असभ्य है।

शिक्षा का उद्देश बच्चे की अन्तर्निहित गुण क्षमताओं को विकसित करना है। उस की नैसर्गिक शक्तियों को सुमार्ग पर डाल कर उन से लाभ उठाना है। जो शिक्षा मनुष्य को पूर्ण मनुष्य नहीं बना सकती, जो उस के मन और शरीर को विकसित नहीं कर सकती वह शिक्षा नहीं अशिक्षा है ॥

अब हमें देखना है कि हमारी नियत की हुई सभ्यता की कसौटी पर भारतवर्ष कैसा उतरता है। स्कूलों और यूनीवर्सिटी के कालिजों में भारत सन्तानों को कैसी शिक्षा दी जाती है, शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा होने के कारण उन्होंने क्या २ हानियां उठाई हैं और भविष्यत् में क्या २ और उठायेंगे; यूनीवर्सिटी की वार्षिक परीक्षाओं की प्रचलित प्रणाली हमारे नवयुवक समाज का लहू कैसे चूस रही है, और हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना से कुछ लाभ भी होगा या जाति का धन और श्रम ही व्यर्थ जायगा, ऐसी बातों पर विचार करने के लिये हम तय्यार नहीं, हम तो आज यही दर्शाना चाहते हैं कि भारतवासी अपने छोटे बच्चों को पूर्ण मनुष्य बनाने के लिये बाल्यावस्था में किन २ उपायों का अवलम्बन करते हैं। उन के आचार की नींव को किन संस्कारों से आरम्भ करते हैं ॥

इस उद्देश्य को सामने रखकर जब हम

कि बहुत थोड़े ऐसे मनुष्य हैं, जिन्हें अपनी सन्तानों की शिक्षा का ख्याल है। जो स्वयम् अशिक्षित होने के कारण या दरिद्रता से बाधित होकर अपने बच्चों को पाठशाला में नहीं भेज सकते, यदि ऐसे लोगों को गिनती में न भी लाया जाये तो अवशिष्ट लोग जो अपने बच्चों को स्कूलों में भेजते हैं उन में भी बहुत थोड़े ऐसे हैं, जो शिक्षा के सच्चे गौरव को समझ कर सन्तानों के चरित्र गठन पर ध्यान देते हैं। बच्चे को स्कूल भेज छोड़ना ही वह अपने कर्तव्य का आदि और अन्त समझते हैं। इसका कारण उन की उदासीनता और आलस्य ही नहीं, वरन् उन का शिक्षा के विषय में अज्ञान भी है। बहुत थोड़े ऐसे नर नारी हैं, जो जानते हैं कि माता के दूध के साथ बच्चे को कैसे शिक्षा दी जा सकती है, और कि स्कूल भेजने की आयु से पहले ही जबकि बच्चे ने शब्दों का स्पष्ट रीति से उच्चारण करना भी नहीं सीखा, उस में उत्तम गुणों और स्वभावों का सञ्चार करना सम्भव और आवश्यक है। बच्चे ही बड़े होकर माता पिता बनते हैं, इसलिये जो भी संस्कार छोटी अवस्था में उन पर बैठ जाएं वह बड़ी आयु में जाकर विशाल-रूप धारण कर लेंगे हैं। अतः पहिले से ही उन की शिक्षा का ध्यान रखना चाहिए ॥

बच्चे में स्वाभावतः ही चञ्चलता और फुर्तीलापन होता है। वह शक्तिका एक पुञ्ज होता है, इसलिये उस के लिये निचला बैठना असम्भव है। उस की शक्तियां किसी न किसी

और अवश्य काम करती रहनी चाहिएं। माता

की शक्तियों को दबाए, बल्कि उसे चाहिए कि उन्हें ठीक मार्ग पर लगाए । जैसे नदी के आगे बन्द बान्ध देने से जल का प्रवाह नहीं रुक सकता, बल्कि नहरों के द्वारा ही जल के मार्ग को बदला जाता है वैसे ही बच्चे की शक्तियों को समझना चाहिए । दौड़ना कूदना बच्चों का स्वत्व है, माता पिता को ध्यान रखना चाहिए कि बच्चा सुस्त न रहे, क्योंकि यह अस्वस्थ होने का चिन्ह है ॥

बच्चे की इच्छा के विरुद्ध बलात्कार काम कराकर उस की इच्छा शक्ति को तोड़ना बहुत हानिकारक है, क्योंकि तोड़ने से इच्छा निर्बल होजाती है और निर्बल इच्छा वाला बच्चा बड़ा ज़िद्दी और सिड़ी होता है । जिस दुःख के दूर करने के लिए उस की इच्छा को तोड़ा था, वही सिड़ीपन का रोग इस प्रकार ज़्यादा बढ़ जाता है । यदि बच्चे के हाथमें कोई ऐसी चीज़ आजाए जिस का उस के पास रखना हानिकारक हो तो वह चीज़ बलपूर्वक उस से नहीं छीन लेनी चाहिए, बल्कि उस के सामने कोई अन्य सुन्दर वस्तु ला रखनी चाहिए, ताकि बच्चा हाथ में पकड़ी हुई वस्तु का ख्याल छोड़ कर उस नई चीज़ की ओर झुक जाए । इस प्रकार वह बिना चिल्लाए ही उस चीज़ को छोड़ देगा ॥

बच्चों को कई बार पैनसिल मुंह में डालने का स्वभाव पड़जाता है जिस से डर रहता है कि पैनसिल का सिरा टूट कर गले में न जा पड़े, या बच्चे के गिर पड़ने से पैनसिल मुंह में न चुभ जाए । अब यदि बच्चे को कहा जाए कि पैनसिल मुंह में न डाला करो, तो वह

हटने के स्थान में उलटा ज़्यादा डालने लग जायगा । इसलिये सब से अच्छी विधि यही है कि उसे पैनसिल को लम्बी ओर से मुंह में पकड़ना सिखलाया जाए । इस से बच्चा शीघ्र ही पैनसिल का तेज़ सिरा मुंह में डालना बन्द कर देगा । और आगे को पैनसिल लम्बी ओर से मुंह में पकड़ने लग जायगा । कहने का तात्पर्य यह है कि बच्चे की इच्छा को तोड़ने के स्थान में दूसरी ओर फेर देना चाहिए ॥

यह बच्चों की ही बात नहीं बल्कि सब सिड़ी, मूर्ख, हठीले और पागल लोगों का भी यही हाल है । कहते हैं कि एक बार एक पागल खाने का दारोगा किसी दूसरी जगह अपने मित्र के पागल खाने को देखने गया । जब वह पागल खाने में पहुंचा, तो उस का मित्र वहां मौजूद न था । चपड़ासी ने फाटक खोल दिया, यह नये दारोगाजी अन्दर आए । वह अभी पागल खाने के आङ्गन में ही पहुंचे थे कि एक महाशय उन के पास आकर उन से हाथ मिलाने लगे और बोले कि मैं यहां का डाक्टर हूं । दारोगाजी और डाक्टर साहब बातें करते हुए भवन में भ्रमण कर रहे थे और डाक्टर अपने नवीन मित्र को सब चीज़ें दिखलाता जाता था । अन्त को वे एक मीनार के पास पहुंचे । डाक्टर दारोगाजी को प्राकृतिक दृश्य दिखाने के लिए मीनार के ऊपर ले गया । जब चोटी पर पहुंचे तो डाक्टर कहने लगा कि जितने भी दर्शक यहां आते हैं उन सब को मैं इस मीनार की चोटी पर से नीचे कूदाया करता हूं, आप भी कूदिए । यह सुनकर दारोगाजी घबराए । उन्हें मालूम हो गया कि यह तो कोई पागल छुड़ा हुआ है । अब

करें तो क्या करें । बचने का कोई उपाय न दीख पड़ता था । यदि इनकार करें तो पागल उन से गुथम गुथ्या होने लग जाये और दोनों नीचे गिर जाएं । न ही कोई सुरक्षित स्थान था कि वहां भाग जाएं । अन्त को वह बोले-महा-शय ऊपर से नीचे तो हर कोई कूद सकता है, परन्तु मुझ में नीचे से ऊपर को कूदने की भी सामर्थ्य है । चलो, नीचे चल कर आप को कूद कर दिखलाऊं । डाक्टर यह सुनकर चकित रह गया, और दारोगाजी के साथ नीचे उतर आया । वे अभी नीचे पहुंचे ही थे कि नौकर दौड़ा २ आया और डाक्टर को पकड़ कर ले गया और दारोगा जी से कहने लगा कि यह पागल कूट गया था ॥

उपरोक्त घटना में यदि दारोगाजी उसे बलपूर्वक मनाने लगते तो सख्त हानि पहुंचने की सम्भावना थी, परन्तु उन्होंने उसकी इच्छा को दूसरी ओर फेर दिया जिस से सब काम ठीक होगया । इसी प्रकार बच्चों के साथ भी बर्ताव करना चाहिये, यदि उन्हें मार पीट कर समझाने की अपेक्षा उपरोक्त दारोगे की भांति बुद्धिमत्ता से काम लिया जाये तो बहुत लाभकारी हो । माता पिता यदि थोड़े से परिश्रम से भी सन्तानोंको घर पर शिक्षा देनेका ढङ्ग सीख लें तो बाल्यावस्था में ही बच्चों के स्वभावों को बहुत कुछ ठीक कर सकते हैं, जिस से बड़ी आयु में उन्हें बहुत आराम रहे । शोक तो यह है कि हमें जहां और सहस्रों कामों के लिये समय मिल जाता है वहां अपने बच्चों के लिये दिन रातमें एक घण्टा निकालना भी कठिन है ।

वाले अध्यापकों के हाथ से न जाने कितने बच्चों के जीवन सदा के लिये नष्ट हो जाते हैं । इसलिये हमारे स्वदेश भाइयों को चाहिये कि यदि वे सभ्य कहलाना चाहते हैं, यदि वे भारत की उन्नति चाहते हैं तो अपने सन्तानों की शिक्षा पर ध्यान दें, क्योंकि उन्नति की यही एक चाबी है ॥

हमारी दशा ।

(१)

प्रभुवर ! दनुजारे ! दुःख दारिद्र्यहारी !
अहह यह दशा है हो रही क्यों हमारी !
हम धन-बल-विद्या बुद्धि-विज्ञान वान !
इस तरह हुए क्यों दीन हा ! हा ! महान ?

(२)

वह तप बल सारी सृष्टि सन्ताप हारी !
वह जप बल सारी सृष्टि सन्ताप हारी ?
अहह ! सब हुए हैं आज को हाय लोप !
हम पर यह कैसा दैव का तीव्र कोप ?

(३)

बहु मणि-खणि, नाना रत्न, माणिक्य, मुक्ता
वह नव निधि चाँदी-स्वर्ण सम्पत्ति युक्ता ।
अहह अब कहाँ हैं आर्य-आनन्द हेतु ?
अब हम न रहे क्यों सौख्य-संसार-सेतु ?

(४)

यह अवनि हमारी थी सभी अन्न पूर्णा,
यह अवनि हमारी थी कभी अन्न पूर्णा ।
यह अवनि हमारी थी प्रभा-अष्म पूर्णा,
अहह अब कहाँ हैं आज हा ! भस्म पूर्णा ।

द्विज सकल अविद्या के उपासी बने हैं,
कपट कलह सारे क्षत्रियों में बने हैं ।
वणिक कृपण हों के हो रहे दास आज,
पतित बन रहा है अन्त्यजों का समाज ॥

विविध रुज हमें हैं नित्य सन्ताप देते,
बल सहित हमारे धैर्य को छीन लेते ।
सुलभ न हम को है सच्चिकित्सा विधान,
विवश सब हमारे वैद्य-विद्या निधान ॥

निशि दिवस जगी है भूख की तीव्र ज्वाला,
गुण गण जिसने हैं भूर हो सोख डाला ।
अब रह न गया है पाप या पुण्य ज्ञान,
उदर भरण ही का है हमें एक ध्यान ॥

कृषि कृति करते हैं नित्य पा कष्ट नाना,
घर पर न हमारे नाज है एक दाना ।
सिर पर झूण का है भार भारी सदैव,
अब फिर दुहिता का व्याह है, देव देव !!

मुक्ता
हा ।

?


 सी तङ्ग अन्धकारावृत मकान की
 तीसरी छत पर एक दुबला पतला
 रोगी बूढ़ा खिड़की में बैठा चिर-
 काल से किसी के आने की प्र-
 तीक्षा कर रहा था । चूल्हे में
 आग की लौ जल रही थी ।

और उस की छोटी सी किराये की कोठड़ी जहाँ दिन को भी रात रहती थी, बिलकुल घटा-टोप अन्धकार से परिपूर्ण थी। गली में से कमरे के लैम्प की केवल एक रश्मि बूढ़े तक पहुँचती थी, घर में जलाने के लिये एक काँयला तक न था और न ही और मूल्य लाने के लिये जेब में पैसा। सामान्य बुद्धि का मनुष्य भी एक बार देखने से जान सकता था कि निर्धनता की अंतिम सीमा आपहुँची है। केवल दैवी-चमत्कार ही ऐसी महा-दरिद्रता से मनुष्यों को बाहर निकाले तो निकाले, अन्यथा और कोई इस नरक से निकालने वाला नहीं। हा, ऐसी हृदय-वेधक घटनाएं नित्य होती हैं परन्तु उन्हें समाचार-पत्रों के धनी पाठकों तक पहुँचाने वाला कोई नहीं ॥

घड़याल ने आठ टङ्कुरें लगाईं । उसी समय किसी के धीरे २ सीढ़ियों पर चढ़ने की आवाज़ सुनाई दी । एक क्षण पीछे कमरे का द्वार खुला और एक लड़की ने अन्दर पग धरा । आते ही वह बोली-पिता ! अब क्या हाल है ? यदि आप खाट पर लेटे रहते तो क्या अच्छा न होता ?

उस ने उत्तर दिया—“नहीं नहीं, अब मुझे पहले से बहुत आराम है, छाती में भी पीड़ा नहीं हुई। (यद्यपि उस का यह कथन एक सफेद झूठ था परन्तु इस प्रकार के असत्य के लिये धर्मराज भी दण्ड नहीं देते) प्यारी पुत्री ! मुझे अपने विषय में इतनी चिन्ता नहीं थी, जितनी कि तुम्हारे लिये। क्या तुम्हें, मालूम तो नहीं होती, कुछ सफलता प्राप्त हुई ?

प्यारे पिता ! कुछ अच्छी सफलता तो नहीं हुई—साधारण सी है—परन्तु आशा है कि किसी न किसी दिन काम जरूर बन जायगा ।

आप जानते हैं कि सब से अधिक अन्धकार उषा-काल से पहिले होता है । क्या यह झूठी बात है ? ओह ! मैं कितनी भूखी हूँ । आप तो भूक से पीड़ित हो रहे होंगे और मारे सर्दी के आप का लहू भी जमने को होगा । ” इतना कह कर वह उठी और बाजार से जो एक दो सूखी चपातियां लाई थी, उन को वांन्ट कर उसे देने लगी । बूढ़े का रङ्ग इस समय विलकुल पीला और हाथ पांव हिम की भान्ति सर्द थे । फिर आशा भरे स्वर से कहने लगी—“ मुझे पूर्ण विश्वास है कि शीघ्र ही, शायद कल ही, मुझे कुछ अधिक प्राप्त होगा ” ॥

इतने में किसी के धम धम करके सीढ़ियों पर चढ़ने की आवाज़ सुनाई दी । यह सुनते ही उस का दिल बैठ गया । वास्तव में उस ने उस का ठीक तात्पर्य्य पहले ही समझ लिया था ॥

तत्काल ही द्वार पर जोर से खटखटाहट हुई और मकान की स्वामिनी भगवानकौर भट अन्दर आ घुसी । क्रोध से मुंह लाल अङ्गारा किये आते ही उस ने किराये के लिये ऊंची आवाज़ से भगड़ा शुरू किया । शोर से आकाश को शिर पर उठा लिया और बोली—“ मैं आप बड़ी गरीब हूँ । बहुत सी चीज़ें लानी थीं, पैसे के बिना लाचार हूँ । मेरी कोई जागीर नहीं, अंपजीविका आप पैदा करनी पड़ती है । मैं अपनी कोठड़ियां महीने २ के लिये किराये देती हूँ ताकि महीने पीछे मेरा किराया मुझे मिलता रहे । यह ऐसी सुन्दर जगह साढ़े तीन रुपये को कितनी सस्ती है । मैं इस से पहिले इसी के पाश्च रुपये लेती रही हूँ । कल दो मास का किराया तुम्हारी ओर हो लायगा । यदि बाढ़

वजे तक तुम ने न दिया तो तुम दोनों ही बाहर निकाले जाओगे । फिर न कहना, मैं अब तुम्हें जतलाये देती हूँ । ” इतना कहकर जिस शीघ्रता से आई थी, उसी शीघ्रता से भट पट लौट गई ॥

रामभुज पूछने लगा—प्रिय पुत्री ! क्या तुम इस का कुछ प्रबन्ध कर सकती हो ? वह भट बोली—हमें जैसे तैसे यह जरूर ही प्राप्त करना चाहिए ॥

वह दीर्घ श्वास छोड़ कर कहने लगा—जब मुझे तुम्हारी प्यारी माता का ध्यान आता है, तो जी नहीं चाहता कि इस स्त्री को भी उसी जाति में से एक समझ कर इस की पदवी को उच्च करूँ ॥

लड़की ने एक नम्र उत्तेजना के साथ उत्तर दिया—“ मेरी माता तो एक देवी थी । प्रत्येक नरनारी के साथ उस का व्यवहार ऐसा अच्छा था कि लोग उसे दया, उदारता और निःस्वार्थ की मूर्ति कहा करते थे । आप को याद होगा कि जब बेचारी सुरेन्द्र-वाला का उस की अन्तिम बीमारी से पहले रुपया आना बन्द हो गया था, तो वह कितने भारी दुःख में थी और मेरी माता ने किस प्रकार उसे ढारस दी थी कि ऋण के सम्बन्ध में तुम्हें घबराने की कोई आवश्यकता नहीं, और किस प्रकार दिन रात उस की सेवा की थी मानो वह उस की अपनी सगी बहिन हो । इस समय उस का चिन्तन करके मुझे बड़ा आनन्द आता है । यदि हम ने दूसरों के साथ कठोर बर्ताव किया होता तो इस समय हमारा इस से भी दस गुना अधिक बुरा हाल होता । ” फिर एक हलकी सी मुस्क-

निराशा की घड़ी ।

१६७

राहत से कहने लगी—“निःसन्देह हमारी जेब इस समय खाली है, पर हम उसे रुपया देदेंगे, कोई डर नहीं । अस्तु, प्यारे पिता आप जल्दी जाकर लेट जाइये । आप इस समय बहुत पीले और थके हुए प्रतीत हो रहे हैं । आप के लिये पुनः बीमार होजाना अच्छा न होगा” ॥

वह बड़ी प्रसन्नता पूर्वक जाकर सो गया । अब वासन्तिका अकेली रह गई । उस ने अपनी बनावटी खुशी का आवरण मुख से उतार डाला और उसका स्थान अत्यन्त चिन्ता ने ले लिया । वह सोचने लगी कि इस घोर विपद् के समय में मुझे क्या करना चाहिये । अब उस ने अनुभव किया कि अति होगई और उसे अकेली ही बड़ी वीरता से उस का सामना करना होगा, क्योंकि उस का पिता इस जीवन संग्राम में लड़ने के बिल्कुल अयोग्य था । परन्तु चाहे कुछ ही हो कल दो पहर से पहले २ रुपया जरूर आना चाहिये ॥

वासन्तिका ने एक मोटा सा काला कम्वल ले कर जो कि जब से शीत का आगमन हुआ था, तब से ही बिछाई और ओढ़ाई का काम देता चला आ रहा था, शिर और कन्धों के चारों ओर लपेट लिया और झट पट ही—ताकि घबराहट न आ दवाये—चुपके से नीचे उतर कर माघ मास की घटा-टोप अन्धयारी रात में घुस गई । जब वह अपने स्थान से पर्याप्त दूरी पर चले गई जहां कि भगवानकौर या किसी और के उस की आवाज़ को पहचानने का डर न रहा, तो धीमी और थरथराती हुई परन्तु आश्चर्य-जनक मधुर स्वर से जो गीत पहले

पहल मुंह में आया वही गाने लगी । दैव-योग से एक मजदूर थैले में कुछ वर्तन डालकर कन्धे पर धरे पास से गुज़र रहा था । वह इस मधुर गीत को सुनकर ज़रा ठहर गया और जेब से दो पैसे निकाल लड़की के हाथ में रख दिये ॥

वहां से वासन्तिका एक और कूचे की ओर मुड़ी । यहां दोनों तरफ बड़े २ विशाल भवन खड़े थे । लोगों की बहुतसी निजू मोटर गाड़ियां और फिटने इधर उधर दौड़ रही थीं । कमरों के अन्दर बड़े २ लम्बे चौड़े मेज़ बिछे थे, जिन पर फूलों के गुलदस्ते और नाना प्रकार की सुन्दर वस्तुएं रखी थीं । फलों और स्वादिष्ट भोजनों की कोई गिनती ही न थी । नौकर खूब वर्दियां पहने खड़े थे, और बहुमूल्य वस्त्र धारण किये पाहुने स्वादिष्ट भोजनों और फलों का आनन्द ले रहे थे ॥

हाय ! यदि उस के बाप को इस प्रकार का भोजन, ऐसा आराम और ऐसी गर्मी थोड़े काल के लिये भी प्राप्त होती तो वह कितनी जल्दी भला चङ्गा होजाता । “क्या मैं यहां गाने का साहस करूं ? क्या अमृतसर के करोड़ पतियों के इन विशाल भवनों में कोई ऐसा व्यक्ति होगा जो मेरे गीत को सुनेगा और धन की उस आवश्यकता को समझेगा जिस के कारण कि माघ मास की इस शीतल और अन्धयारी रात्रि में मैं बाहर निकलकर गाने पर बाधित हुई हूं?”

वह अभी इसी विचार में खड़ी थी कि इस जगह अपने भाग्य की परीक्षा करूं या किसी और स्थान में अपेक्षाकृत निर्धनों के द्वार पर

जाऊं कि इतने में अन्दर बैठे हुए एक सज्जन ने फलों की ओर हाथ बढ़ाया और एक लेमूँ उठा कर कुछ ध्यान पूर्वक देखने लगा, तत्काल ही वासन्तिका को एक पुराना गीत याद आया जिसे वह अपने अच्छे दिनों में प्रायः गाया करती थी ! उसने बिना सोचे ही उसे गाना शुरू कर दिया ।
'पका पका क्या लेमूँ रसीला—हरा हरा है पीला पीला ॥
बड़ा हुआ रस बहुत बढ़ा है—रूप रंग भी बहुत बढ़ा है' ॥

ज्योंही पहल कतिपय शब्द वायु में गूँजे वह सज्जन बड़ी उत्कण्ठा से खिड़की की ओर कान देकर उस विदेशी गीत को सुनने में मग्न हो गया मानों उस पर जादू चल गया । पहले जो खिल खिल कर हंस रहा था वह हंसी सारी जाती रही और गम्भीर चिन्ता ने उसका स्थान ले लिया ॥

जब "पका पका क्या लेमूँ रसीला" की टेक आई तो उसके हाथ से लेमूँ मेज़ पर गिर पड़ा । वह अपनी कुर्सी पर से उठा और जेब से निकाल कर एक सिका वासन्तिका की ओर फेंका । यह फर्श पर लगकर वासन्तिका के पाँव के पास लड़कता २ जा पहुँचा । वह उसे उठाने के लिये झुकी, देखती क्या है कि एक स्वर्ण की मोहर है । खुशी से उसकी बाँछें खिल गईं । तब चित ही चित में उदार दाता का धन्यवाद करके उसने गीत को बन्द किया और जल्दी से मोहर लेकर घर भाग आई ॥

जब वह मनुष्य खिड़की से हटा तो उसके मुख पर उदासी की घटाएँ छाई हुई थीं उसने पाहुनों से दो मिन्ट के लिये क्षमा मांगी और जल्दी से द्वारपाल को कहा:—देविये ! गली में कोई स्त्री गा रही है ॥

करनी चाहता हूँ । देखो, उसे जाकर कहो कि पल भर के लिये अन्दर आजाए । हाँ, मैं—अपने निज कमरे में उसे मिलूँगा ॥

द्वार पाल ने बाहर से तो मुख की आकृति वैसे ही बनाय रखी परन्तु भीतर से वह आश्चर्य सागर में धिलीन होकर बोला—बहुत अच्छा महारज ! तब देविया सहज सहज से झूमता २ द्वार से बाहर गया, और आनन्द मोहन चक्रवर्ती अपने पाहुनों के पास आ बैठा ॥

II

एक हंसती २ आवाज आई—अच्छा चक्रवर्ती, तेरी वज्र समान छाती को भी क्या संगीत प्रभावित कर सकता है ? हमने अब तुम्हारी चाबी पाली है । हम भी तुम्हें गाना सुनाया करेंगे ॥

इतने में एक और व्यक्ति मखौल से बोला—देखना कहीं इस बात का आश्रय न लेना संगीत से तो इसे डर लगता है । यह तो उस गाने वाली कामिनी को घूस दिया गया है ताकि चुपचाप यहां से चली जाय ॥

चक्रवर्ती के मुख पर बादल छा रहे थे, जब वह पुनः पाहुनों के पास आकर बैठा तो उसका रंग उड़ा हुआ था । पाहुनों में जहाँ कई और बड़े आदमी आपस में वहाँ सेठ भवानीदास गोटेवाला और उनकी स्त्री भी आई हुई थीं । चक्रवर्ती के भिन्न रंगी को स्वर्ण मुद्रा देने से पूर्व सेठानी जी बड़ी प्रसन्न थीं, परन्तु तत्पश्चात् उन के तेवर बदले प्रतीत होने लगे । उसका नीचे को लटकना हुआ हाँठ घृणा प्रकट कर रहा था । बात वास्तव में यह थी कि सेठ जी का काम कुछ शिथिल हो

गया था और वह पैसे से लाचार थे । उन्होंने ने घर में यह निश्चय किया था कि यदि उन की लड़की का विवाह चक्रवर्ती के साथ हो जाय तो उसके करोड़ों के खिज़ाने में उन का हाथ पहुँच सकेगा । उन्हें इस सम्बंध के स्वीकृत होने की आशा भी पूर्ण थी । चुनाचे वह चक्रवर्ती का पैसा बर्तने भी लग गये थे ॥

बंगाली नाम होते हुए भी चक्रवर्ती भाषा, और आचार व्यवहार में पंजाबी ही था । वह उन भाग्यवान मनुष्यों में से था जिन की सहायता परमात्मा का दयामय हाथ सदा ही करता है । मायादास की भान्ति जिस चीज़ को भी वह हाथ लगाता वह सोना बन जाती । जिधर भी दृष्टि डालता चहल बहल हो जाती । युवावस्था, पूर्ण स्वास्थ्य और यह ज्ञान कि मैं देश भर के व्योपार मण्डल का एक शिरोमणि वणिक् हूँ यह तीनों बातें उस रात्रि उस में विद्यमान थीं । तिस पर भी जब से उसने उस मधुर गीति को सुना था उसकी साधारण शान्ति और गम्भीरता नष्ट हो चुकी थी और उन का स्थान चिन्ता और उदासी ने लेलिया था वह पल पल पीछे द्वार की ओर देखता था जैसे कि कोई अभी बुलाने आता है, परन्तु कोई भी मनुष्य न आय जिस से उसका आत्मा अधीर हो गया । उस की प्रकृति में इस असाधारण परिवर्तन को न देखना असम्भव था । तत्काल ही सेठ भवानी दास उसकी ओर झुका और कान में कहने लगा—

“चक्रवर्ती, सुख है? तुम घबराए हुए प्रतीत होते हो । कोई अमङ्गल समचार सुन पाया है?”

दूसरे ने शिर हिलाया और संकोच से उत्तर दिया—एक पुराना घाव फिर खुल गया

है और इस समय मर्मान्त पीड़ा हो रही है । आप मेरी यही सहायता कर सकते हैं कि पाहुनों की सेवा में जो मुझ से वृत्तियाँ रही हैं उनपर परदा डाल दें, मेरे होश अभी ठिकाने नहीं ॥

सेठ जी ने संकेत को समझ कर पाहुनों को इधर उधर की कहानियाँ सुनाना आरम्भ किया, ताकि चक्रवर्ती का उनके पास से अलग जा बैठना उन्हें मालूम ही न हो । अन्त को बड़ी चतुराई से उन्होंने ने उस रात्रि के प्रीति भोजन को शीघ्र ही समाप्त करके पाहुनों को विदा कर दिया । परन्तु सेठ जी तथा उनकी स्त्री पीछे ठहर गये मानों उनके परिवार का चक्रवर्ती से अन्य पाहुनों की अपेक्षा अधिक गाढ़ा सम्बंध है ॥

सेठ जी पैतृक स्वर से बोले—मेरे प्यारे लड़के, तुम अभी तक भी बहुत व्याकुल दीख पड़ते हो । मुझे तुम्हारी निज्जु बातों को जानने की तनिक भी अभिलाषा नहीं, पर यदि कोई ऐसी बात है जिसे मैं कर सका हूँ, तो बिना संकोच झट आजा दो । तुम जानते हो, मैं संसारी मनुष्य हूँ, शायद ही कोई ऐसी बात हो जिस का थोड़ा बहुत अनुभव मुझे न हो । भला यदि स्त्रियों को घर भेज दें, और.....”

चक्रवर्ती ने उझली फेर कर मना किया और ज़रा मुस्करा कर बोला—नहीं, वस्तुतः मैं चाहता हूँ कि वे यहाँ रहें । कृपया आप बैठ जाइयेगा । मैं आप को शीघ्र ही एक वार्ता सुनाने को था, परन्तु जो घटना आज रात हुई है उस ने मुझे अभी ही सारा वृत्तान्त सुनाने को बाधित कर दिया है । मेरा मतलब गली में फिरने वाली भिखारनी लड़की के गीत से है । आपने देखा होगा कि इसने मुझ पर भारी असर किया है

सेठानी उसकी ओर कठोर दृष्टि से देखकर बोली—“यह बड़ी विस्मयकर बात है, जब से तुम ने उस असाधारण घटना की ओर संकेत किया है मैं उसे भली भाँति देखती रही हूँ। मुझे इस का कुछ भी मतलब समझ नहीं पड़ता” ॥

“क्या आप ने सुना था ?—परन्तु कदाचित् आपने ध्यान नहीं किया कि वह क्या गाती थी” ॥

“शाके है मुझे उस का कुछ भी ज्ञान नहीं” ॥

“यह वास्तव में एक बंगाली गीत था, और मेरी माता भी बंगाली स्त्री थीं। वह राजा भूपेन्द्रनाथ चक्रवर्ती की अकलौती पुत्री थीं। राजा बड़े धनाढ्य थे और उन्होंने सारी जायदाद पुत्री के नाम ही कर दी थी। परन्तु मेरी माता ने उनकी इच्छा के विरुद्ध विवाह कर लिया, जिस से अप्रसन्न होकर राजा साहब ने जायदाद सम्बन्धी अपना स्वीकार पत्र लौटा लिया। मेरे पिता एक पञ्जाबी सज्जन थे। पन्द्रह वर्ष हुए उनका देहान्त होगया, और मैं, उन दोनों का अकलौता बेटा, धन कमाने के लिये विदेश गया। मुझे पूर्ण आशा थी कि किसी दिन धन के बोरे भर कर लाऊंगा और माता को मालामाल कर दूंगा। कुछ समय तक तो माता को नियम पूर्वक व्याज मिलता रहा, परन्तु फिर जिस बैङ्क में उस का रुपया जमा था उस का अकस्मात् दिवाला निकल गया, जिस से वह निःसहाय, निर्धन और रोगी होकर अमृतसर में टुकड़े से भी लाचार होगई। मैं उधर पठानों के पंजे में फँस गया और दो बरस तक सख्त कैद में रहा। जब किसी दंग

से वहाँ से छूटा तो मुझे दो पत्र मिले। एक लिखा था कि माता जी पर घोर विपत्ति आपत है और रोग कष्ट दे रहा है, और कि दूसरी ऐसी खराब हो चुकी है कि डर है कि कभी भिक्षा मांगने पर न मजबूर होना पड़े। दूसरे में लिखा था कि परमात्मा ने मेरे पास एक देवी को भेज दिया है जो वहनों की तरह मेरी सेवा करती है, मुझे अन्न जल और रहने का स्थान देती है। साथ ही तीसरा पत्र भी कि अपरिचित का लिखा हुआ था जिस में लिखा था कि मेरी प्यारी माता का देहान्त होगया कि वह किसी चीज़ से तंग नहीं रही, और कि कज़ालों की भाँति सरकार की ओर से उसका दाह कर्म नहीं हुआ, बल्कि प्रतिष्ठित लोगों की तरह उसका सारा अन्त्येष्टी संस्कार हुआ है। इस पिछले पत्र पर भेजने वाले का पूरा नाम न था केवल नाम के संक्षिप्त अक्षर ही थे ॥

चौथे पत्र में लिखा था कि मेरा बङ्गाली नाना मर गया है और मुझे इस शर्त पर अपना जायदाद का वारिस बना गया है कि मैं उसका पारिवारिक नाम “चक्रवर्ती” अपने नाम के साथ लगाऊँ। मैं पञ्जाब में वापिस आया और अमृतसर में उन लोगों का पता चलाने का प्रयत्न किया जिन्होंने मेरी प्यारी माता को सहायता दी थी, परन्तु सब यत्न निष्फल गये जिस गली में वे रहते थे वह बिल्कुल गिरा हुआ था और वहाँ कुछ नाम भी नहीं मिले। यही बात मुझे चिरकाल तक दुःख दे रही है। जो स्त्री आज रात कूचे में गाती थी, वह मेरी माता को जरूर जानती होगी और उसी से उस ने यह गीत सीखा होगा

एक फ्रांसीसी कन्या का अद्भुत मातृ-भाषा प्रेम

१७१

इस जगह कोई दूसरा यह गीत नहीं जान सकता क्योंकि यह “पका पका क्या लेमूरसीला” था ॥

सेठानी बड़ी घृणा प्रकट करके बोली—
क्या बकवाद है, इसे तो हर एक जानता है ।
एक भिखारन की खोज करना बेहदगी नहीं तो
और क्या है ? और सारे संसार में यह प्रका-
शित करना कि मेरी मां लोगों के दान पर नि-
र्वाह करती रही है, और-और सारा का सारा
ब्याल कैसा हास्यप्रद है ” ॥

आनन्द मोहन चक्रवर्ती ने सेठानी के घृणा
भरे सुन्दर मुख को ज़रा नज़र जमाकर देखा ।
फिर शान्ति पूर्वक बोला—मेरे बङ्गाली पूर्वजों
की यह कहानी है । यह प्रेम और घृणा का
सम्मिलित गीत है, मेरी मां ने इस का पञ्चाबी
में अनुवाद किया था; और जो शब्द आज गली
में गाए गये थे वे सब उस के शब्द हैं । मैं उस
गाने वाली की तलाश में लगा हुआ हूँ, जबतक
उसका पता न मिलेगा तक तब सब काम बन्द
रहेंगे । आज मैं बङ्गाली हूँ, उस कहानी ने मुझे
अपने पञ्जे में फांस लिया है । जबतक मैं उस
की खोज करता हूँ, आप कृपया मेरे अपराध
को क्षमा कीजिए, —

सेठानी अपनी जड़ाऊ जूती को अधीरता से
फर्श पर मारकर बड़े जोश से बोली—“नहीं मैं
गिरफ्तारी क्षमा नहीं कर सकती, तुम्हारी मां मर
चुकी है । तुम्हारे जिन मित्रों ने तुम्हारे स्वागत
के लिये अपने द्वार खोल दिये हैं, अमृतसर
के छोटे आदमियों में अपनी वावत ऐसा अप-
मान-जनक अपवाद फैला कर उन का उपहास
करना तुम्हारे लिये ठीक नहीं ॥ जबतक तुम

प्रतिज्ञा न करो कि मैं अब आगे कोई कार्यवाही
नहीं करूँगा मैं तुम्हारे साथ बराबर भगदूंगी” ॥

“शुक” (कमशः)

एक फ्रांसीसी कन्या का अद्भुत मातृ-भाषा प्रेम ।

(गताङ्क से आगे)

(ले०-श्री० प्रो० महेश्वरसिंह वी० ए०, एम० एम० सी०)

(VIII) * चौपाई *

जर्मनी लियो एलसेज जबसे ।

गिन्ती भई बड़न में तब से ॥ ७६ ॥

निर्भय राज्य भया जेहि बेरा ।

कीन बुविध उन्नति बहुतरा ॥ ७७ ॥

कौशल कला विज्ञान सब आये ।

खोजू विचारक पंडित पाये ॥ ७८ ॥

नित उठि शस्त्र यन्त्र प्रवीना ।

रचै बनावैं घेड़ नवीना ॥ ७९ ॥

शुभ अवसर पाय नीतिज्ञा ।

भाषा एक कियो दै अज्ञा ॥ ८० ॥

चाल चलन वस्तर बहु ढहा ।

धारे धारे किये एक रहा ॥ ८१ ॥

यन्त्रालय शिक्षाल अनेका ।

दीन्ह बनाय एक से एका ॥ ८२ ॥

साधारण जन सभै पढ़ाये ।

नीच ऊंच सब एक बनाये ॥ ८३ ॥

सब का सुख सब में सब जाँने ।

देश लाभ निज लाभ बखानै ॥ ८४ ॥

एक भाषा एक राज बनावा ।

जहां तहां व्योपार बढ़ावा ॥ ८५ ॥

उन्नति बहुत शर्मनी भयू ।

पुन घमण्ड लूक लागि गयू ॥ ८६ ॥

* दोहा *

घर की सुमत सों पायबल, जरमन भये प्रचण्ड ।

लगे विचारन वह विधी, जस बाड़ा इङ्गलण्ड ॥ ८७ ॥

(IX) * चौपाई *

राज नीत पञ्चायत आई ।

नवाबीद जल सैन बढ़ाई ॥ ८८ ॥

खड्ग मूल बल बैबल हाथा ।

अफरीका लों भूमि सनाथा ॥ ८९ ॥

मुष्टि कवच मखमल ओढ़ाई ।

हृदय कपट बाहर मृदुताई ॥ ९० ॥

उपनिवेश राज विस्तारैं ।

करया कुल जहं तहं संघारैं ॥ ९१ ॥

घर बाहर मिल यही बतावैं ।

नेक हमहू सभ्यता सिखावैं ॥ ९२ ॥

अब तो नीति यही चलि आई ।

मीठी छुरी सभ्य कहलाई ॥ ९३ ॥

शरमन मान लीन पुन सोई ।

यूरुप कहे सभ्यता जोई ॥ ९४ ॥

* दोहा *

शरमन का कछु दोष नहि, वे थे नये अज्ञान ।

वै तो केवल सिख लियो, डारयो जो यूरुप बान ॥ ९५ ॥

(X) * चौपाई *

सोई नीति जरमनी साथी ।

जो उच्चतम शक्ति आराधी ॥ ९६ ॥

उंची शक्ति सब कोई मानैं ।

राज मूल भाषा को जानैं ॥ ९७ ॥

शासन तब लों धरै न मूला ।

विजित वाक पर चले न दूरी ।

शस्त्र विजय तब लों रहे दूरी ॥ ९९ ॥

उपनिवेश में देखो जाई ।

भे भे, भिकार पर भाषा पाई ॥ १०० ॥

प्रचलित होय बोल विजयी का ।

जानो निश्चय मरण विजित का ॥ १०१ ॥

भाषा जहां जहां लोग भुलाने ।

तहं करें राज गैर मन माने ॥ १०२ ॥

तासों जरमन यत्न कराहीं ।

भाषा फ्रेंच दै जेहि मांहीं ॥ १०३ ॥

* दोहा *

विजई का व्योपार बड़, भाषा सांमर भील ।

निज व्यक्ति खोवे तुरत, जहि दे वामें डील ॥ १०४ ॥

(XI) * चौपाई *

सोई नीत जरमन विस्तारा ।

भाषा फ्रेंच यत्न कर मारा ॥ १०५ ॥

छल बल करि नव नियम बनावैं ।

फ्रेंच बोल जहां तहां दूरावैं ॥ १०६ ॥

टोल आदि पटशाला जहंवा ।

शरमन भाषा प्रचलित तहंवा ॥ १०७ ॥

पर भाषा चहुं दिश प्रचारा ।

निज भाषा भई जग अपकारा ॥ १०८ ॥

आपन भाषा लाखहु जानै ।

ताको पंडित कोऊ न मानै ॥ १०९ ॥

जो परभाषा सिखैं सिखावैं ।

सोई समाज गौरव बहु पावैं ॥ ११० ॥

कोट कचहरी दफतर जहां लग ।

भाषा फ्रेंच उड़ी तहां तहां लग ॥ १११ ॥

राज काज शासन व्योहारा ।

भाषा दुर्लभ भई अपारा ॥ ११२ ॥

एक फ्रांसीसी कन्या का अद्भुत मातृ-भाषा प्रेम

१७३

जिहि का देखो जरमन बोले ।

बिनु जरमन कहूं पवन न डोले ॥११३॥

निज भाषा मिश्रित भई कैसे ।

बिना लोन के खिचड़ी जैसे ॥ ११४ ॥

* दोहा *

निज भाषा की यह दशा, देख लोग पछताहि ।

बाल वृद्ध अरु नारि नर, मन ही मन अकुलाहि ॥११५॥

को करसकै विरोध शासन, नीति अति प्रबल ।

तब हूं न जरमन बोध, बनैव नियम कठोर निते ॥११६॥

(XII) * चौपाई *

जरमन से जरमन कहे वाता ।

केहि विध नाश फ्रेंच हूँ ताता ॥ ११७ ॥

जब लग भाषा रहै देश की ।

तब लौं जड़ नहिं उप निवेशकी ॥११८॥

विजित विजय प्रतीत न माँनै ।

जब लौं आपन भाषा जानै ॥ ११९ ॥

भाषा जिन की जौन जस होई ।

सभ्यता तिन की तौन तस होई ॥१२०॥

भाषा में साहित्य जो रहई ।

धर्म इतिहास सुरक्षित अहई ॥ १२१ ॥

जब लग भाषा प्रेम रहेगी ।

युरपन से सम्बन्ध रहेगी ॥ १२२ ॥

भाषा विजित तिमिर कर भानू ।

विजई उर गड़े जस कृशानू ॥ १२३ ॥

भाषा विजित भूलें नहीं जब लौं ।

भाव स्वतन्त्र डोलें नहीं तब लौं ॥१२४॥

जो कोउ चहे विजित संघारै ।

लंका गढ़ भाषा सो जारै ॥ १२५ ॥

शरमन यत्न करै दिन राती ।

नाश विजित कुल होय जेहि भांति ॥१२६॥

राना नियम बनाये ऐसे ।

भाषा चलन दमन होय जैसे ॥ १२७ ॥

आप तो सांचों नियम बनावैं ।

भाट फ्रेंच कछु साथ नचावैं ॥ १२८ ॥

नियम बनाय खेल बहु खेलें ।

सांचन को बन्दी घर पेलें ॥ १२९ ॥

जो कुछ इच्छा होय मन माहीं ।

नाटक मजलिस से करवाहीं ॥ १३० ॥

* दोहा *

न्याय नाम रख नियम कहि, करै घोर अन्याय ।

भेड़ी मारे भेड़िया, कहे पानी गन्धलाय ॥ १३१ ॥

(XIII) * चौपाई *

नियम कठोर हाकिम प्रतिकूला ।

तब हूं फ्रेंच देश नहीं भूला ॥ १३२ ॥

जयों जयों राज शर्मनी साँपे ।

तयों तयों राग फ्रेंच उर व्यापे ॥१३३॥

नगर गांव एकौ नहीं तहंवा ।

देश अनुराग व्यापा नहीं जहंवा ॥१३४॥

लूविल रहा तहां एक गांवा ।

प्रजा फ्रेंच वस्ती जेहि ठांवा ॥ १३५ ॥

तामैं रहा एक पटशाला ।

पढ़ते जामें बाल अरु बाला ॥ १३६ ॥

मातृ-भाषा में शिक्षा पाते ।

हूँ प्रसन्न बालक तहं जाते ॥ १३७ ॥

भाषा फ्रेंच जरमनी देसा ।

शरमन हृदय भयो अंदेसा ॥१३८ ॥

तब शासक एक कोतुक कीन्हा ।

भाषा जरमन माध्यम कीन्हा ॥ १३९ ॥

* दोहा *

जरमन भाषा माध्यम, जब से बनि चहुं ओर ।

बाल बालिका दुख सहें, ताको और न छोर ॥ १४० ॥

* दोहा *

निज भाषा अपमान ते, लूविल के सब लोग ।
भीतर भीतर जल रहे, मनो लगे क्षय रोग ॥ १४१ ॥

(XIV) * चौपाई *

बाहर शीत दाह उर कैसे ।
चिनगी छिपी राख विच जैसे ॥ १४२ ॥
सोइ आग फैली चहुं ओरा ।
कहुं अति धीम कहुं अति घोरा ॥ १४३ ॥
कोउ मन बहे कोउ रिसयाने ।
झेलें कोउ कोई खिसयाने ॥ १४४ ॥
कोउ लिख लिख विनय कराहीं ।
कछु संघ जोड़ नृप पहि जाई ॥ १४५ ॥
पौरुष बहुत करें सब लोग ।
मनसा फलै सो नहीं संयोगा ॥ १४६ ॥
यह विध भगरत कछु दिन बीते ।
फ्रेंच हारे अरु जरमन जीते ॥ १४७ ॥
केसर रानी तब तहां आई ।
देस कोस चिन्ता उर लाई ॥ १४८ ॥

* दीहा *

रानी आगमन जान के लुविल निवासी धाय ।
दिखलावन स्कूल निज, लाये ताहि लिबाय ॥ १४९ ॥

(XV) * चौपाई *

शाला देख देख महारानी ।
जरमन उन्नति सों हरषानी ॥ १५० ॥
जरमन बोरड जरमन खरया ।
जरमन वस्तु सजे अटरया ॥ १५१ ॥
जरमन पुस्तक जरमन नकसे ।
जरमन ही सब ड्राइंग बकसे ॥ १५२ ॥
चित्र जहां तहां लगे मनोहर ।
सीडन विजै दिखवैं, सुन्दर ॥ १५३ ॥

केसरानी केसर के मुद्रण ।

ठौर २ लागे बहु चित्रण ॥ १५४ ॥

आस्ट्रीन अरु प्रशियन झण्डे ।
राखे बान्ध बान्ध बहु डण्डे ॥ १५५ ॥
मन्त्र स्वागत जहां तहां लागा ।
अक्षर मोटे राज अनुरागा ॥ १५६ ॥

जर्मन ध्वज अकास फरराना ।
टुक टुक फ्रेंच देखें तहि राना ॥ १५७ ॥
सैनिक मिल कछु वीन बजावैं ।
जरमन राष्ट्र गीत बहु गावैं ॥ १५८ ॥
राष्ट्र राग ऊंचे स्वर बंका ।

सीडन विजय का वाजे डंका ॥ १५९ ॥

* दोहा *

रानी स्वागत अति रुचिर, मन सज्जन अति साज ।
हरष प्रशंसा कीन तब, देखत सकल समाज ॥ १६० ॥

(XVI) * चौपाई *

अति प्रसन्न रानी मन भई ।
देखन पाठ कर्म तब गई ॥ १६१ ॥
देखा लघु बालक महारानी ।
सहजै बोलें जरमन बानी ॥ १६२ ॥
उमड़ा हरष बहुत मन माहीं ।
दीन बधाई शिक्षक पाहीं ॥ १६३ ॥
बहुर कहा हो ! हो ! अध्यापक ।
तुम कीन्ही जरमन बहु व्यापक ॥ १६४ ॥
राखे पुरुष बहुत तुम फ्रेंगी ।
जो सिखवैं जरमन बहु रंगी ॥ १६५ ॥
अध्यापिका कोउ नहीं आई ।
होये फ्रेंच जरमन जु सिखाई ॥ १६६ ॥
का नहिं कोई फ्रेंच कर नारी ? ।
जो जर्मन भाषा विस्तारी ॥ १६७ ॥
अध्यापक तब उत्तर दीन्हा ।

नारी फ्रेंच मैं अस नहीं चीन्हां ॥ १६८ ॥

* दोहा *

फ्रेंच भाषा तेहि प्रेम बढ़, वाणी आन्यन अनुसरै ।
परलाभन कन होय बहु, जरमन तदपि न परचरै ॥ १६९ ॥
फ्रेंच नारि उर देश हित, दीन्ह विधाता राख ।
हारे हिय जब नर सवै, दीन जोन तहु साख ॥ १७० ॥

(XVII) * चौपाई *

महरानी विचार तब कीन्हा ।
शिक्षक पहि कछु उत्तर न दीन्हा ॥ १७१ ॥
फिर संकल्प कीन्हा कछु रानी ।
जूं मरडप आगे निय नारी ॥ १७२ ॥
मरडप की शोभा बहु बाढ़ी ।
जुड़े जहां सब नर अरु रानी ॥ १७३ ॥
जरमन हाकिम अफसर शिक्षक ।
लाट ड्यूक फौजी अरु रक्षक ॥ १७४ ॥
मीर पंच अरु नगर निवासी ।
बड़े छोट मध्यम पुरवासी ॥ १७५ ॥
प्रतिनिधि मुखिया अरु नेता ।
उपदशक भजनीक निकेता ॥ १७६ ॥
यथायोग्य स्थान विराजे ।
सम्पादक परिडत अरु राजे ॥ १७७ ॥
केसरीन आवत सब चीन्हा ।
गड़े भये सुआगत कीन्हा ॥ १७८ ॥

* दोहा *

ताड़ी दै जय २ कहत, पग से उठ २ जायं ।
जियो रानी राजा सहित, बोल २ चिललाय ॥ १७९ ॥
(क्रमशः)



* पुस्तकालय में बलवा ॥

दिवाली के दिनों में अपने पुस्तकालय की सफाई करने के लिये पुस्तकानन्द जी ने अपने पढ़ने के कमरे में सारी किताबें बखेर दीं और इस विचार में पड़ गये कि अब की बार इनको किस तरह जमाऊं । नाना प्रकार के उपाय सोचने पर फिर दूसरे विचार उन तद्वीरों को नष्ट भ्रष्ट कर देते, ऐसा करते २ वे थक से गये, और अपने हाथ के सहारे सिर को झुका कर दूसरे विचारों में निमग्न होगये । एकाएक उनके कानों में किताबों के उलटने की सी आवाज़ आने लगी । पत्तों की खड़खड़ाहट के समान धीमी २ कानां-फूसियों में उन को निम्नलिखित शब्द स्पष्ट सुनाई दिये । “अन्त में वह समय आगया है जब कि संसार के सब प्राणी बराबरी के हक मांगें । और सब में धन का बटवारा फिर से होकर सब एक से कर दिये जावें, आज से आगे अब किसी पुस्तक को एक अलमारी से अधिक अलमारी में रहने का हक नहीं है । न कोई पुस्तक दूसरी से अधिक मोटी या लम्बी रह सकती है । अब रायलदुपेजी और चौपेजी पुस्तकों का ज़माना गया अब अठपेजी का समय आगया है ” । यह सुन कर ज्यों ही पुस्तकानन्द जी ऊपर दृष्टि कर भांकते हैं तो क्या देखते हैं कि एक “अठपेजी” पुस्तक जिस की कि उन्होंने कभी परवाह न की थी कि आया वह उनके पुस्तकालय में है या नहीं, एक नीचे गिरी हुई “दुपेजी” के उपर भाग्यवश खड़ी

* (श्रियुत चांदकरण शारदा द्वारा लिखित Prose Fancies के आधार पर)

होजाने से ज़रा अकड़ गई है और अपनी दूसरी अठपेजी बहिनों को बड़े जोश के साथ यह व्याख्यान दे रही है "यह चमकदार पुठों और जिल्दों वाली किताबें सब से अच्छी अलमारियों में पड़ी रहती हैं। इन को शरदऋतु में सूर्य भगवान् की ताप नसीब होती है और रात्रि में ये अंगीठी के सामने तपती हैं। हमने क्या कसूर किया है कि हम अंधेरे के अन्दर पड़ी हुई गर्द में भरी रहें। हम भी संसार में उतनी ही पड़ी जाने के लिये उत्पन्न हुई हैं जितनी कि लार्ड "चोपेजी" और आनरेबिल "दुपेजी और रायल बृहदाकार कागज वाली। मेरी बहिनो! अब समय आ गया है। या तो जान को हथेली में लेकर जो कुछ करना है सो अभी कर लो। नहीं तो हमेशा के लिये तुम्हारे हक मारे जावेंगे।" क्या तुम गर्द में भरी हुई अंधेरी अलमारियों में पड़ी रहना चाहती हो (चारों तरफ से जोर से आवाजें आती हैं। नहीं २ अब हम ऐसी खराब जगह में कभी भी नहीं रहेंगी) व्याख्यान दाता का जोश दुगना हो जाता है और वह कहती है "अभी काम कर जावो और आगे आने वाली पुस्तकों की सन्तति आप को आशीर्वाद देगी। आप का नाम इस संसार में अमर हो जावेगा, इस सुवर्ण मुहूर्त को यदि तुमने हाथ से खो दिया तो फिर, आने वाली सौ संस्करणों के पीछे तक तुम्हारा काम ठंडा पड़ जावेगा, और तुम्हारे मुख पर कलंक का टीका बना रहेगा" ॥

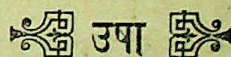
इतने में एक मोटी किताब जो कि इस छोटी बोलने वाली किताब पर झुक रही थी गिर पड़ी

और छोटी किताब को सदा के लिये चुप करा दिया परन्तु दूसरी पुस्तकों ने हिम्मत न हारी। उन्होंने अपनी जाति पर बलिदान हुई बहिन का बड़े जोर शोर से समर्थन किया। कमरे में बिखरी हुई किताबों के बीसियों नये नेता उत्पन्न होगये। पुस्तकानन्द जी भी व्याख्यानों से तंग आकर यह बोले "देखो! मैं तुम्हें स्वराज्य देता हूं, अपना बन्दोबस्त स्वयम् करो। लेकिन अधिक रक्तपात मत करना" इस घोषणा पत्र के होते ही पुस्तकालय में ऐसा कोलाहल मचा जैसा कि किसी ने पहिले नहीं सुना होगा। इस ने तो बड़े २ महाभारत जैसे युद्धों को भी मात कर दिया। कोलाहल में कान पड़े सुनाई नहीं दिया क्योंकि किताबों के छोटे २ कीड़े भी अब तो प्रसन्न चित्त हो बाहर निकल आये और मन मानी हांकने लगे। अन्त में एक बूढ़ी तत्व वेत्ता पुस्तक के खड़े होने पर सब शान्त होगये। पुस्तकने "समता" पर बड़े जोर शोर की स्पीच दी और अन्त में दुर्भाग्यवश इन शब्दों में अपना व्याख्यान समाप्त किया "मौत से बढ़कर सब प्राणियों को बराबर करने वाली इस संसार में कोई वस्तु नहीं है और बराबर करने का इस से सरल दूसरा उपाय भी नहीं है। हां! एक और उपाय भी है वह यह है कि चौपेजी आकार की पुस्तकें अपने चार टुकड़े करवा लें। केवल इसी उपाय से अठपेजी के बराबर हम सब हो सकती हैं। आपने संस्कृत का प्रमाण भी दिया "नान्यः पन्था विद्यते"। लेकिन एक के दो २ टुकड़े या चार टुकड़े करने से भी तो ये मृत्यु को प्राप्त हो जावेंगी और संसार में अनादर के रहने के स्थान में मरना भला

है। इसलिये मौत से बढ़ कर दूसरा सरल उपाय नहीं। यह सुन कर दुपेजी और चौपेजी पुस्तकें जो अब तक फूली नहीं समाती थीं अपनी भूल पर पश्चाताप करने लगीं क्योंकि समता करने के लिये उन्हीं के सब से पहिले टुकड़े उड़ने वाले थे। इस लिये उन्हीं ने अपनी सेना एकत्र की और अपने स्वत्वों की रक्षा करने के लिये मारने मरने को उद्यत होगई। अभी इन पुस्तकों का आपस में लड़कर विध्वंस होने ही वाला था कि एक दूसरे तत्ववेत्ता खड़े होगये “क्यों खून खराबी करते हो ? ऊंची मोटी आकृति कभी बड़प्पन का निशान नहीं होती परन्तु मन और आत्मा से ही आदमी छोटा बड़ा गिना जाता है। संसार में हम देखते हैं कि लंबे कद के मनुष्य और बहुत खूब सूरत मनुष्य अकसर होटलों में नौकर रखे जाते हैं और वे छोटे कद के धनिक आदमियों की आकर खुशामद करते हैं। इस लिये पुस्तकों की समता का फैसला उन के अन्दर के “ज्ञान” से करो न कि कद से” इतना कहने की देर थी कि एक छोटीसी फिलासफी की पुस्तक ने इस बात को कार्य्य रूप में लाने के लिये एक बड़ी सुनहरी अक्षर वाली मोटी किताब से कहा “इधर आओ हमारे पेज पलटो, हमारी परिचारका बनो परन्तु उस मोटी अभिमानन ने इस से इनकार किया। वस सब जगह फिर कोलाहल मच गया, और विचारे तत्ववेत्ता जी बैठ गये। तीसरे महात्मा खड़े हुए, “उन्हीं ने कहा ? बहिनों इन सुनहरी जिल्द की मोटी पुस्तकों को केवल उसी शोभा के लिये रखने

दो जैसे कि आज कल यूरोप में कई राजाओं और महाराजाओं को केवल राज्य की शोभा बढ़ाने के लिये रखते हैं”। परन्तु यह बात किसी ने भी न सुनी। इस प्रकार अपनी २ तृती सब ने बजाई। कुछ भी निश्चय नहीं हुआ और दिवाली निकट आने के कारण पुस्तकानन्द जी ने अपनी मनमानी रुचि के अनुसार फिर से पुस्तकों को अलमारियों में जमा कर ताला लगा दिया। हां इस कोलाहल मचाने से छोटी पुस्तकों को इतना लाभ अवश्य हुआ कि उनकी गर्द झड़ गई और जल्दी में किसी २ को सुनहरी जिल्द वाली पुस्तक के पास भी स्थान मिल गया—

“पुस्तकानन्द”



(गतांक से आगे)

(१०)

श्री-सम्पन्न सकल दिशि, दर्शित आभा-रूप;

मानों मुसकाती मृदुल, माधुरि, मन्द, अनूप।

(११)

नया रङ्ग है, नया दङ्ग है, नई प्रकृति की प्रभा नई।

महा-मोहिनी, सुखद, सोहनी, दिव्य छटा है नई, नई।

हीन उमङ्ग रह मिलन अङ्ग नहीं, कोउ कहीं पर दृष्टि परे।

परम सुघरता, प्रचुर मधुरता, रुचिर रम्यता लक्षि परे ॥

(१२)

कीन्ही परम दयामयने यह, अति शुभ घड़ी उपस्थित है।

शोक-तिमिर का अन्त करो अब, हर्ष-ज्योति आलोकित है।

उपा-दर्शन-लाभ उठावहु, दिव्य शक्ति का ध्यान धरो।

तु-मन सर्व समर्पण करि उस, परमपिता का स्मरण करो ॥

(१३)

वशीभूत यदि महा-मोह के, त्याग करोगे नहीं शैया ।
अवशि समय शुभ वीत चलेगा, रखि अधवीच अड़ी नैया
पीछे पश्चात्ताप व्यर्थ का, काम नहीं कुछ आवेगा ।
हैंसी कराके जगत-बीच में, उलटा हृदय जलावेगा ॥

(१४)

देश-दुखद दारिद्र्य-शत्रु पर, कुश-कृपाण यदि चाँते हो ।
देश-दुसह, सङ्कष्ट व्याधि पर, रामबाण यदि चाँते हो ।
देश-व्याप्त जड़ता-शठता पर, वज्र-पात यदि चाँते हो ।
तो फिर हो कटिबद्ध, उठो तुम, इतने क्यों अलसते हो ॥

(१५)

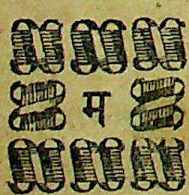
मानवीयता शेष रही है, यदि कुछ भी इस जीवन में ।
मृतक शब्द से लाज रही है, यदि कुछ भी इस नर-नन में
तो बस, बहुत होगया, अब तो, खूब सोचुके, चेत करो ।
उषा के गम्भीर गान में, अपने लय को एक करो ॥

(१६)

करि पुकार, उषा करती है, नम्र निवेदन वारम्बार—
खोलि दृगञ्चल निरखि लेहु तुम, जग-व्यवहार-वायु-सञ्चार
उन्नति में साफल्य मिलेगा, सभ्य कहेगा सब सँसार ।
यदि दृढ़ता-साहसयुत होकर, निज मुख राखहु गति अनुसार

वालाप्रसाद

वनस्पति विवाह ।



पुष्पों के विवाह तो पाठकों में
से प्रायः सभी ने देखे होंगे, परन्तु
ऐसे सज्जन विरले ही निकलेंगे
जिन्होंने कभी पौधों का विवाह
भी देखा हो । इस लिए आज हम आप को व-
नस्पति विवाह के विषय में कुछ बातें सुनाते हैं ।

नहीं हो सकती, सो पौधों के भी माता पिता
होने आवश्यक हैं । फूल पौधों की दम्पति हैं ।
जैसे मनुष्यों में स्त्री पुरुष अलग २ होते हैं, ऐसे
सब पौधों में नर भाग और नारी भाग भिन्न २
नहीं होते । छोटी श्रेणियों के पौधों में तो पता
ही नहीं लगता कि नर कौनसा है और नारी
कौनसी । हां, बड़ी श्रेणियों में नर नारी ऐसे ही
भिन्न और स्पष्ट होते हैं जैसे कि गाए और बैल

बहुत छोटी श्रेणी के पौधों में फूल नहीं
आते । इन में सन्तानोत्पत्ति की दो विधियाँ
हैं । एक तो यह कि एक कोश, जिसे आङ्गल
भाषा में सैल कहते हैं, मध्य में से विभक्त हो
कर दो पौधे बन जाता है । इस से कुछ अर्वा-
चीन शैली यह है कि एक कोश फूट पड़ता है
और उस में से असंख्यात बच्चे निकल पड़ते हैं ।
इन दोनों अवस्थाओं में नर नारी में कुछ भेद
नहीं होता । पौधे की केवल माता ही होती है,
पिता का कुछ पता नहीं चलता ॥

बरसाती छप्पड़ों या कच्चे तालाबों पर आपने
एक बाल के समान वारीक बूर या हरी काँटा
तैरती देखी होगी । यदि इन जल पौधों को ले
कर सूक्ष्म-दर्शक (दूरबीन) के नीचे देखा जाए
तो मालूम होगा कि दो तगे से पतल पौधे एक
दूसरे के बराबर खड़े हैं । जिस स्थान पर इन
के कोश एक दूसरे के अधिक निकट होते हैं
वहाँ दोनों ओर से ये कोश एक दूसरे की ओर
बाहर को बढ़ना आरम्भ कर देते हैं, यहाँ तक
कि एक दूसरे से मिल जाता है । तब एक के
अन्दर का पदार्थ दूसरे के अन्दर प्रवेश कर
जाता है । इन के मिलाप से एक प्रकार का

वनस्पति विवाह

१७९

तक निष्क्रिया पड़ा रहकर फिर वैसा ही एक नया पौधा बन जाता है। यह वनस्पति विवाह का सब से प्रथम प्रकार है ॥

इस क्रिया का क्या प्रयोजन है और इस से क्या लाभ है, यह हमें कुछ ज्ञात नहीं। हां, इतना है कि प्रोटोप्लाज़म (Protoplasm) का सदा युवा और नवीन रहना आवश्यक है, नहीं तो बूढ़ा होकर वह किसी दिन मर जायगा इसलिये वह अपनी लचक और नम्यता को खो कर निर्वाह नहीं कर सकता। इसी से वचने के लिये जन्तुओं और वृक्षों के सजीव (living cell) कोश अपनी भित्ति को तोड़ कर बाहर निकल आते हैं। इस से इन में नव-जीवन का सञ्चार होता है। बाहर आकर कुछ काल तक ये निश्चेष्ट पड़े रहते हैं, फिर नये सिरों से अपने लिए नये कोश बना लेते हैं। मानों काम से थक कर किसी पहाड़ पर आराम कर आये हैं और फिर नये जोश से काम आरम्भ किया है। चाहे कुछ ही हो पर एक बात जरूर निश्चित है, और वह यह कि जो वच्चा दो भिन्न २ कोशों के संयोग से उत्पन्न होता है वह अधिक बलवान, दृढ़तर और नवीन होता है। एक कोश के फूटने से जो सन्तान होती है, वह इस का मुकाबला नहीं कर सकती ॥

उच्च श्रेणी के वृक्षों में जैसा कि हम ऊपर कह आए हैं नर और नारी का भाग अलग २ होता है। नारी कोश नर कोश से बड़ा होता है, नर-कोश यद्यपि छोटा होता है पर सौद्योग होता है। इसी में पोलन की पीले रंग की धूलि उत्पन्न होती है, इसे अंग्रेजी में स्टेमन बोलते हैं। नारी कोश (Female cell) बड़ा तो निस्सन्देह

होता है, पर इस में चेष्टा कुछ नहीं होती। इसे आङ्गल भाषा में पिस्टिल कहते हैं। इस में अंड (बीज) होते हैं। परन्तु इन अण्डों का कुछ ऐसा गुण है कि जबतक नर कोश के तरोताज़ा और उद्योगी पोलन का इन से संयोग न हो, तब तक इनमें जान नहीं आती और यह बढ़कर बीज या नये पौधे नहीं बन सकते, इस लिए स्टेमन को बीज का पिता और पिस्टिल को माता समझना चाहिए ॥

मधु मक्खियों के छत्ते से यह बात अधिक सुगमता से समझमें आजायगी। छत्ता मक्खियों की एक वस्ती है, जिस में तीन प्रकार के लोग रहते हैं। एक नारी, दूसरे नर और तीसरे नपुंसक। नारी एक ही होती है जिसे रानी कहते हैं, नरों का काम रानी से वच्चे पैदा करना है। तीसरे नपुंसक, जो न नारी हैं न नर। ये अपने लिये और शेष सब नरों, वच्चों और रानी के लिये भोजन लाते हैं। इसी प्रकार वृक्ष पत्तों की एक वस्ती है, जिस में फूल तो नर और नारियां हैं, और पत्ते नपुंसक या काम करनेवाले सेवक। यद्यपि बाहर से पत्तों और छत्ते के सेवक नपुंसकों में यह भेद प्रतीत होता है कि मक्खियां तो अलग २ स्वावलम्बी व्यक्तियां हैं और पत्ते एक ही तने और जड़े से जुड़े हुए हैं, परन्तु वस्तुतः यह भेद भी नहीं क्योंकि ऐसे भी कई पौधे हैं जिन के पत्तों को यदि तोड़ कर गाड़ दिया जाए तो वे फूट आते हैं। स्टोन-क्रॉप (stone crop) और बगोनियां (Begonia) आदि कई पौधों के पत्ते गिर कर स्वयम् ही उग आते हैं। कई बार पत्ते के सिरों से एक नया पौधा निकल आता है। इसे सन्तानोत्पत्ति

की लिंग-हीन विधि कहते हैं । जड़ और तना पौधे को पानी और नत्रजनमय द्रव्य (Nitrogenous matter) देते हैं, पत्ते निशास्ता प्रोटोप्लाज़्म और अन्य मुख्य खाद्य पदार्थ पैदा करते हैं । फूल भी एक प्रकार के पत्ते ही हैं जो दम्पति का कार्य करते हैं । सो पौधा पत्तों की एक बस्ती है जिस में पारस्परिक सेवा के लिये और विशेष कार्यों के करने के लिए नाना प्रकार के पत्ते एकत्रित हुए हैं ॥

साधारण लोग फूल की रङ्ग बरङ्गी पङ्कड़ियों को ही जिन्हें अंग्रेज़ी में पेटल कहते हैं, फूल समझते हैं । परन्तु वास्तव में प्रकृत फूल इन के अन्दर है । अर्थात् स्टेमन और पिस्टिल ही असली फूल है । पङ्कड़ियों के ठीक मध्य में पहले पिस्टिल होते हैं, जिन में भ्रूणावस्था में बीज रहता है । इन के बाहर स्टेमन है जिन में पोलन की धूलि उत्पन्न होती है । इन के बाहर रङ्ग बरङ्गी पङ्कड़ियां या पेटल होते हैं । कई फूलों में—जैसे कि आवनूस, कुत्ता घास—पेटल नहीं होते, इसलिए साधारण लोग उन्हें फूल नहीं कहते । स्टेमन का धूलिरूपी वीर्य कीड़ों के साथ लगकर, या पवन में उड़कर, या फूल के हिलने से गिर कर किसी प्रकार पिस्टिल रूपी नारी तक जा पहुँचता है । पिस्टिल में से एक विशेष प्रकार का रस निकलता है । वह रस पोलन को थाम लेता है । ज्यों ही पोलन पिस्टिल पर गिरता है, वहाँ एक विशेष प्रकार की चेष्टा उत्पन्न होजाती है जिस से एक प्रकार की पोलन की नली बढ़नी आरम्भ होती है । जब यह नली बढ़ते २ बीजों तक पहुँच जाती है

बढ़कर पक्के बीज या पौधे बनने शुरु होजाते हैं । जिस कच्चे बीज रूपी रज के पास पोलन रूपी वीर्य नहीं पहुँचता वह सूखकर नष्ट होजाता है ।

स्टेमन और पिस्टिल तो फूल के आवश्यक अङ्ग हैं ही, परन्तु इन के अतिरिक्त दो और भी अङ्ग हैं । एक का नाम करोला है और दूसरे का नाम केलिक्स । करोला तो नाना वर्णोंकी चित्र विचित्र पङ्कड़ियों के मण्डल का नाम है । यह सुन्दर पङ्कड़ियां अपने लुभायमान चमकीले रङ्गों से भ्रमरों और तीतरियों को अपनी ओर आकर्षित करती हैं । मानों यह फूलों के विज्ञापन हैं जो इन मधु लोभी कृमियों को पुकार पुकार कर कह रहे हैं कि इधर आओ । हमारे पास तुम्हारे लिये बहुत अच्छा मधु है । यह कीड़े जहाँ अपने लिए फूलों से मधु ले लेते हैं, वहाँ पौधों का भी काम कर देते हैं । पोलन की धूलि इन के पखों और टाङ्गों के चिमट जाती है, सो जब यह एक पुष्प से उड़कर दूसरे पर जाते हैं तो पोलन भी एक से दूसरे पर पहुँच जाता है इस प्रकार यह भौरे पौधों के विवाह कराने में बड़ी सहायता देते हैं । स्टेमन, पिस्टिल और करोला का सारा गुट्टा हरी पत्तियों के एक प्याले में रक्खा होता है, इस प्याले को केलिक्स बोलते हैं । केलिक्स कीड़ों से फूल की रक्षा करता है ताकि वे कच्चे पोलन को ही न चुरा जायें । कई फूलों में केलिक्स भी बड़ा सुन्दर होता है और यह भ्रमरों और तीतरियों को आकर्षण करने में सहायता देता है ॥

आप पूछेंगे कि पौधों को क्या आवश्यकता पड़ी है कि अपने पोलन को एक फूल से दूसरे

फूल के पिस्टिल में गर्भस्थापन करे ? भौरों और तीतरियों को मधुरूपी धूस (रिशवत) देने से क्या लाभ ? सो इस में यही वक्तव्य है कि बहुत से फूल ऐसा करने वाले भी हैं परन्तु वे बड़े निर्वल और क्षीण हैं, उन्हें पौधों की वरादरी में पतित और भाई चारे से वहिष्कृत समझा जाता है । वे जीवनमें कभी सफल नहीं होते । जितने भी पौधे दृष्ट पुष्ट और कुलीन घरानों के हैं, जिन्होंने जीवन में उच्च पदवियां और अच्छे नाम पाए हैं, उन सब ने ऐसी विधियां निकाली हुई हैं जिन के द्वारा एक का पोलन दूसरे के पिस्टिल में गर्भस्थापन करता है । वे अपने ही भाई वन्धुओं में विवाह कदापि नहीं करते ॥

जैसाकि हम ऊपर कह आए हैं प्रत्येक पौधा एक बस्ती है । एक फूल के स्टेमन और पिस्टिल आपस में भाई बहिन हैं और उसी पौधेके दूसरे फूल उन के चचेरे भाई और चचेरी बहिन हैं । निकट के सम्बन्धियों में विवाह करना बड़ा हानि-कारक है । इस से निर्वल और अल्पायु सन्तान उत्पन्न होती है । इस के विपरीत दो नए लहू मिलने से बलवान और कर्मवीर सन्तान होती है । इसीलिए कुलीन पौधे सदा दूर दूर विवाह करते हैं, और केवल नीच और पतित ही अपने पोलन से अपने ही पिस्टिल के बीजों को पकाते हैं, परन्तु अब यह रीति पौधों में से हटती जा रही है ॥



वृद्धिशीला उपा ।

(लेखक-पं० लोकनाथ शर्मा आर्योपदेशक)



स समय भगवान् भास्कर अपने किरण समूहरूपी सेना को युद्ध काल में विज्ञ सेनानी की भान्ति एकत्र करता हुआ अस्ता-

चल की ओर बढ़ता है, और थोड़े काल के पीछे लोकालोक पर्वत के उस पार चला जाता है, तब इधर अन्धकार का राज्य स्थापित होता है, जिधर दृष्टि डालो परिवर्त्तन होता दीख पड़ता है । सब लोग अपने २ कार्य को जहां का तहां छोड़ कर चल देते हैं । उलूक और चमगादड़ आदि बहुत से अन्धकारप्रिय प्राणी बगलियां बजाते हुवे चीखना प्रारम्भ करते हैं, जड़ चेतन के व्यवहारों में यहां तक परिवर्त्तन होजाता है कि वृक्ष भी जो अभी प्राण-प्रद वायु देकर उपकार कर रहे थे अब घातक वायु दे रहे हैं, चार घड़ी के पश्चात् व्यवस्था और भी बदल जाती है, कुछ प्राणियों को छोड़कर शेष आधे संसार के सारे प्राणी विचेष्ट होकर सो जाते हैं । किसी को भी ज्ञान नहीं रहता कि मैं कहां पड़ा हूं । चारों ओर सन्नाटा छा जाता है मूर्खासी भासने लगती है । चोर डाकू जो चिर-काल से प्रतीक्षा कर रहे थे कृतकार्य होने लगते हैं, और भी कितने उत्पात इस में होते हैं जिसे हम रात्रि के नामसे पुकारते हैं । किन्तु यह दशा भी चिर स्थायिनी नहीं रहती । कुछ काल के पीछे पूर्व दिशा से प्रकाश की रेखा दीख पड़ती है, जिस का नाम शास्त्रकारोंने "उषा" रक्खा है । यद्यपि

सूर्योदय से पूर्व तथा सूर्यास्त के अनन्तर प्रकाश और अन्धकार से मिश्रित एक समय एकसा आता है, किन्तु अस्त होने के पीछे जो उपरोक्त उपद्रव होते और अज्ञानता बढ़ती है उषा का इस से पृथिवी आकाश का अन्तर है। प्रकाश रेखा के साथ २ मन्द २ तथा सुगन्ध वाहिनी पवन का भी संचार होता है। मानो वह उषा का स्वागत कर रहा है, और संसार को पुरुषार्थ करने के निमित्त प्रेरणा भी कर रहा है। उसी समय, भूधरों के शिखरों पर शुभ्र छा जाती है। हरित घास पर पड़ी हुई ओस की बूंदें देखने वाले के चित्त में हरित मखमल पर जड़ित मोतियों की भ्रान्ति उत्पन्न करती हैं। आकाश से बातें करने वाले सौधगृह (महिल) जो अन्धेरे ने आवृत्त कर रखे थे दीखने लग जाते हैं। वायु की गति से कम्पित वृक्षों के पत्रों वा पुष्पों के अवलोकन से प्रतीत होता है कि ये सब के सब उषा देवी के आगमन के उपलक्ष्य में नृत्य कर रहे हैं। अथवा स्वयं प्रकृति देवी इन की मिससे नृत्य करती हुई उषा का अभिनन्दन कर रही है। स्वच्छ सरोंवरों में मुकुलित पद्म वृन्द में भी विकसित होने की शक्ति का आविर्भाव हो रहा है। “वनस्पति शास्त्र के अनुशीलन से ये भी ज्ञात होता है कि प्रत्येक अंकुर (पौधे) के फूटने वा बढ़ने का समय भी वही है” ॥

गुलाब, चम्पा, गेंदा आदि फूलों का सौरभ दिगन्त व्यापी होता चला जा रहा है। उन के समीप जा भ्रमरों की श्रेणियों पराग (गर्भ केसर) लेने की इच्छा से उत्सुक होने लगती हैं, उधर

रात्रि के दुस्सह विरह से, अवकाश पा कोकनिकरके आनन्द की सीमा नहीं रहती-बुलबुलें पुष्पित-वाटिकाओं में एक शाखा से दूसरी पर जाती हुई मनोरञ्जक गान करके प्रभु की अपार महिमा का वर्णन करने लगती हैं, उन की ध्वनि वसन्त ऋतु में फूले हुए आम के वृक्षों पर विहार करती हुई कोकिलाओं के हृदयहारी स्वर को भी मात किये देती है। मयूर के कलरव का तो कहना ही क्या है। कोई भी ऐसा अभाग्य प्राणी न होगा जो उसे सुनकर हर्षित न होता हो। हंस सारिस आदि पक्षीगण धवल धारा पात कल कल नाद करते हुए भरनों की तरफ खिंचे चले जाते हैं, नदीयों तालावों तथा अन्यान्य जलाशयों पर पधार वगुलाजी महाराज भी छोटी २ मछलियों के पकड़ने में कुछ कसर उठा नहीं रखते। सच्चे ईश्वर भक्त और ऋषि मुनि भी उठकर इसी समय सर्व हित के लिये, पुस्तक निर्माण करते हैं। ईश्वर प्राप्ति का भी सब से उपयोगी समय यही कहा गया है। कवि भी प्रायः इसी समय कविता करते हैं, विद्यार्थियों के पूर्व पाठ को कण्ठ करने और विद्या उपलब्ध करने का भी सर्वोत्तम काल यही है। चाँक कर भुवितल के निखिल जीवों के प्राणाधार अन्न के उत्पन्न करने को कृषिकों के हल चलाने का भी विश्रान्त काल इसी को कहते हैं। प्रायः पथिक लोग भी इसी समय उठकर दूर जाने के लिये चल देते हैं ॥

प्रिय पाठकगण ! कहां तक वर्णन करें उषा के आते ही वृद्धि का साम्राज्य स्थापित हो जाता है। प्रत्येक के अन्दर जहां शक्ति का सञ्चार होता है, वहां आनन्द लेने वा देने की भी वृद्धि

कोक-
लबुलें
पर
अपार
ध्वनि
विहार
र को
का
भागा
होता
धारा
तर्फ
अ-
राज
कसर
अपि
लिये,
मी
हैं।
और
यही
के
के
को
समय
उपा
जाता
आर
वृद्धि

होती चली जाती है। जो इस समय उठ कर पुरुषार्थ में प्रवृत्त नहीं होता, और सचेत होकर कार्य में मग्न नहीं होता उसे विज्ञान दीर्घ सूत्री तथा दरिद्रता का केन्द्र कहते हैं, यदि विचारा जाय तो आयु वृद्धि के दिन मास और वर्ष जो गिने जाते हैं, वे भी उपा से ही गिने जाते हैं। जो पुरुष आठ वर्ष सात दिन का हो वह उपा के पीछे आठ वर्ष आठ दिन का ही समझा जाता है। इसी क्रम से इसी काल से ही एक एक दिन बढ़ता चला जाता है। वस संसार की वृद्धि का आरम्भ उपा से ही होता है। इसीलिये हर एक नरनारी का इससे विशेष प्रेम होता है, जो होना भी चाहिये। उपा भी केवल नाम मात्र से उपा नहीं कहलाती, अपि च प्राणी मात्र को उद्यमी आनन्दी ज्ञानी उन्नति शील बनाने के पश्चात् विशेष प्रशंसा का पात्र बन सर्व वन्द्या बनती है। यदि लोग उपा की घटना से शिक्षा लेकर स्थिर भाव से कार्य करें तो अत्यभिफल प्राप्त कर सकते हैं, निश्चय जानिये उपा के पीछे भानु भी आने को है। इति

नोट—हमारी ये देखने की उत्कट इच्छा है कि उपा (पञ्चाव की मासिक पत्रिका) के प्रति नरनारी किस प्रकार निज कर्तव्य पालन करते हैं ॥

भूल संशोधन।

गताङ्क में पृष्ठ १४६ पर पङ्क्ति २२ में इस प्रकार है—
बंगाल ९७ नहीं ३३२ वर्षों में
मद्रास २१३ नहीं १०५६ वर्षों में
विहार ९०५ नहीं ७१६७ ”

नारायण शतक।

(ले०-पं० नारायण प्रसाद वेताव)

* सत्यता *

“सत्येनास्ति भयं क्वचित्”, या में ना कछु भूल।

सोना अमी में पड़े, घंट नहीं कछु मूल ॥ २० ॥*

कार्य सफल हों सत्य सों, रहो निकट या दूर।

शुद्ध वाण ते धनुष, वेधत लक्ष जरूर ॥ २१ ॥

नारायण संसार में, नहीं सांच को आंच।

पत-भङ्ग कतु से रहित हैं, सरु वृक्ष लो जांच ॥ २२ ॥

* प्रभावशाली के आगे दुर्जन की नहीं चलती *

तेजस्वी के सामने, बनें दुष्ट जन मूक।

जब लग भासत भास्कर बोलत नहीं उलूक ॥ २३ ॥

* विरोध से हताश रहना पड़ता है *

रहें सभासद विविध मत, होय न बेड़ापार।

कबहु न निकलत मधुर सुर, जो नहीं मिलत सितार २४

दो प्रतिकूल स्वभाव में, आवत विग्र जरूर।

शाम मिर्च के संग सुं, उड़ नहिं सकत कपूर ॥ २५ ॥

* अनुचिन्ताश्रय *

जो मिथ्या धन धाम पर, भूल रह्यो धनवान।

सो मन पर इक कूप की, सोवत चादर तान ॥ २६ ॥

* मिथ्या-मोह *

संसारी को स्वर्ग है, संसारी व्यवहार।

जिम उल्लूक उड़ाड़ में, मानत मौज अपार ॥ २७ ॥

* कुसङ्ग-निन्दा *

मित्र बने जो आलसी, हो अभीष्ट सूँवर।

एक पाऊं सोजात जब, चलत न दूजा पैर ॥ २८ ॥

* गत अङ्क में “सन्तोष” शीर्षक एक ही छन्द (सं० २ तथा १८) भूल से दोबार छप गया था, इस लिये पाठक एक को काटकर पूर्व प्रकाशित छन्दों की संख्या २० के स्थान में १९ करलें। अब यहां पहले छन्द

हो निर्भय बटमार से, बान्ध एक लकड़ोटे ।
कबहू नही लाश को, तूकत न कपन खसोट ॥ ३८ ॥



नाग उपयोगी पृष्ठ ।



स्त्री पुरुषों का सम्मिलित समाज ।

ह सब कोई स्वीकार करता है कि
 प्राचीन भारत में परदे की रीति न थी।
 स्त्री पुरुष इकट्ठे मिलकर सभाओं और
 समाजों में राजनीति और धर्माचार

पर विचार किया करते थे । परन्तु उन पूज्य
आर्यों के वंशजों की आज वह अवस्था नहीं ।
महाराष्ट्र, बम्बई और मद्रास को छोड़कर सारे
उत्तर भारत में स्त्रियों का पुरुषों की समाज में
जाना बन्द हो गया है । यह मुसलमान लोगों
के भारत में आने का फल है । जहां २ यवन
लोगों का अधिकार अधिक रहा वहां २ परदा
भी अधिक हो गया । यद्यपि इस समय आर्य
समाज, सिक्खों का खालसा पंथ, और ब्रह्मो-
समाज आदि कई सम्प्रदाय इस कुरीति को दूर
करने में यत्नवान हैं, परन्तु ऐसे लोगों की संख्या
अभी कम नहीं हुई जो आर्य-कुल में उत्पन्न
होकर भी परदे के कटु पक्षपाती हैं । उन का

नारी उपयोगी पृष्ठ

१८५

कथन है कि परदे के अभाव से दुराचार फैल जायगा । हम नहीं समझते उन का सदाचार का आदर्श क्या है । क्या महाराष्ट्र, बम्बई, काठियावाड़, गुजरात और मद्रासादि प्रदेशों के लोग जहाँ परदा नहीं, सब दुराचारी हैं ? या इङ्ग्लैण्ड, जर्मनी, जापान, अमरीका आदि देशों के निवासी इन परदादारों की अपेक्षा अधिक पतित हैं ? । याद रखने की बात है कि कोई भी आचार-हीन जाति या व्यक्ति कभी उन्नति नहीं करसक्ती । सदैव सदाचारी लोग ही उन्नति के शिखर पर आरुढ़ हुआ करते हैं । सारे संसार पर दृष्टि डालने से हमें मालूम होता है कि इस समय जितनी भी परदा करने वाली जातियाँ हैं वे सब रसातल में पड़ी हुई हैं । जिस से स्पष्ट विदित है कि इन की सदाचार २ की पुकार ढकोंसला मात्र ही है । वास्तव में यह सब से अधिक गिरी हुई हैं ॥

सोसायटी में स्त्री पुरुषों के इकट्ठा न मिलने में दोनों की हानि है । हम ने कई बार देखा है कि जब कभी हमारे नव-युवक किसी अंग्रेज महिला से बात करने लगते हैं तो अभ्यास न होने के कारण, (Sir) सर-शब्द (श्रीमानजी) से ही सम्बोधन करते हैं । जब कोई २ हास्य प्रिया महिला इन को (yes madam ?) येस मैडम (हां, श्रीमतीजी) कहकर उत्तर देती है तो बड़े लज्जित होते हैं ॥

स्त्रियों के होने से समाज में विनय और शिष्टता की मात्रा बढ़ती है । जिस समाज में महिलाएं सम्मिलित हों वहाँ अडलील और असभ्य शब्दों का कभी प्रयोग नहीं होता । स्त्रियों

ही रहने से यह हानि है कि पुरुषों के विचारों से लाभ उठाकर वे अपने मन को उदार और विचार को विस्तृत नहीं कर सकतीं । दौर्भाग्य से हमारे देश में बहुत थोड़ी स्त्रियोंने उच्च-शिक्षा प्राप्त की है, जिस का परिणाम यह है कि उन में विचार, युक्ति और शास्त्रीय ज्ञान का सर्वथा अभाव है । सुशीलता और सद्भाव भी जैसे कि चाहिए वैसे नहीं । वे जीवन को आनन्द से भोगना नहीं जानतीं । सदा स्त्रियों से ही मिलते रहने से उन्हें जीवन के केवल एक पक्ष का ही ज्ञान होता है, दूसरे पक्ष का कुछ भी पता नहीं रहता ॥

स्त्री-समाज को यदि अकेला छोड़ दिया जाए तो उस के अन्दर कई प्रकार के दूषणों के आजानेका डर है । इससे स्त्रियाँ या तो अत्यन्त गम्भीर बन जायेंगी या अत्यन्त चपल । यदि सदाचारी नर और नारियाँ, बालक और बालकाएं, युवक और युवतियाँ सब विलास वासनाओं को छोड़ कर समाज में एकत्र हुआ करें तो इस से स्त्री और पुरुष एक दूसरे की प्रकृति को अधिक अच्छी तरह से समझ सकेंगे, और इस समय जो नाना प्रकार के भ्रम-मूलक विचार एक दूसरे के विषय में दिलों में समाये हुए हैं वे सब दूर होजायेंगे । एक पुरुष अपने घर की स्त्रियों के साथ मिलने से ही शेष सब स्त्रियों के विषय में यथार्थ सम्मति नहीं बना सकता, और न ही एक स्त्री को घर की चार दीवारी में बन्द रहने से बाहर की दुनियाँका कुछ ज्ञान होसकता है । इस का परिणाम यह है कि हमारी स्त्रियाँ पर पुरुष को देखते ही मृत प्रायः हो जाती हैं ।

वह भला क्या जान सकती है कि दुष्टों से स-
तीत्व की रक्षा कैसे की जा सकती है । ऐसी
भीरु माताओं की ही सन्तान हमारे जैसे डर-
पोक आर्य-कुल कलङ्की उत्पन्न होते हैं । लेखक
ने स्वयम् ऐसी गौराङ्ग महिलाएं देखी हैं जो
हिमालय के निर्जन पहाड़ी जङ्गलों में रात्रि
समय पति के साथ चीतों का शिकार खेलने
निकलती हैं । हमारे हां भी बाल ब्रह्मचारिणी
दुर्गा जैसी प्राचीन आर्य्य देवियां सिंह की स-
वारी किया करती थीं, परन्तु आज तो उन्हीं
प्रातः स्मरणीया पवित्र ललनाओं के कलयुगी
भाई और बहिनें कूई मूई की भान्ति घर में दंबे
रहने में ही कुल गौरव मान रहे हैं ॥

हमारा इस से यह अभिप्राय नहीं कि जिस
स्त्री का जिघर जी चाहे उधर मुंह उठाकर
चल दे बल्कि हमारा कथन यह है कि उचित
मर्यादा में रहते हुए नर और नारियां मिलकर
हिन्दू जीवन को, जो आज कल सर्वथा नीरस
होरहा है, आनन्दमय और रसीला बनावें,
जिस से, परलोक की तो फिर चिन्ता होगी,
पहले यह लोक तो सुधरे ॥

मातृ-हीन बच्चों का पालन पोषण ।

लेखक—डॉक्टर विक्रमाजीत साहनी एल० आर० सी० पी०
एण्ड एस (एडनबर्ग) डी० पी० ऐच० (लण्डन)

यदि माता का दूध न हो तो बच्चे को गाय
का दूध देना चाहिए । जबतक वैद्य आज्ञा न दे
कभी ठोस भोजन न खिलाओ ॥

लाना चाहिए या चमचे के साथ । लम्बी नली
वाली बोतल से दूध पिलाना हानि-कारक है ॥

गाय का दूध बड़ी सावधानता से तय्यार
करना चाहिए नहीं तो यह बच्चे के अनुकूल
नहीं बैठेगा । दूध को इस प्रकार तय्यार करो:-

जब दूध आए तो इसे एक साफ बर्तन में
डालकर ढांप रखो ताकि मिट्टी और मक्खियां
न पड़ जायें । इस बर्तन को ठण्डे पानी में रख
कर घर के सब से अधिक ठंडे स्थान में रख दो ॥

ग्रीष्मकाल में बर्तन में रखने से पहले सारे दूध को
उबाल कर ठण्डा कर लो । प्रत्येक खूराक इस प्रकार
बनाओ ।

दो सप्ताह से कम के बच्चे के लिये । दूध १ चमचा
पानी २ चमचे । दोनों मिलाकर गर्म करो । इस
प्रकार बनाकर बच्चे को दिन में दो दो घण्टे पीछे
और रात्रि को चार चार घण्टे पीछे दो ॥

एक पक्ष से २ मास तक के बच्चे के लिये—दूध
१ १/२ चमचे, शनैः शनैः बढ़ाकर ३ तक, और
पानी ३ चमचे । इन को मिलाकर गर्म करो ।
पहले की भान्ति पिलाओ ॥

२ और ४ मास के अन्दर के बच्चे के लिये—दूध
३ चमचे, शनैः शनैः बढ़ाते बढ़ाते ४ तक, और
पानी ३ चमचे, शनैः २ बढ़ाकर ४ तक । दोनों
को मिलाकर गर्म करो । इस प्रकार तय्यार
करके दिन में ३ तीन २ घण्टे पीछे और रात्रि
को एक बार दो ॥

४ और ६ मास के अन्दर के बच्चे के लिये—दूध
५ चमचे, शनैः २ बढ़ाकर ८ चमचे तक और
पानी ५ चमचे, शनैः शनैः बढ़ाकर ४ तक
को एक बार दो ॥

३ तीन घण्टे पीछे और रात्रि को एक बार बच्चे को दो ॥

६ और ८ मास के अन्दर के बच्चे के लिये—दूध ९ चमचे, शर्नै: २ बड़ाकर ११ तक, और पानी ३ चमचे। दोनों को मिलाकर गर्म करो। इसे दिन में ३ तीन घण्टे पीछे और रात को १ बार पिलाओ

प्रत्येक बार दूध में थोड़ासा मीठा डाल देना चाहिए। जो पानी तुम दूध में मिलाना चाहती हो वह पहले सारा का सारा गर्म करके ठण्डा कर लेना चाहिये ॥

एक खूराक में कोई ५ मिण्ट लगने चाहिए—जब बच्चा ८ मास का हो जाए तो विशुद्ध दूध बिना पानी के देना चाहिए और प्रत्येक खूराक में चमचों की संख्या भी १४ से १६ तक बढ़ा देनी चाहिए। जिस वक्त बच्चे को दूध पिलाना हो उस वक्त हर बार नयी खूराक तय्यार करनी चाहिये। यदि पहली खूराक से कुछ बच रही तो उसे फेंक देना चाहिए ॥

दूध वाली बोतल और थन को गर्म पानी के साथ हरेक खूराक के पीछे धो डालना चाहिए। रबड़ के थन का अन्दर का भाग बाहर उल्टा कर पानी की धारा के नीचे कर देना चाहिए जब धुल जाए तो साफ जल में डाल दो ॥

इनके अतिरिक्त वस्त्र, स्नान और शुद्ध पवन के सम्बन्ध में वही बातें हैं जो माता के दूध पर पलने वाले बच्चों के लिए गताङ्क में प्रकाशित हो चुकी हैं ॥

बच्चों को आराम दिलाना।

बच्चे जब खेलते कूदते हैं तो उनके शरीर

घिसते हैं और शक्ति का व्यय होता है, इसलिये दिन में, विशेषतया ग्रीष्म में, घण्टा या आधा घण्टा उन्हें अवश्य आराम दिलाना चाहिए ताकि खर्च हुई शक्ति और थके मानदे शरीर की मुरम्मत हो जाए। जितना चञ्चल बच्चा हो उतनी ही अधिक उसे आराम की आवश्यकता रहती है ॥

बच्चे जबतक खूब थक न जाएं खेलने से वन्द नहीं होते। कई बार तो इस प्रकार शरीर की थकावट और शक्ति के व्यय से बच्चे बड़े व्याकुल होकर चिल्लाने लग जाते हैं और कभी-कभी तो ज्वर भी हो जाता है। बच्चे इस अशान्ति को अनुभव तो करते हैं, परन्तु इस का कारण नहीं समझ सकते। अतः रो रो कर अपने आप को अधिक थका लेते हैं ॥

जो बुद्धिमती माता इस बात को समझती है वह ऐसी अवस्था आने से पहले ही बच्चों को दौड़ धूप करने से रोक देती है। यदि माता दिन में बच्चों के आराम के लिए कोई विशेष समय नियत कर रखे तो बच्चों को स्वयमेव स्वभाव हो जायगा ॥

कई बच्चे तो दिन में सुलाने से सो जाते हैं, परन्तु बहुत से ऐसे हैं जिन्हें नीन्द नहीं आती। ऐसे बच्चों के लिए आराम दिलाने की और भी अधिक आवश्यकता है। यदि बच्चा न लेटे तो माता को चाहिए कि गोदी में बिठाकर उसे कोई गीति सुनाये या पुस्तक में से कोई कथा ही पढ़े। बच्चा चुपचाप बैठा सुनता रहेगा, इस से बच्चे की थकान जाती रहेगी। यदि यह भी न हो सके तो उन्हें कोई ऐसी खेल में

लगा दो, जिस में बैठे रहना पड़े । जैसे कि कागज के चित्र कैंची से काटकर गत्ते पर चिपकाना, या कागज के कपड़े काटना ॥

(मदर्स मैवजीन)

बच्चों का डरना ।

बच्चे जन्म से निडर होते हैं । उनके माता पिता, और मित्र ही उन में डर का भाव उत्पन्न करते हैं । एक छोटा बच्चा किसी से नहीं डरता वह निःसंकोच होकर अपना हाथ आग में डाल देता है और सांप को पकड़ लेता है । बच्चे को जो कोई भी प्यार से उठावे भट उस के पास चला जाता है ॥

बच्चों को सावधानता सिखलाने की आवश्यकता है न कि डरपोक बनाने की । बल्कि उन के अन्दर आत्म-विश्वास को दृढ़ करना चाहिये ॥

बचपन में माताएं बच्चों के अन्दर डर उत्पन्न कर देती हैं । “ चुप कर जाओ नहीं तो हऊआ (बाल्हो) पकड़ लेगा ” । “ इधर आ-जाओ नहीं तो चुड़ैल ले जायगी ”, इस प्रकार की बातें कहकर बच्चे को अन्धेरे से डराया जाता है ॥

“यदि तुम कहा नहीं मानोगे तो मैं वैद्य के पास ले जाऊंगी” इस प्रकार की धमकियां देने से बड़ी कठिनाइयां उत्पन्न होती हैं । जब बीमार होजाने पर बच्चे को सच मुच वैद्य के पास ले जाना पड़ता है तो वह उसे एक भयानक वस्तु समझ कर चिल्लाने लग पड़ता है और औषध नहीं खाता । चाहिये तो यह था कि बच्चा वैद्य

को अपना मित्र समझे क्योंकि वह रोगियों को भला चंगा कर देता है । कई बच्चे प्रकृति से ही डरपोक होते हैं । उन्हें समझा बुझाकर निडर बना देना चाहिये । यदि बच्चों को भली भान्ति आत्म-विश्वास और स्वात्मावलम्बन सिखलाया जाए तो वे बहुत सी दुर्घटनाओं से बच सकते हैं ॥

— ❀ ❀ ❀ —

चुटकले

आम का मुरब्बा—मोटे अच्छे कच्चे आम ले कर ऊपर से चाकू या सीपी से छील डालो, और चोके या किसी बड़े सूये से उनमें बारीकर छेद कर दो, और बीच में से गुठली निकालकर टुकड़े २ कर लो । पुनः पानी में डालकर आंच पर रखकर थोड़ासा जोश दे लो ताकि नर्म हो जायें । फिर दो सेर खाण्ड ले उस में एक सेर पानी डाल तीन तार की चाशनी बना कर उस में वह आम डाल दो । दो सेर चाशनी के लिये एक सेर आम चाहियें । तय्यार होने पर किसी मिट्टी के बर्तन में डाल लो, पर इस बर्तन को पहले अच्छी तरह साफ कर लो । तीन दिन पीछे देखो, यदि रस पतला हो तो फिर गर्म करके गाढ़ा कर लो ॥

बढ़िया चटनी—१ तोला नमक, १ तोला काली मिर्च, ४ तोले अमचूर, १ तोला प्याज, १० तोले खाण्ड, इन सब को कुंडी सोटे में कूट कर चटनी बनालो ॥

पीठी के पापड़ बनाना—माश या मूंग की दाल से भिगो और धोकर छिलका उतार दो । फिर इसे खूब बारीक पीस लो । इस पिसी हुई दाल

को पीठी कहते हैं । इस पीठी में सरसों के खालिस तेल का मोन डाल कर (जैसे पूरी पकाते समय घी का मोन डालते हैं) उस को खूब मलो, जितना अधिक मलोगे (पंजाबी घों करना) उतना ही अच्छा पापड़ बनेगा । जब पीठी खूब लेस दार हो जावे तो रोटी के समान पेड़े बनाकर चकले पर बेलन से बेल लो, और बेल कर बहुत पतला कर लो । यदि उसी समय तलना हो तो उसी वक्त तल लो नहीं तो धूप में रखकर सुखा लो, फिर आवश्यकता पड़ने पर भूनकर या तल कर खाओ । पापड़ बनाते समय पीठी में नमक, मसाला, इलायची आदि डाल लेनी चाहिये । काली मिर्च इन में सावत पड़ती है । यदि पापड़ों को खसता करना हो तो पीठी में थोड़ासा सोडा या सज्जी डाल लेनी चाहिये ॥

शकरण—मीठा दही ले कर उस में खाण्ड मिलाओ । फिर थोड़ासा पानी डालकर दोनों को खूब बलोओ यहां तक दही और खाण्ड में कोई गिलटी न रहे । फिर इस में पहलेसे पानी में भिगोई हुई किशमिश डाल दो । यह किशमिश का मीठा रायता या शकरण बड़ी स्वादिष्ट होती है ॥

रेशमी कपड़े—धोते समय यदि चमचा भर शराब का सत (मिथिलेटिड स्पिरिट) पानी में मिला लिया जाये तो सारी मेल निकल जायगी और इसतरी करने पर कपड़ा बिल्कुल नया निकल आयगा ॥

नये आलू—नये आलू उबालने पर भी आसानी से छीले नहीं जाते । यदि उबालते समय पानी में चुटकी भर सोडा डाल दिया जाये तो छिल का बड़ी आसानी से उतर आता है, और नाखुन खराब नहीं होता ॥

जानने योग्य—यदि बत्तीदान में मोम बत्ती न आती हो तो मोमबत्ती को पहले जरा गर्म पानी में डबोलो । बत्ती नर्म होकर बत्तीदान में आ जायगी ॥

लकड़ी पर दाग—यदि लकड़ी के खलौने या सन्दूकची आदि पर दाग पड़ जाय तो बीयर शराब को गर्म करके फलालैन के टुकड़े के साथ दाग पर मलो । दाग साफ होजायगा ॥

संगमरमर के दाग—थोड़ासा पैराफिन (एक प्रकार का मोम) लेकर प्याली में गर्म करो । फिर उस में फलालैन का टुकड़ा भिगोकर संगमरमर पर मलो । तब साफ सूखे कपड़े के टुकड़े से मलकर पत्थर को चमकाओ ॥

लेहे का जंगार—तारपीन के तेल में (Emery paper) पेमरी पेपर (एक प्रकार का मसालेदार कागज जो बाजार से मिल सकता है) भिगोकर जंगार पर रगड़ने से लोहा भट साफ होकर चमकने लग जाता है ॥

कीड़ों से बचाओ—यदि मकान में देवदार का तेल छिड़क दिया जावे तो मच्छर और कीड़े सब भाग जाते हैं ॥

सुरमे की पेनसिल से लिखी हुई चिट्ठी—को यदि चिरकाल तक सुरक्षित रखना हो तो उस चिट्ठी को खोलकर एक चौड़ी थाली में रखो, फिर उसपर मलाई रहित दूध डालो जहांतक कि वह बिल्कुल भीग जाये। फिर उसे उठाकर दूध को निचुड़ जाने दो, तब छाया में सुखालो। इस से अच्छर पक्के हो जायेंगे और मिटेंगे नहीं ॥

खाण्ड की वचत—मुरम्बे आदि के लिये सेव फल या वैसे ही सेव आदि मीठा पकाने के लिए जब फल पकाने लगे तो उवालने वाले पानी में चुटकी भर सोडा डाल लो। इस से बहुत थोड़ी खाण्ड से ही फल मीठे हो जायेंगे ॥

तोड़े हुए फूलों की रक्षा ।

फूल कैसी सुन्दर और प्रिय वस्तु है। फूलों से बाग की सौन्दर्य है, फूलों से वृक्ष की शोभा है। फूलदान में लगा हुआ फूलों का गुलदस्ता कमरे के सौन्दर्य को बढ़ाता और बैठने वालों के चित्तों को प्रफुल्लित करता है। साधारणतया फूल तोड़कर रखने से फूल एक दो दिन में ही मुरझाकर खराब होजाते हैं, परन्तु विधि पूर्वक रखने से देर तक भी रह सकते हैं। सबसे उत्तम विधि यह है कि जब फूलों की ऋतु जाने लगे और बाटिका में थोड़े फूल रह जायें तो फूलों को प्रभात में उस समय चुना जाये जब कि अभी ओस के विन्दु उन पर चमक रहे हों, इस अवस्था में काटे हुए फूल उन फूलों की अपेक्षा दुगनी देर तक ताजा रहते हैं, जिन्हें कि

ओस के अभाव में सूर्य की धूप में चुना जाये फूलों को तोड़कर भट पट पानी में रख देना चाहिये। यदि प्रत्येक फूलदान में कोयले का एक एक छोटा सा ढेला रख दिया जाये तो फूल और भी ज्यादा देर तक तरोताजा रह सकते हैं ॥

कई अवस्थाओं में एक मामूली सी औषधि की सहायता से काटे हुए फूलों का जीवन आश्चर्य-जनक काल तक लम्बा बढ़ सकता है उदाहरण के लिये देखिये कि यदि फूलदानों में पानी में आधी बोतल पानी में एक चाप क चमचा भर के हिसाब से सारे में सोडा वाई कार्बोनेट घोल दिया जाए तो फूल बहुत देर तक तरोताजा रह सकते हैं। इस सोडे का यह असर होता है कि फूल की डण्डी के सूखने का कोश तरावत को बहुत देर तक थामे रह सकते हैं, क्योंकि इससे उनकी जल की चूसने की शक्ति कई गुणा बढ़ जाती है। कर्पूर (Camphor) का एक एक छोटा टुकड़ा हर एक फूलदान में घोल देने से भी यही असर होजाता है। जहां फूलों को किसी विशेष अवसर के लिये ज्यादा देर तक रखना हो तो एक और उपाय किया जाता है। इस के लिये एक चौड़ी परन्तु थोड़ी गहरी रकावी लो और उसमें साफ गीली रेत भरो। इस के लिये शीशे की हाण्ड (शेड) की जरूरत है। हाण्ड की काम शक्ति की चौड़े मुंह वाली बोतल से भी निकल सकता

फूलों को ताजा २ तोड़कर डण्डी को साफ करो, और हर एक को गीली रेत में गाड़ कर शीशे की हाण्ड से ढांप दो। तब इन सब चीजों को एक ठण्डे कमरे में लेजाकर रख छोड़ो

क्या पशु पक्षियों में मनुष्यों की तरह जीवात्मा नहीं है ।

१६१

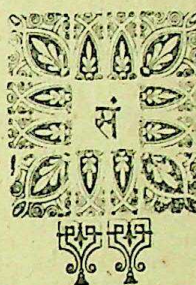
कई प्रकार के फूल इस विधि से कई सप्ताह तक ताजा रह सकते हैं और हरवक्त बर्त जा सकते हैं । इस विधि में एक ही खराबी है कि फूलदान में काई (पानी के एक स्थान पर ठहरे रहने से हरियावलसी) उत्पन्न हो जाती है । काई का इलाज यह है कि काटनवूड (Cotton wood) या मामूली रुई का एक पम्बा लेकर उसे कार्बालिक के तेजाब में भिगोकर फूलदान के अन्दर चारों ओर और पेन्डे पर लगा दो । इस से काई जाती रहेगी ॥

कुमलाये हुए फूल को पुनः तरोताजा करने के भी कई उपाय हैं । यदि फूल वैसे तो स्वस्थ और ठीक हों परन्तु जल के न मिलने से कुमला कर नीचे लटक गया हो तो निम्न लिखित विधि जादू का असर रखती है ॥

उबलते हुए पानी का एक प्याला लो और उस में फूलों की डण्डियों उबोकर प्याले को फूलों समेत एक अन्धेरी अलमारी या कोठड़ी में रख दो । पानी के ठण्डा होते तक फूलों में जीवन आजायगा । जब इन फूलों को फूलदानों में रखने लगो तो और ताजा पानी डालना चाहिये । यदि फूल कुछ देर के हों तो उबालते समय पानी में थोड़ासा काफूर डाल लेना चाहिये । मामूली नमक घोल देने से भी कुमलाये हुए फूल फिर चेतन हो जाते हैं, परन्तु नमक ज़रा ज़्यादा घोलना चाहिये । इन सब विधियों का प्रयोग करने पर भी फूल तब ही जल्दी ताजा होंगे जब उन्हें फूलदान समेत ठण्डे और छाया वाले कमरे में रक्खा जायगा यह बात सदा स्मरण रखनी चाहिये कि तोड़े हुए फूलों

पर सूर्य के प्रकाश और ताप का पड़ना बड़ा हानिकारक है ॥

क्या पशु पक्षियों में मनुष्यों की तरह जीवात्मा नहीं है ?



सार के प्रसिद्ध तत्ववेत्ताओं ने सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न और ज्ञान ये छः चिन्ह जीवात्मा के बतलाये हैं जहाँ जीवात्मा का निवास है, वहाँ उपर्युक्त छः चिन्ह न्यून व

अधिक अवश्य पाये जावेंगे, इस बात के जानने के लिये कि पशु पक्षियों में मनुष्यों के समान जीवात्मा है या नहीं—किसी बड़े विज्ञान शास्त्र के पढ़ने की आवश्यकता नहीं है । उन के नित्य प्रति के व्यवहारों में हमें केवल उन के खाने, पीने, बैठने, उठने आदि की चेष्टाओं का विचार करना है ॥

परीक्षक को भले प्रकार ज्ञात होसकता है कि पशुओं को सुख वा दुःख हमारे ही समान होते हैं । वे हमारे प्यारके बर्ताव को पसंद करते हैं और हमारे क्रूर बर्ताव से भागते हैं । उन में जीवित रहने की चेष्टा हमारे समान पाई जाती है वे अपने बच्चों से प्रीति रखते हैं और अपने दुश्मनों से जहांतक होसकता है अपनी रक्षा करते हैं । यदि एक समय उनमें क्रुतज्ञता, पितृप्रेम, संतानस्नेह, शूरवीरता, धीरज, और संतोष ऐसे उत्तम गुण पाए जाते हैं, वहाँ दूसरे समय उनमें मनुष्यों के सदृश शंका,

द्वेष, वैर, स्वार्थ, आदि निःकृष्ट बातें भी प्रकट होती हैं ॥

ये पशुभी हमारे समान, खाते, पीते, सोते, जागते, देखते, सुनते, चलते, और वस्त्रे पैदा करते हैं । स्वस्थ रहने के लिये उनको भी हमारी सदृश पवित्र वायु, प्रकाश, जल, आहार, और स्थान की जरूरत है, हमें उनकी भिन्न भिन्न भाषाएं भी मालूम देती है, वे अपनी परिमित भाषाओं को अपनी विशेष सीमा तक व्यवहार में भी लाते हैं । प्रायः धर्म पुस्तकों में भी दृष्टान्त मिलते हैं कि खास अवसर पर, हस्ती, घोड़ा, बैल, ऊंट, गधा, तोता, कबूतरादि परस्पर इशारे रूप में बातें करते थे ॥

वर्तमान समय के प्रसिद्ध भूगोल तत्त्ववेत्ता इस ओर बहुधा विचार कर रहे हैं । कोई कहता है कि वन्दरों की भाषा जानने के योग्य है, कोई कबूतरों और तोतों की भाषा को सार्थक बतलाते हैं । किसी एक पक्षी की भाषा की तर्फ ध्यान देकर विचार कीजिये वह कैसी उत्तमता के साथ अपने निज भावों को अपने साथियों पर प्रकट करता है । जल वर्षा व घटा आदि के चिन्ह प्रतीत होने पर उनके परस्पर अलार्म देने का एक निराला शब्द सुनाई देता है । चुगा चुगने का शब्द अलग है, बाहिर कल्लोल करने के शब्द निराले प्रकार के हैं संक्षेपतः वे परस्पर अपनी अपनी भाषाओं को भली प्रकार समझते हैं, और दूसरों की भाषा और इशारों को भी भली प्रकार समझ लेते हैं ।

देखिये घरके अन्दर वन्द गाये, भैंसें, पशु

पुकारने पर ही बड़ी अकृमंदी के साथ बिना देखे उनको भट पहिचान लेते हैं, और फौजी घोड़े कैसे विगल की आवाज़ समझते हैं । कतिपय स्थानों में इनको शिक्षा देने के लिये ट्रेनिङ्ग स्कूल तक जारी हैं । सुशिक्षित कुत्ते सेण्ट वर्नर्ड पहाड़ी पर वर्ष में दवे हुये यात्रियों को बड़ी बुद्धिमता के साथ निकाल कर बचाते हैं । निर्जनवनों में जहां सब श्रेष्ठ मनुष्य की अपनी बुद्धि चकर खा भ्रम में पड़जाती है वहां यही पशुहमारी अध्यक्षता का उत्तम काम करते हैं । और कठिन संकट समय पर अपनी प्यारी जान तक मालिक की रक्षार्थ देने को तय्यार हो जाते हैं । ये सब बातें और सैकड़ों अन्य बातें मनुष्यों की तरह करते हैं । किसी बात में मनुष्य से न्यून और किसी बात में मनुष्य से अधिक देखे जाते हैं ॥

संसार में बहुतेरे मनुष्य हैं जो इन मूक प्राणियों के साथ भी मनुष्यों कासा भाव रखते और उनसे उचित काम लेते हैं । बहुतेरे मनुष्य अपने साथी पशुओं से सेवा लेने के बदले में उनको वृद्ध अवस्था में पेन्शन की तौर पर पालते हैं । बहुतों ने अपने प्यारे जानवरों की मृत्यु से जुदा होजाने पर उनकी प्यारी यादगार में बड़े २ दानालय और मठ बनाये हैं । कहीं (जापान में) वीरता के काम करने पर इन जानवरों को राजसभाओं से सत्कार रूपी पदवियें प्रदान की जाती हैं । इस तरह से प्रतिदिन उनके व्यवहार और इतिहास के दृष्टान्तों के पढ़ने से कोई परीक्षक इन्कार नहीं कर सकता कि पशुओं और मनुष्यों में जीवात्मा नहीं है ॥

यद्यपि वे किंचित शब्द निकालते हैं और उनकी परिमित भाषाओं को पूर्णतः अभ्यास किये बिना हम मनुष्य सर्व साधारण नहीं समझ सकते, परन्तु वे भाषा रहित नहीं हैं। यह हमारी अपनी बुद्धि का कसूर है, कि हम उन्हें वे जान व भाषाहीन समझलेते हैं, और अपनी मनमानी तसल्ली करते हैं, कि वे हमारे अनुचित वर्ताव को ज्ञात नहीं करते ॥

मनुष्य और हैवान में भेद

केवल इतना है कि हैवान भोग योनि में पड़कर इस संसार यात्रा को तय कर रहे हैं, वे अपने भविष्यत् कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं। दूसरी ओर मनुष्य भोग और कर्तव्य योनि में हैं, अर्थात् वे अपने कर्म समूह किये हुए के अनुसार सुख दुःख भोगते हैं और भविष्यत् के लिये समर्थ भी हैं। ये केवल अवस्थाओं का भेद है, जीव जाति का भेद विलकूल नहीं। मनुष्य और पशु दोनों की आत्मा समान हैं। जिस प्रकार किसी मनुष्य का हाथ न होने से वे मनुष्य के अतिरिक्त कोई और वस्तु नहीं हो जाता, यद्यपि उस में शक्ति की न्यूनता होती है, ठीक उसी प्रकार पशु योनि में प्रवेश करने से जीवात्मा कुछ और नहीं बन जाता। केवल उस की शक्ति में भेद पड़ जाता है, अन्तिम, जीवात्मा के मुख्य स्वाभाविक लक्षण मनुष्य और हैवान में समान पाए जाते हैं और जो नैमित्तिक गौण लक्षण साधनरूपी हैं केवल उन में न्यून अधिक होने का भेद है ॥

अतएव पाठकगण ! सर्व-प्राणियों की ओर

(क्या मनुष्य क्या पशु) के समान रहिये ॥

❧ विविध विषय ❧

(१) दक्षिण अफ्रीका में हिन्दी प्रचारिणी सभा—नीचे एक चिट्ठी प्रकाशित की जाती है, जोकि हमें दक्षिण अफ्रीका से प्राप्त हुई है। पाठक देखेंगे कि हमारे प्रवासी भाई किस प्रकार राष्ट्र भाषा की उन्नति में योग दे रहे हैं। चिट्ठी में जो हिन्दी प्रचारिणी सभा के सदस्यों की नामावली दी गई है, उस से ज्ञात होता है, कि सभा में हिन्दू, मुसलमान, बम्बई और मद्रास निवासी सभी सज्जन सम्मिलित हैं। ऐसे २ शुभ कार्यों का समाचार सुनकर किस स्वदेश प्रेमी का हृदय गद्गद नहीं होता। हम अपने प्रवासी भाई बहनों को इस राष्ट्र-भाषा प्रेम के लिए धन्यवाद देते हैं ॥

“दक्षिण अफ्रीका अन्तर्गत ट्रांसवाल के सुप्रसिद्ध नगर जरमिस्टन के एशियाटिक बाजार में गत २२ मार्च १९१४ के शुभदिवस हिन्दी प्रचारिणी सभा स्थापित हो गई। सभा का उद्देश्य हिन्दी साहित्यका प्रचार और पारस्परिक प्रेम सम्पादन करना है। सभाके निम्नलिखित पदाधिकारी सर्व सम्मति से निर्वाचित किये गये। सभापति—श्रीयुद्ध लाल बहादुरसिंह। मन्त्री और कोषाध्यक्ष—भवानीदयाल। संरक्षक—बाबू हजूरसिंह। कमेटी मेम्बर—बाबू मुरलीसिंह, बाबू मखनसिंह, बाबू त्रिलोकीसिंह, गंगादीन बन्धु, जवा-हीरराम, नानजेपा नायडू, चीनीयन, पुजारी बाबाजी गुलाबदास, नन्दराम, माताबदल और दुवरीराम। साधारण सदस्य—रघुवर, गंगादीन, बुद्धिराम, मुनस्वामी देवी-दयालसिंह, शेरअली, नेटाली, रामस्वरूप, सिपाही, रामचरित्र, रघुनाथ महाराज, शिवप्रसादसिंह, भाऊराम, भू-खुन, सारङ्गी, शिवचरण, विहारी, प्रभु, सिद्धू, तिलक और बहादुर ॥

गत सोमवार को एक हिन्दी रात्रि पाठशाला और

साथ
और
हैं।
लिये
कुछ
त्रियों
चाते
की
वहां
करते
न्यायी
न्याय
वातें
मनुष्य
अधिक
मूक
रखते
मनुष्य
ले में
पर
की
दगार
कहीं
जान-
द्विधैं
उनके
इने से
पशुओं

रूप भी खोला गया । अतएव यह भी निश्चय हुआ कि सभा के लिये शीघ्र ही एक हिन्दी-भवन निर्मित किया जाय । अब यह सभा विशेषतः भारतीयों और साधारणतः प्रवासी भाईयों से प्रार्थना करती है कि आप लोग इस महान उद्देश्य की पूर्ति के लिये यथाशक्ति सहायता करें । यह सभा भारत के समाचार-पत्रों के सञ्चालकों और पुस्तक प्रणेताओं से सविनय निवेदन करती है कि आप लोग बिना मूल्य पत्र और पुस्तक भेज कर सभा के कार्य-कर्ताओं के उत्साह को बढ़ावें । जिन सज्जनों को सहायता देना स्वीकृत हो वह नीचे लिखे पते से भेजें” ॥

निवेदक—

भवानीदयाल,

सेक्रेटरी हिन्दी प्रचारिणी सभा ।

P. O. Box 374 GERMISTON,

Transval, South Africa.

(२) पंजाब हिन्दू सभा और हिन्दी भाषा—

यह बड़े सन्तोष की बात है कि पंजाब हिन्दू सभा भी अपने कर्तव्य को पहचानने लगी है, और उस ने पंचाम्बू की इस पवित्र भूमि में सर्वगुण आगरी देव-नागरी के प्रचार की ओर ध्यान देने की दया दिखाई है । इस वर्ष सभा ने ‘महाराज विक्रमादित्य’ पर हिन्दी में सब से उत्तम निबन्ध लिखने वाले ग्रैज्युएट या अगडर ग्रैज्युएट को एक पारितोषिक देना नियत किया था । अब हमें यह सुनकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि वह पारितोषिक हमारे दो मित्रों श्री० आत्मारामजी तथा श्री० लक्ष्मणस्वरूपजी बी० ए० को बराबर २ मिल गया है । सभा का यह कार्य वस्तुतः सराहनीय है ॥

जहां एक ओर सभा के इस कार्य से हर्ष होता है वहां दूसरी ओर लाहौर के हिन्दू सम्पादकों के नित्य नये उर्दू पत्रों को देख कर अत्यन्त खेद होता है । सच पूछा

हैं मुसलमान उस से आधा भी नहीं करते । इस समय लाहौर से हिन्दूओं के उर्दू दैनिक ६ और मुसलमानों के ३, और हिन्दूओं के बड़े २ साप्ताहिक ७ और मुसलमानों के ३ निकलते हैं । इन के अतिरिक्त हिन्दूओं के पांच छः मासिक भी उर्दू में प्रकाशित होते हैं । ऐसी अवस्था को देखकर कौन न हिन्दूओं को मातृ-भाषा द्रोही ठहराएगा । यह एक ऐसा पाप है जिस का फल हिन्दू जाति को चिरकाल तक भोगना पड़ेगा ॥

उर्दू और फारसी के आसक्त सदा अर्थ और दजल फरात के ही स्वप्न देखा करते हैं । हमें बड़ा शोक होता है जब पंजाब के उर्दू-दां युवक न्यायशीलता और दाम्नीरता का वर्णन करते हुए नौशेरवां और हातमताई के उदाहरण देते हैं । इन्हें उर्दू फारसी की गन्दी गजलों के अतिरिक्त जिन्हें यह ‘फड़कती हुई’ कहते हैं और किताबी चीज में आनन्द ही नहीं आता । काश कि वह अपने मातृ-भाषा की पीयूषधारावाहिनी कविताएं पढ़े होते । उन्हें मालूम होता कि इस पूज्य मातृ-भूमि का अनुपम सौन्दर्य कैसा मनोहर, और पवित्र गङ्गा यमुना की पारवती धाराओं का अमृत समान स्वादिष्ट जल कैसा रुजहारी है । फिर नौशेरवां और हातम को छोड़ कर उन का विधर्मपुत्र युधिष्ठिर और दानवीर कर्ण का चरण चुम्बन करता, और अर्ध का तप्त रेगस्तान शोभा-पुंज हिमालय के सामने उन्हें तुच्छ प्रतीत होता । दयामय परमात्म दया करें कि हमारे भाई स्वकर्तव्य को समझें और प्रत्येक नर और नारी के हृदय में मातृ-भाषा के लिए प्रेम उत्पन्न

(३) श्रीभारती-भवन, फीरोज़ाबाद का द्वितीय वार्षिक विवरण—माता हिन्दी की पूजा के लिए जितने भी मन्दिर स्थापित किये जाएं उतने ही थोड़े हैं । और यह बड़े हर्ष की बात है कि यद्यपि

विविध विषय

१९५

पर संयुक्त प्रान्त और मध्य-प्रदेश निवासी भाई हिन्दी की उन्नति में तन, मन और धन से लग रहे हैं। उन प्रान्तों में कई स्थानों में नागरी-प्रचारिणी सभाएं और भवन खुल गये हैं और खुल रहे हैं। ऐसे ही भवनों में से एक फीरोज़ाबाद का श्रीभारती-भवन है। इसके द्वितीय वार्षिक विवरण के देखने से ज्ञात होता है कि इस वर्ष के अन्त में इसके ८५ सदस्य थे जिनका मासिक चन्दा ३०।७ होता था। भवन ने एक पुस्तकालय भी खोला हुआ है, जिस में १४८६ के लग भग पुस्तकें हैं। पुस्तकालय के साथ सर्व साधारण के लाभ के लिए एक वाचनालय है। इस में गत वर्ष कोई ४० के लग भग सामयिक पत्र आते रहे। गत वर्ष की अपेक्षा इस वर्ष भवन को थोड़ा धन बचा। यह भवन हिन्दी के ग्रन्थ प्रकाशन द्वारा राष्ट्र-भाषा के प्रचार में बड़ा यत्न कर रहा है। सब आर्य-भाषा प्रेमियों को ऐसे परोपकारी भवन की सहायता करनी चाहिये

(४) हिन्दी विश्व-कोष-जिन लोगों ने अंग्रेज़ी के विश्व-कोष (Encyclopaedia) देखे हैं, उन्हें विश्व-कोषों की उपयोगिता बतलाने की आवश्यकता नहीं। अंग्रेज़ी के सब से बड़े विश्व कोष “ऐनसाईक्लोपीडिया ब्रिटानिका” के छपने से जो लाभ आङ्ग्ल-भाषा भाषियों को पहुंचा है वह किसी से छिपा नहीं। संसार की कोई भी ऐसी आवश्यक बात नहीं जो उस में न लिखी हो। जिस किसी भी विषय का पूरा २ वृत्तान्त जानना हो, आप ऐनसाईक्लोपीडिया ब्रिटानिका से जान सकते हैं। किसी देश के विषय में जो बातें वहां के साधारण लोगों और सरकारी क

संचारियों को भी मालूम नहीं वह ऐनसाईक्लोपीडिया में लिखी मिल जाएंगी ॥

अंग्रेज़ी में तो कई विश्व-कोष विद्यमान हैं, परन्तु हमारी भाषा में एक भी न था। अब किस राष्ट्र-भाषा प्रेमी को यह सुनकर हर्ष न होगा कि कलकत्ते के विख्यात विद्वान स्वनाम धन्य श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्य-विद्यामहार्णव, सिद्धान्त वारिधि एम. आर. ए. एस. ने ऐनसाईक्लोपीडिया ब्रिटानिका के ढङ्ग पर एक “हिन्दी विश्व-कोष” बनाना आरम्भ कर दिया है। इस से पूर्व आप कई वर्षों के परिश्रम से एक बङ्गला विश्व-कोष तैयार कर चुके हैं। बङ्गला विश्व-कोष के छपने के पश्चात् संसार के ज्ञान में और भी वृद्धि होगई है, इस लिये यह हिन्दी विश्व-कोष बङ्गला से बढ़िया होगा। विदेशियों को भारत के विषय में जिन बहुत सी बातों का पता नहीं लग सकता वे भी सब इस कोष में लिखी जाएंगी। हमें आशा है कि यह विश्व-कोष अंग्रेज़ी विश्व-कोषों से बढ़ चढ़कर होगा ॥

इस विश्व-कोष के प्रथम भाग के पहले दो खण्ड इस समय हमारे सामने हैं। इन्हें देख कर चित्त गदगद हो रहा है। परमात्मा का धन्यवाद है कि हमारी भाषा में भी ऐसे महान ग्रन्थ रचे जाने लगे हैं। इन दोनों भागों में अभी ‘अ’ वर्ण के ही अक्षर लिखे जा रहे हैं। कोष में केवल हिन्दी और संस्कृत के ही शब्द नहीं बल्कि अरबी, फ़ारसी और अंग्रेज़ी आदि विशेषी भाषाओं के वह शब्द भी हैं जो हमारे प्रतिदिन के व्यवहार में आने लगे हैं। पहले खण्ड में हमने संसार और अक्षर पर, और दूसरे में अकाल

मृत्यु और अक्षर-लिपि पर लेख पढ़ें। हम कह सकते हैं कि इन विषयों पर जितना ज्ञान इस कोष में दिया गया है, वह शायद ही किसी अन्य एक पुस्तक में मिले। अक्षर-लिपि पर तो एक अपूर्व निबन्ध प्रकाशित हो रहा है। दूसरे भाग में इसी एक विषय पर १४ पृष्ठ लिखे जा चुके हैं और अभी असमाप्त है। इसमें पाश्चात्य और प्राच्य विद्वानों के विचारों का सार देने का यत्न किया गया है ॥

इस विश्व-कोष से बड़ा लाभ यह होगा कि एक विषय का पूरा २ वृत्तान्त जानने के लिये हमें सैकड़ों पुस्तकों का अध्ययन न करना पड़ेगा। उस विषय का सारा निचोड़ इस कोष से मिल जायगा। इस कोष से हिन्दी का गौरव बढ़ेगा। हम अपने पाठकों से सिफारिश करते हैं कि वह ऐसे अमूल्य ग्रन्थ के अवश्य ग्राहक बनें। नहीं तो कम से कम इस का नमूना मंगाकर तो जरूर देखें। बारह खण्ड का अग्रिम मूल्य ४) रुपया, प्रति खण्ड का मूल्य १=) आना और ढाक महसूल ॥) आना ॥

मिलने का पता—श्री नगेन्द्रनाथवसु एण्डसन,
९, कान्तापुर कुर बाईलेन, बाग बाजार, कलकत्ता ॥

(५) विज्ञान कल्पतरु—यह एक दूसरा विश्व कोष है, जिस की इस समय हिन्दी संसार को बड़ी आवश्यकता है। इस में विज्ञान, कलाकौशल, और शिल्प-विद्या सम्बन्धी सब आवश्यक बातों का वर्णन होगा। इस के सम्पादक हैं बाबू मुख्त्यारसिंहजी वकील, मेरठ। इस का प्रथम अङ्क हमारे पास आया है। इसमें अंग्रेजी वर्ण-माला के क्रम से पहिले 'A' (अ, आ) वर्ण से आरम्भ

होने वाली कोई ८० कला-कौशल सम्बन्धी चीजों का विस्तार-पूर्वक वर्णन है। उदाहरणार्थ यदि आप (Acetic) या सिरके के तेजाब का हाल जानना चाहते हैं, तो इस विज्ञान कल्पतरु में आप को इस का पूर्ण वृत्तान्त मिल जायगा कि यह किन किन वस्तुओं से बनता है, बनाने की विधि क्या है, और यह किस काम आता है। इसी प्रकार आप को (Acetylene) या गैस की रौशनी का सारा हाल इस में लिखा मिलेगा कलाओं के चित्र भी दिए गये हैं, जिनसे प्रत्येक बात सुगमता से समझ में आजाती है। सम्पादक महाशय इस के दूसरे भाग क्रमशः निकालने का विचार रखते हैं। इस में तनिक भी सन्देह नहीं कि 'साहित्य के वृद्धिमात्र भाषा की सेवा तथा देश का उपकार ऐसे ही महान् ग्रन्थों की रचना पर निर्भर है'। परन्तु ऐसे बड़े ग्रन्थ का बिना पर्याप्त धन के सम्पूर्ण होना कठिन है। इसलिये मातृ-भाषा प्रेमियों को शीघ्र ही इस विज्ञान कल्पतरु के स्थायी ग्राहक बनकर सम्पादक महाशय की सहायता करनी चाहिए ताकि हमारा साहित्य सरोवर भी अन्य भाषाओं की भांति ऐसे अमूल्य रत्नों से भर एजा। जिन लोगों को इस ग्रन्थ-माला की उपयोगिता में कुछ सन्देह हो या जो ऐसे विज्ञान कल्पतरु के गौरव को अनुभव न कर सकते हों उन्हें सम्पादक महाशय से नमूने का बी० पी० मंगाकर अपने सन्देह को दूर कर लेना चाहिये

(६) मक्खियों का घटाना—एक फ्रांसीसी पत्रिका लिखती है कि मक्खियाँ नीले रंग से भागती हैं। यदि चूने की सफेद कली में नीला

विविध विषय

१६७

रंग डालकर मकान में नीली कली कराई जाए तो घर से मक्खियां भाग जाएंगी ॥

एक कृषिक के पास १७० गौएं थीं । वह अलग २ मकानों में रखी जाती थीं । यह मकान मक्खियों के घर बने हुए थे, परन्तु उस ने देखा कि एक मकान में नीली कली फेरी हुई है और उस में मक्खियां बिल्कुल नहीं सतातीं । तब उस ने सब मकानों में नीली कली करादी, जिस से मक्खियां मकान छोड़ कर भाग गईं । उस ने सफेदी का निम्न-लिखित नुस्खा बरता था

२० गेलन पानी में १० पौण्ड अनबुझी कली, और ११ पौण्ड आसमानी रंग । ग्रीष्म में दो बार इस की कली करानी चाहिये ॥

(७) सिगरट छुड़ाने की औषधि—अमरीका के प्रसिद्ध शिकागो नगर में एक हस्पताल बना है जहां लोगों से सिगरट पीने का दुर्व्यसन छुड़ाया जाता है । इस में इर्द गिर्द के प्रान्तों के चार २ पांचर वर्ष के स्कूली लड़के जिन के माता पिता ने उन्हें सिगरट पीते देखा है, नव-युवक व्यवहारी लोग, और नाटक करने वाली स्त्रियां, अगणित संख्या में आते हैं । सिगरट निवारिणी सभाके प्रसिद्ध सदस्य डाक्टर डी० एच० क्रस (Kress) इस के अधिष्ठाता हैं । जो लोग बीस बीस वर्षों से तम्बाकू पीते थे, और जो स्त्रियां अपने पतियों से छिपाकर तम्बाकू पीती थीं वे इस चिकित्सालय से लाभ उठा रही हैं । एक बार चिकित्सा करा लेने से सदा के लिये तम्बाकू से घृणा हो जाती है ॥

यद्यपि यह चिकित्सा बड़ी उपयोगी है पर साथ ही बड़ी साधारण भी है । इस का आधार सिलवर नाईट्रेट के बोले का निकोथिन (तम्बाकू

के सत) के साथ रसायनिक प्रतिक्रिया है । सिलवर नाईट्रेट का हलका सा घोल (सॉल्यूशन) बनाकर रोगी को कुरले कराये जाते हैं, तत्पश्चात् जब वह सिगरट पीता है तो उस के मुंह का स्वाद खराब हो जाता है और वमन करने को जी चाहता है । इस से ऐसी घृणा उत्पन्न होती है कि सिगरट का नाम सुनकर ही जी मतलाने लगता है और यह दुर्व्यसन सदा के लिये छूट जाता है । डाक्टर महोदय का यह अनुभव है कि बहुत सिगरट पीने वाले लोग प्रायः चाये, कॉफी, मांस और गर्म मसालों का अधिक सेवन करते हैं । इस लिये वह अपने रोगियों की जहां औषधि से चिकित्सा करते हैं वहां साथ ही उन्हें दूध, फल और पके अनाज पर ही निर्वाह करने के लिये प्रेरणा करते हैं । इस से यह दुर्व्यसन बहुत घट जाता है ॥

इस के अतिरिक्त डाक्टर महोदय तम्बाकू के रोगी की कलाई पर एक यन्त्र बांध रखते हैं जिस से उस की नाड़ी की गतिके द्वारा मालूम होजाता है कि उस ने कितना तम्बाकू पिया है । तम्बाकू का धूआं ही नहीं, बल्कि सिगरट के ढीला बने होने के कारण उस के जलने से जो कार्बानिक ऐसिड गैस, और उस के ऊपर के कागज के जलने से जो एकोलीन नामक महा विषैली वायु उत्पन्न होती हैं, वे भी अत्यन्त हानिकारक हैं । उपरोक्त चिकित्सा के प्रभाव से सुना है कि उस प्रान्त में सिगरटों की विक्री १० प्रति शतक कम हो गई है ॥

जब से इस विचित्र चिकित्साका पता लगा है संसार के प्रत्येक भाग से डाक्टर महोदय के नाम पत्र आ रहे हैं कि हमें भी इस की सारी विधि सिखाइए ॥

एक मिण्ट में अग्रणीत प्रहार होते हैं । इस लिये उस्तरे का फल वस्तुतः काटने का काम नहीं करता बल्कि प्रहारों द्वारा अलग २ करता है । इस का स्वभावतः परिणाम यह है कि इस उस्तरे में फल के इतना तीक्ष्ण होने की आवश्यकता नहीं जितना कि आजकल के साधारण उस्तरों में है । इस का बड़ा भारी लाभ यह है कि दो तीन मिण्ट में एक बड़ी अच्छी हजामत बन जाती है । साबन की भी कोई आवश्यकता नहीं । केवल दाढ़ी को गीलाकर लेना ही पर्याप्त है । हजामत हो चुकने के पश्चात् एक विशेष प्रकार का आनन्द प्राप्त होता है मानो मालिश होकर चुकी है ॥



लोक-शिक्षण-मराठी मासिक-पत्र ।

पूना के सुप्रसिद्ध देश-हितचिन्तक श्री० म० जनार्दन

विनायक झोक, बम्बई विश्व-विद्यालय के पदवीश्वर, आज

“ इस व्यवहार का प्रारम्भ अमेरिका में हुआ, परन्तु इस समय प्रायः सम्पूर्ण धुरीण देशों में इस का प्रचार हो गया है । इस व्यवहार की पद्धति ऐसी है । १—व्यवहारकर्ता बहुत विज्ञापन अपने व्यापार के देता है । २—आर्डर आने पर डाकखाने के द्वारा माल भेजता है । ३—हर एक स्थान के लोगों के नाम तथा पते अपने पास रख कर बार बार उन के पास सूचिपत्रादि भेजकर आर्डर इकट्ठा करता है” ॥

इतना कह कर लेखक आगे लिखते हैं कि अपने हिन्दुस्थान में “डाक व्यवहार” करने के लिये अन्य देशों से अधिक सुभीता है, क्योंकि यहां वी० पी० से माल भेजा जा सकता है । अन्य कई देशों में ऐसी व्यवस्था नहीं है, तथापि इस देश में लोग डाक व्यवहार से बहुत लाभ नहीं उठा रहे हैं । अमेरिका की शिकागो नगरी में “सीअर्स रोबक एण्ड को” नामक एक कम्पनी है, जिस में आज पन्द्रह हजार क्लर्क कार्य कर रहे हैं । ऐसी अन्य कम्पनियां बहुत हैं, जो कि बड़ा बड़ा व्यवहार डाक खाते

पुस्तक परिचय

१६६

के द्वारा कर रही है। ऐसे व्यवहार का प्रारम्भ भी अब तक हिन्दुस्थान में नहीं है” ॥

अस्तु इस व्यवहार की मुख्य मुख्य बातों का वर्णन इस लेख में आने से यह लेख अतीव बोध-प्रद तथा व्यावहारिकों को बड़ा लाभ-दायक है, दूसरा लेख ब्रह्मचारी श्री आनन्द स्वामी जी लिखित “हिमालय के तीर्थ-स्थान” हैं, जिस में श्रीस्वामीजी ने हिमालय के कई स्थानों का याथातथ्य वर्णन किया है ॥

तीसरा मनन करने योग्य लेख श्री०म०प्रो० विष्णू गोविन्द विजापुरकर M. A. लिखित है, जिसका शीर्षक है “अब अवश्य कार्य करना चाहिये”। इस लेख में यह उत्तमता से बताया है कि अब लोगों को अपना शिक्षा-कार्य अपने हाथ में लेना चाहिये, तभी अन्य देशों के साथ हम चल सकेंगे। अन्य छोटे २ देशों में जितने विश्वविद्यालय हैं उसके दशांश भी हमारे विस्तीर्ण देश में नहीं। अन्य देशों में स्वतन्त्र विचार करने वाले विद्वान उत्पन्न होते हैं, वैसे हमारे देश में नहीं होते। हर एक कालेज के संचालकों को निम्न लिखित प्रश्नों का उत्तर देना चाहिये। (१) क्या हमारे कालेज उत्तम बुद्धिमान तथा विचारशील मनुष्य उत्पन्न कर रहे हैं? (२) क्या हमारे कालेज शुद्ध अंतःकरण युक्त धार्मिक मनुष्य विश्व में फैला रहे हैं? (३) क्या हमारे कालेज सद्बिचार वा सदाचार सम्पन्न लोग उत्पन्न कर रहे हैं?

लेखक महोदय ने इस लेख में साम्प्रत की शिक्षा संस्थाओं के गुण दोष स्पष्टता से बतला कर यह कहा है कि जिस संस्थासे स्वतन्त्र विचार के दृढ़ निश्चयी महा-पुरुष निकलेंगे वही शिक्षणालय लोक-हित साधक होसकता है अन्य नहीं, क्या हमारे विद्यालय इस का विचार करेंगे ॥

इस लेख के पश्चात् हमारे सामाजिक दुर्व्यसनों का निषेध विषयक लेख म०नासिंहजी आर्य द्वारा लिखा है।

और म० भोलानाथ पाण्डेजी का, कालिफोर्निया अमेरिका से “अमेरिका के विश्व-विद्यालय” यह लेख अत्यन्त विचार-गर्भित है, इस के पश्चात् विविध-विषय संग्रह, पत्र व्यवहार तथा समालोचना इतने विषय आये हैं, वे सब बड़ी योग्यता के निदर्शक हैं ॥

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

(२) मांस मीमांसा—प्रकाशक साहित्य परिषद् गुरुकुल काहड़ी, हरिद्वार। पृष्ठ ६७, मूल्य १)

इस लघु पुस्तक में मांस भक्षण विषय पर भलीभान्ति विचार किया गया है। रचयिता ने पहिले उन सब युक्तियों और शास्त्रीय प्रमाणाँ का उल्लेख किया है, जो मांस भक्षण के पक्ष में दिये जाते हैं। फिर इन्हीं का एक एक करके बड़ी योग्यता से खण्डन किया है। पुस्तक गवेषणा-पूर्ण है। अहिंसा धर्म के प्रचारकों को इस का एक बार अवश्य पाठ करना चाहिए ॥

(३) भारत-शिक्षादर्श—लेखक पं० घनश्याम सिंह बी० ए०, एल० एल० बी० प्रकाशक गुरुकुलीय साहित्य परिषद् काहड़ी, हरिद्वार। पृष्ठ ८२, मूल्य ३॥

भारतवर्ष में किस प्रकार की शिक्षा होनी चाहिए इसी पर इस पुस्तक में विचार किया गया है। शिक्षा का उद्देश्य “अज्ञान की निवृत्ति, ज्ञान की प्राप्ति और तदनुकूल आचरण है” बता कर ग्रन्थकार ने शिक्षा के विषय को तीन भागों में विभक्त किया है। (१) शारीरिक-विकास—इस के लिये ब्रह्मचर्य, व्यायाम, साधारण वैद्यक विद्या और पदार्थ-विद्या आत्र-धर्म और टेक्नी-

कल अर्थात् कला सम्बन्धी शिक्षा की आवश्यकता जतलाई है। (२) मानसिक-विकास—(३) आत्मिक-विकास—ग्रन्थकार की सम्मति में कालिजों में शेक्सपीयर और कालीदास के बनाये हुए ग्रन्थों का पढ़ाना विद्यार्थियों के समय का नष्ट करना है, क्योंकि ये केवल गण्यों के ही भंडार हैं, जितना समय वे इन गण्यों के पढ़ने में लगाते हैं उतने समय में और बहुत सी उपयोगी बातें सीखी जा सकती हैं। आगे चल कर शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी होनी चाहिए या स्वदेशी भाषा, इस पर विस्तार-पूर्वक विवाद किया गया है। ग्रंथ रचयिता की सम्मति है कि भारतवर्ष में प्रारम्भिक सात आठ श्रेणियों तक तो प्रत्येक प्रान्त की अपनी भाषा ही माध्यम रहनी चाहिए तत्पश्चात् उच्च कक्षाओं में आर्य भाषा (हिन्दी) द्वारा शिक्षा हो। पुस्तक बड़े महत्व की है। प्रत्येक भारत हितैषी को इसका पाठ करना चाहिए ॥

(४) वेदों से आयुर्वेद का कम विकास—
लेखक—भिषगाचार्य श्री पं० निवारणचन्द्र भट्टाचार्य।
प्रकाशक—गुरुकुलीय साहित्य परिषद्, काङ्गड़ी, हरिद्वार।
पृष्ठ ३२, मूल्य लिखा नहीं ॥

इस छोटी सी पुस्तक में भिषगाचार्य जी ने यह सिद्ध करने की चेष्टा की है कि आयुर्वेद का मूल अथर्ववेद है। बहुत से वेद मंत्रों और चरक सुश्रुत के श्लोकों से अपने पक्ष की पुष्टि की गई है। 'वेद में सब विद्याएं बीज रूप से वर्णित हैं' जो लोग ऐसा नहीं मानते उन्हें इस पुस्तक का अवश्य पाठ करना चाहिए ॥

(५) वेद में वैद्य शास्त्र—लेखक—पं० श्रीपद्मामोद सातवलेकर—प्रकाशक—गुरुकुलीय साहित्य परिषद्, काङ्गड़ी, हरिद्वार। पृष्ठ २०, मूल्य—॥

"वेद में सर्व विद्याएं बीज-रूप से मिलती हैं, और वेद में जो वैद्य-शास्त्र का बीज था वही वैद्य-ग्रन्थों के रूप से वृक्षाकार परिणत होगया है" इसी बात को प्रमाणित करने की इस पुस्तक में चेष्टा की गई है। सूर्य किरण चिकित्सा, वायु चिकित्सा और जल चिकित्सा का बीज अथर्ववेद (१।८।१९; ६।८।३।३५) में, और ऋग्वेद (१०।१३७; १।२।१२; ७।६।५) और अथर्व (६।५।७।२) में दर्शाया गया है। इस के अतिरिक्त वेदों में पिप्पली, श्यामा आदि औषधियों के विलक्षण गुण; रामा, कृष्णा, अश्विनी आदि वृष्टियों से श्वेत कुष्ठ का दूर होना (अथर्व २।२४); रोहिणी नामक वनस्पति से घावों का शीघ्र मिलजाना (अथर्व ४।१२५;) और अश्वत्थ, न्यग्रोध आदि महावृक्षों (अथर्व ४।३७।) से वायु की शुद्धि होना वेद में बतलाया गया है, श्री० पण्डितजी का वेद विषयक अनुशीलन बड़ा सराहनीय है। वेद के विद्यार्थियों को इस पुस्तक के पाठ से बहुत लाभ होगा ॥

(६) योग रसायन—म० मुहकम चन्द ने हमारे पास अपनी बनाई हुई योग रसायन की कुछ गोलियां भेजी हैं यह प्रसिद्ध ब्रह्मी बूटी और एक दो और चीजों का मिश्रण है। हमने इनका सेवन किया है। मस्तिष्क और कबज के लिये अच्छी प्रतीत होती है ॥

मिलनेका पता—M. Mohkam Chand
General Merchant, Durban, Natal (S)

आतङ्क निग्रह औषधालय की आतंक निग्रह गोलियां



केवल वनस्पति ही से बनाई जाती हैं, अशक्ति के तमाम ददों को दूर करती हैं, मन्द पड़ी हुई पाचन-शक्ति को बढ़ाती हैं, बिगड़े हुए रुधिर को सुधारती हैं, मस्तिष्क को निर्मल बनाती हैं और दीर्घायु देती हैं, तथा सारी दुनियां में अपने सत्य गुणों से विस्तार और यश पा रही हैं।

मूल्य—गोली ३२ की डिब्बी ? का रु० ?।

अधिक जानने के लिये हमारा सूची पत्र मंगा लीजिये।
एक कार्ड लिखने पर आप को बिना डाक खर्च के मिल जायगा

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोन्दिजी,

जामनगर—काठियावाड़

श्रीपार
पारिष
मलती
वही
योग्या
पुस्तक
कत्सा
बीज
सुग्वेद
(५७२)
दों में
लक्षण
यों से
गोहिणी
तजाना
आदि
शुद्धि
डतजी
वीय है
ठाठ से
बन्द ने
सायत
ब्रह्म
ण हैं।
क और
chand
tal (S

... जटों की जहरत हैं

देवदर्शनी अंगूठियों ।



बाल उड़ाने का खुशबूदार सावुन इसे कहते हैं (बाल उड़ जायं फिर पैदा न हों) रमेश सावुन बिना किसी तरह की तकलीफ के बालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसी चमकदार कर देता है, मानों बाल यहां कभी थे ही नहीं, इस का चन्द रोज़ बर्ताव रहा तो उस जगह बाल आने ही बन्द हो जायेंगे । एक टिकिया का दाम १) तीन टिकियों का वक्स ॥=) एजेण्टों को कम से कम ५) रुपये का माल मंगाने से २५) सैंकड़ा कमीशन मिलता है और कुल खर्चा हमारे ज़िम्मे है ।

व्यापार रत्नाकर ।

इसकी प्रसिद्ध २ अखबारों ने प्रशंसा की है जिस में त्रिकालदर्शी अंगूठी, ताम्बूलविहार, कपूर की माला, गन्धक का गिलास, कपूर का कटोरा, पारे का गिलास, विलायती खिजाब, चांदी सोने का मुलम्मा, सावुन, दाद की दवा रबर की मोहरें, आदि बनाने की सैंकड़ों तरकीबें लिखी हैं । सच्चा हुनर हासिल करना है, तो सिर्फ ॥) का टिकट भेज कर मंगा लीजिये । जल्दी कीजिये थोड़ी जिल्दें रह गई हैं ।

हर एक मजहब के देवताओं की और उमदा इमारतों की जैसी चाहिये मंगा लीजिये । कीमत की अंगूठी १) एक दर्जन का १॥) जर्मन सिल्वर की १) चांदी की १) एजेंटों को कमीशन मिलता है

पता—रमेशचन्द्र एण्ड को०

(ब्राञ्च नं० ८) स्वामीघाट, मथुरा ।

धन ! धन !! धन !!!

धर्म पूर्वक धन कमाने के सैंकड़ों साधन !

देश सुधार की असली विधियां !!

मरती हुई हिन्दू जाति की उन्नति के उपाय !!!

प्रोफ़ेसर बालकृष्ण ऐम० ए०

अर्थ-शास्त्र महोपाध्याय, गुरुकुल हरिद्वार

के सरल हिन्दी भाषा में लिखित ।

अर्थशास्त्र-धनविद्या

में देखिये, हर एक भारतवासी के लिये इस अनुपम पुस्तक का पाठ करना ज़रूरी है । जल्दी खरीदिये ! पृष्ठ ५१५ कीमत सिर्फ़ डेढ़ रुपया डाक महसूल अलग मिलने का पता—

पुस्तक भण्डार गुरुकुल, हरिद्वार ।

भारत का संक्षिप्त इतिहास सचित्र १॥)

और

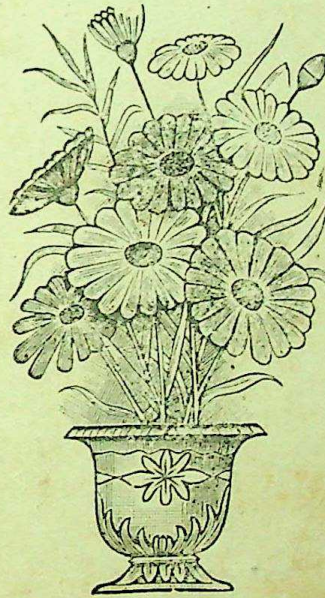
अग्निहोत्र व्याख्या १)

नामी पुस्तक भी मिल सकते हैं ?

आई.एम.एस. के प्रबंध में मौडल प्रेस, अनामकली लाहौर में

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकेतो अजनिष्ट विम्बा । कृष्ण

❀ उषा ❀



लाहौर

वार्षिक मूल्य ३.)

सम्पादक—सन्तराम वी० ए०

प्रति संख्या १.)

लेख-सूची

पृष्ठ

ज्वर ।

- (१) प्राचीन भारतवर्ष के सम्बन्ध में बात
चीत—ले० पं० हीरानन्द शास्त्री एम. ए.
एम. ओ. एल. २४१
- (२) ब्रह्म विवर्त (पद्य)—ले० मधुकर २४३
- (३) वैदिक त्रिक—श्री० पं० पूर्णानन्दजी आर्यो-
पदेशक २४५
- (४) उषा का आगमन (पद्य)—उद्धत २५१
- (७) प्रताप आदित्य—ले० पं० कृष्णचन्द्र प्रभाकर २५२
- (६) मनोरञ्जक अन्योक्ति—ले० श्री० द्वारिका
प्रसाद गुप्त (रसिकेन्द्र) २५२
- (७) कृष्णदासपाल—ले० अध्यापक बनारसी
दास चतुर्वेदी २५२
- (८) प्रार्थना (पद्य)—ले० हंसदास शर्मा २६२
- (९) भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास—ले०
“आत्मा” २६३

* नारी उपयोगी पृष्ठ *

- (१०) मताभिलाषिणी स्त्रियां २६९
- (११) सिपाही स्त्रियां २७०
- (१२) कपड़ों पर १५०० रुपये मासिक व्यय २७१
- (१३) घर पर कपड़े धोना २७१
- (१४) भारतवर्ष में स्त्रियों का घाटा १७३
- (१५) इस्लाम में स्त्री की स्थिति १७३
- (१६) चुटकले २७४
- (१७) विविध विषय २७५
- (१८) पुस्तक परिचय २७९

वाटली वाला का एग्यू मिक्सचर ।

या पिलस ज्वर की अनुभव सिद्ध दवाई है ।
मूल्य १ रु० । टानिक गोलिएं पीले लोगों के
लिए, थंके हुए मस्तिष्क, निर्वलता, तपदिक की
पहली अवस्था, और बद्धजमी आदि की सब
बीमारियों में एक अमूल्य औषधि है । मूल्य १॥
दन्त मंजन-वैज्ञानिक रीति से ‘मेयाफल’ और
अंग्रेजी प्रतिनाशक औषधि के साथ मिलाया
हुआ । मूल्य १॥ प्रति । दद्र की मर्हम दद्र, घोंघे
की खुजली इत्यादि को एक दिन में आराम
करदेती है मूल्य ।) प्रति । यह सब अंग्रेजी
दवाई बेचने वालों या डाक्टर एच० एल० वाट-
ली वाला, जे० पी० वारली, दादर, बम्बई, के
पते से मिल सकती हैं ॥

FAIR SEX

स्त्री जाति ।

केसरी का लोभ्र,

गर्भाशय के रोगों के लिये सब से अच्छी टानक है ।
स्त्रियों के सब प्रकार के रोग जैसे कि मा-
सिक धर्म की खराबियां, ऋतुओं का दर्द से
आना, ल्यूकोरिया, ऋतु का कम आना, ज्यादा
आना या बिल्कुल न आना, कब्ज, लहू की
कमी और अन्य कई गुप्त रोग जिन से प्रायः
नारियां पीड़ित रहती हैं इस से झट दूर
जाते हैं । मूल्य बड़ी बोतल २), छोटी १॥=)
मिलने का पता—डाक्टर के० एन० केसरी

“केसरी कुटीरम”

९, बन्दरस्ट्रीट, मदरास

छोटे बच्चों की ताकत बढ़ाने वाली मशहूर दवाई

शीशी का
मूल्य बारा
आना



डाकमहसूल
चार आना

कै. टी. डोंगरे और कं.,
गिरगाम, बम्बई

वैदिक धर्म सम्बन्धी हिन्दी पुस्तकें ।

सत्यार्थ प्रकाश		III=)	बाल शिक्षा		)II
वैदिक इतिहासार्थ-निर्णय		१II)	नारी धर्म विचार दोनों भाग		१II)
संस्कार चन्द्रिका अर्थात् टीका संस्कार			नारी उपदेश		II=)
विधि		२)	स्त्री आरोग्यता		II)
व्याख्यान पञ्चक		III)	स्त्री हितोपदेश		I=)
व्याख्यान मुक्तावली		II)	संगीत रत्न प्रकाश पूर्वार्ध पांचों भाग		II-)
न्याय दर्शन		१I)	संगीत रत्न प्रकाश उत्तरार्ध दोनों भाग		II)
सांख्य दर्शन		III)	शान्ता उपन्यास		II)
दयानन्द चरित बंगाली से अनुवाद		१I)	वीर मातायें		I=)
सत्यार्थ प्रकाश शब्दार्थ कोष		II)	भारतीय शिष्य ईसा		=)II
बाल सत्यार्थ प्रकाश		I-)			

वजीरचन्द शर्मा प्रोप्रायटर,

वैदिक पुस्तकालय लाहौर ।

आपके भविष्यत की सलाह ।

आप देख रहे हैं, इन बरसात के दिनों में जाड़ा देकर बारीका बुखार हो रहा है। यही इस रोग (मलेरिया) की पहिली हालत है, यदि अच्छी दवा से शीघ्र आराम न किया जावे, तो धीरे-धीरे यह शरीर के खून को पानी कर देता है, इससे पेटके भीतर तिल्ली बढ़ जाती है, एक प्रकार के अति सूक्ष्म जीव पिलही में जा समाते हैं और खून के लाल कनिका को नष्ट करते हैं, साथ ही शरीर सूख जाता है। ऐसी ही हालत को सुधारने के लिये डाक्टर वर्मन की प्रसिद्ध "फमली बुखार वो तिल्ली की दवा" ३० वर्ष से घर घर प्रचलित है, इसमें विशेष गुण यह है कि इसकी ४-५ खुराक पीने ही से बुखार का आना बन्द होजाता है। पिलही को गलाती है और जल्द आराम करती है।

मोल—छोटी शीशी ॥) आठ आने, पै: व डा: म: १-१) २ शीशी तक ॥)

मोल—बड़ी शीशी ॥=) चौदह आने; पै: व डा: म: १=) २ शीशी ॥)

नफली वर्मन और उन
के झूठे विज्ञापनों
में बचो।

दादकी मलहम

वर्तमान समय अनेक
वर्मन नामधारी
कम्पनियां हैं।

आजकल आप दाद की अनेक दवाओं के विज्ञापन पत्रों में देखते होंगे, इन से केवल दाद की खुजली कम होती है; परन्तु आराम होना दूर रहा। ऐसी दवासे सदा बचो।

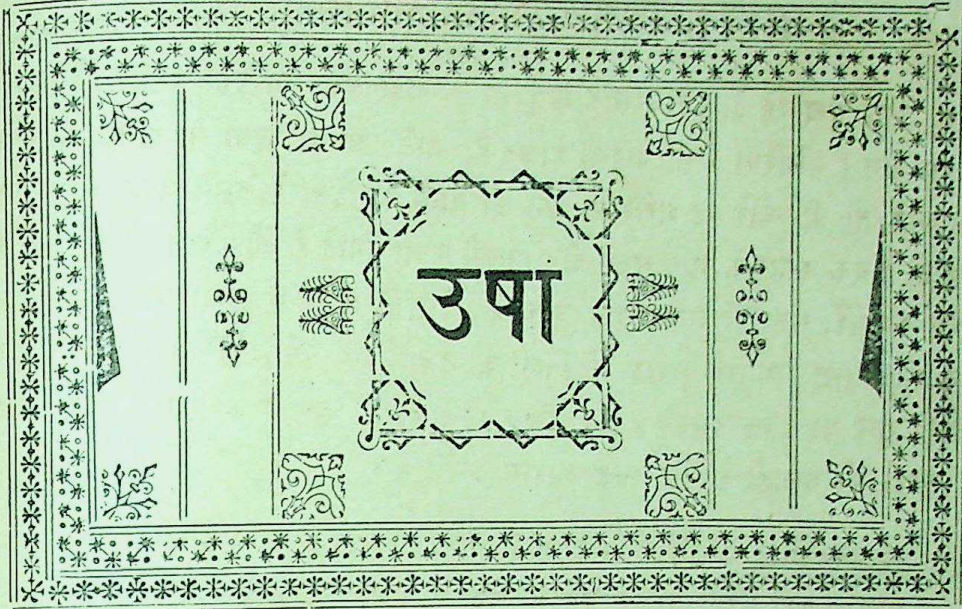
डाक्टर वर्मन की दाद की मलहम ३० वर्षसे लाखों लोगों की परीक्षा की हुई है। आप भी परीक्षा करें।

एक बारके लगाने से खुजली मिटती है। दो तीन बारके लगाने से दाद जड़से छुटा जाता है, जब सब दवाइयां लगाकर थक गये हों तो इसका व्यवहार करो। यह मलहम लगती नहीं है, खुशबूदार है, इसमें चर्बी नहीं है, यह सुन्दर सुनहली डिबिया में रहती है।

मोल—१) चार आने डिबिया। डा: म: १ से ६ डिबिया: १-१) पांच आने; १२ डिबिया १=) छै आने।

दवा सब जगह हमारे एजण्टों और दवाइयां फरोशों के पास बिकती हैं।

डा. एम. ज. वर्मन ए. नाराचंद टन ट्रीट. कलकत्ता।



मासिक पत्रिका

भाग १

श्रावण १९७१—जुलाई १९१४

संख्या ७

प्राचीन भारत वर्ष के संबंध में बातचीत

(लेखक—पं० हीरानन्द शास्त्री एम० ए०)



रतवासी विद्वानों पर
अथवा आर्य जाति के उस
भागपर जिसने इस देश
में आकर वास किया वह
कलङ्क शायद सदा के
लिये लगा रहे कि उन्होंने

या उसने पूर्वकाल में इतिहास लिखने की
ओर कभी ध्यान नहीं दिया किसी ने नहीं
विचारा कि जाति की सत्ता के लिये यह बात
परमावश्यक है कि लोग अपने पूर्वजों के चरि-

त्रों को जानें। दर्शन कारों ने 'पर्वतो वहिमान्
धूमान्। वृक्षः कपिसंयोगी' की छानबीन में
उमरें खर्च कर डालीं परन्तु इतिहास के
उपयोग वा लाभ को नहीं जानसके। इसका
परिणाम यह हुआ कि हमारे पास ऐसे प्रमाण
नहीं हैं जिन से अपने महत्व को सिद्ध कर
सकें। अगर कहीं हैं भी तो बहुत खोज करने से
मिलते हैं और तौ भी शक या संशय से खाली
नहीं। इसका फल यह है कि हिन्दू जाति के
प्रायः सबके सब नायक कल्पित माने जा रहे हैं।
दूर की बात तो एक तरफ रही विक्रमादित्य
आदिक भी आधे बनावटी माने जाते हैं। यदि
कोई इतिहास ग्रंथ मिलता भी है तो उसकी

(Tone) वा लेख अस्वाभाविक जैसा भासता है जिस के कारण उसे भी बनावट ही कह दिया जाता है या अप्रमाण अथवा परतः प्रमाण मानना पड़ता है—

उदाहरण के लिये जैसे राजतरङ्गिणी पृथ्वी-राजरासौ, विक्रमाङ्कदेव चरित इत्यदि । जहाँ तक देखा जाता है प्रायः सभी इतिहास लेखक स्वजात्याभिमान से खाली नहीं होते । जहाँ कहीं उन्हें अपनी जाति का दूसरी जाति के लोगों से मुकाबला दिखाना पड़ा वहीं २ उन्होंने अक्सर अपनी ही ताली बजाई, अपने ही पुरुषों की प्रशंसा की दूसरे को तुच्छ दिखलया । ऐसे लोग विरले ही दिखाई देंगे जिन्होंने मुक्त कण्ठ से अपनी पराजय दूसरों की जय का वर्णन किया हो या माना हो । यही कारण है जिससे मुसलमान इतिहास लेखकों ने शायद कहीं भी हिन्दुओं की जय नहीं मानी । कई एकने तो साफ २ कह दिया कि हम 'काफर' के चरित वर्णन करके अपने को पापी नहीं बनायेंगे; ऐसा होने पर भी लोग प्रायः उनके लेख को वेदवाक्यवत् प्रमाण मानलेते हैं । उचित तो यह प्रतीत होता है कि भिन्न २ लेखों की परस्पर तुलना करके जहाँ सचाई मालूम हो उसको माना जाय परन्तु तुलना अपने आप को भूलकर अथवा पक्षपात को छोड़कर अर्थात् पहिले ठानी हुई राय को एक तरफ रखकर होनी चाहिये नहीं तो सचाई नहीं मिल सकती । उसी तुलना को सच्चा तर्क कहना चाहिये जिसे धर्म को जानने के लिये आवश्यक माना गया है—

यस्तर्केणानुसंधन्ते तथर्धं वेद नेतरः ।

इतिहास के लिये हमें इसी तर्क की आवश्यकता है अन्यथा हम अपने पूर्वजों के गौरव को नहीं जान सकते । उदाहरण के लिये यदि आप मुसलमान लेखकों अथवा उनके अनुयायी लेखकों के ग्रंथ देखें तो मैं समझता हूँ शायद ही आपको कहीं ऐसा लेख मिले जहाँ हिन्दु राजाओं की जय दिखाई दे । शायद हमारी इतनी बुद्धि नहीं कि यह समझ सकें कि क्यों हिन्दु जाति सदा पराजित हो रही हो जब कि इसमें बड़े २ योद्धा मौजूद थे जिन्होंने अपनी जानको कुछ नहीं समझा और नहीं मृत्यु के भय की कभी परवाह की । बाबर जिसकी जीवनी की इतनी प्रशंसा की जाती है हिन्दुस्तान के बारे में क्या लिखता है, इस पढ़कर हमें हंसी आती है और खेद होता है कि ऐसे २ 'महात्मा' ही अब आस पदवी के योग्य हैं बाबर कहता है—

हिन्दुस्तान एक ऐसा देश है जिस में कुछ आनन्द नहीं, लोग सुन्दर नहीं और सौहाय्य के अनभिज्ञ हैं, उन में प्रतिभा नहीं, बुद्धि नहीं विनय नहीं दया नहीं कारीगर नहीं शिल्प शास्त्र नहीं मकान वगैरह बनाने की चतुराई नहीं उनके पास अच्छे घोड़े अच्छे फल वरफ और ठंडा पानी नहीं, नहीं अच्छे बाजार या अच्छी खुराक नहीं.....

इसी प्रकार यवन अर्थात् यूनान देश के पण्डित रत्नों ने भी कोई उदारता नहीं दिखाई । यह तो लिखा दिया है कि सिकंदरवादशाह के सिपाहीओं ने हिन्दुस्तान में आगे जाने से 'तौबा' की परन्तु यह नहीं बतलाया कि 'सोने की चिड़िया' को धरू हाथ से जाने दिया, क्या

किसी ने मुंह तोड़ जवाब तो नहीं दिये? कहने का यह तात्पर्य नहीं कि उनमें से किसी ने सत्य ही नहीं लिखा, नहीं किन्तु पक्षपात को बिलकुल नहीं छोड़ा यह एक न्यूनता दीख पड़ती है इतिहास लेखक को चाहिये कि अपने आप को भूलकर अर्थात् तटस्थ होकर लिख नहीं तो दोनों पक्षों का लिखें जिस से पाठक अपने आप नतीजा निकाल सकें ॥

इतिहास वा जीवनी लेखक के लिये पक्षपात को छोड़ देना परमावश्यक है अन्यथा सचाई नहीं दिखलाई जा सकती। हमें निश्चय नहीं कि एक भी मुसलमान लेखक ऐसा हुआ हो जिस ने झूठ बिलकुल ही न लिखा हो, एवं हिन्दू लेखकों का भी ऐसा ही हाल है। इन महाशयों ने तो भीमसेन के अनेकों हाथी हवा में ऐसे उड़ाये कि वह अभी तक उड़ ही रहे हैं ॥

मेरे खयाल में पाश्चात्य विद्वान भी इस दोष से शायद ही खाली होंगे। देखने में आता है कि अन्य देशीय महापुरुषों का वर्णन करते हुए वह भी पूरी उदारता नहीं दिखलाते। वीनापाटं जैसे महात्मा के लिये एक साधारण सिपाही से भी कम दरजा दिया गया है ॥

हिन्दू जाति के इतिहास के लिये तो कई बातों की कमी है। इस के 'मसाले' बहुत हैं मगर उन का इकट्ठा करना ही कठिन है। जब तक बहुत से हाथ 'इकट्ठे' ही इस काम को न पकड़ लें, यदि उषा के पाठक इसे 'हाथों हाथ' ले लेने की कृपा करें तो आनन्द हो। क्या २ सामग्री होनी चाहिये और वह कैसे

इकट्ठी हो इस का उत्तर नीचे लिखा जाता है—
१. पुराणों में से ऐतिहासिक शोचवृत्तक। निकालना। इस काम को संस्कृत और आंग्ल भाषावित् अच्छी तरह कर सकें हैं। एक २ पुराण को पकड़ लें और छान बीन करके 'उषा' में प्रकाशित करें ॥

२. वारं, वंशावली, अर्द्ध ऐतिहासिक गीत, रवायतें, भाटों के कवित्त आदि और किवदन्ती, हिन्दी, पञ्जाबी एवं अन्यान्य भाषाओं में लिखी हुई पुस्तिकाएं जिन में किसी महापुरुष या जाति आदि का वर्णन हो इन सब को इकट्ठा करना और पूर्ववत् ऐतिहासिक दृष्टि से छापना यह काम भी बांटा जा सकता है—जिला परगना, तहसील आदि के भागों से—

३. प्राचीन शिला लेखादि, यह प्रायः सफ़र की ओर से छप रहे हैं इनका सार इकट्ठा करना।

४. विदेशी यात्रियों और अन्य लेखकों की राय वगैरा इकट्ठा करना, उन के लिखे वृत्तों का संग्रह करके ऐतिहासिक शृङ्खला बांधना।

५. राजतरङ्गिणी, विक्रमांक देव चरित, हमीर विजय, हर्ष चरित इत्यादि ग्रन्थों वा अन्य ग्रन्थों की छान बीन करना और उन में इतिहास को निकालना इत्यादि ॥

संग्रह और छान बीन किस तरह से हो इस का उदाहरण हम फिर कभी भेंट करेंगे ॥

ब्रह्म विवर्त ।

इस सकल संसार में मिलता न जिसका पार है।
जिसकी क्रिया से चल रहा संसार यह साकार है
जिसकी महा महिमा सुनावें श्रेष्ठ चारों वेद यह।
उस ईश के चरणारविन्दों में लगे मम चित्त यह॥

(१)

वेद विद्या का जिन्हें अनमोल भूषण मिल चुका।
योगबल से चित्त का सब दूर मल भी हो चुका॥
उन योगियों से ध्येय वह जगदीश सर्वाधार है।
जिसके प्रबलबल की न कोई कर सके मिकदार है

(२)

पाप में लवलीन रहता चित्त जिनका हर समय।
ध्यान में उनके न आता देव वह विज्ञानमय ॥
इसलिये सद्धर्म रक्षण में सदा मन दीजिये।
मन लगाके वेद के उपदेश को सुन लीजिये ॥

(३)

यह सकल संसार कारणरूप में जब लीन था।
उस समय विज्ञानमय निजरूप में भरपूर था ॥
आगया जब काल सर्जन का तभी विपश्येशने।
योग माया से किया तब बन गया ब्रह्माण्ड यह ॥

(४)

ध्वान्त भागा दूर सब आलोक जग में होगया।
वेद विद्या का खजाना ईशने सब को दिया ॥
ब्रह्म की लीला लगे सब देखने आश्चर्य से।
होगये उसकी क्रिया को देख सारे मुग्ध से ॥

(५)

देखने से रूप जिसका समझ में आता नहीं।
योगियों ने जिस रसीली का पता पाया नहीं ॥
जो असम्भव को करे सम्भव सदा माया वही।
खेल करती दीखती संसार में है हर कहीं ॥

(६)

जिन भयानक काननों में गर्जते थे केशरी।
कण्टकावृत झाड़ियां चहुँ ओर से जिन में भरी ॥
आज उन में देखते हैं सैकड़ों पीली फली।
फूल बनने में न जिनके फाल की अनवन चली ॥

(७)

देखिये कैसा लगाया वाग माली ने यहां।
भव्य कौतुक है दिखाया अन्त में आकर यहां ॥
महक फेलंगी जहां में फूल जब खिल जायेंगे।
वागवां की तब प्रशंसा लोग दिल से गाएंगे ॥

(८)

पर न जानो यह किये उसके ही सारा होगया।
बेमदद माली के बल से वाग सारा बन गया ॥
जानलो लोगो सहायक ईश सर्वाधार को।
दिल लगाके जिम्मे माली प्रागया विज्ञानको ॥

(९)

समझकर कर्तव्य करना भोगना संसार को।
मोहमाया के झमेले में फंसाके चित्त को ॥
देखना मत भूल जाना बात सच्ची जो वही।
“ब्रह्म” में मन को लगाना कर्म तुम करते सही

“मधुकर”



वैदिक त्रिक ।

(लेखक—श्री ० पं० पूर्णानन्द जी)



यह क्या ! ईसाई त्रिक, मुहम्मदी त्रिक, पौराणिक त्रिक यह तो सुने थे, परन्तु आर्यों के यहां भी त्रिक ? ईश्वर की शपथ में शपथ नहीं खाता । उधर तो यह

औरों के त्रिकों का खण्डन करते नहीं थकते । 'वाहदहूँ लाशरक' के अर्थों को दूर से दूर यदि कोई लेजाए तो यह आर्य्य । वेदों में से दो तीन, चार, पांच, छः, सात, आठ, नौ आदि संख्याओं का ईश्वर के विषय में निषेध करने वाला वेद मन्त्र यदि बड़े बल से प्रस्तुत करें तो यह आर्य्य तो फिर यह दूसरों की आंख का तिनका निकाल कर दिखाने वालों की अपनी आंखों में शहतीर कैसा ? परन्तु पाठक ! विस्मित होने की कोई बात नहीं, आर्य्यों के यहां एक त्रिक नहीं कई हैं । इनके त्रिकों की जब गिनती होगी तो कोई अन्त नहीं आएगा । ईश्वर, जीव, प्रकृति, एक त्रिक । ज्ञानकाण्ड, भक्ति काण्ड, उपासना काण्ड, दूसरा त्रिक । श्रवण, मनन, निदिध्यासन तीसरा त्रिक । शरीर मन, आत्मा चौथा त्रिक । इस प्रकार यदि देखें तो अनेकों त्रिक हैं, परन्तु आज जिस त्रिक का हम वर्णन करने लगे हैं वह पहला त्रिक है । इस त्रिक के सद्भाव के लिये सब से पहिले और सप से प्राचीन प्रमाण जो हमें मिलता है, वह ऋग्वेद

के दसवें मण्डल का एक सौ उन्तीसवां सूक्त है । बीजरूप से योग प्रतिपादित यह त्रिक इस सूक्त में दीख पड़ता है । इसके साथ ही 'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिपस्वजाते तयोरन्यः पिप्पलं स्वादुत्ति अनश्नश्नमि चाकशीति' यह मन्त्र भी देखना चाहिये जिस में 'द्वा' से शंकर प्रभृति सब भाष्यकार ईश्वर और जीव अर्थ लेते हैं, इस अवस्था में हमें अत्रिका है कि 'वृक्ष' शब्द से 'प्रकृति' का ग्रहण करें, 'पिप्पलं स्वादु' इस प्रकृति के नाना सुन्दर और स्वादु भाग हैं ॥

वेदों से उतरकर उपनिषदों में सैकड़ों प्रमाण हैं जिन में सब से प्राचीन प्रमाण छान्दोग्योपनिषद् का है जहां अग्न्यादिकों के तीन रूप गिनाए हैं, प्राचीनता के विचार को छोड़कर यदि हम स्पष्टता और अनन्यार्थता को लें तो श्रुताश्रयतरोपनिषत् हमारे सामने आती है, जिस में से अनेक प्रमाण सांख्य-योगविहित त्रिकवाद की पुष्टि में दिये जा सकते हैं । स्थाली पुलकन्याय से 'अजामेका लोहित शुक्ल कृष्णा बह्वीः प्रजाः सृजमानां सरूपाः अजो ह्येको जुरमाणेऽनुशेते जहास्येनां भुक्तभोगामजोऽन्यः' 'संयुक्तमेतत् क्षरमक्षरश्च व्यक्ता व्यक्तं चरते विश्वमीशः अनीशश्चात्मा बध्यते भोक्तृभावात् ज्ञात्वा देवं मुच्यते सर्वपाशैः' 'ज्ञाशं द्वावजा-वीशानीशावजा ह्येका भोक्तृभोग्याश्च युक्ताः अनन्तश्चात्मा विश्वरूपो ह्यकर्त्ता त्रय यदा विन्देत ब्रह्मेतत्तः यह तीन वाक्य हम उद्धृत करते हैं ॥

इनके पश्चात् दर्शन साहित्य हमारी दृष्टि का अधिकारी है, जहां उपनिषदों के संवादात्मक विचार नियम बद्ध कर दिये गये हैं। यहां यह त्रिकवाद पूरे प्रौढ़ यौवनमें विद्यमान है, शंकरादि चाहे कितना भी यत्न करें। परन्तु बादरायण,दि स्पष्टरूप से इसे मानते हैं और जहां २ ऐसे स्थलों पर शंकरादि अपने २ मत वेदान्तादि में पड़ने लगते हैं वहां वे हतार्थ रह जाते हैं और अपनी युक्तिशालिता के उच्च सिंहासन पर से स्पष्ट गिरते दिखाई पड़ते हैं, इतने तक कि जब शंकर पर प्रच्छन्न बौद्ध होने का दोष लगाया जाता है तब वह असन्दिग्ध शब्दों में जगत् को भी सत्य मानलेता है, बात तो यह है कि अध्यास भी बिना आश्रय, आलम्बन या आधिकरण के जो कुछ भी इसे कहो रह नहीं सकता। बहिर्वदवमा तेकेवते के वत् शब्द का लाभ उठाता हुआ वह एक प्रकार से मुक्त कण्ठ से इस त्रितय को मानलेता है ॥

सांख्य और योग तो हैं इसके प्रतिपादक, इनके प्रातीतिक भेद में भगवद्गीता इन शब्दों में व्यवस्था देती है।

‘सांख्ययोगो पृथग्वालाः प्रवर्तित न विपश्चितः’

इस लिये कई विद्वानों का यह विचार कि सांख्य नास्तिक है और योग deistic है या यूँ कहिये कि अनीश्वरवादी सांख्य के बाद में एक देवता का प्रवेश कर देता है कुछ युक्ति संगत नहीं प्रतीत होता। दूसरी ओर हमारे पाश्चात्य विद्वान् और उनके कुछ भारतीय अनुयायी यह मानते हैं कि The normal attitude of a Hindu writer.....is silence अर्थात्

साधारण अवस्था में यदि एक हिन्दू लेखक का एक बात ‘अशिष्टा प्रतिबिम्ब’ रखना हो तो वह चुप रहता है, आज यही बात भगवान् बुद्ध के विषय में सिद्ध हो रही है और वह समय आने वाला है जब बुद्ध पूरे आस्तिक सिद्ध होंगे, दूसरी ओर इस दर्शन का वेदानुयायी (orthodox) दर्शनों में परिगगन ही इसके अनीश्वरवादित्व का प्रबल निराकरण है। नहीं तो चार्वाक और बार्हस्पत्य सूत्रों का सा इसका सत्कार होता, याता यह निकाल दिया जाता या बार्हस्पत्य सूत्रों की नाई स्मृति और परम्परा से विनष्ट कर दिया जाता ॥

इस प्रकार हमने यत्न किया है कि इस त्रिकवाद का प्राचीनतम प्रभावों तक (trace) अनुसन्धान करें और पुरातन आचार्यों का मत निरूपण करें, नवीन आचार्यों में से विज्ञान-भिक्षु और महींपि दयानन्द इसी मत के प्रचारक मालूम होते हैं। ‘विज्ञानभिक्षु’ने ‘सर्व-दर्शन संग्रह’ बनाकर सब दर्शनों की परस्पर सङ्गति लगाने, भेद मिटाने और व्यवस्था देने का यत्न किया है, एक स्थान पर तो वह प्रबल शब्दों में लिखते हैं कि ‘वेदान्तायदि शास्त्राणि बौद्धैः किमपराधृतः’ प्रमाण को संक्षेप से देकर अब हम युक्ति की ओर आते हैं ॥

सब से पहले उचित है कि हम ईश्वर और जीव के भेद को लें। इस प्रश्न को दो पहलूओं से देखा जा सकता है:- १-यह संसार कैसे बना २-दुःख या पाप कहां से और कैसे आया? अभेदवादियों के मतमें कोई Cosmology सृष्ट-युत्पत्ति हो ही नहीं सकती न ही Eschatology

पुनर्जन्म या सृष्टि का प्रवाह से अनादित्व बन सकता है। परन्तु यही जैसा कि ऊपर कहा गया जब प्रच्छन्न बौद्ध के प्रमाण दिये जाते हैं तो सब कुछ मान लेते हैं। कम से कम शङ्कर तो ऐसा कर लेता है पहली युक्ति आधुनिक पाश्चात्यविज्ञान में argument form order अर्थात् नियमबद्धता या प्रबन्ध की युक्ति कही जाती है। एक सर्व्वार्थी शङ्कर की दृष्टि से जगत् ब्रह्म से उत्पन्न हो ही नहीं सकता चूनाँचि इस दोष पर ध्यान देते हुए नवीन वेदान्ती माया को जगत् का उपादान कारण मानते हैं, परन्तु फिर प्रश्न उत्पन्न होता है कि माया कहां से आई, इस प्रश्न का संबन्ध दूसरा दुःख वाले प्रश्न के साथ है और इसका उत्तर हमें यह दिया जाता है कि माया अनादि है परन्तु फिर प्रश्न बना रहता है, चाहे दूसरी आपत्ति को छान्ड़ भी दें कि जिस उपनिषद्वाक्य की प्रतिज्ञा को सिर पर उठाकर यह इतना धूर्धर कण्ठ से शोर मचाते और इतराते हैं वह दुन्दुभिनाद से उच्चारित 'येनैकेन विज्ञातेन सर्व्वमिदं विज्ञातं भवति' 'नेह नानास्ति किञ्चन' श्रुति प्रकुपित होती है। कि जीव के साथ उसका संश्लेष कैसे? और फिर मोक्ष कैसे? माया तो ब्रह्म की अविद्या को यह मानते हैं। और अविद्या २ ही है चाहे वह शुद्धोपाधिक हो चाहे मलिन सत्त्वोपाधिक। जब माया ब्रह्म की एक शक्ति हुई 'तब वह अचेतन ठहरी और ब्रह्म की किसी शक्ति का विनाश मानना उच्छृंखल हो जाना है, इस अवस्था में युक्ति क्योंकर होगी? दुःख के अस्तित्व से तो इनकार हो नहीं सकता ॥

दूसरी ओर जीव अपनी अल्पज्ञता और अदूर दर्शिता से अधर्म कर बैठे तो भला सं परन्तु उनका दुःख अपने ऊपर कभी भी लेना नहीं चाहता, उधर जीव में आज तक यह शक्ति नहीं आई कि एक शरीर का बल भी बना दे, नाना भेद भिन्न संसार का तो कहना ही क्या है ॥

यदि मनुष्य की साधारण बुद्धि common sense कहीं अधिक से अधिक विद्रोह करती है तो वह वह स्थल है जहां पर शंकर कहता है कि सारा का सारा शारीरिक दर्शन तो भेद प्रतिपादक और केवल थोड़े से सूत्र परम सिद्धान्त अभेद के प्रतिपादक हैं। समझ में नहीं आता कि जिस ब्रह्म की मीमांसा की प्रतिज्ञा वादरायण पहले सूत्र में कर चुके हों उस से अगले कई सूत्र सोपाधिक ब्रह्म का निरूपण करते हों पर ब्रह्म का नहीं, नहीं तो जीव और ब्रह्म का अभेद जैसे और फिर बार २ 'भेद प्रति पक्षे च, भेदव्यपदेशात् भेदवचनात्' इत्यादि सूत्रों का आना क्या शंकर का सीधा खण्डन नहीं जिस संसार की कल्पना के लिये फिर भी ईश्वर की आवश्यकता पड़ती है ॥

वात तो यह है कि जैसे जेकब साहब ने लिखा भी है कि शंकर से पूर्व वेदान्त के भाष्यकार बोधायनादि द्वैतवादी मैदान को लिये बैठे थे जब शंकर मैदान के अन्दर आए, और उन्हें बौद्धों का सामना करने के लिये उनके ही शस्त्रों से लड़ना पड़ा, कुछ उन का Idealism या विज्ञानवाद इन्होंने चुपके से

या वे खबरी में ले लिया, यदि हमें फिर कभी समय मिला तो हम सिद्ध करेंगे कि शंकर कई स्थानों पर अपने अभिमत विचार वेदान्त में पढ़ते हैं ॥

द्वैतवादियों पर सब से बड़ा आक्षेप एक है और वह यह कि तुम्हारा ईश्वर केवल एक personal God या शख्ती खुदा है, परन्तु यदि हम मनुष्य के उद्देश्य या अस्तित्वमात्र के प्रयोजन के ऊपर विचार करें तो पता लगेगा कि न तो Butler प्रोक्त Rationalism को mechanical ही बना देना चाहिये और न ही Hedonism या Utilitarianism को भूलना चाहिये यदि हमें जीव से कर्तृत्व या स्वातन्त्र्य न छीनना हो। परिभाषिक शब्दों को छोड़कर यदि सरल भाषामें इसी बात को कहना ही तो यूँ समझना-सामाजिक.....व प्रत्येक को चाहिये कि अच्छा बनना या अच्छा करना यही मनुष्य जीवन का उद्देश्य है, हम नहीं समझते कि ज्ञान या कोई और चीज मनुष्य का उद्देश्य कैसे बन सकती है। यदि ऐसा हो तो (Altruism) या परोपकार का आधार ही उड़जायगा और मनुष्य एक सामाजिक या राजनैतिक प्राणी नहीं रहेगा जैसा कि वह सामान्य रीति से माना जाता है और वास्तव में है भी अब उद्देश्य भी आदर्श है क्योंकि किन्हीं भी मनुष्यों को उद्देश्य का निरूपण करने को कहा जाय वह अपने ऊपर दृष्टि डाल कर भी अनुभव करते हैं कि एक निर्विशेष (absolute) उत्तमता है जिस की प्राप्ति मनुष्य का उद्देश्य है, आस्तिक लोग

ऐसी उत्तमता का अवतार ईश्वर को मानते हैं। इसी के विषय में उपनिषद् ने कहा था—

एषु वाऽतिवदति यः सत्येनातिवदति
और

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्यप

उत्तम चीज़ में ग्राह्यांश यही है—

न 'वाऽरेपत्युः कामाय पति प्रियो भवति
आत्मनस्तु कामाय सर्व्वे प्रियं भवति'

वह उत्तमता का आदर्श जो सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, सर्वान्तर्गामी, न्यायकारी, इत्यादि भी हो; जनता के हर समय सामने रहना चाहिये नहीं तो बड़े अनर्थ होंगे जैसे कि होते रहे हैं यह अशुद्ध है कि—

उत्पन्नात्मा बबोधस्य ह्यद्वैतत्वादयो गुणाः
प्रयत्नतो भवन्त्यस्य न तु साधनरूपिणः।

जिस मनुष्य को आत्मा का ज्ञान पैदा हो जाय उसके द्वेषादि सब मैल अपने आप धुल जाते हैं। वह आत्मज्ञान के साधन नहीं, और 'ब्रह्मवेद ब्रह्मैव भवति' से यह अभिप्राय निकालना कि ज्ञान के पश्चात् अनुष्ठान की कोई आवश्यकता नहीं लोक यात्रा की जड़ पर कुलहाड़ा रखना है। वेदान्ती भी भ्रमण के साथ ही मनन और निदिध्यासन भी आवश्यक मानते हैं, शंकर उस अनर्थ को देखते थे जो उनके सिद्धान्त को पराकाष्ठा तक ले जाने का परिणाम बन सकता है इसलिये उन्होंने एक स्थान पर क्रम मुक्ति और कर्म योग माने हैं, स्वयं शंकर का जीवन ही एक पर्याप्त लाल झण्डी है, अन्त में विषयी होजाना और

फिर विष दिये जाकर मरना स्पष्ट इस बात की युक्तियाँ हैं कि एक मनुष्य उत्तमता का आदर्श अपने से व्यतिरिक्त न समझने से कितना अपने उद्देश्य से गिर सकता है, अवंकीर्णियों और योग भ्रष्टों का वर्णन शास्त्रों के अन्दर आना भी हमें काफी भय की सूचना देता है, किसी भी लाभ के लिये यह कुर्बानी बड़ी महंगी है, इस लिये ईश्वर और जीव दो पृथक् २ सत्ताएं माननी पड़ेंगी यदि अत्याचार अनाचार और दुराचार की गहरी खाइयों में न गिरना हो। यह एक practical क्रियात्मक आचार सम्बन्धी ethical प्रश्न है, क्योंकि आखिर भला बनने और भलाई करने का कोई न कोई प्रयोजन होना चाहिये और वह प्रयोजन इस से अच्छा कोई नहीं हो सकता कि हम पवित्रता के पुंज परमात्मा का साक्षात्कार करें, 'पद्मपत्रमिवाग्भसा' इत्यादि दृष्टान्त और उपमाएं जब तक दृष्टान्त और उपमाएं रहती हैं तब तक तो सब कुछ ठीक रहता है, परन्तु ज्यों ही यह अपना पग आगे बढ़ाए, और 'अव्यापारों में व्यापार' करे त्यों ही वह मनुष्य को वांचो युक्तियों या तर्काभासों fallacies में गिराती है ॥

हम समझते हैं कि हम ने ईश्वर और जीव के भेद को क्या सिद्धान्त और युक्तियों की दृष्टि से और क्या उपयोगिता और प्रमाणों के विचार से काफी दर्शा दिया है, अब हम दूसरे भेद को लेते हैं। ईश्वर और प्रकृति भी परस्पर भिन्न होने चाहियें। इस में तो कोई सन्देह ही नहीं हो सकता कि प्रकृति एक अन्य शक्ति

का नाम है जो मृत्युत्पत्ति की उत्तरदात्री है। इस शक्ति के तीन अवयव शास्त्रों में कहे हैं, तद्यथा:—सत्य गुण, रजोगुण, तमोगुण। यह गुण अन्य लोक प्रसिद्ध गुणों से भिन्न हैं, इन की ही साम्यावस्था का नाम सब दर्शनों में प्रकृति स्वीकार किया है, यह स्वीकृति उन स्वीकृतियों postulates में से एक है जो सारे दर्शनों में तफसील का भेद होते हुए भी सबका मौलिक fundamental ऐक्य बनाती है, जीवात्मा और परमात्मा दो अन्य सत्ताएं factors सृष्टि की उत्पत्ति में माननी पड़ेंगी। परमात्मा एक प्रकार के साक्षी कारण या सामान्य साधारण कारण रहेंगे, और अनेक जीवात्मा मुख्य सृष्टि को छोड़कर निमित्त कारण बनेंगे, मुख्य सृष्टि में परमात्मा ही निमित्त कारण हैं। अब यहां यह देखना चाहिये कि जैसे यह ठीक है (शंकर के शब्दों में) अचेतन में अन्वय व्यतिरेक से चेतन के अधिष्ठातृत्व के बिना कोई प्रवृत्ति नहीं हो सकती और अन्धपंगु न्याय से आत्मा और प्रकृति दोनों मिलकर सृष्ट्युत्पत्तिरूपी महान् काम संपादन कर सकते हैं वहां यह भी मानना पड़ेगा कि प्रकृति की पृथक् सत्ता भी आवश्यक्रीय है नहीं तो जो गुण चेतनत्व आत्मा में है वही कार्य जगत में आना चाहिये परन्तु आता नहीं, शंकर की यह युक्ति कि देव, पितृगण और ऋषि बलाका और मकड़ी जिस प्रकार शरीर के बिना ही सब काम कर लेते हैं, युक्त्याभास है क्योंकि यह दृष्टान्त ही दृष्टान्त है और दृष्टान्त जैसाकि पहले दिखाया

जा चुका है, युक्त्याभासों fallacies में ही हमें छोड़ जाया करते हैं। दूसरी ओर यह ठीक है कि देवताओं को किसी भी कार्य की सिद्धि के लिये शरीरों की अपेक्षा रहती है, मकड़ी की भी जब थूक छोटे २ कीड़े खाकर सख्त होजाती है तो वही थूक तागा बन जाता है, तो बलाकाओं में विजली का शब्द सुनते ही गर्भ की स्थिति हो जाती है, ऐसे ही असाधक उसका गोबर से विच्छू और प्राणधारियों से विलक्षण लोमनखादियों के प्रादुर्भाव वाले दृष्टान्त हैं। यह सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं कि गोबर में भी यदि शुद्धदर्शक यन्त्र से देखा जाए तो कीड़े चलते दिखाई देंगे, इसी प्रकार दही में भी। सच तो यह है कि गाय के शरीर में ही कई प्रकार के कीड़े होते हैं कई उसके दूध में और कई उसके गोबर में निकलते हैं। ऐसे ही कीड़े हमारे शरीरमें भी हैं। न ही कुछ दूसरे दृष्टान्त के विषय में कहना आवश्यक है, क्योंकि यह स्पष्ट है कि शरीर की उत्पत्ति एक भाव है, उस भाव के यास्क द्वारा गिनाए हुए ६ विकारों में से दो विकार बढ़ना तथा घटना है। जब पहले २ लोमनखादि उत्पन्न होते हैं, तब वह शरीर के दूसरे अङ्गों की तरह और साथ उत्पन्न होजाते हैं। वास्तव में तो यह सारी युक्तिशृंखला ही व्यर्थ है क्योंकि शंकर मायावाद को मानता जगत् का उपादान कारण है तब ब्रह्म को उपादान कारण मानना निरर्थक है, और यदि ब्रह्म उपादान कारण हो तो माया की कल्पना नाक को पीछे से हाथ लगाना है। माया अचे-

तन है ही इस युक्ति के बल को स्वीकार करके हुए पीछे के वेदान्ती माया और प्रकृति के अनर्थान्तर अर्थात् पर्याय वाचक interchangeable मानते हैं, इस प्रकार नवीन वेदान्त की समीक्षा द्वारा हम ने यत्न किया है कि ईश्वर जीव और प्रकृति के परस्परभेद पृथक्त्व और उनके परिणाम अनादित्व को सिद्ध करें, प्रायः ये युक्तियां थोड़ा बहुत सब सुइम्मदीय, ईश्वर आदि मतों के वादों के खण्डन के लिये प्यारी होंगी, और यहां वैदिक त्रिक ही नवीन पाश्चात्य वैज्ञानिकों को (appeal) अपील कर सकता है और सृष्ट्युत्पत्ति की सब प्रकार की अनास्मिकता को स्थिर रख सकता है ॥

❀ उषा का आगमन ❀

(१)

खबर दिन के आने की मैं लारही हूँ,
उजाला जमाने में फैला रही हूँ।
बहार अपनी मशरिक से दिखला रही हूँ।
पुकारे गले साफ़ चिल्ला रही हूँ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ १ ॥

(२)

मैं सब कार व्यवहार के साथ आई,
मैं रफ्तारो गुफ्तार के साथ आई।
मैं बाजों की झङ्कार के साथ आई,
मैं चिड़ियों की चहकार के साथ आई।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ २ ॥

(३)

यह चिड़ियां जो पेड़ों पिह हैं गुल मचाती,
इधर से उधर उड़के हैं आती जाती ।
दिलों को हिलाती परों को फुलाती,
मिरी आमद आमद के हैं गीत गाती ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ३ ॥

(४)

जो तोते ने वागों में टें टें मचाई,
तो बुलबुल भी गुलशन में है चहचहाई ।
और ऊँची मुँडेरों पिह शामा भी गाई,
मैं सौ सौ तरह दे रही हूँ दुहाई ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ४ ॥

(५)

हरइक वाग को मैं ने महकादिया है,
नसीम और सब को भी लहकादिया है ।
चमन सुख फूलों से दहका दिया है,
मगर नौद ने तुम को बहका दिया है ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ५ ॥

(६)

हुई मुझ से रौनक पहाड़ और वन में,
हरइक मुलक में देस में और वतन में ।
खिलाती हुई फूल आई चमन में,
बुझाती चली शामा को अज्जुमन में ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ६ ॥

(७)

जो इस वक्त जङ्गल की वूटी जड़ी है,
सो बुह हार मोती का पट्टे खड़ी है ।
कि पिछले की ठण्डक से शयनम पड़ी है,
अजब यह समां है अजब यह घड़ी है ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ७ ॥

(८)

मैं तारों की छां आन पटुंची यहां तक,
जमी से है जलवा मिरा आसमां तक ।
मुझे पाओंगे देखते हो जहां तक,
करोगे भला काहिली तुम कहां तक ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ८ ॥

(९)

पुजारी का मन्दिर के मैं ने जगाया,
मुअज्जन को मसजिद के मैं ने उठाया ।
भटकते मुसाफिर को रस्ता बताया,
अन्धेरा घटाया उजाला बढ़ाया ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ९ ॥

(१०)

लदे काफिलों के भी मंजिल से डेरे,
किसानों के हल चल पड़े मुंह अन्धेरे ।
चले जाल कन्धे पिह लेकर मछरे,
दलिदर हुए दूर आने से मेरे ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ १० ॥

(११)

बिगुल और तम्बूर संख और नावत,
बजाने लगे अपनी अपनी सभी गत ।
चली तोप भी दिन से हज़रत सलामत,
नहीं खूब गुफ़लत नहीं खूब गुफ़लत ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ ११ ॥

(१२)

लो हुशियार हो जाओ और आंख खोलो,
नलो करवटें और न बिस्तर टटोलो ।
खुदा को करो याद और मुंह से बोलो,
वस अब खैर से उठके मुंह हाथ धोलो ।
उठो सोने वालो कि मैं आरही हूँ ॥ १२ ॥

एक उर्दू पुस्तक से उद्धृत ।

“प्रताप आदित्य”

(अनुवादक—पं० कृष्ण चन्द्र प्रभाकर)

द्वितीय काण्ड ।



शङ्कर चक्रवर्ती कोई धनाढ्य पुरुष अथवा बड़ा जमींदार तो नहीं था परन्तु विद्वान् अवश्य था । देश भक्ति और सर्व साधारण का हित उस के विचारों से ही टपकता है । और यही कारण था कि

गांव का जो मनुष्य जब कभी विपद्ग्रस्त होता प्रतिकार के लिए सीधा इसके पास आता । यह भी यथाशक्ति उसकी सहायता करता था । इससे गांव के लोग इस पर मुग्ध हो रहे थे । पांच चार मनुष्य जो कुछ पढ़े लिखे थे वे तो उसे गुरु ही समझते थे । एक प्रकार से यह था भी उनका गुरु, क्योंकि देश भक्ति का भाव इसी महापुरुष की कृपा से उन में उत्पन्न हुआ था । उन में से एक का नाम सूर्यकान्त था, जिसका वर्णन ऊपर हो चुका है । शङ्कर महाराज अभी विचारों में लीन बैठे थे कि सूर्यकान्त आपहुंचा । शंकर ने जैसूर जाने का विचार प्रकट करके कहा कि भाई, मेरी स्त्री का ध्यान रखना, और जहां तक होसके दीन प्रजा की सहायता करना । मैं आशीर्वाद देता हूं कि सर्व शक्तिमान तुम्हारे सहायक हों ।

यह कहकर अपनी स्त्री के पास आया और सब हाल सुनाकर कहा :—

शंकर—अच्छा, परविवशी !

कल्याणी (शंकर की स्त्री का नाम)—
(वात काट कर) आज परविवशी क्यों ? पहले की तरह कल्याणी वालो । इतना और न दुःखाओ, भय आता है ।

शंकर—कल्याणी ! मैं कैसे इन लोगों के लिए देश छोड़ सकता हूं, मेरे हाथ पांव तो शृङ्खलाबद्ध :—

कल्याणी—तो क्या ? शृङ्खला तोड़ डालो ।

शंकर—फिर !

कल्याणी—फिर क्या ! जहां जाने का निश्चय किया है । मनुष्य बनो और देश को सुधारो । एक ओर मैं अकेली और दूसरी ओर देश के लाखों अनाथ । मुझको क्या इतना ही पागल समझा है कि ऐसे शुभ कार्य में आप की गतिरोध करूं । कदाचित नहीं, कदाचित नहीं । प्राण नाथ ! इस दासी की कुछ चिन्ता न करो । सृष्टि कर्ता पुरुष को स्त्री के पास बैठे रहने के लिए नहीं उत्पन्न करता । दुःखिया मातृ भूमि की सेवा सब का पहला कर्तव्य है ॥

शंकर—हां, निश्चय तो अभी का है । परन्तु मैं एक निर्धन ब्राह्मण, कर सकूंगा क्या ।

कल्याणी—तो सच मुच ही कुछ न कर सकोगे । रोते जाएं और मुद्दों की खबर लाएं । क्यों नहीं कर सकोगे, करना ही होगा । श्री रामचन्द्र महाराज धनुष तोड़ कर और परशु राम को पराजय करके अत्यन्त कष्ट से जानकी रत्न लाभ करें, और प्रजा के लिए उस प्राण-श्वरी को वनवास दे सकें । और आप रण कुलीश, बिना जाने सुने पाई हुई दासी का अपने ही घर छोड़कर नहीं जा सकते । बाहरे

वीरता ! यदि जाने की इच्छा है तो विलम्ब क्या है । माता काली आपकी सहायता करें ॥

शंकर—निस्सन्देह, जब भारत नारियों के हृदय आज भी ऐसे उच्च हैं तो मेरी सफलता में क्या सन्देह होसकता है ॥

यह कह कर घर से विदा हुआ, और महमूद प्रभृति को साथ लेकर जैसूर का मार्ग लिया ॥

तृतीया काण्ड

जिस समय का हम वर्णन करते हैं उस वक्त बङ्गाल में बारह बड़े जमींदार थे । प्रत्येक को भोटियां बोलते थे । बादशाह को कर दे छोड़ने के अतिरिक्त शेष सब प्रकार से यह लोग अपने प्रान्त में स्वाधीन थे । इन में से एक जैसूर पति विक्रमादित्य नामक था, जो अपने चचेरे भाई वसन्त राय की सहायता से राज्य का शासन पोषण करता था । वसन्तराय एक बड़ा बुद्धिमान और अच्छा नियामक था । जैसूर नगर को इसीने सुन्दरवनमें बसाया था ॥

चूंकि इन दिनों सुन्दर वन बङ्गाल और पुर्तगैजों के वाणिज्य का केन्द्र था इसलिए जैसूर की आर्थिक अवस्था भी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगी । पर पुष्प के नीचे कण्टक भी रहता है । जैसूर को जहां वाणिज्य सम्बंधी केन्द्र होने का लाभ था वहां पुर्तगैज समुद्री डाकूओं का भी खटका लगा रहता था, जिनके अत्याचार से समुद्र के तट का प्रान्त तंग आ गया था ॥

राना विक्रमादित्य एक दिन प्रातःकाल बैठक खाने में बैठा था । वसन्तराय से इधर उधर की बातें करते हुए पूछा ॥

विक्रमादित्य—अरे वसन्त ! कर का रुपया आगरे भेज दिया तो ?

वसन्तराय—न भेजने से क्या अब निश्चिन्त होकर आपके पास बैठा रहता ॥

विक्रमादित्य—ठीक, यही भला काम है । राजकीय कर पहले खजाने में भेजदो, फिर जो जी चाहे करो । शौक का काम ही बताओ, या देवाचन ही कहो । दुर्गा स्तोत्र, धाद शान्ति, क्रिया कलाप यह सब पीछे के काम हैं । जमींदारी होगी तब ही तो यह सब होंगे ॥

वसन्त राय—सत्य कथा, और इस पर चारों ओर शत्रु ।

विक्रमादित्य—और चारों ओर शत्रु । तुम्हारा यह सोने का राज्य देखकर बहुतों के मुंह में पानी भर भर आता है ॥

वसन्त राय—परन्तु कुढ़ते रहने से कोई क्या कर सकता है ?

विक्रमादित्य—बस बस, कुढ़ते रहने से किसको भय । तुम तो आप ही बुद्धिमान हो, तुम्हें समझाऊं क्या । दाऊद खां के साथ साथ बहुतों का सर्वनाश होगया । परन्तु बाप दादा के पुण्य बल से हमने क्षति की जगह लाभ उठाया । आज हम बारह भोटियों के एक भोटियां हैं । यह राज्य जिस से बना रहे उसी की चेष्टा करो । किन्तु कब तक ? जब तक तुम और मैं—उतने दिन-छोकरे मृत्यु प्रकृति से नवाब से क्या मिल जुल सकेंगे ? और मेरा

लड़का तो जैसा अद्भुत प्रकृति है उस पर तो जरा भी भरोसा नहीं होता ।

वसन्त राय—यह आप क्या कहते हैं महाराज ! प्रताप को अद्भुत प्रकृति आपने कब देखा ?

विक्रमादित्य—ना, ना, अबतक देखा नहीं नहीं, अबतक देखा.....नहीं । कुछ..... चंचल.....

वसन्त राय—चञ्चल या शान्त ?

विक्रमादित्य—हां, हां, अभी शान्त ही देखा जाता है ।

वसन्त राय—चञ्चल हैं तो मेरे लड़के, विश्वास नहीं है तो उनका, प्रताप चञ्चल ! ऐसा लड़का तो बत्ती लेकर टूटने से भी पृथिवी पर नहीं मिलेगी ।

विक्रमादित्य—हां, हां, नहीं मिलेगा, परन्तु परन्तु जितना कहते हो यदि उतना ठीक समझे हो वसन्त, तुम जो एक दम बाबाजी को..... समझे हो भाई ।

वसन्त राय—आप क्या प्रताप का सन्देह करते हैं ?

विक्रमादित्य—हां, हां, एक दम जो सन्देह हां, हां,..... परन्तु.....

वसन्त राय—क्यों दादा ? आप प्रताप पर इतना सन्देह क्यों करते हैं ? इस राज्य की मान मर्यादा का यदि कोई रक्षा करने वाला है तो एक प्रताप ।

विक्रमादित्य—अच्छा, अच्छा, यह बात ही जाने दो, यह बात ही जाने दो । दुर्गा दुर्गम होय ! दुर्गा दुःख हर ! यह बात ही जाने दो ।

विक्रम पुर बाकला से जो ब्राह्मण और कायस्थ लाने को कहते थे उनका क्या किया है ?

वसन्त राय—उनके लान को आदमी भेजा है ।

विक्रमादित्य—वेश, वेश, गोविन्द देव विग्रह प्रतिष्ठा के साथ साथ ही जैसूर में ब्राह्मणों और कायस्थों की प्रतिष्ठा भी करो। वस ऐसा होने से ही ठीक होगा । देवता ब्राह्मण ! कुटुम्ब नारायण मंगाओ, प्रतिष्ठा करो, तब ही मङ्गल है, दुर्गा दुर्गम होय ! अच्छा भाई, प्रातः क्रतु करो ।

वसन्त राय—अच्छा, आप इनका निवास स्थान निर्देश करें ।

विक्रमादित्य—अच्छा दोनों परामर्श करके जो कर्तव्य होगा वह करेंगे ॥

वसन्त राय 'जो आज्ञा' कहकर विदा हुआ ॥

विक्रमादित्य—(अपने आप से) ऐसा भाई पूर्व जन्म के पुण्य से ही प्राप्त होता है किन्तु पुत्र से भीष्म भय आता है । प्रताप की जन्म कुण्डली का जैसा फल सुना है, दुर्गा ! दुर्गा ! जब जन्म कुण्डली बोलती है कि प्रताप पितृ द्रोही होगा तो इस में सन्देह ही क्या सकता है । छोड़, छोड़ । सोच करने से क्या होगा ! विवाता ने जो कुछ उसके मस्तक पर लिखा है झांवर से रगड़ने से भी नहीं मिटेगा । दुर्गा दुर्गम होय ! परन्तु.....परन्तु जान बूझकर पितृ द्रोही सन्तान को रखना फाले नाग को दूध से पालना है । दुर्गा ! वसन्त को तो यह बतला ही नहीं सका । परन्तु बतलाने से क्या

होगा वह तो मानेगा ही नहीं..... छोड़, तारा शिव सुन्दरी ! सोच विचार से क्या होगा। काली काल भय वारिणी माता हां एक सुभीता है। वसन्त है परम वैष्णव। स्वयम् वैष्णव चूड़ामणि गोविन्द दास इसका सहायक। छोकरे को भी मैं ने कुशल से उसके दल में धकेल दिया। अब चौबीस घण्टे तुलसी की माला गले में रखता है। काम तो बहुत कुछ ठीक होगया है अब एक बार निर्रेट वैष्णव होने से ही मैं निश्चिन्त..... भवानन्द !

भवानन्द—महाराज !

विक्रमादित्य—देखो तो प्रताप क्या करता है।

भवानन्द—महाराज वह तुलसी तले माला फेरते हैं।

विक्रमादित्य—वेश, वेश ! अच्छा भवानन्द ? तुम्हारे विचार में प्रताप कैसा भक्त है।

भवानन्द—उनकी भक्ति का क्या कहना है महाराज ! हाथ की माला फेरते न फेरते ही दोनों आंखों से झर झर जलधारा मानो इच्छामती नदी में ज्वार आया है। आप विश्वास नहीं करेंगे, वह तो बाबा गोविन्द दास से भी बड़े हुये हैं।

विक्रमादित्य—अरे ! ना, ना। अच्छा, अच्छा, बाबा गोविन्द दास को हमारे पास बुला लाओ तो ॥

भवानन्द चला गया।

विक्रमादित्य—उत्तम हुआ। तुलसी तले जब बैठने लगा तो और क्या चिन्ता, दुर्गा दुर्गम होय ! दुर्गा दुःख हरे ! प्रताप को बुलाकर

बाबाजी के दो एक भजन सुनाकर रंग पर रसायन चढ़ादूं। अरे कोई है ?

द्वारपाल—महाराज !

विक्रमादित्य—राजकुमार को हमारे पास भेजो।

प्रिय पाठक ! विक्रमादित्य ऐसा पागल न था कि वैष्णव धर्म को बुरा समझता। हां वह इतना अवश्य जानता था कि सर्व साधारण पर, जिन का इतना उच्च भाव नहीं हुआ कि इस श्रेष्ठ धर्म के कार्य क्षेत्र में पूरे उतर सकें, इसका कैसा बुरा प्रभाव बढ़ता है। कोई प्रेम प्रेम सुनकर कामार्थीन हो जाता है। कोई अहिंसा रटता हुआ मानसिक शक्ति को खो बैठता है। इसी लिए विक्रमादित्य चाहता था कि इसका लड़का वैष्णव मत में आकर दुर्बल चित्त हो जाये ॥

थोड़ी देर के बाद बाबा गोविन्द दास आए और वही प्रेम और अहिंसा के भजन आरम्भ कर दिए।

विक्रमादित्य—बार बार बाह, बाह, बोलता था, परन्तु ध्यान प्रताप में लगा हुआ था। ठाट ! एक वाणविध बाज़ सामने आकर गिरा।

गोविन्द दास—हा गोविन्द, हा गोविन्द, यह क्या किया ?

विक्रमादित्य—अरे ! यह क्या रे, यह क्या रे ? यह जीव हत्या किसने की ही है ? दुदाई बाबा जी जाइयो न।

बाबा गोविन्द दास—क्षमा कीजिए महाराज। अधीन और यहां नहीं ठहर सकता। जहां जीव हत्या हो वैष्णव का वहां रहना उचित नहीं ॥

इतना कहकर बाबाजी चलते बने ।

विक्रमादित्य—अरे यह जांव हत्या किस ने करी ।

(प्रताप को आता हुआ देखकर) प्रताप ! यह क्या ? प्रताप ! यह अकारण प्राणहत्या किसने की ? निर्जन बैठकर निश्चिन्त मन भगवान का नाम सुनता था । यह बाधा किसने डाला प्रताप ?

प्रताप—क्षमा कीजिए महाराज । मैंने इस को मारा है ।

विक्रमादित्य—नहीं नहीं ! तुम यह काम काहे करोगे । अभी तो सुना तुम तुलसी मञ्च में बैठे हरि नाम का जप करते थे । तुम ऐसा निष्ठुर कार्य क्यों करने लगे ।

प्रताप—थोड़ा समय जप में नियुक्त होकर समझा कि मैं हरि नाम का जप करने के योग्य नहीं । असंख्य प्रजा शासन के लिए दो दिन बाद जिसे राज दण्ड हाथ में लेना होगा । पर-राज्य लोलुप दुर्दान्त मुगल के सताय आश्रय भिखारी दुबलों की रक्षा करने के लिए बात बात पर अस्त्र धारण करने होंगे अहिंसामय वैष्णव धर्म इसके लिए नहीं है । शक्ति अभिमानी जैसूर राजकुमार एक मात्र अवलम्बन, महाशक्ति का आश्रय भिखारी है । इसके पास कर्तव्यानुरोध जीवहिंसा इस की मन सन्तुष्टि के लिए अञ्जलि पूर्ण शत्रु शोण से महाकाली का तर्पण । पिता ! जब ही मैंने इस लहू के प्यासे बाज को शराघात से संहार किया है ॥

“मिथ्या कहा, मिथ्या कहा, यह काम मैंने किया है” यह शब्द बाहर से किसी ने किया और बोलते न बोलते ही महाराज के सामने जा खड़ा हुआ ॥

पाठक ! आपने पहचान लिया होगया कि यह वही हमारे पुराने परिचित शंकर महाराज हैं । जो अपनी पहली वर्दी जनेऊ और धोती पहने हुए हैं ॥

विक्रमादित्य—वही तो कहता हूँ, प्रताप का यह काम नहीं । ब्राह्मण की मर्यादा की रक्षा के लिए अपने ऊपर दोष लेता है । अभी अभी तो सुना है कि तुम परम वैष्णव हो गये हो । तुम ऐसा काम क्यों करने लगे ॥

प्रताप—पिता ! मेरे ही शराघात से इस पक्षी का हनन हुआ है । इस ब्राह्मण को तो इस से पहले मैंने कभी देखा ही नहीं ॥

शंकर—न महाराज ! यह पक्षी मेरे शराघात से निहत हुआ है ॥

प्रताप—सावधान ब्राह्मण ! राजा के सामने झूठ न बोलो ॥

शंकर—सावधान राजकुमार ! वैष्णव धर्म परित्याग करके महाशक्ति की शरण लेते हुए झूठ का आश्रय न ग्रहण करो । यह काम मैंने किया है ॥

प्रताप—मिथ्या कहा । मैंने किया है ।

शंकर—बात बतण्डा से प्रयोजन नहीं । सामने ही पक्षी पड़ा है । परीक्षा कीजिए । अभी देखा जायगा, किसके शराघात से यह पक्षी निहत हुआ है । किन्तु राजकुमार ! परीक्षा से पहले एक प्रतिज्ञा करो । यदि तुम्हारे

बाण से यह पक्षी निहत हुआ है, तो ब्राह्मण होते भी मैं कायस्थ। कल तलक विक्रमादित्य नन्दन का दासत्व स्वीकार करूंगा। और यदि मेरे हाथ से यह काम साधित हुआ हो तो प्रतिश्रुत हो राजकुमार! तुम्हें अवनत मस्तक इस ब्राह्मण का दास बनना होगा ॥

प्रताप—वेश, प्रतिष्ठा करता हूं, परन्तु ठाकुर! परीक्षा की मीमांसा होगी कैसे!

शङ्कर—तुम ने कौन स्थान लक्ष्य करके तार छोड़ा?

प्रताप—मैंने पक्षी का पंख बेध दिया है।

शङ्कर—मैंने मस्तक चूर्ण किया है ॥

“और मैंने हृदय बेध दिया है”

यह शब्द सुनकर सब चौंक उठे और पीछे मुड़कर देखा कि एक स्त्री लाल वस्त्र पहने, गले में जवा कुसुम की टाल माला, सींधूर का टीका, दोनों आंखें लाल, मानो दो अङ्गारे जल रहे हैं, हाथ में त्रिशूल, कंधे पर धनुष धरे खड़ी है। माथे की ज्योति: ऐसी है कि दृष्टि नहीं टिकती। हाथ पांव सडौल, अति सुन्दर, परन्तु ईश्वर जाने इस सौन्दर्य में क्या भरा है कि देखते ही ‘माता’ बोलकर भक्ति करने की इच्छा होती है ॥

सबके सब उसकी ओर तकते ही रह गये, और सारे घर में एक चुप सी छा गई। इस देवी ने जिसका नाम “विजोया” था फिर अपने वक्तव्य को दुहराया।

विजोया—और मैंने हृदय बेध दिया है।

विक्रमादित्य—(जैसे सोता हुआ चौंक उठता है) यह क्या! यह क्या अपूर्व मूर्ति!

स्वप्न, स्वप्न? तुम कौन हो? यह सब क्या, प्रताप!

प्रताप—वही तो, यह क्या अपूर्व मूर्ति, कुछ तो नहीं जानता महाराज। यह प्रदीप्त अनलोललास, यह मत्त मातङ्ग लाञ्छन पादाक्षेप, यह अपूर्व रणोन्मादन वेश, और तो कभी नहीं देखा महाराज! तुम कौन हो माता? कहां से आई हो? क्यों आई हो?

शङ्कर—यथार्थ ही आ गई माता! तो क्या इस दुर्बल पीढ़ी, दर्शन कातर, सहस्रधा भिन्न अन्तर दरद्वि ब्राह्मण की शोक ध्वनि तुम्हारे कानों तक पहुंच गई माता!

विजोया—(मृत पक्षी को उठाकर) यह देखो शंकर! पक्षी का मस्तक अलग। यह देखो प्रताप! पंख छलनी। और यह देखो महाराज! पक्षी के हृदय में कैसा गम्भीर शराघात है। परन्तु हे ब्राह्मण! क्या तुम से पूछ सकती हूं तुमने क्यों इस पक्षी पर अस्त्राक्षेप किया?

शंकर—बङ्गाली ब्राह्मण के चिर दुर्बल हाथ की परीक्षा के लिए।

प्रताप—और माता! और मैंने देखा कि भारत वर्ष के सीमान्त प्रदेश की वन भूमि के एक खण्डर नगर से चलाया हुआ बाण कभी किसी काल में आगरे के सिंहासन तक पहुंच सकता है या नहीं ॥

विजोया—और मैंने देखा महाराज का कचहरी पर सैकड़ों तोते बड़े आनन्द से उड़ रहे हैं। इनके इस रंग में भंग डालने के लिए

एक भीषण मांसाहारी पक्षी ताक लगाए
आकाश में मण्डला रहा है ।

महाराज ! बीस वर्ष पहले एक आनन्द
भरा घराना मुसलमानों के हाथ से क्षार क्षार
हुआ था जिस के फल से यह ब्राह्मण कन्या
शैशव बाल से भीषणारण्य वासिनी कुमारी
बनी कपालिनी कल्पन से इसकी भक्ति जाग उठी।
प्रतिशोध वासना से कम्पित हाथ से अपने
आप एक तीर छूट गया, और पक्षी का हृदय
विध हुआ । यह लो प्रताप ! यह लो पक्षी, यह
त्रिधा विभिन्न विहङ्गम तुम्हारी विजय का
चिन्ह है ॥

यह कहकर भैरवी वहां से बात की बात
में चली गई ॥

शंकर—राजकुमार ! यह प्रतिज्ञाबद्ध
ब्राह्मण आज से तुम्हारा चाकर ।

प्रताप—ब्राह्मण ! यह प्रतिज्ञाबद्ध प्रताप
आज से तुम्हारा दासानुदास ॥

यह कहकर दोनों गले मिले और चले गये ।

विक्रमादित्य—(चिल्लाकर) अरे ! अरे !

कौन कहां रे ! ओ वसन्तू, ओ वसन्तू, कहां रे,
क्या हीगया रे । हाय हे, हे हे ॥

(क्रमशः)

मनोरञ्जक-अन्योक्ति-आनन्द ।

(कुण्डलिया)

(१)

(अप-व्यय)

भारत ! हा ! तेरा हुआ शशि सा वदन उदास
राहु प्रास रूपी बड़ा, तुझ में व्यर्थ-विलास ।

तुझ में व्यर्थ-विलास, इसी ने त्रास दिखाया
खींच खींच धन आंख मींच परदेश पठाया
भूल भगे 'रसिकेन्द्र' नर-तभी ठगे सत्र ठौर
“उतना पैर पसारि जितनी लम्बी सौर” * ।

(२)

(उपदेश)

बड़े भाग्य से आप को, नर तन मिला पवित्र ;
देश भलाई कीजिये, तजकर आलस मित्र ।

तजकर आलस मित्र ! फूट को कूट भगाओ

प्रेम भाव को भरो क्षेम से प्रभु गुण गाओ

समय बीत यों जायगा, ज्यों पथपर का तोय

“चार दिवस की चांदनी फिर अधियारी होय”

(३)

(मत-विवाद)

बहुत बढ़ रहे देश में, मतवादी सब ठेर
हुई इसी से हिन्द की, दशा और की और ।

दशा और की और, कलह ने रंग जमाया
अपनी-अपनी कहें न्याय को दूर हटाया ।

* सौर=रलाई, अर्थात् उतना पैर पसारना जितना

जितना कपड़ा हो ।

† तोय=जल, अर्थात् जैसे रस्ते का जल

सूख जाता है इसी तरह समय भी बीत जायगा

क्या होगा “रसिकेन्द्र” यों करिये मित्र विचार ।
“भेड़ पूंछ भादों नदी को गह उतरा पार ॥

(४)

(श्लोक)

भद्रं कृतं कृतं मोनं, कोकिलै-जलदागमैः ।

ददुर्बुरं यत्र वक्तारं, तत्र मोनेहि शोभनम् ॥

(अनुवाद) उपजाति छन्द

भला किया कोकिलने अवश्यः—

मेघागमे जो मुख मृदु वैठी ।

क्योंकि जहां दाबुर बोलते हैं—

सो है वहां कोकिल मौन ही में ॥

(५)

पूति = (श्रीनिवामः)—मन्दा क्रान्ता छन्द ।

सीखो विद्या, अगुण तज के, ऐक्यता को बढ़ाओ ।

वैज्ञानी हो कृपि नियम भी ध्यान में खूब लाओ ॥

उद्योगी हो, परिकर-कसो, हो कभी ना-हताशः ।

तो हांवेगा निधन गृह में आप ही “श्रीनिवास” ॥

द्वारिका प्रसाद गुप्त (रसिकेन्द्र)

कृष्टोदास पाल

(लेखक—अध्यापक बनारसी-दास चतुर्वेदी)

विद्या विलासमनसो धृतशील शिक्षाः ।

सत्यव्रता रहितमान मलाप हारा ॥

संसार दुःख दलनेन सुभूषिता ये ।

धन्या नरा विहित कर्म परोपकाराः ॥



हात्माओं और महापुरुषों के जीवन सर्वदा पठनीय होते हैं । जिन-पुरुषों की आयु अधिकतर समाज सेवा, साहित्य सेवा अथवा अन्य परोपकार के कार्यों में व्यतीत

हुई हो, उनके जीवन से हमें अनेक शिक्षाएँ मिल सकती हैं । हमारे चरितनायक “कृष्टोदास पाल” भी एक ऐसे ही मनुष्य थे, अतएव पाठकों के मनोरञ्जनार्थ उनके जीवन के विषय में कुछ लिखना अनुचित न होगा ॥

कृष्टोदास पाल का जन्म सन् १८३८ ईस्वी में एक निधन तेली के वंश में हुआ था । नीच कुल में उत्पन्न होना कोई लज्जा की बात नहीं है । संसार के अनेक महापुरुष नीच कुल में उत्पन्न हुए थे, लेकिन एक नीच कुलोत्पन्न मनुष्य को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है; विशेषतया भारतवर्ष में तो जहाँ की नीच जातियाँ इतनी पतितवस्था में हैं, एक कुल के मनुष्य के मार्ग में अनेक बाधाएँ आ पड़ती हैं । यदि उन बाधाओं को दूर करता हुआ कोई आदमी उन्नति करते २ देश का नेता तक बन जावे, तो उसके पुरुषार्थ और पराक्रम की जितनी भी प्रशंसा की जावे थोड़ी है । १० वर्ष की उम्र तक कृष्टोदास पाल एक बङ्गाली स्कूल में पढ़ते रहे । सन् १८४८ ईस्वी में उन्होंने अंग्रेजी पढ़ना प्रारम्भ किया । सन् १८५३ ईस्वी में उन्होंने स्कूल छोड़ दिया, और कुछ दिनों तक एक ईसाई से पढ़ते रहे ।

तदनन्तर वे कलकत्ता की Literary Free Debating Club के सभासद बन गये। इस क्लब में प्रातःकाल के समय वे पादरी मोरमन साहब और डाक्टर स्मिथ साहब से थोड़ी बहुत अंग्रेजी पढ़ा करते थे। इस क्लब के व्याख्यानों को कृष्णोदास बड़े चाव के साथ सुना करते थे। वे प्रातःकाल ४ बजे उठकर अपने मित्रों को लेते हुए व्याख्यानों को सुनने के लिये वहां जाया करते थे। कुछ दिनों तक वे मैट्रोपोलिटन कालेज में भी पढ़ते रहे। सन् १८५७ ईस्वी में १९ वर्ष की आयु में उन्हें पढ़ना लिखना छोड़ देना पड़ा ॥

विद्यार्थी जीवन में कृष्णोदास पाल को राज नीति सम्बन्धी बातों से बहुत प्रेम था। सभा में प्रायः व्याख्यान देने और तर्क व विवाद करने से उनकी वक्तृत्व शक्ति भी बहुत बढ़ गई थी। वाल्यावस्था से ही उनका मन समाचारपत्रों के पढ़ने में बहुत लगता था। वे प्रायः हिन्दू पैट्रियट नामक पत्र पढ़ा करते थे। एक बार अपने एक मित्र का लेख उपरोक्त पत्र में छपा देखकर कृष्णोदास पाल के मन में भी यही आकांक्षा उत्पन्न हुई कि मैं भी लेख लिखूँ। किम्बहुना एक लेख लिखकर उन्होंने हरिश्चन्द्र मुकर्जी, सम्पादक हिन्दू पैट्रियट, के पास भेज दिया। हरिश्चन्द्र मुकर्जी ने शुद्ध करके उसे छपवा दिया। फिर क्या था। कृष्णोदास पाल का उत्साह और भी बढ़ गया। किसी पुस्तकालय में जाकर चार पांच घण्टे पुस्तकें पढ़ना और शेष समय को लेखों के लिखने में व्यतीत करना बस वही उन का काम था। इस कार्य में

उन्होंने इतनी उन्नति की कि बङ्गाल के सभी प्रसिद्ध २ पत्रों में उनके लेख निकलने लगे। लेकिन हिन्दू पैट्रियट से अधिक सम्बन्ध होने के कारण विशेष कर उनके लेख उसी में निकलते थे ॥

सन् १८६० ईस्वी में हिन्दू पैट्रियट के सम्पादक की मृत्यु होगई। इसके बाद एक वर्ष तक इस पत्र का सम्पादक कई विद्वान् पुरुषों ने किया। सन् १८६१ ईस्वी में यह काम कृष्णोदास को सौंपा गया। सम्पादन कार्य हँसी खेल नहीं है, बड़ी टेढ़ी खीर है, इस के लिये पूर्ण योग्यता और निरन्तर परिश्रम की आवश्यकता है ॥

कृष्णोदास ने जिस योग्यता के साथ अपना कार्य किया वह शत मुख से प्रशंसनीय है। आगे चलकर वे बङ्गाल में पत्र सम्पादन कला के आदि-आचार्य गिने जाने लगे थे। कृष्णोदास के जीवन का उद्देश यही था कि मैं मनुष्य बनूँ और अपने देश की सेवा कर सकूँ, इस उद्देश की पूर्ति के लिये उन्होंने सम्पादन कार्य ही सर्वोत्तम समझा। उनके बहुत से साथी वकील बन गये थे। और प्रति वर्ष सहस्रों रुपये कमाते थे। यदि कृष्णोदास भी चाहते तो वे भी इसी तरह हजारों रुपये हर साल कमाकर लक्षाधीश बन सकते थे, पर उन्होंने ऐसा करना ठीक नहीं समझा। वे पैसे मनुष्यों के जीवन को व्यर्थ समझते थे, जो दिन रात अपने ही गोरख धन्धों में लगे रहते हैं, और सदा नित्यानवै के फेर में पड़े रहते हैं। हिन्दू पैट्रियट ने कृष्णोदास के हाथ

पहुँच कर आश्चर्यजनक उन्नति की। बड़े २ विद्वान् अंग्रेज भी उसके न्याय पूर्ण और गम्भीर लेखों की प्रशंसा किया करते थे। कहा जाता है कि कृष्णदास ऐसी मुहावरेदार अंग्रेजी बहुत कम भारतवासी लिख सकते थे। इसका कारण यही था कि उन्होंने किताबों की कुँजियाँ और नोट्स नहीं रटे थे, जैसे आज कल रटे जाते हैं। उनका उच्चारण इनना शुद्ध था, और उन की वक्तृत्व शक्ति इतनी धारा प्रवाह और उच्चकक्षा की थी कि लोग उन्हें भारतवर्ष का एक सर्वोत्कृष्ट वक्ता कहा करते थे। Sir Richard Temple ने कहा था कि जितने भारतीय विद्वानों से मेरा आज तक परिचय हुआ है, उन में सर माधवराव को छोड़कर कोई भी विद्वता में कृष्णदास के समान नहीं। राजनैतिक क्षेत्र में कृष्णदास ने बहुत कुछ काम किया था। सर्व साधारण की सम्मति को उपयोगी बातों की ओर आकर्षित करना और सरकार के कार्यों की समुचित आलोचना करना वस यही उनका काम था। कभी २ तो सरकारी कामों की वे इतनी कड़ी आलोचना कर देते थे कि ऐङ्गलो इण्डियन पत्र उन से बहुत नाराज होजाते थे, पर तब भी सब निष्पक्ष उच्चपदस्थ अंग्रेज कृष्णदास की सम्मति को बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे। सर्व साधारण के अधिकारों की ओर वे बहुत ध्यान रखते थे। अन्याय और पक्षपात से वे कोई बात नहीं लिखते थे। वे बड़े धैर्यवान् थे। बहुत से सम्पादक जोश में आकर कुछ का कुछ लिख जाते हैं, पर हमारे कृष्णदास ऐसे

आदमी नहीं थे। लिखते समय उन का मस्तिष्क कभी विचलित नहीं होता था। उनकी गम्भीरता और विचार शीलता अनुकणीय थी। वे बड़ी सावधानता और नमी के साथ लिखते थे, यही कारण है, कि कुछ लोग ख्याल करते हैं कि कृष्णदास पाल अंग्रेजों की खुशामद करते थे। पर समय समय पर गवर्मेण्ट के कार्यों की उन्होंने जो आलोचना की थी उससे स्पष्टतया प्रगट होता है कि उपरोक्त विचार सर्वथा भ्रममूलक है ॥

समाज सेवा और विद्वता के कारण उनकी ख्याति दिनों दिन बढ़ने लगी। सन् १८६३ ई० में वे चुंगी के कमिश्नर और Justice of Peace बनाये गये। सन् १८७२ ईस्वी में वे बंगाल की व्यवस्थापक सभा के मembre नियत हुए। सन् १८७७ ईस्वी में, जब कि उन्हें राय बहादुर की उपाधि प्रदान की गई थी, उन्होंने हिन्दू पेट्रियट में लिखा था 'हमें यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि हमारा नाम भी राय बहादुरों की सूची में है..... हम नहीं जानते कि हमने कौनसा ऐसा घोर पाप किया था जिसके लिये हमें यह दण्ड दिया गया। निस्सन्देह इन उपाधियों के लिये हमारे हृदय में कोई आकांक्षा नहीं है। वास्तव में हम गवर्मेण्ट के बड़े कृतज्ञ हैं..... पर यदि हमें इस विषय में कहने का अधिकार होता तो हम अपनी दयाशील सरकार से यही कहने कि वह कृपा कर हमें ऐसी बातों से अलग ही रहने देती इत्यादि। इस बात से उनकी स्वतंत्र प्रकृति का कुछ पता लग सकता है ॥

इसके बाद वे बड़े लाट की कौंसिल के सभासद भी चुने गये थे। सन् १८७८ ईस्वी में उन्हें C. I. E की उपाधि दी गई। अब उन्हें केवल हिन्दू पैट्रियट का सम्पादन ही नहीं करना पड़ता था वरन् British Indian Association नामक सभा के कागज़ पत्र भी लिखने पड़ते थे और व्यवस्थापक सभा के लिये भी थोड़ा बहुत काम करना ही पड़ता था। इसपर भी उनसे मिलने वाले दिनरात उन्हें घेरे ही रहते थे कोई उनसे अपनी अर्जी लिखाता था तो कोई किसी अन्य कार्य के लिये प्रार्थना करता था। कृष्णदास इतने मृदु स्वभाव के थे कि किसी को मना नहीं करते थे और यथाशक्ति सब की सहायता के लिये सर्वदा उद्यत रहते थे। परिश्रम करने की उनमें असाधारण शक्ति थी। सुबह तड़के उठते थे और रात को एक या डेढ़ बजे सोते थे। उनके गृहजीवन के विषय में कहा जाता है कि उन्हें आत्मीय जनों से जुड़ा होते समय बहुत कष्ट होता था। जब कभी उन्हें कलकत्ते से बाहर जाना पड़ता था तो वे घर पर यह कहजाते थे, कि हमारे पास नित्यप्रति पत्र भेजा करो! एक बार वे कलकत्ते से दूसरी जगह गये हुए थे, उनके पुत्र की चिट्ठी उनके पास हररोज आया करती थी, एक दिन चिट्ठी नहीं आई। बस फिर क्या था आप सीधे कलकत्ते को चलादिये। वे बड़ी सादगी से रहते थे। अपने से बड़ा का वे सर्वदा आदर सत्कार किया करते थे, नौकरों के ऊपर भी वे बड़ी दया रखते थे। हम ऊपर कह चुके हैं कि उन्हें बहुत परिश्रम करना पड़ता था, यहां तक कि

आरोग्यता की ओर वे बहुतकम ध्यान देसकते थे। इसी कारण सन् १८८४ इसवी में वे बीमार पड़गये। अब उनके अन्तिम दिन निकट थे। २४ जुलाई को भारत वसुन्धरा का यह रत्न इस संसार से विदा होगया। 'मरणं प्रकृतिः शरीरिणाम्' कालिदास का यह वचन सर्वथा सत्य है

प्रार्थना ?

दयामय, तुम्हारी दया चाहते हैं,
न हम सोखशाली हुआ चाहते हैं।
न है चाह जगमें यशस्वी बनें हम,
न परलोक में सम्पदा चाहते हैं।
न राजत्व इन्द्रत्व का लोभ हमको,
विभो हम भिखारी बना चाहते हैं।
न अपने सुकर्मों की है आस कुछभी,
शरण बस तुम्हारी लिया चाहते हैं।
बहुत सहचुके यातनायें जगतकी,
न अब और कुछ भी सहा चाहते हैं।

हंसदास शर्मा,



भारत वर्ष का संक्षिप्त इतिहास

(समालोचना)



तत्कालीन समयमें प्राचीन भारत वर्ष का कोई सच्चा और प्रामाणिक इतिहास विद्यमान नहीं। इस न्यूनता को पूर्ण करने का सब से प्रथम यत्न पश्चिमीय ऐतिहासिकों और पुरातत्त्व वेत्ताओं ने

किया और निस्सन्देह जो खोज और अन्वेषण इस समय तक हुई है वह प्रायः इन्हीं के परिश्रम का फल है। बहुत से पाश्चात्य विद्वानों ने पक्ष पात रहित होकर, इस देश की सभ्यता और इतिहास के विषय में लिखने का यत्न भी किया परन्तु यह बात सत्य है, कि एक विदेशी से जो कि बाल्यावस्था से ही एक विशेष प्रकार के परम्परागत और साम्प्रदायिक प्रभावों के अन्दर पला हो दूसरी जातियों के इतिहास की, विशेष कर प्राचीन इतिहास की, कदापि भली भाँति खोज नहीं हो सकती। अतः यह स्पष्ट है कि पश्चिमीय विद्वानों को क्यों इस कार्य में सफलता प्राप्त न हुई ॥

ऐसे समय में भारतवर्ष के उन विद्वानों लोगों के लिये जिन्होंने कि इस पवित्र पार्थ क्षेत्र में पदारोपन किया उचित था कि वह स्वतन्त्ररूप से प्राचीन इतिहास की खोज करते। विदेशीय विद्वानों की त्रुटियों को दर्शाते और उन्होंने प्राचीन इतिहास सम्बन्धी जो भ्रांतियों की हैं उन का खंडन करते परन्तु शोक का

स्थान है कि यह भारतवर्षीय विद्वान भी नेत्रोन्मीलन कर इन्हीं पश्चिमीय पंडितों का अनुसरण करने लगे। आज़काल भाषा पढ़ने तथा शैशव काल से ही विदेशीय संस्कार ग्रहण करने के कारण यह स्वदेशीय पंडित भी यद्यपि जन्मसे स्वदेशी कहे जा सकते हैं तथापि अपने भावों और अनुभावों में वास्तव में पश्चिमीय ही हैं। और हमें यह लिखनेमें ज़रा भी सकोच नहीं कि प्रो० बालकृष्ण जी भी इसी कक्षा के भारतीय विद्वानों में से एक हैं। आप ने हाल ही में भारतवर्ष का एक संक्षिप्त इतिहास लिखा है जिस के प्रथम भाग की समालोचना करने के लिये हम यहां उपस्थित हुए हैं। इस प्रथम भाग में भारतवर्ष का प्रायः प्राचीन इतिहास दर्ज है। सम्भव है कि प्रो० महोदय का यह इतिहास पाठशालाओं में पढ़ाया जाने लगे। सम्भव है कि कई पश्चिमीय तथा एतद्देशीय विद्वान इस की मुक्तकंठ से प्रशंसा भी कर डालें परन्तु इस इतिहास को कोई जिज्ञासु प्राचीन भारतवर्ष का सच्चा और प्रामाणिक इतिहास नहीं कह सकता। हमारा विचार है कि यह इतिहास किसी न्यूनता को पूर्ण करने के स्थान में लोगों को नए भ्रमों और भ्रांतियों में डालेगा। प्रो० महोदय ने कितने ही मिथ्या, अयथार्थ, भ्रांति युक्त और मतः कल्पित भावों का समावेश इस इतिहास में कर दिया है जिनको पढ़ कर आवश्यक है कि नवीन इतिहास प्रेमी के दिल में घृणा और ग्लानी उत्पन्न हो ॥

प्रो० महोदय पुस्तक की प्रस्तावना में

लिखते हैं कि मैंने “यथाशक्ति तदस्थ रह कर यह भारत के इतिहास का निचोड़ पाठकों के सामने रख दिया है” यह तो तदस्थ रह कर लिखने का हाल है न जाने यदि तद से दूरस्थ रह कर लिखते तो क्या उपद्रव मचाते। परन्तु हमें आश्चर्य है कि प्राचीनार्य इतिहासके साथ जो अन्याय उन्होंने अव किया है दूसरी अवस्था में इस से बढ़कर और कौनसा अन्याय करते।

उक्त इतिहासावलोकन से यह बात स्पष्ट विदित हो जाती है कि केवल यही नहीं कि प्रो० महोदय ने स्वतन्त्र रूप से कोई अन्वेषण नहीं किया अपितु जिन विद्वानों की सम्मतियों का खण्डन किया है उन के लेखों को ठीक नहीं पढ़ा साथ ही अपने सिद्धान्तों की स्थापना करने के लिये जिन पुस्तकों के लेखों का प्रमाण दिया है उन को गलत उद्धृत किया है और उन लेखों की सत्यता अथवा असत्यता को जांचने का कोई यत्न नहीं किया। इन बातों का परिचय पाठकों को आगे चलकर मिलेगा।

पूर्व इस के कि हम इस इतिहास की समालोचना आरम्भ करें पाठक गणों को यह बतला देना अवश्य सझमते हैं कि उक्त पुस्तक में वर्णित एक २ घटना की समालोचना करना यद्यपि असम्भव नहीं तथापि इसके लिये समय बहुत चाहिये। अतः हम यही उचित सझते हैं कि दृष्टान्त की रीति से एक दो ऐसी घटनाएं चुन ली जावें जिन से पाठकों को यह भली भांति विदिति हो जावे कि प्रो० महोदय का इतिहास कहां तक सच्चा और प्रामाणिक इतिहास कहा जा सका है ॥

सब से प्रथम हम युधिष्ठिर के समय को लेते हैं क्योंकि प्रो० महोदय ने सब से पहले युधिष्ठिर के समय का निर्णय करके इसी के आधार पर श्री रामचन्द्र जी, ब्राह्मण ग्रन्थों तथा मन्वादि का समय निश्चय किया है ॥

पृष्ठ ८८ पर लिखा है “इस काल के निश्चय करने वाले दो दलों में विभक्त हैं। एक दल की सम्मति है कि ३१०० वर्ष ईसा से पूर्व युधिष्ठिर हुए, दूसरा दल १००० वर्ष पूर्व इस युद्ध का समय बताता है।” *

पहले दल की युक्तियां।

(१) सारी हिन्दू जाति का चिरकाल से विश्वास चला आता है कि कलियुग के आरम्भ में वह युद्ध हुआ। प्रायः सारे ज्योतिष शास्त्र के लेखक कालि सम्बत का आरम्भ ३१०० वर्ष ई० पू० रखते हैं।

[२] महाभारत स्वयं भी यह कहता है कि युद्ध कलियुग के आरम्भ में हुआ।

* बड़े शोक का स्थान है कि प्रो० महोदय ने नहीं स्पष्टता दोनों दलों के प्रतिनिधियों के नाम बतलाये और ना ही अपनी पुस्तक में जिन पुस्तकों के प्रमाण उद्धृत किये हैं उनकी पृष्ठ संख्या ही दी है। जहां तक उक्त पुस्तक का पाठ करने से विदित होता है दूसरे दल के प्रतिनिधि हम प्रो० महोदय को ही समझते हैं।

पहले दल वालों के नाम से जो युक्तियां प्रो० महोदय ने अपनी पुस्तक में दी हैं इनसे कितनी ही अधिक बलवान युक्तियां पहले दल वालों के पास और हैं जिन का उल्लेख इस पुस्तक में नहीं किया गया ॥

(३) यूनानी दूत मैगस्थनीज के लेख के आधार पर एक यूनानी महाश्य ने लिखा है कि दायानिसस के समय से चन्द्रगुप्त के समय तक १५३ राजाओं तथा उनके राज्य की ६०३२ वर्षों की गणना भारती लोग करते थे और दायानिसस हरिक्रीष से १५ पीढ़ी पूर्व हो चुका है। इस हिसाब से ईसा के जन्म तक ३०८२ वर्ष कृष्ण महाराज की मृत्यु को हो चुके हैं।

(४) स्वामी दयानन्द ने भी इस बारे में खोज की उन्होंने पता लगाया कि महाराज युधिष्ठिर से महाराजा यश पाल तक इन्द्र प्रस्थ में १२४ राजाओं ने ४१५८ वर्ष तक राज्य किया अर्थात् ३००० वर्ष ईसा से पूर्व युद्ध का समय है।

दूसरा दल अर्थात् प्रो० महाश्य उपरोक्त युक्तियों का खंडन इस प्रकार करता है:—

(१-२) प्रो० महादय लिखते हैं “माना कि युद्ध कलियुग के आरम्भ काल में हुआ परन्तु यदि कलियुग ही १४०० वर्ष ईसा से पूर्व आरंभ हुआ हो तो उस में क्या दोष !”

यहां पर हम यही कहना उचित समझते हैं कि आप सारे आर्य साहित्य पर दृष्टि डाल जावें आप को कहीं भी ऐसा विचार नहीं मिलेगा। वेद (अथर्व० प्र० ८ अनु० १ मं० २१) सूर्य सिद्धान्त (अ० १ श्लो० १६-१८-२०) महाभारत (अ० ८ श्लो० १७) मनु, (अ० १ श्लो० ७१-७२-७६) सिद्धान्त शिरोमणि, ज्योतिर्विदाभरणादि सारे शास्त्र इस बात की साक्षी देते हैं कि युगों का सिद्धान्त कोई नया

सिद्धान्त नहीं। हम ने आङ्ग्ल भाषा के केवल एक लेख में जो कि एक महाश्य रंगाचार्य का लिखा हुआ है इसी प्रकार के भाव युगों के विषय में पढ़े हैं परन्तु सारे प्राचीन संस्कृत साहित्य की साक्षी के विद्यमान होते हुए इस नवीन सिद्धान्त को सर्वथा मतः कल्पित समझते हैं। इसी नवीनोक्ति के आधार पर जो कलियुग की आयु केवल १३०० वर्ष लिख दी गई है और पहले दल की दी युक्तियों का खण्डन किया गया है वह सर्वथा मिथ्या और भ्रांतियुक्त है।

३—तीसरी युक्ति के खण्डन में प्रो० महोदय लिखते हैं “उस दूत (मैगस्थनीज) के अनुसार $\frac{6042}{3} = 2014$ वर्ष के लग भग प्रत्येक राजा ने राज्य किया जो सर्वथा असम्भव है। कल्पना करो कि दोनों संख्याएं ठीक हैं तब श्री कृष्ण से चन्द्रगुप्त तक ५४४२ वर्ष हुए, सत्य है पक्षपात की केवल एक आंख होता है” हमें बड़ा शोक है कि प्रो० महोदय ने कुछ हां कर उस यूनानी के असली वाक्यों को देखने का भी यत्न नहीं किया। वह यूनानी महाश्य यों लिखते हैं:—

“From the time of Diouyses to Sandrakottas, the Indians counted 153 kings, and period of 6042 years. But among these a republic was thrice established. The Indians tell us that Diouyses was earlier than Heracles by 15 generations.” Mr. Crindle's Ancient India, p. 204.

अर्थात् दायोनिसस के समय से सेंद्राकोटस के समय तक भारतीय १५३ महाराजों तथा ६०४२ वर्षों की गणना करते थे परन्तु इस समय के भीतर तीन बार प्रजातन्त्र शासन भी स्थापित हो चुका था। भारतीय हम लोगों से ऐसा कहते हैं कि दायोनिसस हरिकलीप (श्री कृष्ण) से ११ पीढ़ी पूर्व हो चुका था। क्योंकि प्रजातन्त्र शासन स्थापित होने का समय भी १५३ राजाओं के समय ६०४२ वर्षों के भीतर ही है अतः यह नहीं कहा जा सकता कि उक्त १५३ महाराजों का समय ठीक २ कितना है। ना मालूम प्रो० महोदय ने ४० वर्ष के लग भग प्रत्येक राजा का राज्य काल कौन से हिसाब से निकाल लिया। ऐसा विदित होता है कि प्रो० महोदय ने धींगा धींगी में ही प्रजातन्त्र शासन स्थापित होने का समय जान वृद्ध कर छोड़ दिया।

४—पृष्ठ ६२ पर लिखा है “राजाओं की सूची देखने से पता लगता है कि वि० स० के पश्चात् १००० वर्ष तक जिन राजाओं ने राज्य किया उनका राज्य समय तो ठीक प्रतीत होता है। इस काल में ६ वंशों ने राज्य किया उन में से प्रत्येक राजा की मध्यमा प्रतिवंश क्रम बार यूँ हैं २३, १६, १२ $\frac{१}{२}$, १२ $\frac{१}{२}$ १७। परन्तु युधिष्ठिर से २ शताब्दी ईसा तक केवल ४ वंशों ने राज्य किया और उन की मध्यमा यह है, ५६, ३६, २७, ४२ क्या कभी कोई मान सकता है कि इतने दीर्घ वंशों में वाम मार्ग के घोर समय में इतने दीर्घ काल तक राजा शासन करते रहे होंगे। कल्पित कलियुग तक

इन ४ वंशों को पहुंचाने के लिये कल्पित समय पण्डित लोग देते रहे” ॥

यहां वक्तव्य यह है कि प्रथम तो प्रत्येक राजा के राज्य काल की मध्यमा निकालने की आवश्यकता ही क्या है जब कि उस वंशावली में प्रत्येक राजा के राज्य काल का ठीक २ समय दिया हुआ है। दूसरे यहां पीढ़ी से तात्पर्य बाप से बेटा नहीं, किन्तु एक अधिकारी से दूसरा लिया है। अतः प्रो० महोदय का यह लिखना कि “कल्पित कलियुग” तक पहुंचाने के लिये कल्पित समय पण्डित लोग देते रहे”। सर्वथा असंगत है ॥

विशेष चार प्रक्तियें:—

१—आप लिखते हैं “यदि यह मान लिया जावे कि युधिष्ठिर से यशपाल तक १२४ राजे हुए और प्रत्येक राजा ने २१ वर्ष राज्य किया हो तो $१२४ \times २१ = १६३$ ईस्वी = १३११ वर्ष युद्ध को हुए होंगे”। हमें मालूम नहीं जब कि वंशावली में प्रत्येक राजा का राज्य काल दिया हुआ है तो फिर प्रत्येक राजा का राज्य काल २१ वर्ष क्यों कल्पना कर देंगे। पुस्तक के ६७ पृष्ठ पर आप प्रत्येक राजा के राज्य का समय २६ वर्ष कल्पना करते हैं। आप कल्पनाएं भी समयानुसार ही कल्पित करते हैं।

२—पृष्ठ ६३ पर लिखा है “कलहण ने अपनी राज तरङ्गिणी में युधिष्ठिर से अशोक तक ४७ राजा बतलाए हैं यदि कहीं के नाम उस ने छोड़ भी दिये हों..... अतः १४०६ वर्ष युद्ध को हुए होंगे” प्रो० महोदय का यह हिसाब हमारी समझ में नहीं आया

जहां तक हमें विदित है कल्हण महाराजा युधिष्ठिर का समय कलियुग के आरम्भ से ६५३ वर्ष पीछे का बताता है। कल्हण लिखता है :—

शतेषु षट्षु सार्द्धेषु त्र्यधिकेषु (६५३) च भूतले।
कलंगतेषु वर्षाणामभवन् कुरुपांडवाः।

राज तरंगिणी प्रथमचरणः श्लोक ॥ ५१ ॥

परन्तु कल्हण का यह लेख भ्रम मूलक है। इस का समाधान प्रो० रामदेव जी ने बड़ी उत्तमता और बुद्धिमता से अपने इतिहास में किया है। (देखो पृष्ठ ६७१ से ६७३ तक) लेख विस्तार के भय से उक्त लेख का उल्लेख यहां नहीं किया गया है ॥

३—प्रो० महोदय लिखते हैं 'विष्णु पुराण और भागवत पुराणों ने स्वयं नक्षत्रों के हिसाब से कहा है कि युधिष्ठिर से नन्द राजा तक १०६५ वर्ष हुए हैं, अतः युद्ध को १०६५+३२२ = १३८७ वर्ष ईसाब्द तक हुए' न जाने प्रो० महोदय ने यह अंक कहां से लेकर लिखे हैं। महाशय रङ्गाचार्य के अनुसार विष्णु पुराण में १०१५ वर्ष दिये हुए हैं, (देखो IV 24, 104) भागवत पुराण में यही समय १११५ वर्ष दिया हुआ है [देखो IX 2, 26]। केवल यही नहीं वह महाशय मत्स्य पुराण में जो उक्त राजाओं के मध्य का समय दिया हुआ है वह भी उद्धृत करते हैं। [अर्थात् १०५० वर्ष] क्योंकि इस समय हमारे पास पुराण नहीं हैं, अतः हमारे लिये यह निर्णय करना कि दोनों महाशयों में से किन के दिये हुए अंक ठीक हैं कठिन है। सत्य तो है यह कि अन्य ग्रन्थों के

अधिक बलवत्तर प्रमाणों के होते हुए पुराणों की साक्षी मान्य दृष्टि से नहीं देखी जा सकती ॥

४—चौथी युक्ति यह है "मगध इतिहास-नुकूल युधिष्ठिर से बुद्ध देव तक ३५ राजाओं ने राज्य किया अतः ३५+२१+३६७-बुद्ध जन्म तिथि = १४०० वर्ष ईसाब्द से पूर्व युद्ध हुआ"। न मालूम कौनसा मगध का इतिहास ऐसा कहता है। उक्त महाशय रङ्गाचार्य के अनुसार पुराणों में जो मगध के राजाओं की वंशावली दी हुई है उस में युधिष्ठिर से महापद्म नन्द तक ४७ राजाओं का १५०० वर्ष तक राज्य काल दिया हुआ है। परन्तु इस उक्ति को भी इन दृढ़ और बलवत्तर प्रमाणों के सामने सत्य नहीं मान सके ॥

हमें निश्चय है कि प्रो० महोदय की तमाम युक्तियों का खंडन हो गया। अतः उन्होंने जो स्वराचित इतिहास में युधिष्ठिर का काल और इस के आधार पर ब्राह्मणों तथा मन्वादि के काल का निश्चय किया है वह सर्वथा मिथ्या, भ्रान्तियुक्त और कपोलकल्पित है। महाभारत युद्ध का असली समय वही है जिस पर आर्य जाति का चिर काल से विश्वास चला आता है अर्थात् कलियुग के आरम्भ में वह युद्ध हुआ *।

* आशा है कि हम शीघ्र ही उपा के किसी आगामी अंक में महाभारत युद्ध के काल निर्णयार्थ एक लेख लिखेंगे। इस युद्ध को छोड़कर यदि समय मिला तो महाराजा विक्रम तथा इस पुस्तक में वर्णित अन्यान्य घटनाओं के विषय में भी हम लेख लिखने का यत्न करेंगे ॥

दूसरा दृष्टान्त हम महाराजा विक्रमादित्य का लेते हैं। पृष्ठ २३८ पर प्रो० महोदय लिखते हैं “पुराणों और काव्यों में अति प्रसिद्ध, विक्रम का सूर्य और लहसू हिन्दु गाथाओं का केन्द्र, उज्जैन का यही राजा (अर्थात् गुप्त वंशीय चन्द्रगुप्त २) विक्रमादित्य था”

बड़े खेद का विषय है कि प्रो० महोदय ने विना किसी प्रकार की खोज किये ही असली महाराजा विक्रमादित्य के अस्तित्व से इनकार कर दिया है। हम इस स्थान पर यह निःशंक हो कर लिखते हैं कि यदि प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास में कोई ऐसी घटना है जिस को सिद्ध करने के लिये किसी ऐतिहासिक प्रमाण की आवश्यकता नहीं तो वह महाराजाधिराज विक्रमादित्य का अस्तित्व है। क्या महाराजा विक्रमादित्य का अस्तित्व सिद्ध करने के लिये उन के चलाए हुए सम्बत् से अधिक दृढ़ और बलवत्तर प्रमाण की आवश्यकता है? किसी भारती का महाराज विक्रमादित्य तथा उनके सम्बत् से इनकार करना हमारे विचार में प्राचीन भारत वर्ष की परंपरा प्राप्त लोक कथाओं और यहां के पूर्व पुरुषों के साथ एक बड़ा भारी अन्याय करना है। आत्मविस्मृत भारतवासी कितने ही विस्मरण शील क्यों न हों परन्तु वे अपने इस प्रकार के परमोपकारियों का नाम भूलने पर भी नहीं भूल सकते।

नीचे हम महाराजा विक्रमादित्य के काल निर्णयार्थ कतिपय प्रमाण उद्धृत करते हैं ॥

१—दक्षिण में होल वंशीय एक राजा हो

गया है। विन्सेंट स्मिथ ने उसका समय ईस्वी निश्चित किया है। इस हाल ने गाथा सप्तशती नाम की एक पुस्तक प्राचीन महाराष्ट्री भाषा में लिखी है। उस के पैसठवें पक्ष का संस्कृत रूपान्तर इस प्रकार है:—

संवाहन सखरसतोपितेन ददता तव करे लक्ष्म चरणेन विक्रमादित्य चरितमनुशिक्षितं तस्याः॥

इस में विक्रम की उदारता का वर्णन है इस से पूरा पता लगता है कि हाल नरेश ने पहले विक्रमादित्य नाम का दानी राजा को अवश्य था ॥

२—पेशावर के पास तख्ते वाही नाम स्थान में एक शिला लेख प्राप्त हुआ है। यह उत्कीर्ण लेख पार्थियन राजा गुड्रफर्स के समय का है। इस लेख में १०३ का अंक है पर सम्बत् का नाम नहीं। गुड्रफर्स के सिंहासन पर बैठने के २६ वें वर्ष का यह लेख है डाक्टर फ्लीट और मिस्टर विन्सेंट स्मिथ ने अनेक तर्कनाओं और प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि यह १०३ विक्रम ही का सूचक है।

३—विन्सेंट स्मिथ अपने प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास में [पृष्ठ १८७—२००] लिखते हैं कि शक जाति के म्लेच्छों ने ईसा सं १५० वर्ष पूर्व उत्तर-पश्चिमाश्रल से इस देश में प्रवेश किया। उन की दो शाखाएं हंगई दूसरी शाखा के शकों को जिन्होंने अपना अधिकार १ शताब्दी में काठियावाड़ पर जमाया गुप्तवंशीय राजाओं ने देश से बाहर निकाला। पहली शाखा के शकों ने तक्षिला और मथुरा में अपना अधिकार जमाया।

के सिक्कों से इन का पता ईसा के १०० वर्ष पूर्व चलता है। उस के पश्चात् उन के अस्तित्व का कोई पता नहीं चलता। प्रश्न यह है कि इस शाखा को किस ने निकाला? इतिहास उत्तर देता है कि ईसा से ५७ वर्ष पूर्व विक्रम ने उन को देश से बाहिर निकाला और इसी से वंशकारी प्रसिद्ध हुए। मुल्तान के पास करू वाला युद्ध इन्हीं तक्षिला और मथुरा के शकों और विक्रम के मध्य हुआ था ॥

४—ज्योतिर्विदाभरण [अ० १ श्लोक २२] से भी विक्रमादित्य का यही समय निश्चित होता है ॥

५—डाक्टर कनिंघम साहिब [Archaeological Survey of India, III, 31-33] में एक शिला लेख का वर्णन करते हैं जो कि ५ विक्रम सम्वत् का है ॥

६—एक और शिला-लेख जो वैशाख शुदी १२३ विक्रमी का है देहली की लाठ पर खुदा हुआ मौजूद है।

७—एक शिला-लेख १३ विक्रमी का छाननी राज कोट के म्यूजियम में पड़ा हुआ है।

इन के अतिरिक्त कितने ही शिला-लेख तथा अन्यान्य हट्ट प्रमाण हमारे पास मौजूद हैं जिन को हम यहां स्थानाभाव के कारण नहीं दे सके।

उपरोक्त साक्षियों के विग्रमान् होते हुए भी यदि कोई महाशय विक्रमादित्य के विषय में भ्रम तथा शंका करें तो उन्हें पूर्ण अधिकार हैं ॥

इस लेख में हम ने केवल दो उदाहरणों को लेकर उन की पूर्ण रीति से समालोचना करने की चेष्टा की है।

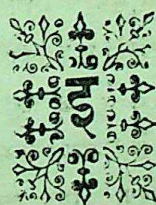
“आर्यों का आदिम निवास-स्थान कहाँ था?” अथवा “उनके भारत वर्ष में आने से पूर्व यहां कोई जाति वा जातियें निवास करती थीं वा नहीं?” तथा इसी प्रकार की उक्त पुस्तक में वर्णित अन्यान्य बातों को सत्यता वा असत्यता का निणय हम अपने पाठकों पर ही छोड़ते हैं।

पुस्तक की भाषा सुन्दर है। चित्र जो दिये गए हैं वह भी कम सुन्दर नहीं। क्या ही अच्छा होता यदि खोज और अन्वेषण कार्य भी ऐसी ही उत्तमता और सुन्दरता से किया जाता।

इस सचित्र पुस्तक का मूल्य १ रु० है। पुस्तक भण्डार गुहकुठ काङ्गड़ी, हरिद्वार से मिल सकती है।

“आर्या”

नारी उपयोगी पृष्ठ मताभिलाषिणी स्त्रियां



इल्लिस्तान की स्त्रियां कई दिनों से यह प्रयत्न कर रही हैं, कि पुरुषों की मान्ति उन्हें भी राजकार्यों में अपनी सम्मति प्रकट करने का अधिकार प्राप्त हो। परन्तु वहां के पुरुष स्त्रियों को यह नवीन अधिकार देने को तय्यार नहीं। दोनों ओर से घोर संग्राम हो रहा है। मताभिलाषिणी स्त्रियां वंश २ उपद्रव मचाती और महामंत्रियों तक को पीटती हैं।

भारतवासी इस हल चल का कारण पाश्चात्य सभ्यता को समझकर अंग्रेजों पर हंसी उड़ाना चाहते हैं। वे कहते हैं कि हमारे आर्य धर्म में नर और नारी मिलकर एक व्यक्ति बनता है नारी नर की अर्धाङ्गी है, नारी और नर के उद्देश्यों में कोई भेद नहीं हो सकता। जिस बात में नारी का कल्याण है उसी में नर का। दोनों के उद्देश्य एक होने के कारण पुरुष स्त्री के काम नहीं कर सकता। जहाँ पुरुष सब कामों में राजा है वहाँ घर के अन्दर वह स्त्री के अधीन है, अर्थात् स्त्री पुरुष सब कामों में एक दूसरे के अधीन हैं। ऐसी अवस्था में स्त्रियों का सम्मति (वोट) रखने का अधिकार मांगना और उन्हें यह अधिकार मिलना व्यर्थ है। स्त्री अपने कार्य क्षेत्र—घर—में स्वतंत्र रहे और पुरुष अपनी जगह स्वतंत्र जैसे कि भारत वर्ष के हिन्दू घरानों की वर्तमान अवस्था है। उन का यह भी कथन है कि पश्चिम में स्त्री पुरुष का भिन्न अस्तित्व समझने के कारण ही यह उपद्रव मच रहा है। पर हमारे विचार में इस हलचल का कारण वह नहीं जो हमारे उपरोक्त भाई समझ रहे हैं। इङ्गलिस्थान और भारत वर्ष की अवस्था में बड़ा अन्तर है। भारत में स्त्रियों की संख्या पुरुषों से कम है अतः उन्हें स्वतंत्र उपजीविका कमाने की बहुत कम आवश्यकता पड़ती है। परन्तु इङ्गलिस्थान की यह दशा नहीं। वहाँ स्त्रियों की संख्या पुरुषों से चार गुणा अधिक है। ऐसी अवस्था में वहाँ की स्त्रियों के तीरा चौथाई भाग को अपने बाहुबल से स्वयम् उपजीविका पैदा करनी

पड़ती है। वे पुरुषों की भान्ति नियम पूर्वक अपना राजकीय कर देती है। पार्लियमेंट आदि देश की शासक सभाओं में केवल पुरुष ही पुरुष होने के कारण इन श्रमजीवी नारियों के अधिकारों का कोई ध्यान नहीं रखा जाता। उपजीविका के सारे विभागों, सरकारी नौकरों आदि में सब जगह पुरुषों को ही रखा जाता है, हालांकि उनकी संख्या वहाँ की सारी जन संख्या का एक चौथाई भाग है। इससे स्त्रियों को उपजीविका कमाने में बड़ी रुकावट पैदा होता है। पुरुष तो विदेश में जाकर भी धन-पार्जन कर सकते हैं पर यह वेचारिय कहाँ जाएं। दूसरे पुरुषों की पार्लियमेंट ने नियम ही कुछ ऐसे बना दिए हुए हैं जिस से स्त्रियों को प्राईवेट दुकानों में भी पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन मिलता है। एक ही काम एक स्त्री छः घण्टे करती है तो उसे एक रुपया मिलता है परन्तु वही काम उतने ही घण्टे एक पुरुष करता है तो उसे अठ्ठाई रुपये मिल जाते हैं। इसी अन्याय को दूर करने और भूकों मरने से बचने के लिए ही मनाभिलाषिणी स्त्रियाँ तन, मन, धन से अधिकार प्राप्ति के लिए प्रयत्न कर रही हैं। और हमें यह देखकर प्रसन्नता हुई है कि इन अवला नामधारी सबलाओं का परिश्रम अन्त को कल लाने लिया है ॥

सिपाही स्त्रियाँ ।

सुना है बोल्टन की पोलिस ने मिस ई० वा. बर्टन नामक एक कुमारी को ३०० रु० वार्षिक पर अपनी सहायता के लिये नौकर रख लिया

है। यह प्रस्थापन अभी परीक्षण मात्र ही है। कुमारी वर्तन नव युवति स्त्रियों और लड़कियों के मुकदमों में साक्षी इकट्ठी करने में सहायता देगा क्योंकि लड़कियां पुरुष सिपाही की अपेक्षा इन से प्रत्येक बात बिना संकोच के कह देंगी और हवालात में पड़ी हुई लड़कियों की भी वहीं निगरानी करेंगी। इस से पूर्ववृत्त फूल में भी एक स्त्री सिपाही है। इनके अतिरिक्त अमेरिका के संयुक्त राज्य (यूनाइटेड स्टेट्स) जर्मनी, डन्मार्क, नार्वे, स्वीडन, आस्ट्रिया और रूस में भी स्त्री सिपाही भरती होने लगी हैं ॥

वस्त्रों पर १५०० रुपया मासिक व्यय ॥

अमेरिका के न्यूयार्क नगर में मिस्टर सम्यूएल डब्ल्यू० पैक नामक एक धनाढ्य वणिक् है। इन पर मिस्टर सौलोमन रोसन्फल्ड नामक एक दर्जी ने १६१९ रु० का दावा कर दिया था, क्योंकि इतने रुपयों के कपड़े उसने मि० पैक की स्त्री को सीकर दिए थे। मि० पैक ने कहा कि “यह कपड़े मेरी स्त्री ने निजु तौर पर लिये हैं यह उसकी आवश्यकताओं में से नहीं। मैं और मेरी स्त्री २०००० रुपये वार्षिक पर निर्वाह करते हैं। मैं अपनी स्त्री को १५०० रुपया मासिक कपड़ों के लिए और १०५ रुपये जेव खर्च के लिए देता हूँ”। मि० पैक की साली ने अपने बहनोई की ओर से साक्षी दी कि जिस समय मेरी बहिन ने उपरोक्त कपड़े खरीदे थे उस समय उसके पास तीस पोशाक, एक दर्जन शोषियां, २० रेशम के मूजे, तीन दर्जन जोड़े

दस्ताने, दो दर्जन जूने और दस दर्जन रेशमी पेडियां थीं; इसलिए जो कुछ उसने खरीदा अनावश्यक खरीदा। इसपर जज ने मिस्टर पैक पर से मुकदमा खारिज कर दिया। व्यय शीलता की भी कोई सीमा होनी चाहिए ॥

घर पर कपड़े धोना।

हमारी आवश्यकताएं इतनी बढ़ गई हैं कि नित्यप्रति के खर्च सहन करना बड़ा कठिन हो रहा है। ग्रष्म ऋतु आ रही है हम समझते हैं कि गर्म कपड़े बनवाने के खर्च से छूटे, घर धोबी की धुलाई आराम नहीं लेने देती। घर पर कपड़े धोने का केवल यही फायदा ही नहीं कि खर्च घट जाता है और धोबी के घर बार २ जाना नहीं पड़ता बल्कि इस से भी बढ़कर यह लाभ है कि जिस सावधानता से मालिक कपड़े को धोएगा धोबी कभी भी उसके फटने की उतनी परवाह न करेगा। आप धोने से कपड़ा ज्यादा देर तक चलता है। पहलेपहल कपड़े धोने में तनिक कष्ट होता है पर अभ्यास हो जाने पर काम बड़ा आसान मालूम होने लगता है, और इसमें सफाई भी आजाती है। मलमल के कुरते, कमीजें, और दुपट्टे धोने की एक उत्तम विधि यह है कि एक बड़ी बालटी या बलैई पतिले में आधी छटांक साबुन कतरकर डालो, इस में फिर कोई छः सेर के करीब उबलता हुआ पानी डालो और एक साफ डण्डे से खूब हिलाओ। फिर एक चमचा भर पिसा हुआ सवागा डालो, तत्पश्चात् कोई बारह सेर ठण्डा पानी मिलाओ। यह दो तीन

दुपट्टों के लिए पर्याप्त है। यदि दुपट्टे या कुर्ते ज्यादा हों तो उपरोक्त साबून आदि का घोल भी उतना ही अधिक होना चाहिये ॥

तब दुपट्टों को नकान के बाहर लेजाकर खूब झाड़ो, और फिर उन घोल में आधे घण्टे तक भिगो रखो। तत्पश्चात् कोई डेढ़ सेर पानी और मिलाकर कपड़े को खूब निचोड़ो और गूंधो (पञ्जाबी मांडना) जहांतक कि मैल सब की सब निकल जाए। फिर जहां २ कपड़ा ज्यादा गन्दा हो वहां थोड़ा २ और साबून मलो, परन्तु कपड़ों को ही आपस में न रगड़ने लग जाओ। जब वे मैल के चिन्ह दूर होजाएं तो कपड़े को निचोड़कर निकालो। तब उस साबून वाले पानी को फैककर, बाल्टी में कपड़ों को रखकर पानी के नलके के नीचे या खुले पानी में खूब धोओ यहां तक कि सारा का सारा साबून निकल जाए। यदि इस प्रकार धोया जाए, तो फिर नील देने की आवश्यकता नहीं रहती। यदि पानी कम हो तब चाहे कपड़े से साबून का पीलपन दूर करने के लिए हलका सा नील देदो ॥

माया या पान—

एक चमचा भर निशास्ता लेकर उस में थोड़ा सा ठण्डा पानी मिला लेवी सी बनाओ, फिर कोई सेर भर उबलता हुआ पानी उस में आहिस्ता २ मिलाओ और साथ २ खूब हिलाते जाओ। इस प्रकार एक पतला फालूदा सा बन जाएगा। फिर एक पैसे का गून्द लेकर उस में कोई तीन पाव पानी डालकर रखो। जब गून्द घुल जाए, और नीचे बैठ जाए तो

ऊपर का साफ पानी नितार कर फैकदो। फिर इस नीचे बैठे हुए गून्द का चमचा भर कर उस पतले फालूदे में मिलादो। गून्द पहले ही घोल रखना चाहिये ताकि गर्म गर्म फालूदे में खूब मिल जाये। गून्द मिला देने पर फालूदे के बर्तन को ढकने से ढक रखना चाहिये ताकि उन पर सख्त सी झिल्ली (सिकड़ी) न जम जाए। जब यह माया (पान) इतनी ठण्डी हो जाए कि इस में हाथ पड़ सके तो दुपट्टे को उस में डालकर खूब गून्धो ताकि कपड़े की तार तार में पान प्रवेश कर जाये। माया से निकाल कर निचोड़ लो और खूब झड़काओ। माया के साफ और ठीक लगने की सारी कारीगरी झड़कने में ही है इस से तारों में निशास्ते के सूक्ष्म धब्बे नहीं लगे रहते। नहीं तो यह धब्बे इसतरी करते समय गर्म लोहे से पक जाते हैं और कपड़ा खराब हो जाता है। फिर एक एक दुपट्टे को निकाल कर एक साफ तख्त पोश या चौड़ी मेज पर रखो। तब एक एक को उठाकर हाथ में पकड़कर खूब झड़काओ यहांतक कि मल मल प्रत्येक स्थान पर निर्मल और नवीन दीखने लगे। फिर बाहर धूप में लटकादो या फैलादो। परन्तु रंगा हुआ दुपट्टा धूप में नहीं सुखाना चाहिये नहीं तो रंग फीका पड़ जाएगा यदि दुपट्टे को रंग देने से पहले पानी में चमचा भर फटकड़ी घोलकर उस में दुपट्टे को धोलिया जाए और फिर रंगा जावे तो रंग खूब चढ़ता है। यदि सूखने पर रंग फीका पड़ जाये तो डेढ़ सेर के करीब पानी में चमचा

भर सिरका घोलकर दुपट्टे को उस में खूब भिगो लो। रंग पुनः चमक उठेगा।

पर सब से आवश्यक बात यही है कि रंगा हुआ कपड़ा धूप में न सुखाया जाए। जब दुपट्टे सूख जाएं तो एक तौलिए को पानी में भिगोकर निचोड़ो, फिर उन दुपट्टों को उस गीले तौलिए में लपेट कर कम से कम एक घण्टा भर रख छोड़ो। इस से दुपट्टे एक समान गीले हो जाएंगे, जिस से इसतरी करने में बड़ा सुभीता रहेगा ॥

इसतरी करना—

इसतरी करना तनिक दुश्चारी का काम है पर अभ्यास से शीघ्र ही आजाता है। इसतरी करने के लिये जहां साधारण गीला कपड़ा धरता जाता है वह बड़ा नर्म होना चाहिए। जब तिले या गोटे किनारी पर इसतरी करनी हो तो साफ और नर्म फलालैन का एक टुकड़ा लेकर उस की कई तहें करके रख लेना चाहिए इस से तिले को हानि पहुंचने का डर नहीं रहता गले के कालर पर पहले इसतरी फेरनी चाहिए। फेरते समय लोहे का दबाव एक जैसा रहे जब तक कालर सूख न जाए लोहा बराबर फेरते रहना चाहिए पहले उसके उलटी तर्फ इसतरी फेरो फिर सीधी ओर। कालर के बाद आस्तीनों (बांहों) को लगना चाहिए। इन्हें अन्दर की सिलाई (पञ्जाबी सीऊन) की ओर मोड़ कर दो तिहाई भाग पर इसतरी फेरनी चाहिए, तब इतना ही भाग दूसरी ओर का इसतरी करना चाहिए। फिर आस्तीन की पुनः इस प्रकार तह जमानी चाहिए कि उस की सीऊन नीचे

आजाए। आस्तीन के शेष भाग पर इस प्रकार इसतरी करनी चाहिए कि लम्बे २ शिकन (वलि) न पड़ जाएं। आस्तीन पर इस प्रकार इसतरी करना कि सीऊन (सिलाई) के सामने एक और लम्बा शिकन पड़ जाए यह जाहिर करता है कि इसतरी करने वाला अभी अनजान है। इकट्ठी हुई २ जगहों पर लोहे के सिरे को खूब दबाना चाहिये और जब तक वह जगह सूख न जाए इसतरी को वहां ही रखना चाहिए। यदि उन स्थानों को गीला छोड़ दिया जाएगा तो वे पीछे से सूखकर सुकड़ जाएंगे और इकट्ठे हो जाएंगे। साधारणतया मलमल के दुपट्टे और कमीजों पर सीधी ओर ही इसतरी फेरनी चाहिए, पर जब गोटा कनारी लगा हुआ हो तो उलटी ओर से ही करना चाहिए और साथ ही गोटे वाले भाग के नीचे फलालैन का तह किया हुआ टुकड़ा रखकर ऊपर से खूब दबाना चाहिए। मलमल की कमीजों, कुरतों और दुपट्टों पर इसतरी करना कुछ कठिन काम नहीं। जिन्हें घर पर इसतरी करने में कुछ भय आता हो वे नए कपड़े पर पहले पहल इसतरी करके देखें, जो धोबी का इसतरी किया हुआ हो पर जिस की तहें मोड़ने तोड़ने से खराब होगई हों। इस से उसे शनैः २ नए कपड़ों पर आप इसतरी करने का भी साहस होजायगा ॥

भारतवर्ष में स्त्रियों का घाटा।

“मदरास मेल” नामक पत्र कहता है कि स्त्रियों के घटते जाने का सब से बड़ा कारण

बाल्य विवाह और छोटी आयु में सन्तानोत्पत्ति है। १० और २० वर्ष के बीच २ की आयु में स्त्रियों की मृत्यु बहुत ज्यादा देखी गई है। बड़े-बड़े की मनुष्य गणना का सुपरिन्टेण्डेंट कहता है कि यदि लड़कियों की विवाह की आयु को बढ़ा दिया जाए तो जहां बहुत सी अबलाएं असामयिक मृत्यु से बच जाएंगी वहां साथ ही भारतवासियों का आचार भी उच्च होजायगा ॥

इसलाम में स्त्री की स्थिति—आज तक तो यही सुनते आए थे कि इसलाम में स्त्री की कदर गाय में से बढ़कर नहीं। कई सुसलमानों से सुना भी था कि स्त्रियां पुरुषों की खंतियां हैं, जब चाहो चरो। और कि जैसे दूध देने से बन्द होजाने पर गाय को बेच देते हैं और नई लेआते हैं, वैसे ही बूढ़ी या कुरूपा होजाने पर स्त्री को भी निकाल देने में कोई हानि नहीं। पर अब इस विषय में इसलाम की सम्मति बदलती मालूम होती है। लण्डन में व्याख्यान देते हुए सैय्यद अमीर अली महोदय ने हाल ही में कहा कि “आपने बहुत कुछ सुना होगा कि इसलाम में स्त्रियों का स्थान बहुत नीचा है, परन्तु वास्तव में यह बात नहीं। जितना इसलाम ने स्त्रियों की पदवी को उच्च किया है, उतना संसार के किसी धर्म, जाति, या दार्शनिक प्रणाली ने नहीं किया। पुत्री की अवस्था में स्त्री अपने पिता की इच्छा के अधीन नहीं। नियम है कि पिता की सम्पत्ति का भाग—पुत्र के बराबर—

उसे मिले। विवाह होने तक माता का धर्म है कि उस की रक्षा और पालन पोषण का ध्यान रखे। भार्या की अवस्था में उस अपने पति पर विशेष अधिकार हां जाते हैं जो वह उससे ले सकती है। वह सम्पत्ति की स्वामिनी रह सकती है, कोई भी नियम उसे इस से बाधित नहीं रख सकता” ॥

देवियों की पदवी को उच्च करने के लिये जो भी यत्न होवें सब शुभ हैं ॥

✽ चुटकले ✽

१—दूध को खट्टा होने से बचाने के लिये उस में मिसरी की एक डली डालदो ॥

२—यदि फूल की डण्डी को तेज चाकू काटा जाए तो कैची से काटे हुए फूल की अपेक्षा यह अधिक काल तक ताजा रहेगा क्योंकि कैची डण्डी को भींच देती है, जो पानी ऊपर नहीं चढ़ सकता ॥

३—सफेद रेशमी कपड़ों को धोते समय ध्यान रखना चाहिए कि पानी बहुत गर्म न हो, क्योंकि नाही इसतरी का लोहा बहुत गर्म होना चाहिए नहीं तो डर है कि रेशम कहीं पीला न जाय। धोते वक्त रेशमी कपड़े को मल नहीं चाहिए, बल्कि आटे की तरह साफे वाले शीत गर्म पानी में गून्धना (मांड़ना) चाहिए। काले रेशम को अन्तिम बार समय पानी में हलकी सी चाय मिला के चाहिए ॥

४—यदि आपको कुछ दिनों के लिए घर से बाहर जाना हो और पीछे से गमलों में लगे हुए पौधों के पानी के न मिलने से सूख जाने का डर हो तो एक चौड़ा सा टब या बाल्टी लेकर उस में उतनी ही ईण्टें रखदो जितने कि गमले आपके पास हैं। फिर टब में पानी भरकर ईंटों का ढंक दो, और उन पर पौधे रखदो। ईंटें पानी चूस लेंगी और पौधे वहां से अपने लिए आर्द्रता (नमी) लेते रहेंगे, और चिरकाल तक अच्छी अवस्था में रहेंगे ॥

५—मक्खी पकड़ने का कागज बनाने की यह विधि है कि अलसी के बीजों को थोड़ी सी राल के साथ मिलाकर इतना गर्म करो कि ठण्डा होने पर वह एक लेस सी बनी रहे। फिर एक चिथड़े तथा बुर्रा से कागज पर हलका २ सारे लेपन करदो। यह काम सस्ता भी है, और मक्खियां पकड़कर भी दूर की जासकती हैं ॥

६—आइल पेंटिङ्ग का चित्र साफ करना हो तो एक आलू को छील कर उस के दो टुकड़े करो, और कटी हुई तर्फ से चित्र पर सावधानता से मलो। जब आलू की तरी खुशक हो जाए तो ऊपर से काटकर नया तल निकाललो। फिर स्पंज के द्वारा शीत गर्म पानी से साफ करलो ॥

७—शीशे के ऊपर रंग बरंगी चित्रकारी के दाग उड़ाने हों तो चूने की सफेदी और

अमोनिया को मिलाकर, उस में थोड़ा सा पानी डालकर मलाई के समान नर्म करलो। फिर यह लेवी सी शीशे पर लगादो। सूख जाने पर साबन और गर्म पानी से धोडालो ॥

८—बालों के बुर्रा साफ करने के लिए पहले गर्म पानी में थोड़ा सा अमोनिया मिला कर एक उथावली प्याली में डालो। फिर उस में बुर्रा के बालों को भिगोकर पांच चार बार छिड़को। फिर गर्म पानी को गिराकर ठण्डे पानी से वैसे ही धोओ। तब सुखालो ॥

विविध विषय

क्या पौधे सोते हैं ?

१—प्रजीवेन्सी कालेज कलकत्ता के प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्रज्ञ डाक्टर जगदीश चन्द्र बोस ने पौधों पर परीक्षण करके यह मालूम करने का यत्न किया है कि क्या वे भी पशुओं की भांति सोते हैं। उन्होंने लूई मूई (लाजवन्ति) के पौधे के साथ विजली का एक ऐसा यंत्र लगाया जिस से पौधे को नियम पूर्वक थोड़े २ समय पीछे निरन्तर शोभ पहुंचते रहते थे। शोभ के पहुंचने पर पौधा पत्तियां बन्द करके झुक जाता था और कुछ समय विश्राम लेकर फिर अपनी पहली अवस्था में आजाता था। विजली की लहर से पौधे का झुकना और फिर उसी अवस्था में आजाना एक विशेष यंत्र द्वारा एक धुन्धले शीशे पर अपने आप लिखा जा रहा था और कई दिन रात तक इस प्रकार

घण्ट २ का हिसाब लेकर बोस महाशय इस परिणाम पर पहुँच हैं कि पौधे वस्तुतः पशुओं की भान्ति सोते हैं ॥

परीक्षण से सिद्ध हुआ है कि प्रातः नौ बजे लांजवन्ती का पौधा बिजली के क्षोम का कोई प्रत्युत्तर नहीं देता। इस समय से लेकर इस की क्रमशः जागृति होती है और दोपहर को यह बिल्कुल जाग उठता है। पाँच बजे सायं काल के बाद फिर सोना (प्रत्युत्तर का न देना) आरम्भ होता है और क्रमशः प्रत्युत्तर की शक्ति घटते २ प्रातः ९ बजे जाकर बिल्कुल जाती रहती है ॥

इस सारे परिवर्तन का कारण प्रकाश, ताप और आर्द्रता (गीला पन) का प्रभाव है। रात्रि समय प्रकाश का उत्तेजक प्रभाव जाता रहता है, ताप घट जाता है, और आर्द्रता के अधिक न सुखने के कारण पौधा फूलकर ढीला पड़ जाता है। इसी कारण लूई सूई सवेरे नौ बजे तक सुस्त पड़ी रहती है और सायं काल देर तक जागती रहती है ॥

(२) बे तार टेलीफोनी ।

टेलीफोन को हमारे पाठकों में से बहुतों ने देखा होगा। यह एक ऐसा यंत्र होता है जिस के द्वारा दो मनुष्य दूर दूर बैठे हुए आपस में वार्तालाप कर सकते हैं। इस में एक तार की आवश्यकता रहती है। परन्तु अब कमांडर कोलिन और लेफ्टेनेन्ट जेन्स नामक सागर सेना के दो अफसरों ने एक बेतार टेलीफोन बनाई है इस के द्वारा उन्हें १५० मील की दूरी तक बात

चीत कर सकने में सफलता भी प्राप्त हो गई है। तार वाली टेलीफोन में बोलने वाले की आवाज जैसी सुनाई देती है इस बेतार यंत्र में उस से अधिक स्पष्ट कर्णगोचर होती है और ऐसा प्रतीत होने लगता है मानों बोलने वाला उसी कमरे में बैठा है ॥

(३) पानी पर चलना ।

जिन दिनों हम स्कूल में पढ़ा करते थे, उन दिनों जालन्धर में एक मुसलमान सैय्यद आया था। वह कोई पचास मन लकड़ियाँ जला कर उनके धकते हुए कोंयलों पर नंगे पांव चला था, और पानी पर चलने का भी दावा करता था। यह सब चमत्कार वह अपने 'कलमे' के प्रताप से बताता था। पर अब विज्ञानी लोग बिना कलमे के ही पानी पर चलने लग पड़े हैं ॥

क्लीवेलैण्ड के सेन्ट इग्नेटियस नामक विश्व विद्यालय में भौतिक विज्ञान के महापाठ्याय फादर ओडनवच ने अगले दिन कहा था— कि शरीर के भार को एक समान रख कर पानी पर चलना सीखना ऐसा ही सुगम है जितना कि वाईसिकल चलाना सीखना ॥ वह कहते हैं कि मैं ने उस रहस्य को पुनः उल्लिखित किया है जो कि १८ वीं शताब्दि से लेकर आज तक खोया रहा है। उन का कथन है कि मनुष्य की देह पानी से $\frac{1}{9}$ भाग हलकी है फिर पानी में क्यों डूबे ॥

फादर ओडनवच ने बहुत से दर्शकों के

सामने अपने शिर, भुजाओं, और हाथों को ठीक तरह टिकाकर (जैसे रस्से पर नट करता है) एक बड़े तालाब में चल कर दिखलाया, घोर २ नहीं बल्कि जल्दी जल्दी ॥

(४) तार द्वारा देखना ।

जो बातें पहले असम्भव कही जाती थीं आज वह विज्ञान की कृपा से सम्भव प्रतीत हो रही हैं। पुराणों में राक्षसों की भूत विद्या के चमत्कार पढ़कर लोग हंसा करते थे। कुरुक्षेत्र से सैंकड़ों कोस दूर बैठा हुआ सञ्जय महाराज युधिष्ठिर को महाभारत के युद्ध का सारा वृत्तान्त कैसे सुनाता जाता होगा इसे बुद्धि नहीं मानती थी पर आज हम कह सकते हैं कि ऐसा होना सम्भव है। विजली की तार, टेलीफोन, सम्बन्धहीन तार (Wireless telegraphy) और वायरलस टेलीफोनी, आदि अद्भुत आविष्कार संसार को पहले की चकित कर चुके हैं। अब एक डाक्टर लो नामक विज्ञानी ने ऐसा यंत्र तैयार किया है जिस से सहस्रों कोसों पर होने वाली घटनाओं का चित्र सामने लटकाए हुए परदे पर आ जाता है। अभी तक तो चित्र की संक्रान्ति तार द्वारा ही होती है पर आविष्कारक महाशय बतलाते हैं कि वे शीघ्र ही बेतार के भी ऐसा कर सकेंगे। कैसा विस्मयकर आविष्कार है। उपरोक्त यंत्रों की सहायता से एक कमर में बैठा हुआ सेनापति जिसकी सेना रणभूमि में लड़ रही है अपने सामने युद्ध क्षेत्र का बड़ा चित्र लटकाकर सेना की प्रत्येक बात को देख और सुन

सकेगा। समर क्षेत्र से कई मील दूर बैठे हुए भी लड़ाई के सब चित्र उसके सम्मुख लटके हुए परदे पर पड़ते रहेंगे और वह सेना की प्रत्येक गति को देखेगा। देश का युद्ध मंत्री घर बैठा ही लड़ाई के रक्तपात और सर्वनाश का दृश्य अपनी आंखों से देखेगा। बल्कि कई बार तो उनके दुःख और कष्टको देखकर अकस्मात् ही चिल्लाकर दूसरे लोगों को भी चौंका देगा ॥

धन्य हो विद्युत दैवी ! यह सब आपका ही प्रताप है ॥

(५) बनावटी लकड़ी ।

फ्रांस देश के ल्योन्स (Lyons) नामक नगर से कृत्रिम लकड़ी के बनने की सूचना मिली है। कहा जाता है कि यह प्राकृतिक लकड़ी का बड़ी अच्छी तरह काम देगी। यह चिरकाल के परीक्षणों और परिश्रम का फल है। इसके बनाने की संक्षिप्त विधि यह है कि घास फूस को लेकर बारीक कुतर कर उवाल लिया जाता है। जब पतली लेवी सी हो जाय तो कुछ रसायनिक पदार्थ मिलाए जाते हैं। जब यह सब मिलकर एक जान हो जाए तो इस लेवी को शिकरों और साँचों में डालकर तखत, शहतीर, लाठियां और अन्य प्रकार की वस्तुएं सुगमता से बनाली जाती हैं। यह नई लकड़ी असली लकड़ी की तरह चीरी भी जा सकती है। ईंधन के तौर पर जलाने से इसकी बड़ी उज्ज्वल ज्वाला होती है। धूआं भी कम निकलता है। दिया सिलाई बनाने के लिए भी यह बड़ी उपयोगी सिद्ध हुई है ॥

कुछ तारों की पूंछें और हथोड़ किरणें

(HATHODE RAYS.)

कुछ समय तक यह समझा जाता रहा है कि तारों की पूंछों के चमकने का कारण विद्युत चमत्कार है जैसे कि एक नली में बहुत पतली की हुई वायु भर कर उसके वार पार बिजली गुज़ारने से होता है ॥

इस अनिश्चित सिद्धान्त का स्थान कुछ काल पश्चात् अर्हेनियस के इस सिद्धान्त ने लिया कि तारों की पूंछों का कारण सूर्य के किरण विकिरण का दबाव है। अब थोड़े दिनों से एक और कारण बताया जानें लगा है, और यह कुछ अधिक सन्तोष जनक प्रतीत होता है। पूंछल तार का मूलबिन्दु इलक्ट्रॉन (electrones) विद्युत् अणुओं का स्रोत समझा गया है, और इस में से यह इलक्ट्रॉन निकल कर तारे के वायुमण्डल में घुस रहे हैं। अब यदि सूर्य का विद्युत क्षेत्र अभिकेन्द्र हो तो बड़े हुए इलक्ट्रॉन के कारण यह जो प्रकाश है यह सूर्य की प्रतिकूल दिशा में स्थित होना चाहिए। जो अन्वेषण सूर्य के चुम्बुक क्षेत्र पर हुआ है, और स्चस्टर (Schuster) के सिद्धान्त के प्रयोग से, जो कि चुम्बुक शक्ति का कारण सूर्य के घूमने के साथ २ जाने वाली बिजली को मानता है, यह विदित होता है कि सूर्य पर की प्रधान बिजली ऋणविद्युत् (Negative electricity) है, और अभिकेन्द्र विद्युत् क्षेत्र इसी का परिणाम है। यह वर्णन आधुनिक आविष्कारों के अनुकूल है ॥

कुमारी तारा देवी ।

यद्यपि इस समय भारतवासियों की शारीरिक अवस्था बड़ी हीन है पर फिर भी भारत जननी का कोई २ पुत्र ऐसा निकल आता है जो निराशा में भी आशा बंधा देता है। श्रीमान् प्रोफेसर राम मूर्ति जी का नाम तो हमारे पाठक सब सुन चुके होंगे, अब उन के समान ही शारीरिक शक्ति और सामर्थ्य रखने वाली एक नारी रत्न निकली हैं। आप का नाम है कुमारी तारा देवी जी। आप एक राजपूत कन्या हैं। आपको छटपुन से ही व्यायाम करने का शौक था। इस समय आप अद्भुत शारीरिक व्यायाम दिखलाकर लोगों को चकित कर रही हैं। इनका विचार अब विदेश जाने का है। आशा है कुमारी जी विदेश जाकर भारत के गौरव को बढ़ाएंगी ॥

(८) जैन पण्डिता मगन बाई जी ।

महिलाकुल भूषण श्रीमती मगन बाई बम्बई के सेठ माणिकचन्द हीराचन्द जे० पी० जौहरी की कन्या हैं। आप का जन्म शोलापुर जिले के नान्होज ग्राम में १९३७ की पौष कृष्ण १० मी को हुआ। छुटपन से ही आप को पढ़ाने लिखाने की ओर माता पिता की दृष्टि थी। त्रयोदश वर्ष की अवस्था में सूरत के जरी वाले सेठ नेमचन्द हीरा चन्द के पुत्र श्रीयुत खेम चन्द के साथ आप का विवाह हुआ। कुछ दिनों बाद आप के एक कन्या हुई जो वर्ष भर की ही होकर स्वर्ग जा सिधारी। इस के

दो वर्ष बाद आप के एक और कन्या हुई। पर इस के बाद संवत् १९५१ में आप के पति का स्वर्गवास हो गया। इस दुस्सह विपत्ति के बाद से आप के पिता आप के ऊपर पुत्रवत् स्नेह करने लगे क्योंकि इस वज्रवेदना ने उन्हें बड़ा ही दुःखित कर दिया और कन्या पर वे अति दया दृष्टि रखने लगे। आप ने तब से बराबर संस्कृत और धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करना आरम्भ किया। जैन धर्म का आप को बड़ा अच्छा ज्ञान है। आप के धार्मिक ज्ञान की जैन सभा में कई बार परीक्षा हुई। १८६३ में सहारन पुर में आप ने १०,००० स्त्री पुरुषों की सभा में स्त्री शिक्षा पर व्याख्यान दिया तभी से जैन समाज में स्त्री शिक्षा ने जोर पकड़ा है। आप ने अनेक स्थानों में व्याख्यान दिए हैं। कोल्हापुर, जवेलपुर, दिल्ली, सरधना आदि स्थानों में आप के उद्योग से श्राविकाश्रम और कन्या शालाएं खुलीं। इन में बम्बई ताड़देव का श्राविकाश्रम सर्वोपरि है। उस की संचालिका भी आप ही हैं। दिगम्बर जैन महिला परिषद् की भी संचालिका हैं। कलकत्ते की कांग्रेस के साथ जो सोशल कांफ्रेंस हुई थी उस में भी आप ने विधवा कर्तव्य पर व्याख्यान दिया था। जैन यङ्ग मेन्स ऐसोसियेशन ने आप के इन कार्यों से प्रसन्न हो 'पण्डिता' की उपाधि प्रदान की। हाल में बनारस में जो विराट् जैन-महोत्सव हुआ था उस ने बहुमान पुरस्सर आप को 'जैन-महिलारत्न' की उपाधि दी है। हमारी इच्छा है कि भारत के घर घर ऐसी रत्न भूता देवियां अवतीर्ण हों ॥ (मनोरञ्जन)

पुस्तक परिचय ।

श्रीमद्भगवद्गीता—विचार दर्पण तथा भाषा टीका सहित। ३२ चित्र, पृष्ठ संख्या ६६६। मूल्य सर्वे साधारण से प्रति पुस्तक ॥=)

मिलने का पता—पं० श्रीराम शर्मा, १६० सूता पट्टी, कलकत्ता ॥

भगवद्गीता आर्य्य मात्र का परम पवित्र धर्म पुस्तक है। इस के गूढ़ आध्यात्मिक विचारों पर केवल भारत वासी ही मुग्ध नहीं बरन् सारा सभ्य संसार मोहित हो रहा है। संसार की प्रायः सभी मुख्य २ भाषाओं में भगवद्गीता का अनुवाद हो चुका है यद्यपि आर्य्य भाषा में पहले भी गीता की कई टीकाएं हैं पर यह टीका जो कलकत्ते के पं० सत्याचरण जी शास्त्री और पं० श्रीराम शर्मा ने तैयार की है अपने ढंग की निराली है। प्रत्येक अध्याय के पीछे एक विचार दर्पण दिया है। इसका कारण टीकाकारों ने यह लिखा है कि आजकल "जो उत्तम २ उपदेश की पुस्तकें निकलती हैं लोग एक बार उनको आधी या सारी पढ़कर एक ओर फेंक देते हैं सदा अपने पास नहीं रखते। इस लिए हमने यही उपाय सोचा है कि अपने विचार दर्पण को "श्रीमद्भगवद्गीता" की टीका के साथ प्रकाशित किया जाए, इससे लेख पढ़ने की इच्छा रखने वालों को गीता पढ़ने की अभिलाषा उत्पन्न होगी" ॥

विचार दर्पण में उत्तम २ विचार प्रकट किये गए हैं। भगवान् कृष्णचन्द्र पर जो व्यभिचार का दोष लगाया जाता है उसका

समाधान किया गया है और “आर्य हिन्दू” शब्द पर भी विवाद उठाया गया है। ३२ चित्र बड़े शिक्षाप्रद हैं। इस पर भी धर्म प्रचारार्थ उदार हृदय ग्रन्थकर्ताओं ने विद्यार्थियों, हिन्दी पुस्तकालयों, और कम से कम २० मनुष्यों को सुना देने की प्रतिज्ञा करने वालों को पुस्तक बिना मूल्य देने का नियम कर दिया है॥

२—वाजकर, कल्पतरु—(How to Attain Manhood and Womanhood) पृष्ठ ४७+१२ मूल्य सजिल्द प्रति का ॥, मिलने का पता:—वैद्य जटाशङ्कर लीलाधर त्रिवेदी, वैद्य कल्पतरु कार्यालय, अहमदाबाद, (गुजरात)।

यह पुस्तक पहले गुर्जर भाषा में लिखी गई थी। अब यह उसी का हिन्दी अनुवाद है। इस में वीर्य रक्षा, शरीर रक्षा, उत्तम सन्तान उत्पन्न करने के उपाय, स्त्री पुरुषों के अवयवों आहार व्यवहार और कुछ एक स्त्री पुरुष सम्बन्धी रोगों का वर्णन है। साधारण २ औषधियां भी लिखी हैं। स्त्री और पुरुष दोनों के लिए इसका पाठ लाभदायक होगा। पुस्तक की भाषा कुछ दोषयुक्त है, पर अन्य गुणों की विद्यमानता में यह दोष कोई विशेष खटकने वाला नहीं ॥

३—वैदिक सर्वस्व—यह मासिक पत्र भरतपुर से निकलता है। आजकल इस के सम्पादन का कार्य अधिकारी श्री जगन्नाथ दास करते हैं। वैदिक सर्वस्व वैष्णव धर्म का प्रचारक है। साम्प्रदायिक पत्र होते हुए भी इस में बहुत से लेख सर्व साधारण के उपयोगी रहते हैं। अधिकारी जी ने जब से पत्र का चार्ज लिया

है, इस में नया जीवन आगया है। वार्षिक मूल्य ॥ है, मैनेजर वैदिक सर्वस्व, भरतपुर (स्टेट) के पते से मिल सकता है ॥

४—चुंगी की उम्मेदवारी—(प्रहसन) लेखक—बदरीनाथ भट्ट बा० ए०, प्रकाशक—रामभूषण प्रेस, आगरा—मूल्य ३)

यह एक छोटा सा उपन्यास है। म्यूनिसिपैलिटी (चुंगी) का मैम्बर बनने के लिए आजकल लोग कैसे २ यत्न करते हैं उनका इस में एक स्पष्ट चित्र खींचा गया है। भट्ट जी ने इसे रोचक तो इतना बना दिया है कि बिना समाप्त किये छोड़ने को जी नहीं चाहता। स्थान २ पर अपने आप हंसी निकल जाती है। विशेषतः सेठ सुगन लाल की बातों को पढ़कर तो हंसी को रोके रखना असम्भव सा ही है। जिन लोगों को न हंसने का रोग हो उन्हें इस पुस्तक का एक बार अवश्य पाठ करना चाहिए॥

५—मनोरञ्जन—सम्पादक मिश्र ईश्वरी प्रसाद शर्मा, मूल्य २॥ यह सचित्र मासिक पत्र आरा (विहार प्रान्त) से निकलता है। जनवरी और फरवरी १९१४ का इकट्ठा अङ्क हमारे सामने है। पहले यह पत्र कलकत्ते में छपता था अब यह नवीन अङ्क प्रयाग में छपा है। इस में जैन महिला रत्न श्रीमती मगन वाई जी का एक सुन्दर चित्र है। लेख और कविताएं भी प्रायः सुपाठ्य और मनोरञ्जक हैं। आशा है समय पर न निकलने का जो रोग मनोरञ्जन को पीड़ित कर रहा था उससे यह अब शीघ्र ही मुक्त हो जाएगा॥

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ

सुधासिंधु

सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

कफ, खांसी, दमा, जाड़े का बुखार, हैजा, शूल, संप्रहणी, आंव लोह, अतिसार, पेटका दर्द, कै का होना, जी मचलाना, हाथ पैर और कमर का दर्द, बच्चों के हरे पीले दस्त, कुकर खांसी, दूध पटक देना आदि की स्वादिष्ट सुगन्धित दवा है। कीमत फी शीशी ॥)

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ

ददु गज केसरी

सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

बिना किसी तरह की तकलीफ या जलन के दाद को जड़से खोने वाली दवा है कीमत फी शीशी ॥)

हमारी दवा के प्रशंसापत्रों सहित सचित्र सूचीपत्र कलेंडर मंगाने से सबको मुफ्त मिलेगा मिलने का पता—**क्षेत्रपाल शर्मा मालिक सुख संचारक कं. मथुरा**

७००) रु० इनाम, ३००) रु० इनाम, २००) रु० इनाम ॥

(१) श्रीबाल्मीकि रामायण की जो टीका हिन्दी में पं० राजारामजी प्रोफेसर डी०ए० बी० कालेज लाहौर ने लिखी है, वह ऐसी उत्तम बनी हुई है, कि उस पर पं० जी को गवर्नमिन्ट और यूनिवर्सिटी मे ७००) रु० नकद इनाम मिला है। १-मूल संस्कृत भी साथ है (२) टीका श्लोक २ की अलग है। (३) कण्ठ करने योग्य श्लोकों पर निशान दिये हैं, मूल्य ५।) श्रीमद्भगवद्गीता—इस पर पं० जी को ३००) रु० इनाम मिला है। शब्दार्थ, भावार्थ, भाष्य सब खोल कर लिखा गया है मू० २) रु० ४-शाल-व्याकरण—इस पर २००) इनाम मिला है इसमें व्याकरण के नियम बड़े सरल लिखे हैं, ॥) ५-ग्यारह उपनिषदें भाष्य समेत ईश=) केन=) कठ=) मध्व ॥) मुण्डक और माण्डूक्य=) तैत्तिरीया=) तैत्तरेय=) छान्दोग्य २-बृहदारण्यक १॥=) मध्व ॥) ॥ ग्यारह इकट्ठी ५।) ६-शङ्कराचार्य और कुमारिलभट्ट का जीवन चरित्र ॥) ७-प्रार्थना पुस्तक -) वेद और रामायण के उपदेश-) वेद और महाभारत के उपदेश-) वेद मनु और गीता के उपदेश -) उपदेश सप्तक १-) ॥ पता—**मैनेजर,**

आर्ष-ग्रन्थावलि लाहौर ।

आतंक निग्रह औषधालय की आतङ्क निग्रह गोलियां

केवल वनस्पति ही से बनाई जाती हैं, अशक्ति के तमाम दर्दों को दूर करती हैं, मन्द पड़ी हुई पाचन-शक्ति को बढ़ाती हैं, बिगड़े हुए रुधिर को सुधारती हैं, मस्तिष्क को निर्मल बनाती हैं और दीर्घायु देती हैं, तथा सारी दुनियां में अपने सत्य गुणों से विस्तार और यश पा रही हैं।

मूल्य-गोली ३२ की डिब्बी १ का रु० १।

अधिक जानने के लिये हमारा सूची पत्र मंगा लीजिये। एक कार्ड लिखने पर आप को बिना डाक खर्च के मिल जायगा

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविन्दजी,

जामनगर-काठियावाड़

हजार २ धन्यवाद है

उस दयानिधि परमात्मन का जिस की कृपा से “अमृतधारा” ने थोड़े काल में इतनी प्रसिद्धि पाई है, कि “अमृतधारा विलडिंग्स” के भीतर एक खान डाकखाना “अमृतधारा डाकखाना” नामी खोला गया है, अमृतधारा डाकखाना के पास से जो सड़क ग्वालमण्डी को निकाली गई है उस का नाम “अमृतधारा रोड” रक्खा गया है, कार्यालय अमृतधारा को औषधियों के सम्बन्ध में पदक मिले, प्रशंसा पत्र मिले, और चारों ओर से “अमृतधारा” २ की ही पुकार है। कार्यालय अमृतधारा को अपनी बढ़ती हुई आवश्यकता को पूर्ण करने के वास्ते एक और बड़े मकान की आवश्यकता हुई, जो भी ईश्वर की कृपा से अति सुन्दर तय्यार हुआ है। इस—

अमृतधारा भवन के खुलने की रीति

श्रीमान मिस्टर एफ डबल्यू कैनवे साहिब आई. सी. एस. डिप्टी कमिश्नर लाहौर के हाथों ९ मई १९१४ को शहर लाहौर वरन् पंजाब के भी प्रायः प्रतिष्ठितों के बड़े जलसे के भीतर पूर्ण हुई।

जिस में आनरेबल राण बहादुर सर डाक्टर परतूल चन्द्र सी. आई-ई-भूतपूर्व जज्ज चीफ़ कोर्ट पंजाब और खान बहादुर आनरेबल मियां मुहम्मद शफी बेरिस्टर एट-ला की देशी चिकित्साके विषय में उच्च वक्तृताएं हुईं।

इस अद्वितीय हर्ष के प्रकाश में,

और अपने हजारों ग्राहकों को भी खुशी में सम्मिलित करने के वास्ते, प्रकाशित किया जाता है कि २७ मई १९१४ से २४ जौलाई १९१४ तक अमृतधारा व कारखाना की अन्य औषधियां व पुस्तकें $\frac{1}{2}$ मूल्य पर मिलेंगी, अर्थात् प्रति रुपया १) की रियायत होगी ॥

नोट—जलसे का वृत्तान्त जिन्होंने न पढ़ा हो हम से मंगवा लें ॥

सूचीपत्र जिस के पास न हो शीघ्र मंगावें, एक पैसे का कांडे सूचीपत्र के वास्ते लिखने से सब पहुंच जावेंगी ॥

इस हिसाब से प्रसिद्धौषधि अमृतधारा की बड़ी शीशी २॥ के स्थान में १॥ (=) में, और नमूना की छोटी शीशी ॥ के स्थान में १ (=) में मिलेगी, जिन श्रीमानों को किसी कारण से अद्यावधि आजमाने का अवसर नहीं हुआ उनके वास्ते अच्छा अवसर है ॥

कारखाना अमृतधारा की रियायत न्यायत होती है लाभ उठाइये ॥

पत्र या तार के वास्ते केवल इतना पता पर्याप्त है—“अमृतधारा” लाहौर ॥



बाल उड़ाने का खुद बूझार सावुन इसे कहते हैं (बाल उड़ जायें फिर पैदा न हों) रमेश सावुन दिना किसी तरह की तकलीफ के वालों को उड़ाकर जिल्द को मुलायम और ऐसी चमकदार कर देता है, मानों बाल यहां कभी थे ही नहीं, इस का चन्द रोज बर्ताव रहा तो उस जगह बाल आने ही बांद हो जायेंगे । एक टिकिया का दाम १) तीन टिकियों का वक्स ॥=) एजेंटों को कम से कम ५) रुपये का माल मंगाने से २५) सैंकड़ा कमीशन मिलता है और कुल खर्चा हमारे जिम्मे है ।

व्यौ पार रत्नाकर ।

इसकी प्रसिद्ध २ अखबारों ने प्रशंसा की है जिस में त्रिकालदर्शी अंगूठी, ताम्बूलविहार, कपूर का माला, गन्धक का गिलास, कपूर का कटोरा, पारे का गिलास, विलायती खिजाव, चान्दी सोने का मुल्यमा, सावुन, दाद की दवा रबर की मोहरें, आदि वगैरे की सैंकड़ों तरकीबें लिखी हैं । सच्चा हुनर हासिल करना है, तो सिर्फ ॥) का टिकट भेज कर मंगा लीजिये । जल्दी कीजिये थोड़ी जिल्द रह गई हैं ।

हर एक मजहब के देवताओं की और उमदा इमारतों की जैसी चाहिये मंगा मंगा लीजिये । की माफी अंगूठी ।) एक दर्जन का १॥) जर्मन सिल्वर की ।) चान्दी की ।) एजेंटों को कमीशन मिलता है ।

पता-रमेशचन्द्र एण्ड को०

(ब्रश्च नं० ८-) स्वामीघाट, मथुरा ।

धन ! धन !! धन !!!

धर्म पूर्वक धन कमाने के सैंकड़ों साधन ! देश सुधार की असली विधियां !! मरती हुई हिन्दू जाति की उन्नति के उपाय !!

प्रोफैसर बालकृष्ण ऐम० ए० अर्थ-शास्त्रमहोपाध्याय, गुरुकुल हरिद्वार के सरल हिन्दी भाषा में लिखित ।

अर्थशास्त्र-धनविद्या

में देखिये, हर एक भारतवासी के लिये इस अनूत पुस्तक का पाठकरना जरूरी है । जल्दी खरीदिये । पृष्ठ ५१५ कीमत सिर्फ डेढ़ रुपया डा० महसूल अलग

मिलने का पता—

पुस्तक भण्डार गुरुकुल, हरिद्वार भारत का संक्षिप्त इतिहास सचित्र १॥ और

अग्निहोत्र व्याख्यान ।)

नामी पुस्तक भी मिल सकते हैं ?

पं० हरविलास के प्रबंध से बाम्बे मैशीन प्रेस—लाहौर रोड, लाहौर में श्री युव सन्तसम वी० ए० पब्लिशर के लिये मुद्रित व प्रकाशित ॥

ॐ ज्योतिषां ज्योतिरागाच्चित्रः प्रकृतो यजनिष्ठ विभवा । ॐ

ॐ

उषा



लाहौर

विषय सूची ।

विषय	पृष्ठ
१—स्वच्छ वायु और बाल रक्षण—ले० प्रोफेसर छोटा लाल, बालकृष्ण पुराणी एम. ए. ... ३६३	
२—कादम्बरी क्रन्दन (पद्य)—ले० श्री० बालाप्रसाद ३६८	
३—यवन पर्यटक और राजदुत-मेगस्थनीज— (१) ले० प्रो० गोविन्दराम एम० ए० ... ४०१	
४—भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास-महा- भारत का काल—ले० “आत्मा” ... ४०४	
५—अंग्रेजी बाबू और स्वदेशी भार्या नाटक) अनुवादक—पं० कृष्णचन्द्र प्रभाकर ... ४२१	
६—मातृ भूमि (पद्य)—उद्धृत ... ४२५	
नारी उपयोगी पृष्ठ	
७—जागरण (४)—ले० श्रीमती हेमन्त कुमारी चौधुरी ... ४२५	
८—सुशिक्षित स्त्रियां और उनका व्यायाम— ले० कुमारी विद्यावती ... ४२८	
९—वैदिक काल का एक सुन्दर मनोहर दृश्य (पद्य)—ले० पं० चेताराम शर्मा ... ४३१	
१०—विविध विषय ... ४३२	
११—पुस्तक परिचय ... ४३६	
१२—एक अमेरीका निवासी आर्थ भगिनी का पत्र—ले० “धम्मामिलाषी” ... ४४३	
१३—वैदिक काल-सुवर्णयुग समय—लेखक— “एक आर्य” ... ४४६	
नोट—समय पर न पहुँचने के कारण इस अंक में चित्र नहीं दे सके । अगले में दे दे दिए जाएंगे ।	

अमेरीकन इलाज ।

अन्धे देखने लगते हैं,
आँख के मोती बिन्दू बिना नस्तर
दूर होते हैं, !!!

केटरेक्टोडाइन ।

“अभी यह नक्की हुआ है कि आँख के मोती
बिन्दू बिना नस्तर दूर होते हैं, इसके लिए
केटरेक्टोडाइन एक बड़ी भरोसे लायक और अत्यंत
दवा है, मोती बिन्दू के रोगियों को अब शक
क्रिया (नस्तर) कराने की मुसीबत में पड़ने का
कुछ कारण नहीं रहा है । मोती बिन्दू पर शक
क्रिया कराने वाले सब रोगियों को आराम हो जाता
है, ऐसा मत समझना, परन्तु केटरेक्टोडाइन
एक भी बीमार निराश होता नहीं है
शीशी का मूल्य ५) रु० डाक महसूल ४)

डा० नवरत्नका बनाया

पक्का काला खेजाब ।

यह कलप याने खेजाब लगाने से सूँठ, खजूर
और सिरकें सफेद बाल पाँच मिनट में खूब
काले हो जाते हैं, बालों के शोकीनों याद रखो
इसके बरोबर आज कोई भी खेजाब नहीं है ।
खेजाब लगाने में सहूल है, खुशबू में शीशी
और तासीर में अक्सीर है । रंग में पक्का है
कीमत में सस्ता है । कीमत १ रुपया, डाक
माफ ।

मेसर्स नवरत्न एण्ड सन्स

कालवा देवी रोड, बंबई नं० १



हिन्दी चित्रमय जगत ।

राष्ट्र भाषा नागरी का सर्वमान्य चित्रपूर्ण मासिक पत्र ।

सम्पादक—भास्कर रामचन्द्र भाले, "कावेदास"

चार वर्ष से हिन्दी जगत की अपूर्व सेवा कर पांचवें वर्ष से नई सज धज के साथ प्रकाशित होगा । इस के महत्वपूर्ण लेख, सुप्रसिद्ध कवि-मयूरों के आलाप, विनोदी लेख, चटकाले गल्प, सरल और रोचक भाषा में लिखे हुए वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय लेख पाठकों को चित्रवत् कर देते हैं । हिन्दी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध लेखकों एवं कवियों ने इसमें योग देने का वचन दिया है । वर्तमान हलचलों के सदा सर्वदा सचित्र वर्णन इसमें रहते हैं । इतने महत्वपूर्ण एवं चित्रपूर्ण पत्र रहने पर भी मूल्य केवल साधारण कागज़ की प्रति का ३) रुपया तथा मोटे कागज़ की प्रति का ५)) रुपया रखा है ।

वर्ष के आरम्भ में जनवरी का खास मोटाचित्रपूर्ण अंक भी ग्राहकों को बिना मूल्य दिया जाता है । अन्यो से १) रुपया ।

५०० ग्राहक बढ़ जाने पर पृष्ठ संख्या डेढ़ी या दुगुनी कर दी जायगी ।

पता—मैनेजर—हिन्दी चित्रमय जगत, पुना सिटी ।

SPECIAL WAR ILLUSTRATED PAPERS.

PUBLISHED EVERY WEEK DURING WAR.

The following are specially published during war. They give the full History of war from time to time and contain numerous illustrations. They are of Permanent value as any of them can be handsomely bound in to a volume or volumes after the war is finished.

* The Ill War News—

Published by Ill London,

News Office.

* The Great War,

Edited by H. W. Wilson.

* The Times History of War.

The War Illustrated.

The Penny War Weekly.

The War Budget.

The War of Nations.

* Price annas eight per Part, Postage extra.

Order Back Number with current issues for full War History.

The American and English News Supply Agency,

NEWS AGENTS,

GIRGAUN, BOMBAY.

ज्वर ।

बाटली वाला का एंग्लू मिक्सचर ।

या पिल्स ज्वर की अनुभव सिद्ध दवाई है ।
मूल्य १ रु० । टानिक गोलियां पीले लोगों के
के लिए, थके हुए मस्तिष्क, निर्वलता, तपदिक
की पहली अवस्था, और बदहजमी आदि की
सब बीमारियों में एक अमूल्य औषधि है ।
मूल्य १॥) दन्त मंजन वैज्ञानिक रीति से 'मियाफल'
और अंग्रेजी प्रतिनाशक औषधि के साथ मिलाया
हुआ । मूल्य १॥) प्रति । दद्र की मर्हम-दद्र, धोबी
की खुजली इत्यादि को एक दिन में आराम
कर देती है मूल्य १॥) प्रति । यह सब अंग्रेजी
दवाई बेचने वालों या डाक्टर एच० एल० बाट-
लीवाला, जे० पी० वारली, दादर बम्बई, के
पते से मिल सकती है ॥

Fair sex—स्त्री जाति ।

केसरी का लोभ्र,

गर्भाशय के रोगों के लिए सबसे अच्छी टानक है ।

स्त्रियों के सब प्रकार के रोग जस कि मासिक
धर्म की खराबियां, मृतुओं का दर्द से आना,
या विल्कुल न आना, कबज लहू की कमी और
अन्य कई गुप्त रोग जिन से प्रायः नारियां पीड़ित
रहती हैं इस से झट दूर हो जाते हैं । मूल्य
बड़ी बोतल २) छोटी १॥)

मिलने का पता—डाक्टर के० एन० केसरी,

“केसरी कुटीरम”

६, बन्दरस्ट्रीट, मदरास ।

विख्यात थियुस दवादयाल जा की रची हुई हिंदी
शाक भाजी अर्थात् सबजी तरकारी

सफे २=७

जिसकी उर्दू भाषा में सहस्रों पुस्तकें विक
चुकी हैं, और जिसके हिन्दी एडिशन की अध्या-
एक चिरकाल से बाट देख रहे थे हिन्दी जानने
वाले स्त्री पुरुष मात्र के लिये हिन्दी टाइप में
अत्यन्त स्वच्छ और उत्तम छपकर विक्री के लिये
तैय्यार है पहली बार केवल १००० कापी छपवाई
हैं जो आशा है शीघ्र ही विक जावेंगी, इसलिये
ग्राहकों को उचित है कि शीघ्र भंगालें ताकि निराश
न रहना पड़े मूल्य १॥) ———

हिन्दी तसहील-उल-तर्जुमा

अर्थात् अंग्रेजी अनुवाद सिखाने की अत्युत्तम
पुस्तक (प्रथम भाग) सफे ५६ जो उर्दू में वर्षों से
न केवल पञ्जाब किन्तु भारतवर्ष मात्र के भी
विविध प्रान्तों में प्रचलित है और जिसके हिन्दी
एडिशन की अध्यापक चिरकाल से बाट देख रहे
थे अब हिन्दी टाइप में अत्यन्त स्वच्छ और उत्तम
छपकर विक्री के लिये तैय्यार है । बहुत
जल्द भंगवायें । मूल्य केवल ५ आने ।

हिन्दी रोमन का रिसाला

अर्थात् हिन्दी जानने वालों को अति सुगमता
से अंग्रेजी अक्षरों में रोमन के कार्यदे से हिन्दी
सिखाने की अमूल्य पुस्तक जो अत्यन्त परिश्रम
से हिन्दी जानने वालों के हितार्थ तैय्यार की
गई है । मूल्य केवल दो आने है ।

मिलने का पता—

मैनेजर-इम्पीरियल बुक डिपो, चांदनी चौक,
देहली

उषा

सचित्र मासिक पत्रिका

भाग १

मार्गशीर्ष-पौष-१९७१-नवम्बर-दिसम्बर १९१४

संख्या ११-१

स्वच्छ वायु और बाल रक्षण ।

(लेखक—प्रोफेसर छोटालाल बालकृष्ण पुराणी एम० ए०)

ह

मारे मन में नित्य यही डर लगा रहता है कि स्वच्छ ठण्डी वायु से सरदी और श्लेष्म (जुकाम) होजाता है । परन्तु यह डर

सर्वथा निर्मूल है । स्वच्छ शीतल पवन से शरीर की आरोग्यता ऐसी सुधरती है कि श्लेष्म का रोग उत्पन्न करने वाले जन्तुओं के आक्रमण का मनुष्य के शरीर पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ता । यह मानव देह शुद्ध और खुले वायु मण्डल में विचरते फिरने के योग्य बनी है । वायु की शीतलता हानिकारक नहीं । परन्तु

अन्दर के जल भाग में जिसके कारण कि यह गीली लगती है और मनुष्य के शरीर के भीतर अत्यन्त शीघ्रता से होने वाली उष्णता में प्रमेद का होना हानिकारक है । गर्म सरद होने का यही कारण होता है । यदि शरीर पर शवनम, जल के छींटे और वर्षा की बोछाड़ न पड़ने दी जाये तो फिर आप चाहे तम्बू तानकर या किसी अन्य वस्तु से शरीर को भली भान्ति ढांप कर खुले मैदान में सो रहिए, कभी सरदी न लगेगी । हां, एक बात है । यदि नित्य कमरे का द्वार और खिड़कियां बन्द करके सोने वाला मनुष्य एक दम उपरोक्त रीति से खुली हवा में सोएगा तो अवश्य उसको हानि ही होगी । कमरे की केवल एक खिड़की खुली रखकर उस खिड़की के पास सोने से शरीर के केवल एक भाग पर ही वायु का प्रवाह

स्पर्श करता है और इस से अवश्य हानि होती है।

बहुत से अर्वाचीन पाश्चात्य वैद्यों का मत है कि शीतल वायु के प्रवाह से कुछ हानि नहीं हो सकती। यदि स्वच्छ खुली हवा में जाने से उष्णता में प्रभेद आने के कारण कुछ हानि हो भी तो वह बन्द कमरे की विषैली और अशुद्ध पवन के प्रभावों के सामने किसी गिनती में नहीं। जो लाभ २३ घण्टे शुद्ध पवन में रहने से होता है वह बन्द कमरे की अशुद्ध हवा में १ घण्टा रहने से ही नष्ट होजाता है।

घर कैसे होने चाहिए।

वृक्षों के सूखे पत्तों और डालियों का बना हुआ घर आरोग्यता की दृष्टि से बहुत अच्छा है क्योंकि इस में वायु के आने जाने में कोई रुकावट नहीं होती, जिससे घर का वायु अति विशुद्ध रहता है। ऐसा घर भी वायु के वेगवान प्रवाह को बहुत कुछ मन्द कर देता है, परन्तु आजकल हम ने ईंट पत्थर के मकानों में रहना स्वीकार किया है। ऐसे घरों से और चाहे कितने ही लाभ हों पर रुजहारी स्वच्छ वायु के सतत संचार से जो आरोग्यता का लाभ था, वह बहुत घट गया है। एक और हानिकारक बात यह है कि वर्तमान समय में लोग एक दूसरे के बहुत निकट भिच भिच कर रहते हैं। इस प्रकार बहुत से मनुष्यों की खिचा खिच बसी हुई बस्तियों से जो दाब पृथिवी और पवन में आजाते हैं उनको यथोचित रीति से दूर नहीं किया जा सकता। एक बड़ी हानि यह भी है कि ऐसे घरों में रहने से शीतल वायु को सहन करने की शक्ति मनुष्य में बहुत घट जाती है।

ऐसे घरों में रहते हुए भी शुद्ध वायु मिलता रहे, इस के लिए क्या करना चाहिए? हमारे देश में शरद ऋतु को छोड़ शेष सब ऋतुओं में पश्चिम की ओर से वायु बहता है। अब यदि घर में उपरोक्त दिशा के कमरे में बड़ी २ खिड़कियां रखी जायें तो उन खिड़कियों को खोलने से सारे मकान में शुद्ध वायु का संचार होता रहेगा, विशेषतया ऐसे घर में तो वायु का प्रवाह बड़ी सुगमता से प्रवेश कर सकता है, जिस में कि एक कमरे के अन्दर दूसरा कमरा खुलता हो। अग्नि जलाने से और मनुष्यों के रहने से घर का वायु गन्दा और गर्म हो जाता है। गर्म वायु शीतल वायु से हलका होता है। जब खिड़की या द्वार के मार्ग से शीतल और भारी वायु घर के अन्दर प्रवेश करता है तो यह गर्म वायु मकान की छत के पास जाकर इकट्ठा हो जाता है। यदि कमरे की छत के पास दीवारों में छिद्र निकाल दिए जायें तो इस से जहां कमरे के अन्दर का अशुद्ध वायु बाहर निकल जायगा, वहां साथ ही बाहर का ताजा स्वच्छ शीतल वायु अन्दर भी आसकेगा। इसलिए प्रत्येक मकान में नीचे की ओर खिड़कियां और ऊपर छत के पास झरोके रखने चाहिए। कमरे की खिड़कियां सब ऋतुओं में दिन रात खुली रहनी चाहिए। यदि चोर उचकें के घुस आने का डर हो तो खिड़की में लोहे की सिलाखें और बाहर की ओर मलमल का परदा लगा देना चाहिए ताकि मच्छर आदि अन्दर न आसकें। शीतल वायु का प्रवाह सीधा शरीर पर न लगने पावे इसलिये खाट कमरे के ऐसे भाग में बिछानी चाहिए जहां कि पवन का झोंका न लगता हो। यदि

यह न होसके तो खाट को, विशेषतया बच्च की खाट को, खिड़की से जितनी दूर परे होसके उतनी दूर परे बछाओ, और खाट के आगे दो फीट ऊंचा एक पुराना कम्बल या कोई और कपड़े का पर्दा तानदो, जिस से शीतल वायु का झोंका तो सीधा शरीर पर न लगे पर स्वच्छ ताज़ा वायु अवश्य मिलता रहे। वर्तमान बड़े २ नगरों के घरों में एक बड़ा दोष यह होता है कि लोग सर्दी के डर के मारे अंगीठी जलाकर या अन्य साधनों से कमरे की वायु को बहुत गर्म कर लेते हैं। ६५ वा ७० दर्जे फार्नेहाइट से अधिक कमरे की उष्णता न होनी चाहिए। इस से बच्चे की शीत सहन करने की शक्ति बहुत घट जाती है। ऐसे घर में बच्चे की त्वचा वायु की उष्णता में होने वाले परिवर्तनों को सहन नहीं कर सकती इसीलिए उष्णता में थोड़ा सा भेद होने पर भी ऐसे बच्चों को झट सर्दी लग जाती है। सर्दी और श्लेष्म होंजाने के डर से कमरे के सब द्वार और खिड़कियां बन्द रखने से गन्दी हवा के कारण स्वास्थ्य के बिगड़ जाने का भारी भय रहता है। स्वच्छ, शुद्ध वायु में बालक को सैर करानी चाहिए :—

अपने घर में बच्चे को स्वच्छ वायु में रखते हुए भी जितना बन सके उतना घर से बाहर स्वच्छ वायु में अवश्य रखना चाहिये। कौन से समय बालक को बाहर लेजाना आरम्भ करना चाहिए यह निश्चय से नहीं कहा जा सकता, क्योंकि यह बालक के स्वास्थ्य, शक्ति, और ऋतु पर निर्भर है। पतझड़ (शिशिर) और शरद ऋतु में उत्पन्न होने वाले बालक को प्रथम दो

मास तक साधारण गर्म हवा वाले बड़े कमरे में रखना अच्छा है। गर्म देशों में और उन ऋतुओं में जिन में कि वायु एक बराबर गर्म सर्द रहता है साधारण सशक्त आधे मास के बालक को भी बाहर लेजाने में कोई भय नहीं। शीतकाल में सूर्योदय के पश्चात् और ग्रीष्म में दिन के ठण्डे समय में बालक को बाहर लेजाना चाहिए। बालक को कितना समय बाहर रखना चाहिये ये उस की आयु, शक्ति, और माता के अवकाश से नियत होसकता है। छः मास की आयु से पूर्व बालक को दिन भर में एक बार एक घण्टा तक और इस के पश्चात् दिन भर में दो बार सारा मिलाकर तीन चार घण्टे तक बाहर स्वच्छ वायु में रखना चाहिए। अब लोग समझने लगे हैं कि जितना समय बालक को घर से बाहर स्वच्छ वायु में रखा जाय उतना ही उस का आरोग्य और मानसिक प्रकृति सुधरती है।

बालकों को किस प्रकार बाहर लेजाना चाहिये।

बच्चों के लिए बावा गाड़ी (छोटी सी गाड़ी जिस में अङ्गरेजों के बच्चों को बिठा कर दाया बाहर घुमाने ले जाती है) पर बहुत अधिक पैसे नहीं लगते। पर जिन लोगों में उसे लेने की सामर्थ्य न हो वे वैसी ही गाड़ी कम दामों में तरखान से बनवा सकते हैं। ऐसी बावा गाड़ी में लिटा कर बच्चे को बाहर ले जाना अच्छा है। शरद ऋतु में वस्त्र परिधान के विषय में जैसा हम बतला आये हैं वैसे कपड़े पहनाए बिना बाहर न लेजाना चाहिये। इस के अतिरिक्त उस के नीचे और ऊपर गरम हलका कम्बल या हल्की रज़ाई रखनी चाहिए। यह कम्बल या

रजाई बच्चे के चारों ओर इस प्रकार लपेट देनी चाहिये कि केवल मुख ही बाहर रहे, और सब अंग ढक जाएं। इस कम्बल को उस के आस पास रखते समय इस बात का खूब ख्याल रहे कि उस में बल तथा मरोड़ न पड़े, और बच्चे का शरीर, हाथ पांव अथवा कोई अन्य अङ्ग न दब जाय और बच्चा भिच न जाय। इस प्रकार ढांपे हुए बच्चे को चाहे कितनी ही ठण्ड हो सूर्य के चढ़ने पीछे बाहर लेजाने में कुछ भी हानि नहीं होती। चौमासे में भी यदि दिन खुला हो तो उपरोक्त रीति से संभाल कर बाहर लेजाने में कोई डर नहीं। ग्रीष्म में वायु अच्छा गरम रहता है इस लिये उस ऋतु में गरम ऊनी कपड़े पहनाने और कम्बल में लपेट कर लेजाने की कोई आवश्यकता नहीं। ग्रीष्म में इस बात का ध्यान रखना होता है कि सूर्य की किरणें बच्चे के मुख वा शिर पर सीधी न पड़ें। इस ऋतु में बालक की गाड़ी को किसी वृक्ष की छाया के नीचे रखना चाहिये।

जिन लोगों के घर नौकर हैं वे अपने बच्चे को उन के साथ बाहर भेज सकते हैं, परन्तु जिन्हें नौकर रखने की सामर्थ्य नहीं उन्हें यह काम आप करना पड़ता है। कर्तव्य को भली प्रकार समझने वाला प्रत्येक मनुष्य अपने बच्चे को परम हितकर स्वच्छ वायु का सेवन कराने के लिये अवश्य कुछ समय निकाल कर उसे नित्य बाहर ले जायगा। साधारणतया पुष्ट और फुर्तीले शरीर वाली माता के लिये प्रातःकाल एक घण्टा निकालना कठिन न होगा। पिता भी इस विषय में बड़ी सहायता दे सकता है। बाहर बाज़ार जाते समय या किसी अन्य स्थान को जाते समय

वह बच्चे को योग्य वस्त्र पहना कर और कम्बल में लपेट कर बाहर ले जा सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि बच्चे के लिये अपने समय का कुछ भाग देना पड़ता है परन्तु कौन ऐसा मनुष्य होगा जो अपने प्रिय बालक को स्वच्छ वायु का अत्यावश्यक दान देने के लिए प्रसन्नता पूर्वक तत्पर न हो? धनी लोग नौकरों के साथ अपने बच्चों को बाहर भेजते हैं। वे अपने मन में इस लिये गर्व करते हैं कि हम गरीब निर्धन लोगों की अपेक्षा सुखी और अच्छे हैं क्योंकि हमारे पास नौकर चाकर हैं। परन्तु वे समझते नहीं कि नौकर चाकरों वाले मनुष्य प्रायः आलसी, अभिमानी और निष्ठुर हो जाते हैं। सदा दूसरों पर निर्भर रहने के कारण वे ऐसे परावलम्बी बन जाते हैं कि कुछ अंशों में अपने नौकरों के दास होजाते हैं—परतंत्र होजाते हैं, अपनी स्वाधीनता खो देते हैं। एक और हानि यह है कि जिस प्रेम से माता बच्चे को सम्भालती और देख भाल करती है नौकर वैसे प्रेम और सावधानता से देख भाल नहीं करता। नौकर की रक्षा में बालक को रखना अच्छा नहीं। बहुत से बालक नौकरों की अज्ञानता और असावधानता के कारण भयङ्कर रोगों के पंजे में फँस जाते हैं। अतः नौकर न रख सकने वाले मनुष्य इन धनियों से किसी प्रकार भी कम भाग्यशील नहीं हैं। नौकर रख सकने की शक्ति से मनुष्य के मनुष्यत्व में कोई वृद्धि नहीं होती परन्तु जैसाकि ऊपर कहा है मनुष्यत्व कुछ घटता ही है।

सैर के लिये कहां जाना चाहिये।

घर के पीछे कोई छोटासा बाग अथवा खुली

भूमि हो तो वहाँ किसी वृक्ष की छाया के तले बच्चे को ले जाना चाहिये यदि घर के साथ ऐसा प्रबंध न हो तो पास के किसी बाग या खुले मैदान में ही बच्चों को ले जाना अच्छा है। यह भी न हो सके तो अपने घर के बरान्डे में या कोठे की छत पर बच्चे को लेकर फिरना चाहिये। पश्चिम के अच्छे नगरों में आजकल शहर के अन्दर छोटे २ बाग बने होते हैं। उनमें बच्चों को सैर के लिये लेजाने की बड़ी सुविधा रहती है। भारत में भी यदि म्यूनिसिपल कमेटियाँ चाहें तो ऐसे सुधार कर सकती हैं।

मौसिम अच्छा न हो तो उस समय बालक को स्वच्छ वायु सेवन कैसे कराना चाहिये।

बाहर वर्षा हो रही हो, या ठण्डी हवा जोर से चल रही हो, या वायु बहुत गीला हो तो बालक को बाहर नहीं लेजाना चाहिए। इस समय उसे अच्छी तरह से वस्त्र पहिरा कर, बावा गाड़ी में बिठलाते समय जिस प्रकार कम्बल में लपेटते हैं वैसे ही लपेट कर, उसे बावा गाड़ी में या छोटी सी खटिया, या शयन-मंजुषा में रख कर, उसके शिर को शीतल पवन के झोंकों वा सूर्य की तीक्ष्ण किरणों से सुरक्षित करके, उसे खिड़की के पास धर देना चाहिये। यदि बालक इतना बड़ा हो कि चल सके तो उसे बाहर जाते समय पहिरने के कपड़े पहिरा कर गेन्द या किसी अन्य खिलौने से खेलने देना चाहिये। इससे उस का मन प्रफुल्लित रहता है और उदासीनता तथा निरुत्साह उसे नहीं घेरते।

वायु स्नान।

बड़े मनुष्यों के समान बच्चे का स्वास्थ्य भी स्वच्छ वायु में रहने और चलने फिरने से अच्छा

रहता। तथा गन्धे वायु में विगड़ता है। इसलिये बच्चे को नित्य दिन के समय स्नान कराने से पहले पन्द्रह मिनट या आधे घण्टे तक कपड़े खोल कर बिल्कुल नङ्गा रखना चाहिये। शीतकाल में ऐसा प्रबंध करना चाहिये कि नङ्गा बच्चा सूर्य के प्रकाश में रहे पर शीतल वायु के झोंके उस पर सीधा आक्रमण न करें। यदि ऐसा न हो सके तो उसे साधारण गरम वायु वाले कमरे में रक्खा जाये। ग्रीष्म में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि बालक के प्रकाश में रहते हुए भी सूर्य का तेज उसके शिर तथा मुख पर सीधा न पड़े। बच्चे का चित इस से बहुत प्रसन्न होता है। तीन मास के पश्चात् बच्चा इस समय अपने हाथ पांव उछाल कर खूब खेलता है। इस वायु स्नान से बालक की आरोग्यता बढ़ती है।

कोमल बालक के लिये क्या करना चाहिये।

निरोग बालक से भी बढ़कर निर्वल स्वास्थ्य वाले कोमल बालक के लिये स्वच्छ वायु की आवश्यकता है। स्वच्छ वायु से उसकी पाचन शक्ति पुधरती और भोजन की रुचि होती है। साथ ही निद्रा भी अच्छी आती है। जिस बालक को बहुत यत्न करने पर भी घर में निद्रा नहीं आती वह स्वच्छ वायु के सेवन से शान्ति पूर्वक सोने लग जाता है। पहले से बालक को घर में ही कैद रखने, बाहर सैर पर न लेजाने, बहुत गरम वायु वाले कमरे में भी खूब वस्त्र पहिराये रखने से उसकी प्रकृति ऐसी हो जाती है कि वह वायु के प्रभेद को सहन नहीं कर सकता, और सर्दी का भोग हो जाता है। बच्चे को पर्याप्त और योग्य वस्त्र पहिरा कर बाहर ले जाने से कोई भी हानि नहीं होती यदि उसके शरीर में ज्वर (बुखार) न

हो तो चाहे सदीं भी हो उसको बाहर सैर के
लिये लजाना चाहिए क्योंकि इस से उसका
आरोग्य सुधर जाता है ।

नोट—प्रो० पुराणी बाल रक्षण पर एक उपयोगी
पुस्तक लिख रहे हैं । यह लेख वहां से लिया गया है ।

कादम्बरी-क्रन्दन ।

१

सम्बाद चन्द्रापीड का जब पत्रलेखा ने दिया,
उत्कण्ठिता ने आगमन सुन हर्ष मनमें यों किया ।
जैसे तृषित चातक, जिसे न विचार दैव-विपाकका,
काली घटा को देख केवल हर्ष से चहकारता ॥

२

प्रिय दर्श-हित कादम्बरी इतनी अधिक उत्सुक हुई,
गृह में नहीं प्राणेश की बैठे प्रतीक्षा कीगई ।
प्रत्युद्गमन के हेतु उज्ज्वल वेष धारण कर लिया,
मणिगण जटित आभरणसे नख-शिख सभी भूषित किया ॥

३

कलकंठ में माला कुसुमधरि अंगराग लगा लिया,
शृंगार षोडश भव्य से निज देह दिव्य बना लिया ।
प्रिय भेंट-हित, परिजन-सहित, ऐसे चली आनन्द से,
प्रत्यक्ष जैसे रोहिणी मिलने चली हो चन्द्र से ॥

४

सत्प्रेम से वह विह्वला यों मार्ग में कहने लगी,
“विश्वास होता है नहीं, सचमुच बता मुझको ।
क्या सत्य है यह आज होगी भेंट निश्चय,
क्या सुन पड़ेगी श्रुति-सुधा-वाणी निरामय-क्षेमकी” ?

५

कहते हुए इस भांति वाणी प्रेम से गद्गद हुई,
दक्षिण नयन की शोक-सूचक उस समय स्फुरणा हुई ।
कंपित हुआ थर थर हिया ज्यों बात-हत कदली हुई,
प्रिय-दर्शनों हित व्यग्रता तब और भी बढ़ती गई ॥

६

संकल्प और विकल्प मन में घोर अति उठते गए ।
क्या दुःख देने से विधाता तृप्त अब भी न हुए ?
आश्रम * सखी का था जहां सौन्दर्य-पूरित सर्वथा,
पहुंची निकट, दावाग्नि से सहमी हुई हरिणी यथा ॥

७

जैसे निशा शशि के विना, ज्यों शुभ्र सर जल-हीन हो,
पल्लव-विना ज्यों वृक्ष हो, उपवन सुमन से हीन हो ।
यों देह प्राण-विहीन चन्द्रापीड का भूपर पड़ा,
देखा भयंकर दृश्य, भारी शोक-मण्डल है खड़ा ॥

८

यह दृश्य क्षणभर भी नहीं देखा कि उसने हा ! कहा,
वस होगया मुख बन्द तब प्रस्वेद सब तन से बहा ।
फिर सुन्दरी उस काल में मूर्छित मही में यों गिरी,
ज्यों वृक्ष-छेदन से गिरी आश्रित उसी की बल्ली ॥

९

यह देख घटना पत्रलेखा भी अचेतन होगई,
मानों असह्य व्यथा सहन को ईश ने औषधि नई ।
हितकर उन्हें दी, पर वही दुर्भाग्य से निष्फल हुई,
कादम्बरी की आंख थोड़ी देर में ही खुल गई ॥

१०

हा ! नाथ, हा ! प्राणेश कह सिर पीट कर रोने लगी,
कुररी-सदृश करुणा प्रलाप विलाप वह करने लगी ।
वाणी बिरहकी वेदना से, आर्त ऐसी बोलती,
कातर वचन से कांपकर मानों मही भी डोलती ॥

* आच्छाद सरोवर पर महाश्वेता का आश्रम-

२१

जिस्ने किया मर्दन कलालापा कलापी कंठ का,
बाणी वही कर्कश विलापी, दृश्य है स्वर-मंग का ।
विह्वल दशा को देख मदलेखा सखी ने तब कहा,
“धीरज धरो, सुनलो विनय” पर कौन सुनता था वहां ॥

२२

कादम्बरी-क्रन्दन महा करुणा भरा चलता रहा,
“हे देव, हे हृदयेश, मुझको छोड़कर तुमहो कहां !
हा ! प्राण-बल्लभ, अनुचरी-हित कष्ट सह आते हुए,
क्यों मार्ग में ही आप ऐसी घोर निद्रा सो गए ! ॥

२३

“स्वामिन, नहीं था आप को जो इष्ट यह परिणय, भला,
तो क्यों दिया था प्रेम-परिचय, हा ! हृदय जाता जला ।
जो इस हृदय को आपने सम्पत्ति अपनी मानली,
हा ! हा ! इसे अब त्यागने की आपने क्यों ठानली ?

२४

“क्या होगया अपराध कोई, हा ! अधम इस देह से ?
अब तो लमा ही कीजिए अनुरागिनी को स्नेह से ।
हा ! मृत्यु भी तो आज बैरिन होगइ मैं क्या करूं ?
विष है नहीं, नग है नहीं, क्या मैं कठारी खामरूं ?

२५

“निर्दय हृदय ! जिसके लिये इतना बड़ा उत्सुक हुआ,
वह आज पृथ्वी पर नहीं, तू किस लिए जीता रहा !
कोमल तुझे मैं जानती, पाषाण ही तू होगया !
हा ! बज्र सा तू कठिन है, फटता न क्यों ना, रे दिया ॥

२६

“कुछ तो विचारो, नाथ, यह दासी खड़ी है सामने,
हा ! जांवितेश, मुझे वचन क्या, क्या दिए थे आपने ।
हा ! हा ! प्रभो, क्या भूल जाओगे उन्हें अब सर्वथा,
क्या श्रेष्ठ पुरुषों के वचन में भूट मानूं सर्वदा” ॥

२७

“हा ! उस प्रमद-वन में कहीं थी बात जो कुछ आपने,
अब तक नहीं तत्पर हुए, हा ! वह प्रतिज्ञा पालने ।
हा ! उस समय तो नैन-चितवन से, प्रभो, प्रेरित हुए,
अब तो विनय मुँह फाड़ करती, क्यों बड़े निर्दय हुए” !

२८

“सर्वस्व प्राणाधार प्यारे, आप हित मैंने तजा,
देवार्चना भी छोड़ हा ! नित आपको मैंने भजा ।
क्या इस भजन का फल, भला, इस भाँति देना जानते ?
पाण्डित्य की भी हृद हुई यदि प्रेमी यों पहचानते ।

१९

“मैंने तजा माता पिता के प्रेम को जिस के लिए,
जिस हेतु मैंने क्लेश हैं त्यागी * सखी को भी दिए ।
जिस के लिए छोड़ी सकल मर्याद कुल की भी बड़ी,
हा ! हा ! वही सूरत धराशायी पड़ी, जी, † की जड़ी ।

२०

“जो प्रेम-बन्धन से बंधे दो तन हुए मन एक ही;
देखा नहीं, हा ! देव, जिन में भिन्नता का लेश ही ।
निर्जाँव लख प्यारा वही, हा ! इन्त ! मैं जीता रही,
धिकार ! सौ, सौ बार, निकले प्राण अब तक भी नहीं ।

२१

“हाय ! अब प्राणेश विन, हतभागिनी क्या मैं करूं !
सुख-साधना बदले, भला, आजन्म दुःख क्या मैं भरूं !
आकाश भी फटता नहीं, पृथ्वी कहीं धँसती नहीं,
क्योंकर सद् मैं यातना अब हाय ! जी सकती नहीं ।

२२

“क्या सखि दती है, सखी, जीती रहूँ किस के लिए ?
तेरी विनय बाणी मुझे, हा ! बाण सी लगती दिए ।
संसार के जंजाल से तन छोड़ने का और भी,
इस से भला अबसर कहीं क्या मिल सकेगा, हा ! कभी ।

* महाश्वेता, † जी=जीव ।

२३

“मत कर, सखी, अनुरोध मुझ से, यातना सहते हुए,
निर्लेज्ज, निन्दित हा ! अधम, यह प्राण रखनेके लिए ।
सुरलोक में आनन्द से वह प्राण प्यारा आज है,
मुख से मरुंगी मैं भला मेरा यहां क्या काज है” ।

२४

इस उक्ति से उस के रुदन की जलपना कुछ कम हुई,
निष्प्रभ बदन पर एक दम अनुपम प्रभा छिटकी गई ।
उस ने कहा, “हा, हा, सखी, यह भूल है मेरी बड़ी,
चिर-संगिनी मैं नाथ की, अबतक यहां पर क्यों पड़ी !

२५

“ईश्वर दयामय धन्य है, उपकार मुझ पर यों किया,
यह प्रेम पावन की परीक्षा, हेतु अवसर है दिया ।
उठकर, सखी शृंगार, हार संवार दे मेरा सभी,
अनुगामिनी होकर बनूं अनुरागिनी सच्ची अभी ॥

२६

“उत्ताप तू निर्वाण हो, सन्ताप तू अब शान्त हो,
अब क्लेश कोई है नहीं, तू यातना विश्रान्त हो ।
सब व्यर्थ है अब खेद का कुछ नाम भी तो भ्रान्ति से,
पति से अभी मिलने चली मैं धैर्य से, सुख-शान्ति से ॥

२७

“हां, ध्यानधर, सखियो सुनो, मेरी विनय कुछ है अभी,
अपराध कोई होगया यदि भूल में मुझ से कभी ।
तो अब उसे तुम भूलकर, मुझ को क्षमा ही कीजियो ।
पतिसंग में मुझ को सुखी तुम जान हर्षित हूजियो ॥

२८

“यदि प्यार करती हो मुझे तो सर्वदा यों कीजियो,
माता-पिता का क्लेश कम हो ध्यान उस में दीजियो ।
मुझ पर तुम्हें है प्रेम तो मेरा कहा यह कीजियो,
प्यारे कुटुम्बी जो हों सन्तोष उन को दीजियो ॥

२९

“थोड़ा मुझे कुछ और भी कहना विनय-रस से सना,
सुन्दर मनोरंजन हमारे हेतु जो कुछ है बना ।
जैसा कहूं उन के लिये वैसा, सखी, तुम कीजियो,
आंगन उगी जो माधवी वर आमले को दीजिये ॥

३०

“प्यारा हरिण है जो हमारा छोड़ उस को दीजियो,
वन वन फिर मेरा विरह विसराय यह यश लीजियो ।
मेरा प्रमदवन में बना जो शुभ्र क्रीड़ा स्थान है,
देना किसी भी तापसी को अब इसी में मान है ॥

३१

“मेरे सिराने जो धरा है चित्र मन्मथ राज का,
तुम पर, सखी, है भार उन के ध्यान-पूजा पाठ का ।
हां, और भी जो कुछ उन्हें तुम प्रीति से ही पालियो,
मेरे विरह की आग में उन को कभी न जलाइयो ॥

३२

“यह अंग के भूषण अभी कुछ दीन को दे दीजियो;
यह वस्तु गायन-वाद्य की रुचि से तुम्हीं ले लीजियो ।
लो, मैं बिदा होती, सखी, अन्तिम समय में भेंट लो,
मेरे लिये अपने हृदय की तुम तापन को भेंट लो ॥

३३

“त्यागी सखी, तू भी न क्यों अब मोद से मिलती नहीं,
ऐसे समय भी तू भला क्यों खिन्न मन बैठी रही ।
प्यारी सखी, तू धन्य, आशा-रूप मृगजल में बड़ी,
मरना कठिन तू जान मुख से कालयापन कर रही ॥

३४

“ना, ना, सखी, आंसू बहाने का समय यह है नहीं,
कादम्बरी प्यारी तुम्हारी भेंट प्रिय-हित जा रही ।
निज धैर्य से शांतल बनो अब खेद से कुछ है नहीं,
मेरा जहां प्रिय आज है समझो कि जाती मैं बही ॥

३५

“कमल कमल, कुवलय, कुमुद, शीतल शिला, शैवाल भी,
शशि—रश्मि, चन्दन-रस मुझे हैं आज सब जंजाल ही।
शीतल बनूंगी आज मैं बस बहि की ही शक्ति से”।

यों कह चरण पति के धरे निज गोद में बर भक्ति से ॥

३६

निज तेज से पति-देवता वह उस समय यों लखपट्टी,
मानों कि करुणा-प्रेरणा से शान्ति देवी ही खड़ी।
या लोक यह निस्सार है परलोक में ही सार है,
इस भाव का ही दृश्य मानो दीखता साकार है।

३७

अब, पाठको, बस होगई यह आज की इतनी कथा,
नृत्तान्त यह आगे बड़ा आश्चर्यमय है सर्वथा।
यह तुल्य रचना आप को यदि हो बड़ी रुचिकर अभी,
तो दास सेवा के लिए होगा उपस्थित फिर कभी ॥

बालाप्रसाद

नोट—पाठक गण उपरोक्त कविता चौथे पद्य के दूसरे
तीसरे चरण को इस प्रकार पढ़े :—
विश्वास होता है नहीं, सचमुच बता सुक्त को सखी,
क्या सत्य है, यह आज होगी भेंट निश्चय देव की।

यवन पर्यटक और राजदूत।

मेगस्थनीज़।

(लेखक—प्रोफेसर गोविन्दराम एम० ए०)

(१)

राज तरंगिणी के पाठ से जो कि
संस्कृत में काशमीर का इतिहास
वर्णन करता है, विदित होता
है कि इस पुस्तक के पूर्व और
भी कई ऐतिहासिक ग्रन्थ विद्यमान थे, परन्तु

भारतवर्ष पर जो विप्लव आये उन में ये सब
ग्रन्थ बह गये और अब उन का लोप हो गया है।
अतः इस समय भारतवर्ष का संगठित और
सम्बद्ध इतिहास इस की अपनी भाषा में नहीं
मिलता।

स्मृति, सूत्र ग्रन्थ, दर्शन, काव्य, नाटक और
विशेषतः पुराणों से ही खुन खुन कर ऐतिहासिक
वृत्त ग्रन्थित किए गये हैं, परन्तु स्थल २ पर
उनकी सच्चाई में सन्देह बना रहता है। और फिर
प्रयत्न से थोड़ा फल मिलता है। खान के न होने के
कारण स्वर्ण को बालू में से छानने की सी बात है।

हमारे प्राचीन इतिहास की न जाने कितनी
अमूल्य बातें कुहर से आवृत हैं। वास्तविक
इतिहास केवल उसी समय का मिलता है जिस
का विवरण कि विदेशियों ने अपने ग्रन्थों में
किया है। पहले पहल जिन विदेशियों ने इस
देश के बारे में कुछ लिखा वे यूनान वासी यवन
(ग्रीक) थे। इन लोगों को भी पुरातन समय
में भारत का यथार्थ ज्ञान न था।

जगद्विख्यात कवि होमर के काल में कुछ
अस्पष्ट सा ज्ञान इन्हें था। इन्हें इस देश के
अस्तित्व का पता तो अवश्य था क्योंकि होमर
के काव्यों से प्रतीत होता है कि व्योपार की
सामग्री इनके देश में यहाँ से जाया करती थी,
यथा टीन और हाथी दान्त। पर भारत वासियों
के विषय में वे इतनाही जानते थे कि भारतीय
सड़े भुने काले लोग हैं और उनके देश में
विचित्र प्रकार की कई जातियाँ निवास करती हैं
जिनके आकार अपूर्व और भयानक हैं। जो कुछ
भी हो पारसीय आक्रमणों से पूर्व यवन लोगों के

लिये भारत एक कल्पना सृष्टि थी। इन आक्रमणों के पश्चात् भी जो कुछ थोड़ा बहुत लिखा गया वह भ्रान्ति मिश्रित था। भारत और इस के रहने वालों का यथा तथ्य वृत्तान्त लिखने की विभूति केवल अलक्षेन्द्र और उसके उत्तराधिकारियों के अनुचरों के भाग में ही थी। इन सब में से श्रेष्ठ और निपुण लेखक मैगस्थनीज़ हुआ है। इस की जीवनी का कुछ पता नहीं मिलता नहीं इस के जीवन चरित्र के परिचय से कुछ ज्ञान ही है। जानने योग्य बात यह है कि उस ने हमारे देश के बारे में क्या लिखा। हमारे अपने विविध ग्रन्थों में उस काल का हाल विद्यमान तो है परन्तु बिखरा हुआ और बन्द पड़ा है। इसका इकट्ठा करना कठिन है। मैगस्थनीज़ ने जो बात आंखों देखी, वह पूरी और छुली रीति से लिख डाली। इसी लिये वह हमारा विश्वास पात्र है। अन्य यवन यात्रियों वा लेखकों ने भी भारत का जो वृत्तान्त लिखा है वह प्रायः मैगस्थनीज़ के लेख के आधार पर ही है। हां कुछ एक बातें उस ने ऐसी भी लिखी हैं जिनका न सिर है न पाओं, जो दृष्टि मात्र से ही असत्य प्रतीत होती हैं। इस कारण से कई एक यवन विद्वानों ने इस पर आघात भी किये हैं और कहा है कि मैगस्थनीज़ बड़ा असत्यवादी और अविश्वसनीय पुरुष है। वे कहते हैं कि डीमेकोस और मैगस्थनीज़ पर कोई भरोसा नहीं करना चाहिये, क्योंकि उन्होंने विचित्र २ मतः कल्पित बातें लिखी हैं यथाः— भारत में इस प्रकार के भी मनुष्य हैं जिनके कान इतने बड़े हैं कि उनमें एक साधारण आदमी

सो सकता है; कई ऐसे हैं जिनके मुँह ही नहीं कईयों की आंख एक ही होती है; कईयों की दाँगे मकड़ी की सी हैं, और अंगुलियों पीछे की मुड़ी हुई हैं; इस प्रकार की पहलियों हैं जो सोना खोदती हैं; साँप है जो बैल और हिरणों को सारे का सारा सींगों समेत चढ़प कर जाते हैं। ये बातें हैं तो झूठ परन्तु यह कहना कि मैगस्थनीज़ की बनावट है भूल है। इन की याह में एक विचित्र कारण है जिससे एक बड़ी सच्चाई पर प्रकाश पड़ता है। डाक्टर शेन वैक मैगस्थनीज़ को सर्वथा विश्वास पात्र बतलाने हुए उस की झूठी बातों का यह हेल देते हैं :—

“ बहुत पुराने समय से आर्य लोग भारत की असभ्य पुरातन आदि जातियों से जो उनसे प्रकृति और आकृति में भिन्न थीं संवृत रहे हैं। आर्य लोग इन्हें इन की कुरूपता और असभ्यता के कारण सर्वदा घृणा से देखते थे और इनके लिये बड़े बुरे शब्दों का प्रयोग करते थे। उन की छोटी २ बुटियों को भी ये बड़ा बना लेते थे। इस लिये जब कभी वे इन लोगों का चिन्तन करते थे उन के मानसिक चित्रपट पर भयानक मूर्तियाँ आजाती थीं। जब साधारण पुरुषों के अन्दर यह चित्र पका हो गया और उनका ख्याल हो गया कि ये लोग ऐसे ही कुरूप हैं तो कवियों ने इस पर और मसाला चढ़ाया। अत्युक्ति और अल्पकल्पित कथायें रच कर इन की भली प्रकार खराब की। किसी को राक्षस और किसी को पिशाच नाम दिया। मैगस्थनीज़ ने ऐसे लोगों स्वयं नहीं देखे थे परन्तु ब्राह्मणों से उनका हाल सुना था। क्योंकि वह ब्राह्मणों को बड़ा विद्वान्

जानता था और उसके कथन पर विश्वास रखता था इस लिये उस ने विश्वास कर लिया कि ऐसी जातियें जरूर भारत में होंगी। उसने अपनी छला से झूठ नहीं लिखा।”

हम ने इतना लम्बा झगड़ा कि मेगस्थनीज़ ने ऐसी विकराल जातियों का हाल लिखा है कि जिन का होना सम्भव नहीं क्यों चलाया, इस का भी एक प्रयोजन है। हम इस से एक महान परिणाम पर पहुँचते हैं। केवल मेगस्थनीज़ ने ही ऐसी बातें नहीं लिखीं परञ्च उस से बहुत पहले जब कावि होमर ने आप काव्य लिखे यवन लोगों का ख्याल था कि भारत में ऐसे लोग रहते हैं जिन को पुराणों में राक्षसादि धोनियां कहा गया है। होमर के अपने ग्रन्थों में भी इस प्रकार का वर्णन आता है। मनुष्य हैरान होता है कि जिस समय यवनों में से कोई भी व्यक्ति भारत में न गया था, और उन में से न कभी किसी ने इस देश के ग्रन्थ पढ़े थे तो उन के दिल में इस बात का ख्याल किस प्रकार आया कि भारत में राक्षस पिशाच इत्यादि लोग रहते हैं। उन के ख्याल और भारतीय लोगों की कल्पना का मेल क्योंकर हुआ!

इस से कई एक अनुसंधान कर्तव्यों का यह अनुमान कि यवन लोग आर्य्य ही थे हमें कुछ सत्य ही प्रतीत होता है। इस सिद्धान्त की पुष्टि मेगस्थनीज़ की स्वलिखित कई एक बातों से होती है। अन्य युक्तियों और प्रमाणों के साथ इस समय हमारा कोई सम्बन्ध नहीं हम केवल मेगस्थनीज़ की अपनी आंखों देखी बातों के आश्रय पर ही जो कहना होगा कहेंगे। नियम है कि कहानी चाहे कहीं की कहीं फैल

जाय पर जिस स्थान पर उस के दृश्य रहे गये हों उन को स्मृति अपने साथ अवश्य ले जाती है। यथा भारतीय समझते थे कि हिमालय के परे उत्तर में उत्तरकुटी रहते हैं जो बड़ी दीर्घ और सुख की आयु भोगते हैं, जो बीमारी और चिन्ता को जानते तक नहीं और हर एक प्रकार का आनन्द उन्हें प्राप्त है। उन के देश को वे स्वर्ग धाम मानते थे। यही कल्पना यवनों में भी पाई जाती है। वे भी समझते हैं कि उत्तर में एक रमणीय धाम है जहां हाईपरबोलियन लोग निवास करते हैं। इन दो भिन्न लोगों के अनुमानों में एकता किस प्रकार आई!

भारतवासियों की एक दो पूजा विधियों को देख कर मेगस्थनीज़ बड़ा चकित हुआ। यह पूजाएं यूनानियों के अपने पूजा क्रम से ठीक मिलती थीं। देवताओं की कहानियां भी उसी प्रकार की थीं जैसा कि यवन लोग स्वयं मानते थे। इन देवताओं का नाम यवनों के अन्दर डायोनिसस और हैरेक्लीज़ था। जब उस ने ब्राह्मणों से इन के विषय में प्रचलित कथाएं सुनीं तो वह आश्चर्य से विस्मित हुआ और उसे अपने देवता स्मरण आगये। वह हैरान था कि भारतीय और उस के अपने देवताओं में एकत्व क्योंकर पाया जाता है। संक्षेपतः डायोनिसस के बारे में कथा इस प्रकार थी। डायोनिसस बड़ा पराक्रमी था। कई राजधानियां उस ने स्थापित की थीं। समस्त भारतवर्ष का भी उस ने तहस नहस किया और फिर मेरु पर्वत पर जाकर रहने लगा। उस ने मद्य बनाने की रीति प्रकट की। अनेक पौधों विशेष करके अंगूरों का उगाना सिखाया। पीछे उसे लोग देवता मानने लग गये। इस के भक्त

उस की पूजा के समय मद्य पान करते, नाचते, गाते, ढोल और झांज बजाते थे। अब आश्चर्य जनक बात यह है कि यूनानी भी मानते थे कि उन का देवता बेकस या डायोनिसस मेरु पर रहता था, अंगूरों का लगाना और मद्य बनाना उसी ने पहले सिखलाया। इस देवता की पूजा जिसे बच्चनेलियन पूजा कहा जाता है ठीक उसी प्रकार की थी जैसी कि भारतीयों की। और यह भी ध्यान में रखने योग्य बात है कि मेरु प्रसिद्ध संस्कृत नाम है। इस पर्वत का वर्णन पुराणों में आया है। क्या यूनानी देवता का मेरु निवासी होना तर्क को यह कहने की आज्ञा नहीं देता कि यूनानियों के पितरों का भारतीयों के पितरों के साथ सामाजिक सम्बन्ध था। केवल मेगस्थनीज़ ने ही इस विचित्र सादृश को नहीं देखा किन्तु उस से पहले अलक्षेन्द्र ने भी इस का अवलोकन किया था। भारत पर चढ़ाई करने के अभिप्राय से जिस समय अलक्षेन्द्र चला आरह था तो रास्ते में उस प्रदेश में जो अब पठानों का है उस ने नाईसा नाम की एक पहाड़ी राजधानी पर धावा किया। पीछे उसे पता लगा कि उन लोगों के पर्वत का नाम मेरु है जिसे वे नाईसा भी कहते हैं। अब यूनानियों के देवता चूंकि डायनूसस का सम्बन्ध नाईसा या मेरु पर्वत के साथ माना जाता था, इस लिये उस ने नाईसे के लोगों को क्षमा कर दिया। आज तक भी इस पर्वत को कोहे मोर कहते हैं।

दूसरी पूजा जो मेगस्थनीज़ ने देखी वह हरिकुलेश (हैरेक्लीज़) की थी। भारतीय मानते थे कि हरिकुलेश ने उन के अन्दर जन्म लिया था। वह दंड और व्याघ्र चर्मधारी था। दूसरे

मनुष्यों से शारीरिक बल और शक्ति में बहुत बढ़ा चढ़ा था और उस ने समुद्र और पृथ्वी को दुष्ट जन्तुओं से शून्य कर दिया था। सब लोग जानते हैं कि यूनानियों का देवता हैरेक्लीज़ भी दंड और चर्मधारी बतलाया जाता है। इन कथाओं की अनुरूपता सिद्धान्त शून्य नहीं। पोकाक साहब अपनी पुस्तक 'यवन देश भारतमें' में लिखते हैं कि यूनानियों का हैरेक्लीज़ भारतीयों का हरिकुलेश अर्थात् कृष्ण का बड़ा भाई बलभद्र था। डाक्टर श्वेनबैक लिखते हैं कि मेगस्थनीज़ ने कृष्ण की पूजा देखी। हैरेक्लीज़ का बलभद्र या कृष्ण के साथ मेल मिलाना तो कठिन है पर इस में भी संदेह नहीं कि भारतीय देवता चाहे वह कोई भी हो और यवन देवता का एक होना इस अनुमान की पुष्टि अवश्य करता है कि यवनों के पूर्वज भारतवर्ष से ही गए हुए हैं।

भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास।

महाभारत का काल।



प्रो० बालकृष्ण रचित इतिहास पर जो हम ने समालोचना की थी उस के प्रथम भाग का उत्तर "प्रतिवादी" का ओर से इसी पत्रिका के पिछले अंक में प्रकाशित हुआ है। हमें शोक है कि "प्रतिवादी" महाशय ने हमारे भावों को अन्यथा ग्रहण किया है। उन्होंने हम पर 'रुष्ट' होकर कुवाक्यों के प्रयोग' कर बैठने का दोषारोपण किया है। परन्तु यह

स्वाभाविक बात है कि सत्य सर्वदा अप्रिय ही मालूम दिया करता है।

हमें इस स्थान पर यह ज्ञात करने की आवश्यकता नहीं कि यह 'प्रतिवादी महाशय कौन हैं। इस बात का निर्णय लेख स्वयं ही कर देता है। परन्तु इस बात से क्या लेखक कोई हो हमें तो यह देखना है कि उत्तर में कितनी सारता ज्ञानता और शालीनता का प्रयोग किया गया है तथापि सुवाक्यों से सुभूषित इस लेख में कुछ वास्तविकता और यथार्थता भी है कि नहीं अथवा सारा का सारा लेख केवल 'बाल लीला' मात्र ही है। अस्तु।

प्रतिवादी लिखता है कि 'प्रो० महोदय की स्वतन्त्र खोज का परिणाम अधिकतर योरूपीनों से मिलता है'। अन्य स्थान पर लिखा है "क्या 'आत्मा' को पक्षपात के मद से अन्व हो कर यह नहीं सूझा कि प्राचीन भारत के इतिहास में स्वतन्त्र खोज करते हुए यदि किसी बात में विदेशियों से मतभेद ही न हो तो खगडन कैसे हो सकता है साथ ही लिखा है"। "आत्मा" के विचार में वे सज्जन स्वतन्त्र रूप से विचार नहीं करते जिन के विचार परिणाम योरूपीय विद्वान ऐतिहासकों के साथ मिलते हैं। भारतवासी ऐतिहासकों का यह कर्तव्य ही होना चाहिये कि वे विदेशियों की युक्तियों का खण्डन करते रहें"। हम ने समालोचना करते समय लिखा था कि किन कारणों से विदेशी प्राचीन भारतवर्ष के इतिहास की खोज नहीं कर सकते। बैकुण्ठवासी राय वाङ्मिचन्द्र चट्टोपाध्याय बहादुर सी० आई० ई० अपनी पुस्तक कृष्ण चरित्र में लिखते हैं कि "यूरोप और अमरीका के बहुत से विद्वानों ने संस्कृत पढ़ी

है। वे लोग संस्कृत के प्राचीन ग्रन्थों से ऐतिहासिक तत्व निकालने में लगे हैं। पर पराधीन दुर्बल हिन्दू भी किसी समय सम्य थे और उन की ही सम्यता सब से पुरानी है ये बात उन्हें बहुत खटकती है। दो चार के सिवा बाकी सब लोग प्राचीन भारतवर्ष के गौरव को घटाने में यत्नशील हो रहे हैं। वे लोग प्रयत्न कर यह सिद्ध करना चाहते हैं कि हिन्दुधर्म के विरोधी बौद्ध ग्रन्थों के अतिरिक्त प्राचीन भारत के जो २ ग्रन्थ हैं वे सब ही आधुनिक हैं और उन की बातें मिथ्या हैं या दूसरे देश की चुराई हुई हैं। कोई कहता है कि रामायण होमर के काव्य की नकल है। कोई कहता है कि भगवद्गीता वायव्य की ठाया मात्र है। कोई यही शंख बजाता है कि हिन्दुओं की ज्योतिष चीन, यवन या काल्डिया देश से आया है। गणित शास्त्र कहीं दूसरी जगह से लाया गया है। अक्षर इन्हें सीमी लोगों से मिले हैं। इन बातों को सिद्ध करने के लिये उनका मूल मन्त्र बस यही है कि हिन्दुओं के पक्ष में जितने भारतीय ग्रन्थ मिलते हैं वे मिथ्या या क्षेपक हैं और जो उनके विपक्ष में मिलते हैं वे सब सत्य हैं"।

मद्रास के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पश्चिमीय विद्वानों के विषय में लिखते हैं कि:—

The opinions and sentiments expressed regarding us of many of them are manifestly uncharitable and unsympathetic. Proud of their position as a nation and looking down from that eminence, they are able to say with impunity anything regarding us at their will and pleasure.

They are led away more by theories than by an accurate knowledge of the subject handled. They are measuring

us by their own capacity without knowing the actual date of our society, its construction, and condition. Their ignorance of our inner life, our domestic arrangements, the peculiarities of our society and our old and philosophical Sanskrit literature, has given room to many a fallacious argument, mistaken utterance, unsound maxim and incoherent.

It is sheer ignorance of the ancient history of the Arias, that has given birth to all these notions. Without knowing anything of the Arias, and with a scanty and deficient acquaintance with the Sanskrit literature, derived from the incomplete and wrong translations of some insignificant writers by men whose knowledge of the literature could never be said to have been perfect, many boldly venture to agitate questions dearest to the interest of the nation." A. Cupia.

इस बात को अनुभव करते हुए कि विदेशी हमारे प्राचीन इतिहास की भली भाँति खोज नहीं कर सकते। हम ने गतांक में लिखा था कि "ऐसे समय में भारतवर्ष के उन विद्वान लोगों के लिये जिन्होंने इस पवित्र कार्य क्षेत्र में पदगोपन करना उचित समझा था वे स्वतन्त्र रूप से प्राचीन इतिहास की खोज करते, विदेशीय विद्वानों की त्रुटियों को दर्शाते और उन्होंने प्राचीन इतिहास सम्बन्धी जो भ्रांतियों की हैं उन का खंडन करते” हम ने लिखा था कि प्रो० महोदय ने स्वतन्त्र रूप से कोई अन्वेषण नहीं किया। प्रतिवादी के इन दवे शब्दों से कि “प्राचीन भारत के इतिहास में स्वतन्त्र खोज करते हुए यदि किसी बात में विदेशियों से मत भेद ही न हो.....” स्पष्ट विदित होता है कि प्रो० महोदय ने वास्तव में कोई स्वतन्त्र अन्वेषण नहीं किया।

‘प्रतिवादी’ युरोपीय विद्वानों का षडा ही

श्रद्धालु जान पड़ता है। परन्तु द्वर्ष का स्थान है कि इतनी श्रद्धा और जिज्ञासा के होते हुए भी वह स्वतन्त्र खोज को बुरा नहीं समझता। निस्सन्देह यह दोनों शब्द नवीन इतिहास-लेखकों के मन की अति लुभायमान प्रतीत होते हैं और प्रायः यह दोनों शब्द उन के जिह्वाग्र रहते हैं। परन्तु खेद का विषय है कि आज कल के स्वतन्त्रान्वेषण तत्पर इतिहासज्ञों की खोज मार्सडन और इम्पीरियल गजेटियर तक ही परिमित रहती है।

प्रतिवादी महाशय लिखता है कि ‘प्राचीन समय की बातों को केवल गाथा, प्रथा, लोकोक्ती के आश्रय पर सत्य नहीं माना जा सकता, उन की सत्यता युक्ति पूर्वक सिद्ध करनी चाहिये, ऐसी सिद्धि में सदैव मतभेद होंगे” यहां हम ‘प्रतिवादी’ से प्रश्न करते हैं कि क्या जो सत्य युक्तिपूर्वक सिद्ध किया गया हो उस में भी कभी मतभेद सम्भव हो सकता है ?

हम कहते हैं कि महाभारत का युद्ध ३१०० वर्ष ई० पू० हुआ। अब यदि यह तिथि सत्य हो तो यह समझ में नहीं आता कि मत भेद कैसे हो सकता है। सत्यता और मत भेद, यह दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। ‘प्रतिवादी’ महाशय को ‘युक्ति पूर्वक सिद्ध सत्यता’ में मतभेद सम्भव हो तो ही परन्तु संसार की दृष्टि में तो यह ‘वदतो व्याघातः’ अर्थात् अपनी बात को आप ही काटने के सदृश बात है। मतभेद तो सदा अनुमान मात्र (Gness work) में हुआ करता है। ‘प्रतिवादी’ लिखता है कि ‘देखिये एलिफिन्स्टन’ हन्टर.....आदि महाशय महाभारत युद्ध का काल १००० से १४०० वर्ष ईसा पूर्व मानते हैं।

हम भी तो यही कहते हैं कि वे विद्वान जो युद्ध का समय १००० से १४०० वर्ष ईसा से पूर्व मानते हैं केवल ऐसा अनुमान करते हैं इसी लिये उन में मत भेद है अतः उन सब की सम्मति अविश्वसनीय है।

‘प्रतिवादी’ महाशय इस बात पर बड़ा बल देता है कि प्राचीन समय की बातों को केवल गाथा प्रथा लोकोत्ती के आश्रय पर सत्य नहीं माना जा सकता। हम पूछते हैं कि क्या ‘प्रतिवादी’ जानता है कि गाथा अथवा प्रथा क्या बला होती है। देखिये पोकोक साहिव अपनी पुस्तक Indian In Greece में लिखते हैं:—

“No nation, as a body of men, would or could gratuitously, through a series of ages, invent a series of tales in themselves fabulous, in their results historical.....wherever an important myth has existed, an important fact has been its basis. Great principles do not arise from idealities; a national myth can not be generated without a national cause, and a national cause implies agency, not a invention. They (singular tales in early history) are now improved to be fables, just in proportion as we misunderstood them; truths, in proportion, as they were once understood. Our ignorance it is which has made a myth of history.”

इस स्थान पर हम ‘प्रतिवादी’ को बतला देना चाहते हैं कि पश्चिमीय विद्वानों तथा ‘अन्वे नैव नीयमाना यथान्धाः इव’ उन के पथा-तुगामी पतदेशीय विद्वानों ने भारत के प्राचीन इतिहास को न समझ कर ही अनेक प्रकार के झम और भ्रांतियों की हैं। नहीं तो कब सम्भव था कि वे मर्यादा पुष्पेत्तराम और महा परोपकारी विक्रमादित्य जैसे राजाओं के अस्तित्व तक से इनकार

कर देते। विदेशीय यदि ऐसा करें तो हम उन की अज्ञानता पर हंसते हुए उन्हें क्षमा कर सकते हैं परन्तु प्रो० बालकृष्ण जैसे स्वदेशीय विद्वान भी यदि विदेशियों की कपोल कल्पना को प्रामाणिक मानें तो कोई भी स्वदेश प्रेमी उन को क्षमा नहीं कर सकता प्रत्युत उन का यथोचित रीति से खण्डन ही करेगा। कभी कोई जाति अपने प्राचीन और पुरातन ऐतिहासिक को हानि के बिना नहीं त्याग सकती क्या किसी जीवित पुरुष का हृदय इस बात की साक्षी देगा कि वह अपने पूर्व पुरुषों के महान कार्य तथा अपने पुरातन इतिहास सम्बन्धी प्रसिद्ध घटनाओं को बिना कारण ही असत्य अथवा मिथ्या मानने लग जावे।

दूसरी बात यह है कि हम तो प्राचीन इतिहास को खोजते समय गाथा, प्रथा और लोकोक्तियों का आश्रय ही लेते सही परन्तु आप और आप के पथ-प्रदर्शक क्या करते हैं? जहाँ कोई प्राचीन इतिहास सम्बन्धी शंका उत्पन्न हुई तत्काल ही एक नवीन (शुद्धी) सिद्धान्त घड़ लिया। उसका नाम क्या रखते हैं ‘स्वतन्त्र खोज वा ‘ऐतिहासिक अनुसन्धान’। देखिये पोकोक महाशय की इस विषय में क्या सम्मति है। वह लिखते हैं:—

“There is nothing more calculated to blunt the keenness of investigation than any theoretic maxim which lays down some general position to meet general difficulties. Here acquiescence must be the rule, and research the exception. To assume individual or national feeling as the exponent of fact, and fact too possibly foreign to that individual or nation, must be a perilous mode of rescuing from error or re-establishing truth.”

क्या खोज और अन्वेषण इसी को कहते हैं?

क्या इस से बढ़कर शब्दों का दुरुपयोग सम्भव हो सकता है ?

अब हम 'प्रतिवादी' के लेख की ओर आते हैं। पूर्व ही हमें बड़े शोक से लिखना पड़ता है कि मैगस्थनीज की साक्षी के अतिरिक्त प्रतिवादी का सारा लेख पुराणों की परस्पर विरुद्ध बातों के आधार पर लिखा गया है जिस में सत्यता और यथार्थता नाम मात्र की भी नहीं।

पहले दल की युक्तियाँ।

पहले दल वालों के नाम से जो युक्तियाँ देकर प्रो० महोदय ने अपनी पुस्तक में उन का खण्डन किया और उस पर जो हम ने आक्षेप किये थे उनका "प्रतिवादी" ने कोई सन्तोषजनक उत्तर नहीं दिया।

(१) सारी हिन्दू जाति का चिरकाल से विश्वास चला आता है कि कलियुग के आरम्भ में यह युद्ध हुआ। प्रायः सारे ज्योतिष शास्त्र के लेखक कलि सम्वत का आरम्भ ३१०० वर्ष ईसा से पूर्व रखते हैं।

(२) महाभारत भी यही कहता है कि युद्ध कलियुग के आरम्भ में हुआ।

इन दोनों युक्तियों का खण्डन करते हुए प्रो० महोदय ने लिखा था कि माना युद्ध कलियुग के आरम्भ में हुआ परन्तु यदि कलियुग ही १४०० वर्ष ईसा पूर्व आरम्भ हुआ हो तो उस में क्या दोष ? युगों का सिद्धान्त इन नवीन ज्योतिष ज्ञाताओं ने चलाया..... साथ ही कलियुग का समय वस्तुतः १२०० वर्ष था इन्होंने कलि वर्षों को वैवी वर्षों वाला बना

दिया। अतः दो युक्तियों पर विश्वास नहीं हो सकता।

इस के उत्तर में हम ने लिखा था कि युगों का सिद्धान्त कोई नया सिद्धान्त नहीं और इस पक्ष की पुष्टि में वेद, सिद्धान्त शिरोमणि, मनु-स्मृति, महाभारत अथवा सूर्य सिद्धान्तादि ग्रन्थों के प्रमाण प्रस्तुत किये थे। मगर प्रतिवादी इन प्रमाणों में से किसी का भी उत्तर न देकर लिखता है कि "कोई वैज्ञानिक युक्ति तो स्वमत की पुष्टि के लिये दी होती" और आप वैज्ञानिक युक्ति क्या देता है कि "देखिये विष्णु पुराण कलि काल का आरम्भ १४०० वर्ष ई० पूर्व मानता है"। न मालूम "प्रतिवादी" किस प्रकार की वैज्ञानिक युक्तियों चाहता है। क्या प्राचीन पुस्तकों में स्पष्टतया वर्णित इतिहास को मोड़ तराड़ कर उलट पुलट सिद्ध करने का नाम वैज्ञानिक युक्तियाँ हैं ? प्रतिवादी विष्णु पुराण की साक्षी प्रस्तुत करता है और हमारी ओर सारा संस्कृत साहित्य है। किस की साक्षी सत्य मानें ? हम फिर लिखते हैं कि युगों का सिद्धान्त कोई नया सिद्धान्त नहीं। सारे प्राचीन संस्कृत साहित्य की साक्षी के विद्यमान होते हुए हम इस नवीन सिद्धान्त को सर्वथा मनोकल्पित समझते हैं। अतः इस नवीनोक्ति के आधार पर जो कलियुग की आयु केवल १२०० वर्ष लिखी गई है और पहले दल की दो युक्तियों का खण्डन किया गया है वह सर्वथा मिथ्या और भ्रान्ति युक्त है।

देखिये Captain Troyer कलियुग के विषय में क्या लिखते हैं :—

"That the commencement of the Kaliyuga, B. C. 3102, is historical in the general sense. I attach to the term, that is, after reducing to their utmost possible values, all the historical traditions, and chronological data of the Chinese and Persians, Phoenicians, Egyptians and other nations... 0....."

Asiatic Journal 1891.

देखिये इस विषय में Bailey की क्या सम्मति है। वह अपनी पुस्तक *Histoire de l'Astronomie Ancienne* में लिखता है :—

They (Indians) say, that the world is to last 4,320,000 years, divided into four ages :..... The small number of years of the last age that are past, prove, that it contained a real chronological epoch, which goes up to the year 3,101 B. C. It would have cost them nothing to have given to this age, as to the three others, some millions of centuries, had they not been possessed of some historical monument, or some tradition, or rather some observation, which served them for an epoch, and which the established its duration in a precise manner. It is in reality the epoch of their astronomical calculations; the date of the empire of their first kings goes back to 3554 B.C."

(३) मैगस्थनीज की साक्षी। "प्रतिवादी" लिखता है कि 'आत्मा' यदि तुम आत्मा की साक्षी दे सकते हो तो हम यह कह सकते हैं कि तुम ने प्रो० रामदेव के इतिहास से ही यूनानी दूत के वाक्य देखे हैं। और असली इतिहास नहीं देखा—उत्तर देना हो तो इस विषय में सत्य बोलिये। इसका उत्तर यही है कि ज़रूर धैर्य रखिये आप इस लेख को पढ़िये और फिर देखिये कि आप का अपना आत्मा

क्या साक्षी देता है कि असली पुस्तक पढ़ी गयी है वा नहीं। अस्तु—पहले दल वालों के नाम से जो तीसरी युक्ति देकर प्रो० वालकृष्ण ने अपनी पुस्तक में उस का खण्डन किया, और उस पर जो हम ने आक्षेप किये थे उनका 'प्रतिवादी' ने कोई उत्तर न देकर अन्य अनेक प्रकार की भ्रांतियों की हैं और अपने पल्लवग्राही पांडित्य का परिचय दिया है।

युक्ति यह है कि दायोनिसस के समय से चन्द्रगुप्त के समय तक १५३ राजाओं तथा उनके राज्य की ६०४२ वर्षों की गणना भारती करते थे और दायोनिसस हरिक्रीप से १५ पीढ़ी पूर्व हो चुका है। इस हिसाब से ईसा के जन्म तक ३०५२ वर्ष कृष्ण महाराज की मृत्यु की हो चुके हैं।

इस युक्ति का खण्डन करते हुए प्रो० वालकृष्ण ने लिखा था 'उस दूत के अनुसार $\frac{6042}{3} = ४०$ वर्ष के लगभग प्रत्येक राजा ने राज्य किया जो सर्वथा असम्भव है। कल्पना करो कि दोनों संख्याएं ठीक हैं तब श्रीकृष्ण से चन्द्रगुप्त तक ५४४२ वर्ष हुए। सत्य है पक्षपात की केवल एक आंख होती है'।

इस पर हम ने यह आक्षेप किया था कि क्योंकि प्रजातन्त्र (तीन बार) स्थापित होने का समय भी १५३ राजाओं के समय ६०४२ वर्षों के भीतर ही है अतः प्रो० महोदय का यह लिखना 'कि इस दूत के अनुसार $\frac{6042}{3} = ४०$ वर्ष के लगभग प्रत्येक राजा ने राज्य किया जो सर्वथा असम्भव है तथा कल्पना करो कि दोनों संख्याएं ठीक हैं तब श्रीकृष्ण से चन्द्रगुप्त तक ५४४२ वर्ष हुए' सर्वथा असंगत है।

‘प्रतिवादी’ मक कृण्डल और डंकर की पुस्तकों से कुछ वाक्य प्रजा तन्त्र शासन निर्णयार्थ उद्धृत कर के लिखता है कि “लगभग ६०४२ वर्ष ही १५३ राजाओं का राज्य काल है अतः ४० वर्ष की मध्यमा जो प्रो० बालकृष्ण ने दी है वह हिसाब से ठीक है”।

शोक है कि प्रतिवादी जान बुझ कर नेत्रोन्मीलन करता है। विवादास्पद प्रश्न तो यही है कि ६०४२ वर्ष १५३ राजाओं का राज्यकाल नहीं अतः ४० वर्ष की मध्यमा जो प्रो० बालकृष्ण ने दी है वह ठीक नहीं। अब यदि (जैसा कि प्रतिवादी लिखता है) मक कृण्डल के अनुसार ४०९ अथवा डंकर के अनुसार ६०० वर्ष प्रजातन्त्र शासन समय मान लिया जावे तब भी तो ‘प्रतिवादी’ को यह समय ६०४२ में से घटाना चाहिये था। इस से पता लगता है कि प्रतिवादी के अपने अनुसार ही ६०४२ वर्ष नहीं किन्तु ५६३३ और दूसरी अवस्था में ४४२ वर्ष १५३ राजाओं का राज्य काल बनता है। (प्रो० महोदय ने तो लिखा था कि “कल्पना करो कि दोनों संख्याएँ, ६०४२ और १५२ ठीक हैं तब श्रीकृष्ण से चन्द्रगुप्त तक ५४४२ वर्ष हुए”। परन्तु ऊपर प्रतिवादी ५४४२ वर्ष १५३ राजाओं का राज्य काल मानता है इस अवस्था में कृष्ण से चन्द्र गुप्त तक ५४४२ वर्ष कैसे हो सकते हैं परन्तु स्मरण रहे कि कृष्ण का असली समय निकालने के लिये १५ पीढ़ियों का शासन समय प्रजा तन्त्र शासन समय ६०४२ में से घटाना चाहिये)।

अब हम “प्रतिवादी” को बताना चाहते हैं कि प्रो० बालकृष्ण ने तो एक ग़लती की थी और वह यह थी कि उन्होंने ने तीन बार प्रजा

तन्त्र शासन स्थापित होने का समय ६०४२ में से घटाना छोड़ दिया था और प्रजा तन्त्र शासन काल के घटाए बिना ही ६०४२ वर्ष १५३ राजाओं का शासन समय समझ लिया था परन्तु उस ने और भी कई ग़लतियाँ की हैं जो हम नीचे दर्शाते हैं।

(१) मक कृण्डल की पुस्तक का जो दूसरा प्रमाण प्रतिवादी ने उद्धृत किया है वह तीन बार प्रजा तन्त्र शासन का समय नहीं

नोट—प्रतिवादी महाशय बात असल में यह है कि मैगस्थनीज़ की अपनी असली पुस्तक न मिलने के कारण उस की साक्षी को हम तक पहुंचाने वाले ऐतिहासिक दो दलों में विभक्त हैं। कोई तो १५३ राजाओं का शासन समय ६०४२ और कोई ६४५१ वर्ष बतलाता है (इस में प्रजा तन्त्र शासन का समय भी सम्मिलित है)।

देखिये—

(1) Pliny वेकस से सिकन्दर तक ६४५१ वर्ष १ दिन। McCrindle's Ancient India, Intro. p. xxi.

(ii) Heeren दायोनिसस से सन्द्राकोटस तक ६०४२ वर्ष।

Historical Researches, Vol. II, p. 218.

(iii) Count Bjornsterjna दायोनिसस से सन्द्राकोटस तक ६४५१ वर्ष Theogony of Hindus, p. 45.

(iv) Mc Crindle { १. वेकस से सिकन्दर ६४५१ तक Ancient India, p. 115.
2. दायोनिसस से सन्द्राकोटस तक ६०४२ वर्ष Ancient India, p. 203.

बताता परन्तु वह यह बतलाता है कि दायो-
निसस से सिकन्दर तक १४३ राजाओं ने ६४५१
वर्ष १ दिन शासन किया जिस में प्रजा तन्त्र
शासन का समय भी सम्मिलित है।

वाह जी वाह क्या कहना है ऐसी स्वच्छ
और निर्मल बुद्धि का। प्रतिवादी महाशय आप
ने ६४५१ में से ६०४२ वर्ष घटा कर प्रजा तन्त्र
शासन का समय कैसे निकाल मारा यह तो ज़रा
बताइये।

(२) “प्रतिवादी” महाशय बड़ा प्रफुल्ल हो
कर प्रसिद्ध ऐतिहासिक डंकर के वाक्यों को
उद्धृत करता है। परन्तु डंकर की प्रसिद्धता के
विषय में उसे पता नहीं।

देखिये—

“The researches into the Ancient
East were first co-ordinated and
popularised in Dunkar's History of
Antiquity. But his knowledge was
second hand and his work is now
largely antiquated.”

Cambridge Modern History, Vol. XII,
p. 846.

विशेष देखिये Low Actons Essays p. 332.

(३) “प्रतिवादी” लिखता है “यूनानी दूत
की साक्षी मिथ्या ही है क्योंकि विष्णु और
भागवत पुराणों में नन्द राजा तक लगभग ३६
राजाओं की संख्या दी है और सत्यार्थ प्रकाश में
एक भाट की मनःकल्पित संख्या ६० तक पहुँचती
है किन्तु १३५ की संख्या कहीं नहीं मिलती।
प्रो० रामदेव जी ने स्वइतिहास में १३५ राजाओं
का २१६० वर्षों का राज्यकाल देकर ३१०० वर्ष
का समय दिया है। उन को यह विचार उत्पन्न
न हुआ कि राजाओं की सूची सत्यार्थ प्रकाश में
तिथि मास और वर्ष सहित दी हुई है और उस

सूची में केवल ६० राजे बताए हैं—तो दोनों
सत्य कैसे हो सकते हैं”। “प्रतिवादी” सत्यार्थ
प्रकाश में एक ‘भाट’ की दी हुई ‘मनःकल्पित’
और विष्णु और भागवत पुराणों में युधिष्ठिर से
नन्द तक जो संख्याएं दी हैं उस का वर्णन करता
है। परन्तु प्रतिवादी को विदित रहे कि सत्यार्थ
प्रकाश में जो वंशावलि और संख्या दी हुई है
वह इन्द्र प्रस्थ के राजाओं की है। पुराणों में
बड़ी गड़बड़ है। उन में दो नन्द राजाओं को
मिश्रित कर दिया गया है ऐसा प्रतीत होता है।
अब उन में से एक तो इन्द्र प्रस्थ का मालूम
होता है दूसरा मगध का। क्योंकि जब
युधिष्ठिर से नन्द तक राजाओं की वास्तव लिखा
हुआ होता है तो उस से विदित होता है कि
यह नन्द इन्द्र प्रस्थ के राजाओं में से है। परन्तु
जब प्रद्योत शिशुनाग आदि मगधदेश के वंशों का
वर्णन आता है तो यहाँ पर नन्द मगधदेश का
राजा प्रतीत होता है अतः पुराणों की साक्षी
सन्दिग्ध है।

शेष रहा प्रो० रामदेव जी के विषय में।
उन्होंने जो स्वइतिहास में १३५ की संख्या दी
है वह मगध देश के राजाओं की है—मैगस्थनीज़
की साक्षी से ऐसा स्पष्ट विदित होता है।
सत्यार्थ प्रकाश में जो ६० की संख्या दी हुई है
वह इन्द्र प्रस्थ के राजाओं की है। अतः प्रतिवादी
का यह लिखना “तो दोनों सत्य कैसे हो सकते
हैं” सर्वथा असंगत और युक्ति शून्य है। अतः
स्पष्ट है कि ‘प्रतिवादी’ ने यहाँ पर पुराण
सत्यार्थ प्रकाश तथा मैगस्थनीज़ की इन्द्र प्रस्थ
और मगध के राजाओं के सम्बन्ध में जो साक्षी
है उस को गड़बड़ करने में अपने स्वतन्त्र

अन्वेषण का पूर्ण परिचय दिया है ।

(४) 'प्रतिवादी' लिखता है कि 'तीन बार का प्रजा तन्त्र राज्य युद्ध से पूर्व मान कर १३८ राजाओं को २७६० वर्षों तक राज्य करते हुए माना है—यह कल्पना मात्र है—हम कहते हैं कि महाभारत के पश्चात् भी प्रजातन्त्रराज्य हो सकता है—ऐसी अवस्था में युद्ध का समय अधिक प्राचीन हो जाता है " ।

हम कहते हैं कि प्रजा तन्त्र राज्य युद्ध के पश्चात् सम्भव नहीं हो सकता । प्रतिवादी' भी आगे चलकर अपने लेख में स्वीकार करता है कि महाराजा युधिष्ठिर से अब तक भारतवर्ष के भिन्न २ प्रान्तों में वंश परम्परागत एक सत्ता का राज्य रहा है । अतः तीन बार का प्रजातन्त्र राज्य युद्ध से पूर्व मान कर १३८ राजाओं को २७६० वर्षों तक राज्य करते हुए मानना कल्पना मात्र नहीं प्रत्युत सर्वथा न्याय युक्त है ।

दूसरा झगड़ा जो मैगस्थनीज की असली पुस्तक न मिलने के कारण खड़ा होगया है वह यह है कि हमें प्रत्येक राजा का शासन समय प्रायः बीस वर्ष अनुमान कर १३८ राजाओं का समय ($138 \times 20 = 2760$) वर्ष करना पड़ा है । Count Bjornsterjna के शब्दों से स्पष्ट विदित होता है कि मैगस्थनीज को पाटलि पुत्र में ऐसी वंशावली मिली थी जिस में सब राजाओं का राज्य काल दिया हुआ था । वह लिखते हैं:—

Megasthenes...discovered chronological tables at Polybothra which contain a series of no less than 13 Kings, with all their names from Dionyta Kandragupso, and specifying, the duration of the reign of every one sins of those Kings, together amounting to 6541 years.....

इस साक्षी से दो परिणाम निकलते हैं ।

(!) एक तो यह कि २२०० वर्ष पूर्व भी भारत वर्ष में वंशावलियां ठीक अवस्था में मिल जाती थीं ।

(!!) दूसरे यदि मैगस्थनीज को जो वंशावली मिली थी वह हम तक पहुंच जाती तो उस को अन्य प्राप्य वंशावलियों के साथ मिला कर हम यह परिणाम निकाल सकते कि प्रजा तन्त्र स्थापित होने का समय कितना था और वह युद्ध से पूर्व वा पश्च त् स्थापित हुआ था ।

राय बहादुर सी० बी० वैद्य अपनी पुस्तक The Mahabharata: A criticism में (p. 77) लिखते हैं ।

"Historical facts especially genealogies were most carefully recorded all times in ancient India. The detached figures given by Megasthenese himself clearly prove that this was done in his time.....Even now Rajput geneologies and even the geneologies of Baniyas and Mewatis are recorded very carefully by Bhatas who gain their living by this profession alone. It was, we believe, only once, viz., between 700 and 1000 A.D., when Buddhism was overthrown and Modern Hinduism established, that historical darkness came over the land and most of the ancient annals were either destroyed or tampered with. The evidence which we have adduced from Greek sources does not belong to this period but is as old as 312 B.C. and cannot be looked upon as exaggerated or tempered with. Even that can be urged against us, his much at least cannot be gain said, granting all viz., that the idea that the Mahabharata was took place about 3100 B.C. is as old as Megasthenes."

सारांश यह कि प्रतिवादी को यूनानी दूत की साक्षी को सर्वथा निर्मूल तथा अग्राह्य लिखना

बिल्कुल युक्ति शून्य है। साथ ही प्रतिवादी को यह भी निश्चित रहना चाहिये कि मैगस्थनीज की असली पुस्तक न मिलने के कारण जब कभी भी इस की साक्षी का उल्लेख किया जाता है तो सदा गौण रूप से किया जाता है। प्रो० राम-देव जी ने ऐसा ही किया है। वह लिखते हैं कि "महाभारत युद्ध के जिस समय को आर्यावर्त के विद्वान निरूपण करते हैं प्रायः उसी समय को पुराने यूनानी ऐतिहासिक भी निरूपण करते हैं। अतः आर्य विद्वानों का कथन प्रामाणिक है"।

(४) पहले दल वालों के नाम से जो चौथी युक्ति प्रो० महोदय ने अपनी पुस्तक में देकर उस का खण्डन किया था और उस पर भी हम ने आक्षेप किये थे उन का प्रतिवादी ने कोई सन्तोष जनक उत्तर नहीं दिया किन्तु बहुत से सुवाक्यों का प्रयोग कर दिया है।

युक्ति यह है। सत्यार्थ प्रकाश में दी हुई वंशावलि के अनुसार महाराजा युधिष्ठिर से महाराजा यश-पाल तक इन्द्रप्रस्थ में १२४ राजाओं ने ४१०२ वर्ष तक राज्य किया अर्थात् ३००० वर्ष ईसा से पूर्व युद्ध का समय है।

इस युक्ति का खण्डन करते हुए प्रो० महोदय ने स्वपुस्तक में लिखा है कि 'स्वामी दयानन्द युधिष्ठिर से १२४६ विक्रमी सम्वत तक केवल १२४ राजा हुए ऐसा मानते हैं। उक्त दूत चन्द्रगुप्त के समय तक ही (अर्थात् प्रथम ७० वर्ष पूर्व तक ही) १३८ राज बताता है। क्या एक ऋषि के विश्वास को सत्य मानें या एक यवन दूत के शब्दों को... "।

यहां पर वक्तव्य यह है कि प्रथम तो प्रो० महोदय ने सत्याथ प्रकाश में दी हुई इन्द्र प्रस्थ क

राजाओं की और यवन दूत की दी हुई मगध देश के राजाओं की संख्याओं को गड़मड़ कर दिया है। अब यदि प्रो० महोदय ऐसा न करते तो उन को पता लग जाता कि ऋषि और यवन दूत दोनों के वाक्य सत्य हैं।

आगे चल कर प्रो० महोदय लिखते हैं कि "अब यदि स्वामी जी का कथन माना जावे तो प्रत्येक राजा ने वाम्पार्ग के उत्तर समय में ३३½ वर्ष राज्य किया होगा। इसे सर्व पाठक असम्भव मानेंगे" इस पर हम ने लिखा था कि मध्यमा निकालने की क्या आवश्यकता है जबकि वंशावली में प्रत्येक राजा का राज्यकाल दिया हुआ है। दूसरे यहां पीढ़ी से तात्पर्य बाप से बेटा नहीं किन्तु एक अधिकारी से दूसरा अधिकारी लिया गया है"। इस पर तो 'प्रतिवादी' महाशय बहुत ही रुष्ट होगये हैं और न जाने पक्षपात के मद से या किसी अन्य प्रकार के मद से अन्ध होकर लिखते हैं कि "यहां पर तो 'आत्मा' ने अपनी आत्मा का हनन र दिया है। हम कभी विश्वास नहीं कर सकते कि 'आत्मा' को यह बात नहीं कि महाराजा युधिष्ठिर से अब तक भारत वर्ष के भिन्न २ प्रान्तों में वंश परम्परागत एक सत्ता का राज्य रहा है। ... आत्मा ने यहां सब से अधिक अशुद्धि की है और भारत के इतिहास से घोर अनभिज्ञता का परिचय दिया है"। हम कब कहते हैं कि युधिष्ठिर से अब तक भारतवर्ष के भिन्न २ प्रान्तों में वंश परम्परागत राज्य नहीं रहा। मगर क्या वंश परम्परागत के अर्थ यह है कि अवश्य ही बाप के पश्चात् पुत्र गद्दी पर बैठे। दूर जाने की क्या आवश्यकता है युधिष्ठिर के बाद अभिमन्यु को राज सिंहासन पर बैठना

चाहिये था मगर बैठता है परीक्षित। अब बतला-
इये कि यहां पर एक अधिकारी से दूसरा
अधिकारी तात्पर्य लिया जावे या बाप से बेटा।
देखिये मैगस्थनीज़ लिखता है:—

“But when a failure of heirs ocured in the royal house the Indians elected their sovereigns on the principle of merit.”

McCrindles' Ancient India p. 200

‘प्रतिवादी’ महाशय बड़े रुष्ट होकर लिखते हैं कि यदि असम्भव राज्य काल किसी भाट ने राजाओं को दे दिया हो तो क्या इसे आंख मूंद कर मान लें? क्या संसार के सम्पूर्ण अनुभव को भी ताक पर रख दें?” प्रतिवादी को स्मरण रखना चाहिये कि पश्चिमीय विद्वानों तथा उन के अनुयायी भारतीय विद्वानों की जो यह शैली है कि वे बिना कारण ही प्राचीन भारत वर्ष के सम्बन्ध में प्रत्येक बात और प्रत्येक घटना पर सन्देह करने लग जाते हैं ठीक नहीं। वंशावलियों की सत्यता के विषय में हम ने पूर्व लिखा है। विशेष देखिये फ्लीट महाशय लिखते हैं—

“The preservation of pedigrees and successions has evidently been a national characteristic for many centuries. And we cannot doubt that considerable attention was paid to the matter in connection with the royal families, and that vanisavalis or Rajavalis, lists of the lineal successions of Kings, were compiled and kept from very early times. In fact the matter is not one of speculation, but is capable of proof”

Imperial gayetheer Vol. II p. 8.

सातवें पृष्ठ पर फ्लोट महाशय लिखते हैं—

“In the first place, we, who have lived in India, know, how, in that country, pedigrees are always forth coming, even in the present day, to

an extent that is unknown in western lands. Among families connected in any way hereditarily with the administration, even the Gandas or Patils and the Kulkarries can always bring forward.....genealogical tables, unquestionably not altogether unauthentic, which exhibit the most complicated ramifications of this houses, and often go back for 2 or 3 centuries.....every Matha or religious College of any importance preserves the succession of its heads. And among the gains we have the Pattavalis or successions of pontiffs...”

दशवें पृष्ठ पर लिखा है “We have before us the example, not only of the Nepal vansavali, but also of some Vansavalis from Orissa, which do not indeed pretend to quite such fabulous antiquity,* but which nevertheless purport to present an unbroken list of the Kings that province back from A. D. 1871 to the commencement of the Kali Age in 3102 or B. C. with the length of the reign of each, and with certain specified dates as epochs.”

हमारे विचार में वैद्य महाशय और मिस्टर फ्लीट की उपरोक्त सम्मतियों को पढ़ कर कोई भी पुरुष भाटों की दी हुई वंशावलियों को मनः कल्पित कहने का साहस नहीं कर सकता। अतः यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी का यह लिखना कि “कल्पित कलियुग” तक पहुंचाने के लिये “कल्पित समय ही भाटों ने दे दिया है” सर्वथा असंगत है।

और जो ‘प्रतिवादी’ ने यह लिखा है कि “प्रो० रामदेव ने १३८ राजाओं का मध्यम राज्य काल २० वर्ष ही माना है” इस का उत्तर यह है कि जैसा हम ने पूर्व लिखा है यदि मैगस्थनीज़

*नैपाल वंशावलि कलियुग से ६ वा ७ शताब्दि पूर्व के

राजाओं की संख्या तथा उनको राज्य समय बतलाया है।

की जो वंशावलि पाटलिपुत्रमें मिली थी वह इस समय भी प्राप्तव्य होती तो हमारे विचार में प्रो० राम देव जी कभी भी प्रत्येक राजा का शासन समय २० वर्ष न अनुमान करते।

विशेष चार युक्तियों।

अब हम उन चार युक्तियों की ओर जोकि प्रो० महोदय ने महाभारत युद्ध का समय १४०० वर्ष ईसा पूर्व नियत करने के लिये दी थीं आते हैं। हम ने जो अपनी समालोचना में इन पर आक्षेप किये थे उन का 'प्रतिवादी' ने कोई संतोष जनक उत्तर नहीं दिया।

(१) प्रो० महोदय ने स्वइतिहास में लिखा था कि 'यदि यह मान लिया जावे कि युधिष्ठिर से यशपाल तक १२४ राजे हुए और प्रत्येक ने २१ वर्ष राज्य किया हो तो $१२४ \times २१ = ११६३$ ई० = १४११ वर्ष युद्ध को हुए होंगे' इस पर हम ने जो यह लिखा था कि जबकि वंशावली में प्रत्येक राजा का राज्य काल दिया हुआ है तो फिर प्रत्येक राजा का राज्य काल २१ वर्ष क्यों कल्पना कर लें। यहां पर 'प्रतिवादी' महाशय केवल इतनी टिप्पणी चढ़ाते हैं कि "ऐसा लिखते हुए 'आत्मा' ने किञ्चित् आत्म विचार नहीं किया" हमारे विचार में तो यह शब्द प्रतिवादी के अपने ऊपर ही ठीक घटते हैं। प्रो० महोदय अपनी तात्पर्य सिद्धि के लिये वंशावलि में युधिष्ठिर से यशपाल तक जो १२४ राजाओं की संख्या है उस को सत्य मान कर, और प्रत्येक राजा का राज्य काल १२ वर्ष अनुमान कर झट पट युद्ध का समय १०११ वर्ष ईसा पूर्व निकाल मारते हैं। परन्तु क्या यहां पर उन को यह नहीं सूझा कि

जहां एक ओर एक भाट की 'मनः कल्पित' की हुई १२४ राजाओं की मनः कल्पित संख्या सत्य ठहराई जाती है वहां दूसरी ओर उसी भाट का प्रत्येक राजा का दिया हुआ राज्य काल क्यों असत्य ठहराया जाता है। सत्य है 'पक्षपात की केवल एक आंख होती है।

(२) प्रो० महोदय ने जो दूसरा युक्ति दी थी वह यह है कि—

"कल्हण ने अपनी राज तरङ्गिणी में युधिष्ठिर से अशोक तक ४७ राजा बताए हैं, यदि कईयों के नाम उस ने छोड़ भी दिये हों तो भी ५१ तक वह राजा माने जा सकते हैं न कि १३५... अतः $५४ \times २१ + २७२ = १४०६$ वर्ष युद्ध को हुए होंगे" इस पर हम ने लिखा था कि प्रो० महोदय का यह हिसाब हमारी समझ में नहीं आया। जहां तक हमें विदित है कल्हण महा-राजा युधिष्ठिर का समय कलियुग के आरम्भ से ६५३ वर्ष पीछे का बताता है। साथ ही हम ने यह भी लिखा था कि कल्हण का यह लेख भ्रम मूलक है।

'प्रतिवादी' इस के उत्तर में लिखता है कि 'यदि कल्हण दत्त राजाओं की सूची ठीक है तो प्रोफ़ेसर महोदय का हिसाब ठीक है'।

महाशय जी कल्हणदत्त राजाओं की सूची ठीक है वा गलत यह आप या आपके प्रो० महोदय जाने। हमें यहां पर इस से कुछ तात्पर्य नहीं। कल्हण तो अपनी रत्नमति स्पष्ट शब्दों में लिखता है—

शतेषु षट्सु सान्द्रेषु अधिकेषु च भूतले ।

कलेर्गतेषु वर्षाणामभवनं कुरुपांडवाः ॥

अर्थात् कलियुग के ६५३ वर्ष पश्चात् कुरु पांडवी हुए। अतः यदि प्रो० महोदय ने राज-तरङ्गिणी का ही प्रमाण देना था तो "युक्ति पूर्वक हिसाब" की क्या आवश्यकता थी? प्रतिवादी लिखता है किन्तु प्रो० महोदय ने युक्ति पूर्वक हिसाब दिखाया है जिसका आप खण्डन नहीं कर सके और न कर सकते हैं 'महाशय जी हमें खण्डन करने की क्या आवश्यकता है जब कि कलहण स्वयं स्पष्ट शब्दों में इस 'युक्ति पूर्वक हिसाब' का खण्डन करता है। आगे चलकर 'प्रतिवादी' महाशय लिखते हैं कि 'अब आत्मा को पता लगना चाहिये कि पक्षपात के मद में निमग्न होने से वह हिसाब भूल गया है। क्या खूब। 'युक्ति पूर्वक हिसाब' तो प्रो० महोदय लगावें और भूल जावें हम।

फिर 'प्रतिवादी' महाशय क्या लिखते हैं कि 'कलहण का लेखभ्रममूलक है यह तो आपभी मानते हैं'। इसमें सन्देह ही क्या है। परन्तु आश्चर्य की बात तो यह है कि प्रो० महोदय कलहण के लेख को भ्रम मूलक मानते हुए भी उस का प्रमाण देते हैं। पुनः वह भी स्पष्ट प्रमाण नहीं। प्रो० महोदय स्वपुस्तक में लिखते हैं 'कलहण ने युधिष्ठिर से अशोक तक ४७ राजा बताए हैं याद कईयों के नाम उस ने छोड़ भी दिये हों तो भी ५१ तक वे राजा माने जा सकते हैं न कि १३५'। ठीक है युक्ति पूर्वक हिसाब इसी का नाम है। सारांश यह है कि वास्तव में कलहण ने कुरुपांडवों का जो समय दिया है वह भ्रममूलक है और इस बात को प्रो० महोदय तथा प्रतिवादी महाशय भी मानते हैं परन्तु बात तो असल में यह है कि युद्ध का समय १४०० वर्ष ईसा पूर्व सिद्ध करने

के लिये प्रमाण तो अवश्य चाहिये। अतः प्रो० महोदय ने यह जानते हुए भी कि कलहण का लेख भ्रममूलक है उस की शरण ली।

(३) तीसरी युक्ति जो प्रो० महोदय युद्ध का समय १४०० वर्ष ईसा पूर्व सिद्ध करने के लिये देते हैं वह निम्नलिखित है:—

"विष्णु और भागवत पुराणों ने स्वयं नक्षत्रों के हिसाब से कहा है कि युधिष्ठिर से नन्द राज्य तक १०६५ वर्ष हुए हैं अतः युद्ध को १०६५ + ३२२ = १३८७ वर्ष ईसाब्द तक हुए। इस पर हम ने लिखा था कि भिन्न २ पुराणों में परस्पर विरोध है क्योंकि महाशय रङ्गाचार्य के अनुसार युधिष्ठिर से नन्द तक का राज्य काल विष्णु पुराण में १०१५, भागवत पुराण में १११५ और *मत्स्य पुराण में १०५० वर्ष दिया हुआ है।

इस का उत्तर देते हुए प्रतिवादी महाशय लिखते हैं कि 'समालोचना करने से पूर्व विष्णु पुराण को तो देख लिया होता। रङ्गाचार्य की पुस्तक को देखने की क्या आवश्यकता थी। अब हम आपके लिये विष्णु पुराण के शब्द रखते हैं। यहां पर 'प्रतिवादी' विल्सन अनुवादित विष्णु पुराण के शब्द उद्धृत कर के (जिस में १०६५ वर्ष दिये हुए हैं) कहता है कि संस्कृत का जो विष्णु पुराण हमें मिला है उस में १०१५ वर्ष समय दिया है किन्तु विल्सन साहिब की प्रति में १०६५ दिये हो सकते हैं। क्या खूब! महाशय भिन्न २ पुराणों की प्रतियों में ही नहीं यहां तो

*मत्स्य पुराण की एक प्रति में यह समय १५०० दिया हुआ देखिये—

Wilson's Vishnu Purana Book IV.
Chap. XXIV P. 231.

एक पुराण की ही भिन्न २ दो प्रतियों में परस्पर विरोध पाया जाता है।

विशेष देखिये विलसत लिखता है—

“He is (the commentator of Bhagwata Purana) notices, nevertheless,—although he does not attempt to account for the discrepancy,—that the total period from Parikshit to Nanda was, actually, according to the duration of the different intermediate dynasties, as enumerated by all the authorities, fifteen centuries; viz.

	Years.
Magadha Kings	... 1,000
Pradyota, etc.	... 138
Sisunaga	... 362
Total	... 1,500

महाशय जी अब आप ही बतलाइये कि कहीं पर तो आप के पुराण १०५०, १०६५, १०१५ वर्ष परीक्षित से नन्द तक का राज्य बतलाते हैं और कहीं पर १५००। किस को सत्य और किस को असत्य मानें?

दूसरे हमने समालोचना में लिखा था कि सत्य तो यह है कि अन्य ग्रन्थों के अधिक बलवत्तर प्रमाणों के होते हुए पुराणों की साक्षी मान्य दृष्टि से नहीं देखी जा सकती। इस पर ‘प्रतिवादी’ महाशय लिखते हैं कि ‘वाह जी! तीन पुराणों ने युधिष्ठिर से नन्द तक के काल को अड़ों में अङ्कित किया हो और उन की साक्षी में ५० वा सौ वर्षों का भेद हो उसे तो आप नहीं मानते और अन्य पुस्तकों की बलवत्तर साक्षी का संकेत करते हैं। अस्तु! प्रतिवादी महाशय यह तो स्वीकार करते हैं कि तीनों पुराणों ने युधिष्ठिर से नन्द तक का जो काल अड़ों में अङ्कित किया है उन में ५० वा सौ वर्षों का भेद है। अब रहा नक्षत्रों

का हिसाब उस के सम्बन्ध में भी हम अभी नीचे लिखते हैं। आगे प्रतिवादी महाशय यह बतलाकर कि पुराणों की साक्षी को आप नहीं मानते और अन्य पुस्तकों की बलवत्तर साक्षी को संकेत करते हैं—लिखते हैं—‘ये पुस्तकें संसार में तो हैं नहीं—आप के दिमाग में ही उनका भाव होगा। उन पुस्तकों का नाम तो लिया होता’। महाशय जी पहले दल वालों के नाम से जो प्रमाण प्रो० महोदय ने पुस्तक में दिये हैं वह उन्होंने अपने दिमाग में से नहीं किन्तु किसी न किसी पुस्तक या पुस्तकों में से हाँ लेकर दिये होंगे—

हमारा विश्वास है कि वह पुस्तक वा पुस्तकें संसार में अवश्य विद्यमान होंगी तथापि लीजिये हम आप की मत अनुष्टि और संदेह निवृत्ति के अर्थ अन्य पुस्तकों के नाम भी लिखते हैं। गार्ग्य संहिता, आर्षेय अकवरी, पंडित माधवाचार्य रचित ‘राजावलि’ तथा मैगस्थनीज का प्राचीन भारत वृत्तान्त आदि कितनी ही पुस्तकें हैं।

ज्योतिष का हिसाब।

अब हम पुराणों के उन श्लोकों की ओर आते हैं जिन में नक्षत्रों का वर्णन है और जिन से कि महाभारत युद्ध का समय निर्णय करने की चेष्टा प्रो० महोदय तथा ‘प्रतिवादी’ महाशय करते हैं।

‘प्रतिवादी’ लिखत है कि ‘प्रत्येक नक्षत्र में लगभग १०१ वर्ष रहते हैं’ वह श्लोक जिस के आधार पर स्वातंत्र्यवादी गणेश कहता है क्योंकि विष्णु पुराण से दो श्लोक दिकर केवल मात्र इतना लिखता है कि ‘साथ ही त्यहा भी

कहा है कि प्रत्येक नक्षत्र में सप्तर्षि १०० वर्ष रहते हैं । अब इन दोनों श्लोकों में तो ऐसा कहीं नहीं लिखा । और अन्य कोई श्लोक वह उद्धृत नहीं करता जिस में ऐसा लिखा हो—
श्लोक यह है ।

सप्तर्षीणाञ्च यौ पूर्वौ दृश्येते उदितौ दिवि ।
तयोस्तु मध्यनक्षत्रं दृश्यते यत् समं निशि ॥
तेन सप्तर्षयो युक्तास्तिष्ठन्त्यब्दं शतं नृणाम् ॥३॥

परन्तु प्रो० महोदय को विदित होना चाहिये कि आर्यों ने अपनी गिरी हुई अवस्था देखकर २०० वर्ष ई० पू० कलि वर्षों को देवी वर्षों वाला नहीं बनाया प्रत्युत यह आर्यों का अति प्राचीन सिद्धान्त है । देखिये सूर्य सिद्धान्त

प्रो० महोदय तथा प्रतिवादी महाशय को स्मरण रहे कि यहां स्पष्ट सौ वर्षों से तात्पर्य मनुष्यों के वर्षों से है जिनको सौर वर्ष भी कहते हैं । परन्तु जहां विष्णु पुराण में कलियुग की आयु १२०० वर्ष “तदा प्रवृत्तश्च कलिद्राद-
शाब्दं शतात्मकः” विष्णु २४।३४। वहां से स्पष्ट विदित होता है कि उस जगह १२०० वर्षों से तात्पर्य सौर वर्षों से नहीं किन्तु दिव्य वर्षों से है । अतः प्रो० महोदय का स्वपुस्तक में यह लिखना कि “कलियुग का समय वस्तुतः १२०० वर्ष था व २०० ई० पू० समाप्त होकर सतयुग का आरम्भ होना था । उस काल के आर्यों ने अपनी गिरी हुई अवस्था देखी थी इस कारण उन्हें निश्चय नहीं हो सकता था कि हम सतयुगी मार्य हैं । उन्होंने कलि वर्षों को देवी वर्षों वाला बना दिया ” ।

में मध्य अधिकार द्रव खण्ड में दिन रात्रि और मासों का कथन करके लिखा है—

मासैर्द्वादशभिर्वर्ष दिव्यं तद्वत् उच्यते ॥१३॥

अर्थात्—बारह मासों का वर्ष होता है और उसको दिव्य दिन रात कहते हैं ।

तत् षष्टिः षड् गुणा दिव्यं वर्षं मासुर
मेव च ॥ १४ ॥

अर्थात्—दिव्य दिन रात को ३६० के साथ गुणा देने से दिव्य वर्ष बनता है इस को आसुर वर्ष भी कहते हैं ।

तद् द्वादशसहस्राणि चतुर्युगं मुदाहृतम् ।

सूर्याब्दं संख्यया द्वि त्रि सागरैर्युताहतैः ॥१५॥

अर्थात्—बारह हजार दिव्य वर्षों की एक चतुर्युगी होती है । और वर्षों के दश हजार दिनों को ४३२ के साथ गुणने से सौर वर्ष निकलते हैं ।

अर्थात् सप्तर्षियों में से दो तारे जो आकाश में उदय हुए दीखते हैं, उन के समानान्तर पर बीच में जो नक्षत्र दीखता है उस से युक्त हो कर सप्तर्षि सौ वर्ष रहते हैं । इस श्लोक के सम्बन्ध में वैष्णवासी राय बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय बहादुर कृष्ण चरित्र पृष्ठ १५, १६ पर लिखते हैं ।

“इस ३२ वें श्लोक का तात्पर्य अति दुर्गम है । इसे विस्तार पूर्वक समझना पड़ेगा । सप्तर्षि मण्डल कई स्थिर तारे हैं । उन का अंग्रेजी नाम ग्रेट बेयर या उरसा मेजर हैं ।

मघा नक्षत्र भी कई स्थिर तारे हैं । यह सब जानते हैं कि स्थिरतारों की गति नहीं होती है । हां, विषुव की जरा सी गति है ।

अंग्रेज ज्योतिर्विद् उसको प्रिसेशन ऑफ दी इक्वीनॉक्स (Precession of the Equinoxes) कहते हैं। यह गति हिन्दु मत के अनुसार प्रतिवर्ष ५४ विकला है। प्रत्येक नक्षत्र में $1\frac{1}{2}$ अंश का अन्तर है। इस हिसाब से “किसी स्थिर तारे को एक नक्षत्र की परिक्रमा करने में एक हजार वर्ष लगते हैं, एक सौ नहीं”। इसके “सिवा सप्तर्षि मण्डल मघा नक्षत्र में कभी रह नहीं सकता”। क्योंकि नक्षत्र सिंह राशि में है। राशि चक्र के भीतर बारह राशि हैं। सप्तर्षि मण्डल राशि चक्र के बाहर है। जैसे इंग्लैण्ड भारतवर्ष में नहीं हो सकता वैसे ही सप्तर्षि मण्डल मघा नक्षत्र में नहीं हो सकता। आगे वे महाशय लिखते हैं कि “पाठक पूछ सकते हैं कि तब पुराणकार ऋषि ने क्या भंग पीकर यह लिखा है? हम यह नहीं कहते। हम सिर्फ यही कहते हैं। कि इस प्राचीन उक्ति का मतलब हमारी समझ के बाहर है। पुराणकार ने क्या समझ के ऐसा लिखा यह हम नहीं समझ सकते।

हमें तो यह मानने में भी कोई हानि नहीं कि प्रत्येक नक्षत्र में सप्तर्षि १०० वर्ष ही रहते हैं परन्तु इस अवस्था में “तेतु परीक्षिते काले मघा स्वासन द्विजोत्तम तदा प्रवृत्तश्च कलि द्वादशाब्दरातात्मा। अर्थात् परीक्षित के समय सप्तर्षि मघा नक्षत्र में थे तब कलि आरम्भ हुआ, यह श्लोक कुछ अनर्थक सा जान पड़ता है। क्योंकि पं० राजारामजी अपनी महाभारत की भूमिका के पृष्ठ २१ पर लिखते हैं कि “हरणक युग का आरम्भ अश्विनी नक्षत्र से होता है”। परन्तु विष्णु

पुराण के श्लोक से कलि का आरम्भ होना मघा नक्षत्र से पाया जाता है।

“प्रतिवादी” एक और श्लोक देता है वह यह है—

“प्रयास्यन्ति यदाचैते पूर्वाषाढामहर्षयः।

तदानन्दात् प्रभूयेष कलि र्द्वि गमिष्यति ॥

अर्थात् जब सप्तर्षि पूर्वाषाढा में पहुँच जायेंगे तब नंदी नन्दों का राज्य होगा। अब यदि यह माना जावे कि परीक्षित के समय सप्तर्षि मघा में थे तथा कलि का आरम्भ अश्विनी से होता है तो १२०० वर्ष ईसा पूर्व नन्दों का राज्य होगा न कि ३७०।

और यदि बद्धिमचन्द्र और पं० राजाराम जी के अर्थों को स्वीकार किया जावे अर्थात्

“तेतु परीक्षिते काले”..... इस श्लोक के सम्बन्ध में ऊपर जो कुछ लिखा है वह विल्सन के अनुसार लिखा है क्योंकि प्रतिवादी महाशय ने भी विल्सन के किये हुए अनुवादानुसार ही स्वलेख में नक्षत्रों का हिसाब लगाया है। परन्तु इस श्लोक के अर्थ राय बद्धिमचन्द्र और पं० राजाराम जी इस प्रकार करते हैं कि कि “सप्तर्षि परीक्षित के समय में मघा नक्षत्र में थे तब कलि के १२०० वर्ष बीत चुके थे”। कृष्ण चरित्र पृष्ठ १८ और महाभारत भूमिका पृष्ठ २२।

इस हिसाब से कलि के १२०० वर्ष पश्चात् परीक्षित का समय था। अतः परीक्षित का समय १६०० वर्ष इसी से पूर्व हुआ न कि १४०० वर्ष। (इस पक्ष में योग की प्रवृत्ति अश्विनी से नहीं हो सकती। (पं० राजाराम)।

परिक्षित के समय में सप्तमि मघा नक्षत्रों में थे तब कलि के १२०० वर्ष बीत चुके थे। तब नन्दों का राज्य ३१००-२२०० अर्थात् ६०० वर्ष ईसा पूर्व ठहरता है। परन्तु आप मानते हैं कि नन्द ३७० वर्ष ६०० सिंहासन पर बैठा।

सारांश यह है कि पुराणों की ज्योतिष सम्बन्धि लाक्षी अति सादृश्य है अतः विश्वसनीय नहीं समझी जा सकती।

(४) चौथी युक्ति जो प्रो० महोदयने दी थी यह है कि मगध इतिहासानुकूल युधिष्ठिर से बुद्धदेव तक ३५ राजाओं का राज्य किया अतः ३५ × २१ = ६६७ बुद्ध का जन्म तिथि = १४०० वर्ष ईसाब्द से पूर्व युद्ध हुआ। इस पर हम ने लिखा था कि न मालूम कौनसा मगध का इतिहास ऐसा कहता है। साथ ही हम ने लिखा था कि म० रङ्गाचार्य के अनुसार पुराणों में मगध के राजाओं की जो वंशवर्ली दी हुई है उसमें युधिष्ठिर से महापद्मनन्द तक ४७ राजाओं का १५०० वर्ष तक राज्य काल दिया हुआ है। विशेष है प्रतिवादी किसी भी मगध के इतिहास का पतान बताने पर लिखता है कि प्रतीति होता है म० रङ्गाचार्य आप का दिग्दर्शक है... क्या कभी (origwal) सरोवर भी देखे है? देखिये विष्णु पुराण के ४० अ० २३-२४ में मगध के राजाओं की संख्या नन्दवंश तक ३७ बताई है हम प्रतिवादी को सावधान करते हैं।

हम सावधान इस लिये लिखते हैं क्योंकि पुराणों की मिस्र तथा एक ही प्रति में परस्पर विरोध पाया जाता है। अतः सम्भव हो सकता है कि प्रतिवादी और प्रो० महोदय के पास जो संस्कृत का पुराण है इस में ३७ राजाओं की संख्या ही दी हुई हो।

कि आपका (origwal) सरोवर कभी भी राजाओं की संख्या ३७ नहीं बतलाता। देखिये:—

श्रीधर स्वामीकृत-स्वप्रकाशख्य टीका सहित और प्रो० जीवानन्द विद्यासागर द्वारा प्रकाशित तथा सरस्वती यन्त्रालय कलकत्ता से मुद्रित विष्णु पुराण (४-२३-२४) के अनुसार मगध के राजा जरासन्ध (जो युधिष्ठिर का समकालीन था) से लेकर—२३ जयद्रथ राजे १००० वर्ष।
५ प्रद्योत राजे १३२ वर्ष।
१० शिशुनाग राजे ३६२ वर्ष।
६ नन्द १०० वर्ष।

राज्य करते रहे—इस प्रकार चन्द्रगुप्त तक ४१ राजे और १६०० वर्ष होते हैं।

‘प्रतिवादी’ रमेशचन्द्र दत्त का जिक्र करता है। परन्तु क्या यदि दत्त महाशय ने शुलती की हो तो आप उस को माने चले जावेंगे। तथापि सम्भव है उन्होंने जो विष्णु पुराण की संस्कृत प्रति देखी हो उस में ३५ राजाओं की संख्या दी हो। शेष रहे सर विलियम जोज, प्रतिवादी थे लिखता है कि सर विलियम जोज की पुस्तकों वा Asiatic Recherche को पढ़ने का यदि आपको अवसर मिले तो वहां भी मगध के राजाओं की सूची आप को मिलेगी। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रतिवादी महाशय ने सर विलियम जोज की पुस्तकों को स्वयं नहीं देखा। महाशय जी हमें तो सर विलियम जोज के पढ़ने का अवसर मिल ही जाता है कृपा करके आप उनकी पुस्तकों को अवश्य पढ़िये। देखिये Sir William Jones's Works Vol I, No. 304 पर लिखते हैं कि मगध में ८० राजाओं ने राज्य किया।

प्रतिवादी लिखता है कि साथ ही भागवत

में भी राजाओं के नाम तथा समय दिये हैं। स्यात् प्रतिवादी ने भागवत देखो नहीं। प्रतिवादी महाशय यदि आप विलसन अनुवादित पुराण के अन्दर जो नोट दिये हुए हैं उन्हें भी देखने का कष्ट उठाते तो आप को पता लग जाता कि भागवत, मत्स्य तथा अन्य पुराण भी कितने रा और कितना समय बतलाते हैं। अतः प्रतिवादी का यह लिखना कि 'मालूम नहीं कि ३७ के ४७ आप ने बनाये हैं या आपके रङ्गाचार्य ने' इससे विदित होता है कि प्रतिवादी ने रङ्गाचार्य की भी पुस्तक नहीं देखी। नहीं तो पता लग जाता कि न हम ने और न रङ्गाचार्य ने ३७ के ४७ बनाए हैं प्रत्युत प्रो० महोदय और प्रतिवादी महाशय ही ऐसे कार्य करने में दक्ष और निपुण हैं।

सारांश यह कि मगध इतिहास तथा अन्य तीन प्रमाण जो प्रो० महोदय ने युद्ध का समय १४०० ई० पू० सिद्ध करने के लिये दिये हैं वह सर्वथा अयुक्त और असंगत हैं ॥

प्रतिवादी महाशय लिखते हैं कि 'खोज तो तभी उत्तम और सुन्दर हो सकती थी जब आप के मनमाने कल्पित वा अज्ञानाश्रित परिणामों पर प्रो० महोदय पहुँचते। भला अब वह खोज और अन्वेषण कैसे हो सकते हैं? ऐसा ही है न? या जो उत्तर आप के आक्षेपों का ऊपर दिया गया है—क्या उस से आप ने अपनी सम्मति बदल ली है। हम पुनः बड़े बल पूर्वक लिखते हैं कि प्रो० महोदय के महाभारत युद्ध संबंधी सारे के सारे विचार मिथ्या, भ्रान्ति युक्त और कपोल कल्पित हैं। प्रतिवादी कहता है कि क्या हमने आक्षेपों का उत्तर पढ़ कर अपनी सम्मति बदल ली। महाशय जी हम क्या लिखें हमें तो एक भी

आक्षेप का संतोष और विश्वास जनक उत्तर नहीं मिला प्रत्युत प्रो० महोदय ने जितनी भ्रान्तियों और भूलें स्वपुस्तक में की थीं उनसे अधिक भूलों और भ्रान्तियों का परिचय आपके लेख से मिलता है। प्रतिवादी लिखता है आशा है कि 'यथा नाम तथा गुणाः' का परिचय आप अगले लेखों में देंगे। हमने तो जहाँ तक हमारे से हो सका 'यथा नाम तथा गुणाः' का परिचय देने की चेष्टा की है परन्तु हमें भय है कि कहीं दूसरी ओर से भी ऐसा न हो जावे। प्रतिवादी महाशय लिखते हैं कि 'संक्षिप्त इतिहास ऐतिहासिक गवेषण का एक अमूल्य रत्न है' प्रत्युत हमारे विचार में तो वह अनैतिहासिक कल्पनाओं का एक अद्भुत भण्डार है ॥

आत्मा

अंग्रेजी बाबू और स्वदेशी भार्या (नाटक)

(अनुवादक—परिचित कृष्ण चन्द्र प्रभाकर)

उच्च शिक्षित बाबू—क्या होरहा है?

भार्या—पढ़ रही हूँ।

उच्च—क्या पढ़ती हो?

भार्या—जो कुछ पढ़ना जानती हूँ। मैं तुम्हारी अंग्रेजी फारसी तो जानती ही नहीं। भाग्य में जो कुछ है, वही पढ़ती हूँ।

उच्च—मिठी। पत्थर! यह बङ्गाली काहे को पढ़ती हो? इस से तो न पढ़ना ही भला है।

भार्या—क्यों?

उच्च—वह सब इम्रौरल, औबसीन, फिल्ली होता है।

भार्या—ये सब किस को कहते हैं?

उच्च—इम्मौरल किसे कहते हैं, नहीं जानती !
यह वह होता है.....अर्थात् जो मोरैलिटी के
विरुद्ध हो ।

भार्या—वह क्या, किस पशु को कहते हैं ?

उच्च—न, न, यह क्या जानती नहीं हो...
इस के लिये बङ्गला शब्द कहां से मिलेगा ? यही
जो मौरल न हो । वही, और क्या !

भार्या—मौरल क्या ? राज हंस ?

उच्च छिः, छिः ओ वुमन, दाई नेम इज़
स्टूपिडिटी !

भार्या—किसे कहते हैं ?

उच्च—बंगाली में तो और जयादा समझाया
नहीं जा सकता.....सत्य बात तो यह है कि
बङ्गला पुस्तक पढ़नी अच्छी नहीं ।

भार्या—यह पुस्तक तो ऐसी बुरी नहीं है ।
कहानी बहुत अच्छी है ।

उच्च—“एक राजा और दो रानियां” ? या
“नल दमयन्ती” ?

भार्या—इस के सिवाय और क्या कहानियां
नहीं ?

उच्च—इन के सिवा तुम्हारी बंगाली में
और भी कुछ है क्या ?

भार्या—इस पुस्तक में ये सब नहीं । इस में
है ब्राण्डी, विधवा विवाह, वैष्णवी का गीत ।

उच्च—पेगज़ैक्टली, मैं क्या और कहता हूं ?
ये सब ईन्ट पत्थर मत पढ़ो ।

भार्या—क्यों पढ़ने से क्या होगा ?

उच्च—ये सब पढ़ने से मनुष्य डीमौरालाइज़
होजाता है ।

भार्या—यह फिर क्या ? क्या ऊदबलाओ
हो जाता है ?

उच्च—ऐसा पाप और गन्द भी कहीं नहीं
देखा । डीमौरालाइज़ कहते हैं.....चरित्र बिगड़
जाता है ।

भार्या—स्वामी महाशय ! आप वोतल वोतल
ब्राण्डी चढ़ा जाते हैं, और जिन के साथ बैठ कर
ये सब काम करते हैं वे ऐसे लोग हैं कि उन का
मुख देखना भी पाप है । आप के बन्धुगण भोजन
के पश्चात् ऐसी भाषा में वार्तालाप करते हैं कि
खानसामां प्रभृति भी कानों में उझलियां देते हैं ।
जिन के मकान पर आप मुर्गी मदन का श्राद्ध
करते हैं, पृथिवी में ऐसा कोई कुकार्य्य नहीं जो
वे लोग छिप कर न करते हों । इन सब से आप
के चरित्र को भय नहीं । और मैं एक बङ्गाली
पुस्तक पढ़ने से ही बाज़ार जा बैठूंगी ? शायद
इस वास्ते कि मैं एक गरीब आदमी की लड़की हूं ।

उच्च—हम हैं ब्रांस पांट, और तुम हो
आर्दन पांट ।

भार्या—इतनी बातों से क्या लाभ । तनिक
यह पुस्तक पढ़कर तो देखिए ।

उच्च—(झिजक कर पीछे हटते हुए) मैं इसे
छूकर हैण्ड को कनटैमीनेट नहीं करता ।

भार्या—किसे कहते हैं ?

उच्च—यह सब छूकर हाथ मैला नहीं करता ।

भार्या—आप का हाथ मैला नहीं होगा, मैं
पूछ देती हूं । (भार्या का पुस्तक को आंचल से
पूछना और स्वामी के हाथ में देना । मानसिक
मैल से भयभीत होने के कारण उच्च शिक्षित के
हाथ से पुस्तक का भूमि पर गिर पड़ना) ।

भार्या—ओह कर्म ! अच्छा आपने इस
पुस्तक से इतनी घृणा की, परन्तु आप के अंग्रेज़

तो इतनी नहीं करते। वे तो इस पुस्तक का अनुवाद करा कर पढ़ते हैं।

उच्च—पागल हुई हो क्या ?

भार्या—क्यों ?

उच्च—बङ्गाली पुस्तक का अंग्रेजी में अनुवाद ? ऐसी बेतुकी कहां से सुन ली ? यदि सीडीशस है तो गवर्नमेण्ट का अनुवाद कराना अवश्य सम्भव है। इस का नाम क्या है ?

भार्या—विष वृक्ष।

उच्च—किसे कहते हैं ?

भार्या—विष किसे कहते हैं, नहीं जानते ? उसी का दरख्त।

उच्च—त्रिस.....एक कोड़ी (२०) ?

भार्या—न, एक और प्रकार की विष होती है, जो तुम्हारे जा जलाने से मैं एक दिन खाऊंगी।

उच्च—ओहो ! पापज़न ? डीअर मी ! इस का दरख्त। नाम तो उपयुक्त ही है। फैंको २।

भार्या—अच्छा, अब दरख्त की अंग्रेजी बोलो तो।

उच्च—ट्री।

भार्या—अब दोनों को इकट्ठा करो।

उच्च—पापज़न ट्री ! ओहो ! समझा, समझा, पापज़न ट्री एक अंग्रेजी कैटलाग में देखा तो है। क्या वह बंगाली पुस्तक का अनुवाद है ?

भार्या—आप क्या ख्याल करते हो ?

उच्च—मेरा आँडिया था कि पापज़न ट्री एक अंग्रेजी पुस्तक है, और यह उस का बंगाली अनुवाद है। जब अंग्रेजी है तो बंगाली क्यों पढ़ें ?

भार्या—पढ़ना अंग्रेजी प्रकार ही भला है चाहे पुस्तक लेकर हो चाहे ग्लास लेकर। अक्छा तुम्हें अंग्रेजी ढंग की ही पुस्तक देती हूँ। यह लो

एक अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद। लेखक स्वयम कहते हैं।

उच्च—हां, यह एक प्रकार से बुरी नहीं। किस पुस्तक का अनुवाद है ? राबिन्सन क्रूसो या व्हाट आन दी इम्प्रूवमेंट आफ माइंड ?

भार्या—अंग्रेजी नाम मैं नहीं जानती। बंगला नाम है “छायामयी”।

उच्च—“छायामयी” ! देखू (पुस्तक हाथ में लेकर) डाण्टे बाई फेन।

भार्या—(मुस्कराकर) मैं यह अच्छी तरह नहीं समझती। बंगाली लड़की, अंग्रेजी पुस्तक का अनुवाद समझने की बुद्धि कहां से आए ? मुझे समझा दो तो।

उच्च—अच्छा सुनो। डाण्टे लिबड इनदी फोर्टीन्य सेंचरी अर्थात् वह फोर्टीन्य सेंचरी में फ्लोरिश करता था।

भार्या—फटन्त सुन्दरी को पालिश करता था ? इतना बड़ा कवि !

उच्च—यह क्या बकवाद। फोर्टीन के अर्थ हैं चौदह।

भार्या—चौदह सुन्दरी को पालिश करता था ! चाहे चौदह हो, चाहे पन्द्रह, किन्तु सुन्दरी को कैसे पालिश करता था ?

उच्च—मैं कहता हूँ चौदहवीं सेंचरी में वर्तमान था।

भार्या—वह चौदह सुन्दरी पर वर्तमान रहे या चौदह सौ पर, तुम तो पुस्तक से मतलब है।

उच्च—पहले आयर की लाइफ जाननी चाहिये। वह पलारन्स नगर में रहते हुए वहां बड़ी २ अपोइन्टमेन्ट होल्ड करता था।

भार्या—पोर्टमैण्टो (टीन का बक्स) हिलाया करता था ?

हमारे यहां क्या आज कल पोर्टमैण्टो हिलाये नहीं जाते ?

उच्च—मैं कहता हूं बड़ी २ नौकरियां करता था। फिर ग्लॉबल और घिलाइन के विवाद से—

भार्या—और हाड मत जलाओ पुस्तक थोड़ी बहुत समझानी हो तो समझा दो ॥

उच्च—वही तो समझाता था। आथर की लाईफ़ विना समझे पुस्तक समझोगी कैसे ?

भार्या—मैं दुःखिया बंगाली की ठोकरी, मुझे इतने गूढ़ तत्व समझने की आवश्यकता नहीं। पुस्तक का मर्म थोड़ा सा समझा दो।

उच्च—देखें तो ज़रा ! पुस्तक किस प्रकार लिखी है।

(प्रथम पङ्क्ति का पाठ करता है)

“सन्ध्या गगन पर निविड़ कालिमा”

तुम्हारे पास अभिधान है ?

भार्या—क्यों ? कौन कथा अड़ गई ?

उच्च—गगन किसको कहते हैं ?

भार्या—आकाश को।

उच्च—“सन्ध्या गगन पर निविड़ कालिमा”

निविड़ किसे कहते हैं ?

भार्या—ओ, हेरा ! इस विद्या पर तुम मुझे सिखाने आये हो। ‘निविड़’ कहते हैं ‘घने’ को, इतना भी नहीं जानते। तुम्हें मुख दिखाते लज्जा नहीं आती ?

उच्च—तुम क्या जानती हो। बंगला फंगला सब छोटे आदमी पढ़ते हैं। हम लोगों में इसका प्रचार नहीं। यह क्या हम को शोभा देती है ?

भार्या—क्यों ? तुम क्या हो ?

उच्च—हमारी है पालिशिंग सोसायटी। तुम्हारा यह बंगला फंगला छोटे आदमी पढ़ते हैं साहब लोगों के पास इसका काम नहीं। पालिशिंग सोसायटी में क्या यह चलता है ?

भार्या—मातृ भाषा पर पालिशिंग शब्द का इतना कोप क्यों है ?

उच्च—अरे माता मर कर कभी की-राख हो गई। अब उस की भाषा से हमारा क्या सम्पर्क है ?

भार्या—मेरी भी तो वही भाषा है। मैं तो मर कर राख नहीं हुई।

उच्च—यैस, फार दाई सेक, माई ज्यूल, आई शेल डू इट। तुम्हारी खातिर मैं एक पुस्तक पढ़ूंगा। किन्तु माईड एक ही पुस्तक, और नहीं।

भार्या—अच्छा, बुरा क्या है, एक ही सही।

उच्च—घर का दरवाज़ा बंद करदो, कोई देख न पाय।

भार्या—अच्छा, पेसा ही लो।

(चुन कर एक अपकृष्ट, अश्लील एवं दुर्नीति पूर्ण परन्तु सरस पुस्तक स्वामी के हाथ में देना, और स्वामी का आद्योपान्त पढ़ना)

भार्या—क्यों कैसी पुस्तक है ?

उच्च—फस्ट क्लास। मैं तो नहीं जानता था कि बंगला में भी ऐसी ऐसी पुस्तकें होती हैं।

भार्या—(घृणा से) यही है तुम्हारी पालिशिंग शब्दी। इस से तो मेरी चपड़ा-शब्दी और शब्दी ही अनेक गुना भली हैं ॥

*स्त्रियों के दो व्योहारों के नाम।

मातृ-भूमि ।

(श्रीयुत मुकुन्दलाल श्रीवास्तव)

हे जननी ! हे भारत माता ! धन्य धन्य तू धन्य !

वसुंधरा पर तेरी नाई देश नहीं है अन्य ।

रहता तुझ में सदा प्रकृति का अनुपम सौन्दर्य,

वस्तु वस्तु में भरा दाँखता है कैसा माधुर्य !

मातृ भूमि ! हे प्राण हमारी !! हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि रवि बिम्ब ॥

(२)

उत्तर में तब खड़ा हुआ है हिम गिरि अगम विशाल,

फाटक के पहेर पर मानों बैठा है रखवाल ।

कहीं सुर-सरि खेल रही है रवि-तनया के सङ्ग,

कहीं नर्मदा कहीं महानद ब्रह्म पुत्र वा सिन्धु तरङ्ग ॥

मातृ भूमि । हे प्राण हमारी हमारी ॥ हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि, रवि बिम्ब ॥

(३)

नील, सत पुड़ा, विंध्याचल से कहीं अरण्य अगम्भ,

त्रिविध-कन्दरा-पल्लव-भूषित हैं जो अति ही रम्य,

मुकुलित वृक्षों पर कलरव हैं करते जहाँ विहङ्ग ।

मानों क्रीड़ा करता होवे लेकर चमू अनङ्ग ॥

मातृ भूमि ! हे प्राण हमारी !! हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि, रवि बिम्ब ॥

(४)

अतुल-विभव-सम्पन्न-मातृ भू ! हे तू बड़ी उदार,

तुझ से ही सम्पत्ति मांग कर धनी बना संसार ।

प्रचुर द्रव्य ले गया गज्जनवी, हुआ धनी तैमूर,

मुगल नरेशों ने भी, देखो ! भोग किया भरपूर !!!

मातृ भूमि ! हे प्राण हमारी !! हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि, रवि बिम्ब ॥

(५)

जिस पवित्र धरणी का प्रभू ने करने को उद्धार,

क्रीड़ा की मानव-तनु धर कर देखो ! अतिपय बार,

उस प्रभु-पद-रत्न-पूत भूमि की हम ही हैं सन्तान,

हृदयोल्लासित हो उठते हैं आहा ! हम यह जान ॥

मातृ भूमि ! हे प्राण हमारी !! हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि, रवि बिम्ब ॥

(६)

तू जननी ! सब भान्ति हमारी है अति ही रमणीय,

करें कहां लों श्लाघा तेरी अहो ! अनिर्वचनीय ?

हे माता ! तुझ को मेरा है बारम्बार प्रणाम ॥

मातृ भूमि ! हे प्राण हमारी !! हे प्रिय भारत अम्ब !!!

चारु मनोहर बनी रहे तू जब लौं शशि, रवि बिम्ब ॥

हितकारिणी से उद्धृत ।

नारीउपयोगी पृष्ठ ।

जागरण ।

(लेखिका-श्रीमती हेमन्तकुमारी चौधुरी)

(भार्तिक की संख्या से आगे ।)

(४)



ज तो सुखदेवी के घर में बड़ा

ही लड़ाई झगड़ा हो रहा है ।

सुखदेवी की कन्या छाया के

लिप एक बड़ा सुयोम्य वर

मिला है । आगरे के लाला गणेशप्रसाद, -जिनके

दुर्व्यवहार से पहिली दो स्त्रियां मर चुकी थीं,

तीसरी बार फिर व्याह्र करने की इच्छा करके

वर की धारणा करते हैं। विवाह सम्बन्ध कराने में नाई बड़े चतुर होते हैं, इस काम के लिये उन्हें धन भी बहुत मिलता है, नाई भी बड़े अर्थलोभी धर्म ज्ञान शून्य होते हैं, और जब उनके साथ जन्मपत्री देखने वाले ब्रह्मण का मेल होता है तो फिर क्या चाहिये। ऐसे नाई और ब्राह्मणों के द्वारा कितने परिवारों में दुःख की अग्नि जली है, कितनी सरला, सुकुमारियों के सुन्दर जीवन पुष्प अकाल में ही सूख गये। आज गणेशप्रसाद का नाई सुखदेवी के पुत्र रामलाल के पास यह नाता लेकर आया है। उसने आते ही लाला गणेशप्रसाद के धन दौलत और कुलमान की कितनी ही प्रशंसा सुनाकर विवाह का प्रस्ताव किया। और साथ यह भी कहा कि इस नाते के लिये रामलाल को २०००) के कम्पनी के कागज़ भी भेंट मिलेंगे। जिसे सुनते ही रामलाल ने बड़े आनन्द के साथ अपनी सम्मति दे दी। उन्होंने ने गणेशप्रसाद की विद्या बुद्धि और स्वभाव चरित्र की कोई बात पूछनी आवश्यक नहीं समझी। उन्होंने यही सोचा कि इतने बड़े कुलीन और धन सम्पद वाले के साथ कुटुम्बिता होगी, इस से बड़कर और कहां अच्छा वर मिलेगा।

गणेशप्रसाद घोर मद्यपायी और अत्यन्त दुश्चरित्र का पुरुष था। छाया से उसकी उमर भी चौगुनी होगी। पहिली स्त्री के दो पुत्र भी हैं। उसके शिर के आधे बाल तो सफेद हो गए हैं।

भाई रामलाल ने एक बार भी अपनी बहिन के भावी जीवन के सुख दुःख की चिन्ता नहीं की। बड़ी खुशी के साथ अन्दर आकर माता को गणेशप्रसाद के कुल शील और धन दौलत की प्रशंसा सुनाई। माता यह संवाद सुनते ही चौक

उठी। थोड़ी देर के बाद पुत्र से बोली—“रामलाल तेरी बुा कहां गई, तू क्या अपने देवोपम पिता को भूल गया है। जो धनी न होकर भी केवल जीवन की शुद्धता और शील स्वभाव के कारण ही सब के मान्य थे। क्या संसार में केवल धन दौलत से ही मनुष्य सुखी होता है? गणेश प्रसाद के चरित्र की बात कौन नहीं जानता, धिक् है उसके धन दौलत के ऐसे पशु को साथ में कभी अपनी प्राणतुल्या कन्या को नहीं व्याहूंगी।

माता पुत्र में इसी तरह बहुत वादानुवाद होता रहा। छाया और माया ने भी दूसरी कोठड़ी में बैठकर सब बातें सुनीं। माया विचारी तो पहले से ही दुःखिया थी। प्यारी बहिन के लिये ऐसे भयानक सम्बन्ध की खबर सुनकर आज उसका कोमल चित्त और भी व्याकुल हुआ।

रामलाल तो धन के लोभ से अपनी धर्म बुद्धि खोवेठा है, लेकिन माता और बहिन तो धन के लोभ से एक सुन्दर जीवन को चिरकाल के लिये अग्नि में नहीं डालेंगी। माता ने जब देखा कि आज पुत्र को समझाना कठिन है। और पुत्र ने भी साफ कह दिया यदि इस सम्बन्ध में तुम सम्मति नहीं दोगी तो मेरे यहां से कन्या को लेकर चली जाओ मैं तो व्याहूंगा तो उसी गणेशप्रसाद के साथ नहीं तो और कहीं नहीं दूंगा। माता भी दृढ़ता के साथ बोल उठी “रे मूर्ख! तू तो स्वार्थ पर होकर बहिन के जीवन को नाश करना चाहता है मैं कभी नहीं तेरी इच्छा को पूरी होंगे दूंगी। इससे तेरे साथ से पृथक होना भी स्वीकार है। नारी जीवन केवल पुरुषों के ही अधीन नहीं है। इस के उपर विधाता की भी महान् शक्ति है। जैसे मैंने तेरे को प्रसन्न किया, वैसे ही कन्याओं

को भी। क्या मैं अब तेरी कुइच्छा को पूरी करने के लिये विचारी कन्या को बलि दान करूंगी? जहाँ तक हो सकेगा मैं तो अपनी कन्याओं को भी नारी रत्न बनाने का यत्न करूंगी।' माता का प्रेमपूर्ण हृदय आज कन्याओं का अनादर देखकर शोक से भर गया! अपने स्वर्गीय पति का स्मरण करके विलाप करने लगी।

पुत्र ने जब देखा कि माता की सम्मति मिलनी कठिन है तो उसने अपनी बहू के साथ यह परामर्श किया कि माता को संक्रान्त के समय किसी तीर्थ में भेज कर, इधर ठाया को गणेश प्रसाद के साथ व्याहृ देंगे। परन्तु माता ऐसी बुद्धिमती और दृढ़ चित्ता थी, कि उन्होंने बहू बेटे की बातुगई जान ली। और अपनी दोनों कन्याओं को साथ लेकर वहाँ से पृथक होने का संकल्प करके अपने धर्म भाई प्रेमानन्द जी को खबर भेजी। उनकी खबर मिलते ही भाई प्रेमानन्द जी वहाँ आए और जब उन्होंने सारा वृत्तान्त सुना तो बहुत ही दुःखी हुये। उन्होंने रामलाल को भी बहुत समझाया परन्तु वह किसी तरह नहीं माना। अन्त में सुखदेवी दोनों कन्याओं को साथ लेकर अपने भाई बाबू सुखदयाल के घर प्रयाग जी में गई।

सुखदयाल बाबू वहाँ के सर्वजन प्रिय डाक्टर हैं। वह विद्वान और धर्मशील पुरुष हैं। उन्होंने अपनी पत्नी और कन्या को विद्या सिखाने के लिए भी अपने परिवार में बड़ा अच्छा प्रबन्ध किया है। कन्याओं को सुशिक्षा देकर उन्हें सुयोग्य पार्श्वों के साथ विवाह देने का संकल्प किया है। वे वाल्य विवाह और कन्या की इच्छा के विरुद्ध विवाह देना पितृ माता के लिए बड़ा

अन्याय कर्म समझते थे। इसलिये बहुतेरे मूढ़ लोग उनकी निन्दा करते, लेकिन वे किसी की निन्दा से डरते नहीं थे। वे प्रेमानन्द स्वामी के सहपाठी थे उन्हीं के सम्बन्ध से प्रेमानन्द को सुखदेवी भाई मानती थी।

सुखदयाल जी का परिवार सच ही आदर्श परिवार था। उनकी एक कन्या ने एफ. ए. की परीक्षा पास की, अब डाक्टरी पढ़ने की इच्छा करती है। दूसरी कन्या भी एन्ट्रेंस की परीक्षा के लिये पढ़ रही है। दो और भी अनाया कन्याओं को उनकी दयावती स्त्री ने पाला है। वे स्वयं ही उनको विद्या के साथ नानाविध शिल्प कर्म सिखाती है। उनकी कन्याओं का नाम 'मीरा' और 'तारा' और पालिता कन्याओं का नाम 'सेवा' और 'दीनता' है।

सुखदेवी की और उनकी दोनों कन्याओं को देखकर वे सब बड़े खुशी हुए। परन्तु जब उनके पुत्र से पृथक होने का कारण सुना तो बाबू सुखदयाल को बड़ा रंज हुआ। बहिन को तो अपने परिवार में रहने की सम्मति दी।

सुखदेवी और प्रेमानन्द के साथ बात चीत करके उन्होंने एक बार ठाया की भी सम्मति पूछने की इच्छा करके उसे बुलाया। ठाया और माया के चित्त पर तो पहले ही प्रेमानन्द जी के सदुपदेशों का प्रभाव पड़ा था। वे दोनों अपने २ जीवन को धर्मानुयायी सदाकार्यों में अर्पण करने के लिये व्याकुल होरही थीं। उच्च शिक्षा लाभ करने की इच्छा तो विचारियों को बहुत थी परन्तु पितृहीन होने से और हिन्दुओं में पदों की रीति से उन की विद्योन्नति की इच्छा आज तक

पूरी नहीं हुई। अब मामा जी के परिवार में आकर विद्या सीखने की आज्ञा हुई। सुखदयाल जी ने छाया को अपने पास बैठा कर प्यार से उसे उस के विवाह के विषय में सम्मति पूछी, यद्यपि इस प्रकार से कन्याओं से विवाह की सम्मति पूछनी आज कल देशाचार के विरुद्ध मानी जाती है परन्तु सुखदयाल जी के प्यार से मुग्ध होकर बालिका छाया बड़ी लज्जा के साथ शिर नीचे करके बोली—“मामा जी आप लोग तो मेरे गुरुजन हैं, जिस से मेरा मंगल होगा वही आप करेंगे।

मैं इस में क्या सम्मति दूँ, मैं तो सम्पूर्ण रूप से आप ही लोगों की इच्छा के आधीन हूँ। तो भी आप ने जब कृपा करके मुझे पूछा है, तो, मैं यही कहती हूँ कि मेरे चित्त में अभी तो विद्या सीखने की इच्छा है। विद्या सीख कर मैं अपने जीवन को देशोपकारी किसी अच्छे काम में अर्पण करना चाहती हूँ।” उस के ऐसे सद्भावपूर्ण वचनों को सुन कर सब कोई बड़े सन्तुष्ट हुये। परन्तु उस की माता तो यही चाहती थी कि भाई की सहायता से किसी सच्चरित्र युवा के साथ उस का विवाह करके निश्चिन्त हो जाऊँ। संसार के दुःख ताप से विचारी का हृदय बड़ा दग्ध हो रहा था सुखदयाल जी ने बहिन और भान्जी के मन के भाव को जान कर कहा कि “छाया को अभी तो तारा के साथ विद्यालय में पढ़ने बैठा दें, और अच्छा कोई घर ढूँडेंगे। यदि उस के लायक कोई मिला तो ब्याह का भी प्रबन्ध कर देंगे। एक बार रामलाल की भी तो खबर लेनी चाहिये उसे त्यागना भी तो उचित नहीं।”

(क्रमशः)

सुशिक्षिता स्त्रियां और

उन का व्यायाम ।

(लेखिका—कुमारी विद्यावती—लुधियाना)

“मातृमान् पितृमान् आचार्यमान् पुरुषोवेद”



यह शास्त्र का वाक्य है कि वही मनुष्य विद्वान् हो सकता है जिस के माता पिता और गुरु ये तीनों ही शिक्षित हों।

इस वाक्य में प्रथम उपाधि माता को दी गई है। इस से सिद्ध होता है कि प्रथम माता का शिक्षित होना अत्यावश्यक है क्योंकि उस फूल की न्याई कोमल वच्चे का भावी जीवन माता के आधीन है चाहे माता उस के जीवन को एक आदर्श रूप बनादे और चाहे उस के मन में कुव्यवहारों और अनाचारों के बीज बो दे, क्योंकि बाल्यकाल में जो संस्कार बालकों के मन में अंकित हो जाते हैं चाहे वे सन्मार्गदर्शी हों और चाहे कुमार्ग दर्शी उन का दूर होना अति कठिन होता है। अतएव माता की ऐसी शिक्षा होनी चाहिये कि जिस से उस की सन्तान धार्मिक और उच्च आदर्श वाली बन सके। यह बात सत्य है परन्तु इस से पूर्व माता की शारीरिक अवस्था की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये। मान लिया एक स्त्री बड़ी पंडिता और विदुषी है परन्तु उस को शारीरिक अवस्था ऐसी है कि पेनक के बिना वह देख नहीं सकती और गाड़ी के बिना वह चल नहीं सकती, बिना जुराबों और जूतों के वह पृथिवी पर पांव नहीं रख सकती तो ऐसी अवस्था में माता की शिक्षा का फलवती होना

अति कठिन है, क्योंकि शरीर के निरोग होने पर ही मनुष्य प्रत्येक कार्य के करने में समर्थ होता है। अतः शरीर के निरोग्य रखने को लिये उचित है कि व्यायाम का वर्ताव हो।

यह बात तो सब पर प्रकट है कि मनुष्य तो कई प्रकार के व्यायाम करते ही रहते हैं क्योंकि स्त्रियों की अपेक्षा उन्हें स्वतन्त्रता अधिक है। और दूसरे कई विशेष नियम भी उन के लिये रखे हुये हैं यथा लड़कों की पाठशालाओं में (कवड्डी फुटबाल) इत्यादि जिन के अनुसार उन्हें कार्य भी करना पड़ता है। परन्तु स्त्रियों के लिये कोई विशेष नियम नहीं। अधिकतर धनाढ्य घरों की स्त्रियों के लिये तो अति कठिनता होती है क्योंकि गृह कार्यों को नौकर करते हैं और स्त्रियों को गुद्गुदे विछाने पर बैठने के सिवा और कुछ कार्य नहीं होता। ऐसी अवस्था में पाठिकागण स्वयं विचार सकती हैं कि उन का शरीर निरोग्य कैसे रह सकता है, कदापि नहीं। या तो उन का शरीर इतना फूल जायेगा कि विचारियों से उठा ही नहीं जायेगा या उन्हें हिस्टीरिया का रोग आन दवायेगा। सर्व भगिनियें समझ सकती हैं कि ऐसी अवस्था में उन की सन्तान किस प्रकार उत्तम हो सकती है। मैं इस का अधिक विस्तार करके पाठिकाओं के अमूल्य समय को नष्ट नहीं करना चाहती। अब हमें यह विचारनीय है कि वे कौनसे व्यायाम हैं जिन्हें स्त्रियां स्वतन्त्रता पूर्वक कर सकती हैं। और अंग प्रत्यंग को आघात भी पहुंचता है। इस के लिये उन्हें प्राचीन सभ्यता के ऊपर आना पड़ेगा और अपने प्राचीन नियमों का अवलम्बन

करना पड़ेगा क्योंकि नवीन सभ्यता के अनुकूल चलाने से हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ भी नहीं होता। जहां तक मेरा अनुभव है प्राचीन व्यायाम से उन्हें भय प्रतीत होता है क्योंकि वे व्यायाम के वास्तविक अर्थ को नहीं जानतीं वस उन का व्यायाम तो प्रातः और सायं गाड़ी में बैठ कर मील अथवा दो मील तक भ्रमण कर आना ही है। अब इस से पाठिका गण स्वयं विचार सकती हैं कि इस व्यायाम से उन्हें कितना लाभ होता होगा। भोग सम्मति में तो अमूल्य समय को वृथा गंवाने के अतिरिक्त और कुछ भी लाभ नहीं। आप आश्चर्य करेंगी कि प्रातः काल के वायु सेवन के अतिरिक्त और कौन सा व्यायाम उत्तम हो सकता है। प्रातः ही चारों ओर से उत्तम सुखदायक वायु का संचार होता है। पुष्पों और उत्तम २ फूलों को देख कर मन प्रसन्न होता है और सारा दिन आलस्य अपना मुंह तक नहीं दिखाता। तो फिर किस प्रकार ऐसे व्यायाम को हम उत्तम न कहें ? पाठिकाओं आश्चर्य की कोई बात नहीं इस का भेद ध्यान पूर्वक पढ़ने से आप को ज्ञान हो जायेगा। नहीं तो आगे चल कर तो अवश्य स्पष्ट हो जायेगा। परन्तु पहले आप अपनी प्राचीन माताओं की जीवनी की ओर दृष्टि डालिए कि किस प्रकार से उन का मन शुद्ध और शरीर निरोग्य होता था।

आप को विचारने से ज्ञान होगा कि वे अपना व्यायाम दो प्रकार का नियत करती थीं और सब को उसी के अनुसार वर्ताव करना पड़ता था जिस से उन के गृहस्थ को भी बहुत लाभ होता था और उन का शरीर भी दृष्ट पुष्ट

भार निरोग्य रहता था । उन का मुख्य व्यायाम तो चक्की पीसना होता था या पशु सेवा क्योंकि वही व्यायाम उत्तम होता है जिसमें शरीर का अङ्ग प्रत्यङ्ग कार्य में परिणत हो, अर्थात् सब नस और नाड़ियों को कुछ न कुछ आघात अवश्य ही पहुंचे । यदि खोज करें तो ऐसे व्यायाम हमें उपरोक्त दो प्रकार के ही मिलेंगे ।

हमारी सभ्य और सुशिक्षता भगिनियें कहेंगी कि वाह ये तो हमारा प्राचीन व्यायाम अच्छा हुआ कि जिस कर्म को हम निकृष्ट और निन्दित समझती हैं उसे ही करने लगे । परन्तु उन भगिनियों की सेवा में मैं सविनय यह अवश्य ही कहूंगी कि आप अपनी उन ग्रामीण चक्की पीसने वाली मूर्खा स्त्रियों के साथ तुलना करें । आप सुशिक्षता हैं, सर्व कार्यों को समयानुसार करना जानती हैं । परन्तु फिर भी नित्य प्रति डाक्टरी औषधियों का सेवन करती हैं । और प्रति मास कमसे कम एक सप्ताह आपको मिस्स ब्राऊन के हस्पताल में अवश्य ही व्यतीत करना पड़ता है । मुझे यहां मिस्स ब्राउन के हस्पताल में किसी को देखने के लिये कई बार जाने का अवकाश मिला है । वहां पर जितनी रोगी स्त्रियें हैं उन में से अधिक संख्या सुशिक्षता और धनाढ्य घरों की स्त्रियों की है, इसका क्या कारण यही कि वे व्यायाम नहीं करतीं, और उत्तम व्यायाम को निन्दित समझती हैं । जो चक्की पीसने वाली ग्रामीण स्त्रियें हैं उन्हें कभी भी रोग के दर्शन नहीं होते । यदि कभी ज्वर हो भी गया तो एक कटोरा ठाठ का पीलिया, बस ज्वर न ज्वर का नाम । कारण यह है कि चक्की के पीसने से उन

के अंग प्रत्यङ्ग को अघात पहुंचता है और उनका कोई भी अंग शिथिल नहीं रहता । सर्व अंगों में दृढ़ता और कार्य करने की शक्ति उत्पन्न होती है । सर्व अंगों के दृढ़ होने से कोई भी रोग उन पर आक्रमण नहीं कर सकता ।

कई वर्ष हुए यहां महात्मा मुन्शीराम जी ने अपने व्याख्यान में चक्की पीसने के लाभ और इस व्यायाम की विशेषता वर्णन की थी । उस व्याख्यान का स्त्रियों पर बड़ा उत्तम प्रभाव पड़ा था और कई स्त्रियों ने चक्की पीसना आरम्भ भी कर दिया था । इसी प्रकार पशु सेवा भी एक ऐसा ही व्यायाम है, क्योंकि जिस समय दूध बिलोया जाता है उस समय सारे शरीर में आघात पहुंचता है ।

इसी प्रकार दूध दोहने के समय भी पर्याप्त बल व्यय होता है । ये बातें मेरी स्वयं अनुभव की हुई हैं । यदि मातायें और भगिनियें उन्हीं प्राचीन व्यायामों अर्थात् चक्की पीसना गौ सेवा को अपनायें तो उसी प्रकार दृष्ट पुष्ट और अनेक शरीर वाली बन सकती हैं, जिस प्रकार कि हमारी प्राचीन मातायें होती थीं ।

माताओ ! आप अपना व्यायाम शुद्ध बनाओ । उपरोक्त कथनों को हूंसी वा मखौल समझ कर पढ़ा और पढ़कर फैक दिया ऐसा वर्ताव न करना । आप इन बातों पर पहले सूक्ष्म दृष्टि से विचार करें तो आप को ज्ञात होगा कि ये उपरोक्त बातें सत्य हैं । और साथ ही परीक्षा भी अवश्य ही करें यदि आप पशु सेवा का व्रत धारण करें तो भारत में दुग्ध घृत की कभी भी न्यूनता न रहे और आप भी स्वस्थ चित्त और बलवती रहें ।

जब आप शुद्ध और आरोग्य होंगे तो यह कब सम्भव है कि आप की सन्तान निर्वल और रोगी रहे। आजकल जितने बालक निर्वलता के कारण मरते हैं उनका कारण भी यही है कि माता इन दोनों व्यायामों में से किसी का भी अवलम्बन नहीं करती। इसीसे वह आप निर्वल है और फिर सन्तान का निर्वल होना कौनसी आश्चर्य जनक बात है। फिर जब शरीर ही निर्वल है तो उत्तम शिक्षा को किस प्रकार ग्रहण करके परोपकारी बन सकते हैं। अतः माताओ ! आप अपने प्राचीन उद्देशों को अपना लक्ष्य बनाओ, और उसी के अनुसार वर्तित करें। तभी सुख पा सकती हो। और प्रतिदिन प्रातः सायं वायु सेवनार्थ भी जाओ परन्तु पैदल। पहले आप उपरोक्त दोनों व्यायामों को अपनायें तभी आप को और प्रकार के सुगम व्यायाम भी सुखदायक और लाभदायक हो सकते हैं। अतएव प्रत्येक स्त्री का यह कर्तव्य है कि इन दोनों व्यायामों को करे।

वैदिक काल का एक सुन्दर

मनोहर दृश्य।

स्वातंत्र्य-सुरभित-पवन-सेवन, ये सभी करते यदा।

वैदिक समय की धार्मिका थी, कन्यका भी यों तदा ॥

यह प्रार्थना जगदशि से उन, की श्रवण के योग्य है।

सर्व आर्यों नर नारियों के, मनन करने योग्य है ॥१॥

अवसर सुअवसर पर कुमारी, कन्यकाएं नियम से।

निर्मल कमल से कर उठा श्रुति, मधुर कोकिल कण्ठसे ॥

गातीं फिरा करतीं थि वे सब, साथ अपने झुण्डके।

चहुं ओर उस प्रज्वलित पावन, हवन अग्नी कुण्डके ॥२॥

गान।

जय प्रभु पतिहि जाननहार।

सब तब सुरभि ही से, सुवासित होत यह संसार ॥१॥

जो सर्वद्रष्टा सृष्टि स्रष्टा, ईशसर्वोधार।

करि कै कृपा वहि पूजि है, हृदयाभिलाष इमार ॥२॥

हों मग्न हम उस प्रेम मय, के प्रेम स्थितु मन्सार।

अब आव आली गाव प्यारी, जयति जय जय कार ॥३॥

है हम सभी के ही उसी को, भाविपति का ज्ञान।

सखि! आउ प्रभु से प्रेम से, सब ले यही वरदान ॥४॥

“होजायं हम पितु गेह से, यों देव! वन्धन-मुक्त।

ज्यों धान से हों सर्वया, तप्यहुल कणानि विमुक्त ॥५॥

पति गेह से, पर, हे दयामय! पिता हे हे देव।

होवे कदापि न शिथिल वन्धन, नैव नैव हि नैव” ॥६॥

है होता इससे सिद्ध यही।

तब थीं जातीं युवती व्याही ॥

यों युक्ति युक्त सुन्दर बोली।

कह सकती क्या वाला भोली ?

चेतराम शर्मा



* चावल

विविध विषय ।

१—“भारतवर्ष में देवताओं की प्रतिमाओं का पूजन कब से चला” ।

चैतंज ।

अगस्त सन् १९१४ की सरस्वती पत्रिका में श्री० पं० हीरानन्दजी शास्त्री एम० ए० ने एक लेख छपाया है । जिसमें आपने कुछ सन्दिग्ध से शब्दों में यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि वेदों में भी मूर्ति पूजन पाया जाता है । मैं पंडित जी के इस कथन को सर्वथा निःसार और प्रमाण शून्य समझता हूं । जहां तक मैंने वेदों का अध्ययन और अनुशीलन किया है । मैं कह सकता हूं कि वेदों में कहीं भी मूर्ति पूजन का उल्लेख नहीं । इसलिये मैं इस पत्र द्वारा प्रशंसित शास्त्री जी को आह्वान करता हूं कि वे स्पष्ट शब्दों में बतायें कि क्या वे वेदों में मूर्ति पूजन को मानते हैं तो अपने पक्ष में प्रमाण और युक्ति उपस्थित करें ताकि उन पर विचार किया जायें और उनके उस सन्दिग्ध लेख से जनता में जो भ्रान्ति फैली है वह दूर हो ।

श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ।

लाहौर ॥

२—कन्या महाविद्यालय जालन्धर ।

और

पाश्चात्य सभ्यता ।

चिरकाल से महाविद्यालयोत्सव देखने की मेरी प्रबल इच्छा थी जो गत वर्ष २६ दिसम्बर १९१४ को पूर्ण हुई—“उत्सव सफलता पूर्वक समाप्त हुआ” ऐसा सम्भव है कि मैं भी कह बैठूँ,

परन्तु सत्य तो यह है कि बाहरी सफलता से आर्य समाज का उद्देश पूर्ण होता नहीं दीखता । आप मुझ से पूछेंगे कि क्या वहां संस्कृत को नीचा स्थान दिया जाता है ? क्या अंग्रेजी नहीं पढ़ाई जाती ? क्या संगीत की ओर कुछ कम ध्यान है ? क्या सिलाई आदि की ओर कुछ न्यून रुचि है ? क्या भोजन बनाने की विधि कन्याओं को नहीं आती ? क्या कन्याओं में परस्पर की प्रेम प्रीति नहीं ? सब से बढ़कर क्या श्री पूज्य लाला देवराजजी ने कुछ कम आत्मोत्सर्ग दिखाया है ? सम्भव है कि इन प्रश्नों में से अधिक के उत्तर में यह कहा जासके कि “यह सब कुछ है और खूब है” ।

परन्तु इन सब के होते हुए भी एक न्यूनता है जिसे समझने के लिये दो चार वाक्य चाहियें ।

आचार्य जी ने व्याख्यान देते हुए कहा था कि हमारा मुकाबला इस शताब्दी में एक प्रबल शक्ति से है जिसके सामने वेद भी भस्म हो जावेंगे । इस शक्ति का नाम उन्होंने मुक्ति फौज बताया था परन्तु जिसे मैं पाश्चात्य सभ्यता कहूँगा उन्होंने बतलाया कि समय है कि हम यत्न करें ताकि इस शक्ति के थपेड़ों से बच सकें । मैं भी सच्चे हृदय से उनका समर्थन करता हूं । परन्तु जिस समय मैंने भली भांति पूर्ण रीति से देखा तो मुझे ज्ञात हुआ कि हमारा प्रेम पात्र महाविद्यालय भी इसी लहर में बहा जा रहा है । उस पाश्चिमीय सभ्यता में, जिससे बचने के लिये यह विद्यालय स्थापित किया गया था, यह स्वयं बहता हुआ प्रतीत होता है । परमात्मा करें कि मेरी यह कल्पना मात्र ही सिद्ध हो ।

दीनानाथ दोसाज ।

३. स्वदेशी पुरातत्व वेत्ता और उनकी मानसिक पराधीनता ।

बिहार प्रान्त में लैरिया-नन्दनगढ़ नामक एक स्थान है । वहां कुछ पुराने टीले थे । भारतीय पुरातत्व विभाग के सुपरिण्टेण्डेंट डा० ब्लाक ने वहां खुदाई की थी । खोदते समय एक टीले में से सुवर्ण के एक छोटे पत्र पर अङ्कित एक स्त्री की प्रतिमा मिली । ब्लाक साहब इसे पृथिवी की मूर्ति बताते हैं । जिन टीलों को उन्होंने खोद था वे उनकी सम्मति में वैदिक युग के हैं । इस पर पुरातत्व विभाग से सम्बन्ध रखने वाले पं० हरनन्दन पाण्डेय वी०ए० नामक एक और महाशय लिखते हैं कि “ ऐसी पुरानी पृथिवी की मूर्ति मिल जाने से एक बात अकाट्य रूप से सिद्ध होती है कि भारत में देव-मूर्ति निर्माण और पूजन का जो समय आधुनिक धर्म सुधारक सोचते हैं उस से कहीं पहले इसका प्रचार था, ... अर्थात् ये टीले ईसा से पूर्व सातवीं या आठवीं शताब्दि के हैं ” ।

हेरानी है कि एक स्त्री का चित्र मिल जाने से यह कैसे सिद्ध हो गया कि इसके निर्माण काल में लोग मूर्ति पूजन करते थे । आजकल मॉनिङ्ग (प्रातःकाल) ईवनिङ्ग (सायं काल), स्पृङ्ग (वसन्तऋतु), ऑटम (विनय), लिबर्टी (स्वतन्त्रता), महाराणी विक्टोरिया आदि के सहस्रों अंग्रेजी चित्र तथा सांचे में ढली हुई प्रतिमाएं बनती और मिलती हैं, पर क्या कोई उन्हें देखकर कह सकता है कि अंग्रेज लोग देव-मूर्ति पूजन करते हैं ? इस से तो केवल यही प्रकट होता है कि अंग्रेजों में प्रतिमा निर्माण

की विद्या बड़ी उन्नतावस्था को प्राप्त है । वैसे ही सुवर्ण पत्र की मूर्ति उन लोगों के चित्र अंकन-कौशल्य की सूचक है न कि मूर्ति पूजन की । हां यदि इस मूर्ति पर यह लिखा होता कि हम इसे देवी मानकर इस का पूजन करते और इसे भोग लगाते हैं तब कह सकते थे कि इस के बनाने वाले देव मूर्ति पूजन करते थे ।

वैदिक काल ।

वेद संसार का सब से पुराना पुस्तक है । आर्य लोगों का विश्वास है और हमारा सारा धार्मिक तथा ऐतिहासिक साहित्य इस बात का साक्षी है कि वेद भगवान् सृष्टि के आरम्भ में प्रकट हुए । आर्यों ने एक क्षण और निमेष से लेके एक वर्ष पर्यन्त भी काल की सूक्ष्म और स्थूल संज्ञा बांधी है । इस समय सातवां, वैवस्वत मनु, वर्तमान है । इस से पूर्व ऋः मन्वन्तर व्यतीत हो चुके हैं । सातवें मन्वन्तर की यह २५ वीं चतुर्युगी है । इस चतुर्युगी में कलियुग के ४०१४ वर्षों का तो भोग हो चुका है, बाकी ४२६१५६ वर्षों का भोग होने वाला है । इससे वेदों को प्रकट हुए आज एक वृन्द छानवें करोड़ आठ लाख तरे न हजार चौदह वर्ष हुए । जब महाभारत के युद्ध को हुए ही आज पांच हजार से अधिक वर्ष हो गए (इस अंक में ठूपा ‘महाभारत का काल’ शीर्षक लेख पढ़िए) तो फिर वैदिक काल को ईसा से सात आठसौ वर्ष पूर्व मानना न जाने कहाँ तक युक्ति संगत है । हां एक बात जरूर है । वेदों को ७—८ सौ वर्ष ईसा पूर्व के बताने वाले म० ब्लाक एक गौरांग विदेशी साहब हैं, और आर्य ऋषि स्वदेशी काले आदमी

थे । अकेले ब्लाक साहब का कथन पाण्डेय जी और उन जैसे विचार रखने वाले अन्य भारतीय लोगों के लिए शिरोधार्य है । परन्तु सैकड़ों ऋषियों, मुनियों की साक्षी अप्रामाणिक और बकवाद है, क्योंकि वे काले असभ्य जांगली थे । सत्य बात तो यह है कि आधुनिक भारतीय लोगों की, चाहे वे पुरातत्व विभाग में काम करते हों चाहे शिक्षा विभाग में, अपनी खोज खाज कुछ नहीं होती । केवल अपने गौरांग गुरुओं के विचारों को (जिन्हें वे अंग्रेजी शिक्षा के प्रभाव के कारण सर्व श्रेष्ठ और निभ्रान्त मानने लगे हैं) अपनी भाषा में प्रकट कर देने को ही स्वतन्त्र खोज कहने लगते हैं, और आर्य्य जाति के परम्परागत पवित्र विश्वासों और ऐतिहासिक पर कुल्हाड़ी चलाने में ही अपना गौरव समझते हैं । डाक्टर ब्लाक विदेशी हैं, उनके मुखासे ऐसी बेतुकी निकल जाना कोई बड़ी बात नहीं, पर एतद्देशीय आर्य्य लोगों के इतिहास और धार्मिक विश्वासों को जानने वाले पाण्डेय जी का उन की हानि में हानि मिलाना मानसिक पराधीनता नहीं तो और क्या है ?

४ कन्या महाविद्यालय जालन्धर

शहर की रिपोर्ट ।

बाबत सम्बत १९७० वि० — किसी प्रकार से यह अंग्रेजी की रिपोर्ट हमारे पास आ पहुंची है । कन्या महाविद्यालय कन्याओं को मातृ भावा में शिक्षा देता है, पर उस की रिपोर्ट अंग्रेजी में है यह बड़ी शोक जनक बात है । रिपोर्ट के देखने से प्रतीत होता है कि स० १९७० की समाप्ति पर

विद्यालय में सब मिला कर २१४ छात्राएं थीं जिन में से २२ विधवाश्रम की और १७ अनाथालय की । इन में से १७२ आश्रम में रहती थीं । सारे विद्यालय के छः विभाग हैं अर्थात् स्नातिका, उप स्नातिका, दीक्षिता, शिक्षिता, सभ्या और विशेष । महाविद्यालय विभाग में सब १० अध्यापक और ५ अध्यापिकाएं हैं । ये पांचों की पांचों अवैतनिक सेवा करती हैं । विद्यालय विभाग में २ अध्यापक और ६ अध्यापिकाएं हैं । विद्यालय कमेटी के पास सारी कोई १ लाख १० हजार की पूंजी है । १९७० में जितनी आय हुई उतना ही व्यय होगया ।

संस्था की शिक्षा प्रणाली के विषय में लिखा है कि धर्म शिक्षा और संस्कृत पर अधिक बल दिया जाता है । यह बड़ी अच्छी बात है । अंग्रेजी की शिक्षा विद्यालय विभाग में बिल्कुल नहीं चाहिए, यदि रखनी ही हो तो महाविद्यालय में चाहे थोड़ी सी रख दें । इस बात में विद्यालय कमेटी को बझाल और मद्रास की प्रेज्युपेंट लड़ियों को अपना आदर्श नहीं बनाना चाहिए, बल्कि अपने आचार्य्य के प्रदर्शित मार्ग पर चलने का प्रयत्न करना चाहिए । आर्य्य समाज स्वयं पश्चिमी सभ्यता की भयानक लहर के विरुद्ध एक प्रतिवादा था, उस की संस्थाएं भी उसी भाव को लिए हुए होनी चाहिए । विद्यालय की सच्ची कीर्ति और महत्ता इस के विशाल भवन अथवा सरकारी कर्मचारियों की इस के विषय में अच्छी सम्मति से प्रकट नहीं हो सकती बल्कि इस का परिचय उस जीवन से मिलना चाहिए जो कि यहाँ की स्नातिकाएं इस पवित्र आर्य्य जाति के अन्दर पैदा करती हैं । विद्यालय को सौ शुभ

इतनी हानि नहीं पहुंचा सकते जितनी कि उसकी अपनी एक धर्म शून्य कुमार्ग गामिनी ठात्रा किसी प्रलोभन में फंस कर पहुंचा सकती है।

यह विद्यालय खूब फूले फले और स्त्री जाति के अन्दर जागृति उत्पन्न करने का साधन बने, यह हमारी हार्दिक इच्छा है।

५. मारिशस द्वीप में आर्य भाषा।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि हमारे भाई विदेश जाकर भी अपनी मातृ भाषा की सेवा करते ही रहते हैं। हाल ही में हमें मारिशस द्वीप (अफ्रीका के पूर्व में) के पोर्ट सेंट लुईस नामक नगर से एक भाषा के पत्र के चार पन्ने मिले हैं। इस पत्र का नाम है "मारिशस आर्य पत्रिका"। यह साप्ताहिक पत्र है। इस का सम्पादन पं० शिव शङ्कर शर्मा द्वारा होता है। मूल्य एक अंक का १५ सेंट है। पत्रिका वैदिक धर्म के प्रचारार्थ निकाली गई है। शुक्र है द्वीपों और उपनिवेशों में उर्दू की मर्ज नहीं गई, अन्यथा हमारे पंजाबी भाई तो इसे पीछे छोड़ जाने वाले नहीं।

६. जर्मन जासूस का अन्तिम पत्र।

पाठक हैंस लोदी नामक जर्मन जासूस को जो अभी लन्दन टावर में गोली से मारा गया था, न भूले होंगे। मरने से पहिले वाली रात्रि में उस ने एक पत्र अपने मित्रों के पास लिखा था। उस पत्र की नकल पाठकों की भेंट करते हैं। पत्र यह था:—

प्रिय गण !

मैं ईश्वर में विश्वास करता हूं। उस ने निश्चित कर दिया है कि मेरा समय आगया है। मुझे भी अन्य भाइयों की भांति जो इस समय राष्ट्रों के संघर्ष में सम्मिलित हैं दूसरी दुनिया की यात्रा करनी है। मैं आशा करता हूं कि देश की वेदी पर जीवन का मेरा यह तुच्छ उपहार आदर की दृष्टि से देखा जायगा। सैनिक की वागीति अवश्य अच्छी है किन्तु मेरे भाग्य में वह न थी और मैं यहां शत्रुओं के देश में मरता हूं। मेरी मृत्यु गुप्त चुप होगी। इस की चर्चा न होगी, न कोई इसे जानेगा ही किन्तु यह धारणा कि मैं अपने देश के लिए मरता हूं मृत्यु की भीषणता को कम कर रही है। लंदन के न्यायालय ने मुझे सैनिक पडयंत्र में सम्मिलित होने के लिए अपराधी ठहराया है और इस दोष पर मेरे मारे जाने की आज्ञा उस ने दी है। कल प्रातःकाल मैं गोली से मारा जाऊंगा। यह सन्तोष की बात है कि जासूस की भांति मेरे साथ व्यवहार नहीं किया गया। जज बहुत अच्छे थे और मैं जासूस की मृत्यु नहीं वरन् एक अफसर की मृत्यु मरूंगा। अब विदा होता हूं। ईश्वर तुम पर दया करे।

तुम्हारा

हैंस।

लोदी के कार्य के विरुद्ध लोग जो चाहे कहें किन्तु उस के देश-प्रेम और जीवनासर्ग की गाथा इतिहास के पन्नों में सदा स्वर्णाक्षरों में लिखी रहेगी।

७. बिहार के पतित धर्म ।

गत मर्दुम शुमारी की रिपोर्ट से कई पतित धर्मों का पता लगता है। वे कुत्सित होने के कारण अपने कर्म छिपाकर करते हैं। इन में से एक सम्प्रदाय ऐसा है जिस के अनुयाई वर्ग की स्त्रियां गुरु को ईश्वर मानती और शरीर पर पाति का हक उसे देती हैं। यह "शिक्षा" संप्रदाय है। मनुष्य को ईश्वर मानना तो महापातक हुआ ही उस पर ईश्वर के नाम पर घोर पाप कर्म को भक्ति कहना ! यह सब भक्ति की कदर्यना इसी देश में संभव है।

दूसरा धर्म एक प्रकार के साधुओं का है जो लंबी ऊंची टोपी लगाते हैं। ये पारमार्थिक सुख के अनुभव के लिए मनुष्य शरीर के एक ऐसे मल को खाते हैं जिस का लिखना यहां अश्लील होगा। इन पाप धर्मों का उद्घाटन कर लोक समाज को चाहिए कि इन का शमन करे। ये भक्ति मार्ग नहीं राक्षस और पैशाच मार्ग हैं।

(पाटलि पुत्र)



पुस्तक परिचय ।

आर्य पथिक लेखराम—श्री० मुंशीराम जिब्रासु द्वारा सम्पादित। पृष्ठ संख्या, (बड़ा साईज़) २०५। मूल्य प्रति पुस्तक एक रुपया। मिलने का पता:—गुरुकुल विश्व विद्यालय, कांगड़ी, डाकघर शामपुर ज़िला=विजनौर।

श्री महात्मा मुंशीरामजी की जिब्रासु-उपहार-माला की यह प्रथम सणि है। इस में धर्म वीर परिणित लेखराम उपनाम आर्य पथिक का जीवन वृत्तान्त है।

समस्त भारत मण्डल में आज कौन ऐसा व्यक्ति होगा जिस ने आर्य समाज का नाम न सुना हो। आर्य समाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्द के पश्चात् जिन लोगों ने आर्य समाज रूपी वृक्ष को अपने रुधिर से सींचा और उसे एक जीवित जागृत शक्ति शाली धर्म बनाया उनमें पं० लेखराम अग्रणी हैं। यद्यपि स्वामी दयानन्द ने मुसलमान ईसाई आदिकों की शुद्धि को धर्मा-नुकूल ठहराया था पर शुद्धि के काम को क्रिया में लाने वाले पहले लेखराम ही थे। आपका सारा जीवन धर्म प्रचार में व्यतीत हुआ और अन्त को अपने प्यारे धर्म के निमित्त ही एक मुसलमान की छुरी से प्राण दिए। धर्म के लिए जीना और धर्म के लिए मरना किसे कहते हैं यह जानने की अभिलाषा रखने वाले महाशयों को इस पुस्तक का एक बार अवश्य पाठ करना चाहिए। पुस्तक साफ छपी है। जो कहीं २ छापे की अशुद्धियां रह गई हैं आशा है वे द्वितीय संस्करण में दूर कर दी जायेंगी ॥

२. मिश्र बन्धु विनोद—अथवा हिन्दी साहित्य का इतिहास तथा कवि-कीर्तन (प्रथम भाग) लेखक—श्री० गणेश विहारी मिश्र, श्याम विहारी मिश्र एम० ए० तथा शुक्रदेव विहारी मिश्र, बी० ए० प्रकाशक हिन्दी-ग्रंथ-प्रसारक मण्डली, मध्यप्रदेश पुस्तक संख्या ४२४, सजिल्द प्रति का मूल्य १॥)

इस पुस्तक में उपरोक्त मिश्र बन्धुओं ने हिन्दी साहित्य का इतिहास लिखने का प्रयत्न किया है। उन्होंने हिन्दी को आठ कालों में इस प्रकार विभक्त किया है :—

नाम काल	किस संवत् से	किसतक
१—पूर्व प्रारम्भिक हिन्दी	७००	१३४३
२—उत्तरारम्भिक काल	१३४४	१४४४
३—पूर्व माध्यामिक काल	१४४५	१५६०
४—प्रौढ़ माध्यमिक काल	१५६१	१६५०
५—पूर्वालंकृत काल	१६५१	१७६०
६—उत्तरालंकृत काल	१७६१	१८८६
७—परिवर्तन काल	१८८७	१९२५
८—वर्तमान काल	१९२६	

फिर प्रत्येक काल में जो अधिक प्रभावशाली लेखक या कवि हुआ है उसी के नाम पर काल का नाम रक्खा गया है यथा सेनापति काल, भारतेन्दु काल, और दयानन्द काल। पुस्तक में कोई ३८०० लेखकों का संक्षिप्त वर्णन है। इन में मसऊद, कुतब अली, अकरम फैज़, अमीर खुसरो, मुल्ला दाऊद, कुतबनशेख, हरिवंश अली, रहीम, अकबर शाह, रस खान, कादिर बख्स, सुवारक और उलमान आदि कई मुसलमान कवि भी हैं। आश्चर्य की बात है कि पूर्व काल के मुसलमान तो हिन्दी में कविता तक करते थे पर

आज कल के हिन्दी पढ़ना भी कुफ़र समझ रहे हैं। पाठकों के विनोदार्थ एक दो मुसलमान कवियों की कविता के उदाहरण उद्धृत करते हैं।—मुग़ल बादशाह अकबर कहता :—

जा को जस है जगत में जगत सरा है जाहि।

ताको जीवन सफल है कहत अकबर साहि।

साहि अकबर एक समै चले कान्ह विनोद विलोकन वालहि।
आहट ते अबला निरख्यो चकि चौँकि चली कर आतुर चालहि॥
यों बलि बनी सुधारि धरी सुभई छवि यों ललना अरु लालहि।
चम्पक चारु कमान चढ़ावत काम ज्यों हाथ लिये अहि बालहि॥
केलि करै विपरीत रमै सु अकबर क्यों न इतो मुख पावै।
कामिनी की कटि किकिनी कान किधौँ गनि पीतम के गुन गावै॥
बिन्दु छुटी मन में सु ललाट ने यों लट में लटको लागि आवै।
साहि मनोज मनोचित मैं छवि चन्द लये चकि डोरि खिलानै॥

रहीम की कविता का उदाहरण :—

वै रहीम नर धन्य हैं पर उपकारी संग।

वांटन बारे कौ लगै ज्यों मैहदी के रंग॥

चित्रकूट में रमि रहे रहिमत अवध-नरेश।

जा पर विपदा परति है सो आवत यहि देश॥

धोरो किए वड़ेन की बड़ी बड़ाई होय।

ज्यों रहीम इतुमन्त को गिरिधर कहे न कोय॥

गुरु नानक देव, अङ्गद देव, नामदेव, कबीर, कमाल, दादूदयाल, सेना नाई इत्यादि भक्त भी जिनकी वाणी सिक्खों के ग्रंथ साहब में है, हिन्दी कवियों में परिगणित हुए हैं। परन्तु आज कल के सिक्ख उनकी भाषा का हिन्दी न कहकर पंजाबी नाम की एक अलग भाषा बना रहे हैं। नानकदेव की कविता में से निम्न लिखित उदाहरण दिया गया है :—

उदाहरण

गुरु गोविन्द गायो नहीं जन्म अकारथ कीन ।
नानक भजेर हरि मना जेहि विधि जल को मीन ॥
विषयन सों काहे रच्यो निमिष न होय उदास ।
कहि नानक भजु हरि मना परे न जम की फास ॥

गुरु नानक को तो हिन्दी कवियों में गिन
लिया परन्तु न मालूम गुरु गोविन्द सिंह के
विषय में क्यों कुछ नहीं लिखा । हमारे विचार में
गोविन्द सिंह जी हिन्दी के एक अच्छे कवि थे
देखिए उनकी कविता का उदाहरण :

नमो देव शाकम्बरी हिंग लाजा ।
तू ही सब जगत के करे सिद्ध काजा ॥
हमन बैरियन को पकड़ घात कीजै ।
तभी दास गोविन्द का मन पतीजै ॥
यही देह आशा तुर्क गद्द खपाऊं ।
गऊ घात का दुःख जगत से मिटाऊं ॥
अगम सूर वीरा उठें सिंह योधा ।
पकड़ तुर्क गण को करें वै निरोधा ॥
सकल जगत में खालसा पंथ गाजै ।
जगो धर्म हिन्दू सकल दण्ड भाजै ॥

इस के अतिरिक्त और भी कई अच्छे कवि
छूट गए हैं तो कुछ असम्भव नहीं । हमारे पास
एक हस्त लिखित "बारह मासा" है जिसका कवि
कोई खैरे शाह हुआ है । इस "बारह मासे" के
रचना काल और कवि के जीवन के विषय में हमें
कुछ मालूम नहीं, शायद किसी स्थान से उसके
अन्य ग्रंथ मिल जाएं । नीचे हम उसकी कविता
का उदाहरण देते हैं :—

दोहा

सामन आमन कह गए उमड चले जल नीर ।
अब के दरसन देखोगे तो शीतल होय शरीर ॥

सामन अजायब अजब मौसिम,

तीज तिथि पीआ अति भली ।

सेज पर गले लाय सोती,

गूदती चम्पा कली ।

हित प्रेम डोरी बांध हितकर,

सब सुहागन भूलती ।

मैं अकेली तड़पकती,

पीआ नेह लाय न भूलती ।

आधी रैन पपाहा बोले,

बून्द बरसे अति भली ।

जोग जुगत अनेक कीन,

कर्म रेखा न टरी ।

ओढ़े कुसुमी चूनरी,

जो है सुहागन पीआ की ।

सामन कठिन दुःख दे चले,

अब कवन गत मोरे जीया की ॥

आर्य भाषा को संस्कृत से स्वतंत्र रखने के
विषय में "बंधुओं" ने जो सम्मति प्रकट की है,
इस में कोई सन्देह नहीं कि वह कई अंशों में
ठाक है पर साथ ही प्रश्न का दूसरा पक्ष भी है।
संस्कृत के रूपों को बिगाड़ने से हिन्दी कुछ
विस्तृत तो अवश्य हो जायगी पर साथ ही
इस में जो देश व्यापिनी भाषा होने की क्षमता है
वह बहुत घट जायगी, क्योंकि संस्कृत शब्दों को
उनके असली रूप में रखने से अन्य भाषा भाषियों
को उन्हें समझने में सुभीता होगा। यदि हिन्दी में
कोई ऐसी बात न रहेगी जिससे इसके समझने में
दूसरे लोगों को आसानी हो तो चाहे यह
कितनी ही उन्नत क्यों न होजावे इसे अन्य लोग
कभी न अपनाएंगे । अङ्गरेजी और हिन्दी की
अवस्था में भेद है। आर्य भाषा के पीछे कोई

राजबल नहीं। इस लिये हमारी सम्मति में तो संस्कृत शब्दों को यथा सम्भव उनके असली रूप में ही रखने का यत्न होना चाहिये॥

पुस्तक की छपाई और कागज़ अत्युत्तम हैं। मातृ भाषा का इतिहास लिखने का यह यत्न वस्तुतः सराहनीय है

१. अर्थशास्त्र-धनकी उत्पत्ति तथा वृद्धि। लेखक तथा प्रकाशक-प्रो० बालकृष्ण एम० ए०, एफ० आर० सी० एस०, एफ० आर० ई० एस०, एफ० आर० पी० एस०, अर्थशास्त्र महोपाध्याय, गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार। प्रथम भाग। पृष्ठ संख्या ४३३ मूल्य प्रति पुस्तक १॥)

जिस पुस्तक के छपने की सूचना हमने गत फरवरी मास के अंक में दी थी, वही पुस्तक छपकर तैयार होगई, और हमारे पास समालोचनार्थ आ गई। छपने को तो देश भर में असेख्यत् पुस्तकें प्रति वर्ष छपती हैं परन्तु उनमें पढ़ने योग्य कितनी होती हैं?

योरूप के एक विद्वान का कथन है कि सारे योरोप में जितनी पुस्तकें वर्षभरमें छपी हैं उन्में से जो पुस्तकें वस्तुतः पठनीय हैं उनकी संख्या दो-तीन से अधिक नहीं होती। हमें यह प्रकाशित करते हुए हर्ष होता है कि यह पुस्तक हमारे हिन्दी संसार में उन दो-तीन पुस्तकों में से एक कहलाने के योग्य है। इसमें सम्पत्ति की उत्पत्ति, उत्पत्ति के साधन, भारतीय कृषि, सहकारी बंक, भूमि की उत्पादक शक्ति, श्रम विभाग, भारत में शिल्प की दशा, मिश्रित पूंजी आदि कम्पनियां, पूंजी की वृद्धि इत्यादि विषयों का वर्णन है। साथ २ व्यौर

और सूचियां देकर विषय को सुस्पष्ट किया गया है जिस से पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ गई है। अंग्रेजी जानने वालों के लिये और कई उपयोगी पुस्तकों के नाम भी दिए गए हैं जिन के पाठ से उनको इस विषय का अधिक ज्ञान हो सकता है। विद्यार्थियों को जो लाभ कई अंग्रेजी पुस्तकें पढ़ने से होगा वह इन एक पुस्तक से बढ़ी सुगमता से हो सकता है, क्योंकि मातृ भाषा में जो चीज़ पढ़ी जाय उसे मनुष्य शीघ्र ही ग्रहण कर लेता है और साथ ही पुस्तक भी अनेक अंग्रेजी पुस्तकों के आधार पर स्वतंत्र लिखी गई है जिनका स्वयम् पढ़ना एक विद्यार्थी के लिए कठिन है। छपाई और कागज़ भी अच्छा है। इस हिन्दी सेवा के लिए प्रोफेसर महोदय हिन्दी भाषा प्रेमियों के धन्यवाद के पात्र हैं॥

४. भारत-भारती--श्री लेखक मैथिली शरण गुप्त। प्रकाशक श्री रामकिशोर गुप्त, चिर गाँव, (झांसी) पृष्ठ संख्या १८४ सजिबद प्रति का मूल्य १ रु०। प्रकाशक से प्राप्तव्य।

बाबू मैथिली शरण गुप्त के नाम से कौन हिन्दी प्रेमी परिचित न होगा। आप हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध कवि हैं। इस खड़ी बोली की कविता में आप ने भारत के अतीत, वर्तमान, तथा भविष्यत काल पर विचार प्रकट किये हैं। प्राचीन भारत के गौरव वर्तमान के हास, और भविष्यत की आशाओं का खूब चित्र खींचा है। पुस्तक के कई २ छन्दों को पढ़ कर हृदय पर चोट सी लगती है। जिस प्रकार अन्य देशों के कविगण अपनी लेखनी द्वारा देश को उन्नति के शिखर पर

लेजाने का यत्न करते आए हैं, ठाक उसी प्रकार गुप्त जी ने इस पुस्तक में सोए हुए भारत निवासियों को उठाने का प्रयत्न किया है। पुस्तक का सारांश इस छन्द में आजाता है:—

हम कौन थे, क्या होगये हैं और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर ये समस्याएं सभी।

प्रत्येक देश हितैषी को इस पुस्तक का पाठ करना चाहिए ॥

५. स्त्री उपदेश भजनावली—लेखिका तथा प्रकाशिका श्री० माई इन्द्रकुमारी जी धर्म पति श्री० म० बाबु मोती राम जी फिलौर। मिलने का पता—मैनेजर सद्धर्म प्रचारक यंत्रालय, देहली। पृष्ठ संख्या १६, कागज साधारण, मूल्य १/-)

स्त्रियों के भजनों की यह पुस्तक है। हमें तो इन भजनों में कुछ रस नहीं आया। भजन गद्य ही प्रतीत होते हैं। भाषा में सुधार की आवश्यकता है। माई जी ने जिन उच्च धार्मिक भावों को अपने भजनों में भरने का यत्न किया है वे बड़े उत्तम हैं।

६. आनन्द की टोकनी—पाण्डेय लोचन प्रसाद द्वारा संग्रहीत। प्रकाशक हरिदास वैद्य, २०१, हरिसन रोड, कलकत्ता। पृष्ठ संख्या २२६। मूल्य ॥) इस सुन्दर पुस्तक में ५२ उत्तम २ विषयों पर कविताएं, शिक्षाप्रद कथाएं, और प्रहसन हैं जिन्हें पढ़ने से खूब आनन्द आता है। पुस्तक वस्तुतः आनन्द की टोकनी है। छपाई और बाह्य रंग रूप सब सुन्दर हैं ॥

७. नेलसन—लेखक अखौरी कृष्णप्रकाश सिंह, प्रकाशक—हरिदास वैद्य, २०१, हरिसन रोड, कलकत्ता पृष्ठ संख्या १२५। मूल्य १/-)

वीर पुरुष चाहे किसी जाति के हों सब के मान्य और पूज्य हैं। नेलसन एक साधारण माता पिता का पुत्र था। परन्तु अपनी अद्भुत वीरता और कर्तव्य परायणता के कारण उन्नति करके इङ्गलिस्थान का सागर सेनापति बन गया। इस ने स्वदेश रक्षा के लिए कई युद्ध लड़े, और अन्त को अपनी प्यारी मातृ भूमि के लिए ही लड़ते हुए ट्राफलगर के युद्ध में प्राण दिए। इस “इंगलैण्ड के रक्षक, संसार के सब से बड़े नाविक और योद्धा” का स्मारक चिन्ह लण्डन के ट्राफलगर चौक बना हुआ है। नेलसन अंग्रेजों में राष्ट्रीय वीर माना जाता है। नेलसन की जीवनी भारतवासियों को स्वदेश भक्ति की शिक्षा दे रही है। पुस्तक की भाषा बड़ी ललित है ॥

८. स्वर्ण-कमल-वा भयानक भाण्डा फोड़। लेखक पं० इश्वरीप्रसाद शर्मा। मिलने का पता—हरिदास एण्ड कम्पनी, २०१, हरिसन रोड कलकत्ता। पृष्ठ संख्या उपसंहार सहित २६५ आकार बड़ा। मूल्य प्रति पुस्तक ॥०/-)

यह उपन्यास स्वर्गीय बाबू दामोदर मुखोपाध्याय के बंगला “सोनार कमल” का भाषानुवाद है। इस में प्रेम रस और समाज सुधार दोनों का समावेश है। उपन्यास अच्छा रोचक है। बाह्य दृश्य भी हरिदास कम्पनी की अन्य पुस्तकों की नाई सुन्दर है।

६. लवङ्गलता—सामाजिक उपन्यास। लेखक बाबु ग्यारे लाल गुप्त, मिलने का पता—हरीदास वैद्य प्रगड कम्पनी, २०१-हरीसन रोड, कलकत्ता, पृष्ठ संख्या २१८, मूल्य ॥८)

यह अति रोचक उपन्यास "प्रवासिनी" नामक एक मराठी उपन्यास का स्वतंत्र अनुवाद है। इस में स्त्रियों को धर्म शून्य अंग्रेजी शिक्षा देने की हानियां कली भान्ति दर्शाई गई हैं। पाश्चात्य सभ्यता के हिन्दुस्तानी ठेकेदारों को जो अपनी कन्याओं को भेम साहब बनाने में सरगर्भ है इस पुस्तक का अवश्य पाठ करना चाहिये। कम्पनी की अन्य पुस्तकों की भांति इस पुस्तक का बाह्य रङ्ग रूप भी अति मनोहर है ॥

१०. गुलिस्तां—अनुवादक—पं० हरीदास वैद्य, पृष्ठ २००, मूल्य १) २०। मिलने का पता—हरीदास प्रगड कम्पनी, २०१-हरीसन रोड, कलकत्ता फारसी जानने वाले लोगों को गुलिस्तां से परिचित कराने की आवश्यकता नहीं। सुसलमानों में इस का बड़ा मान है। पुस्तक में सामाजिक, राजनैतिक और सदाचार सम्बंधी विषयों पर छोटी छोटी शिक्षा प्रदत्त कहानियां हैं। हमने मूल फारसी की गुलिस्तां पढ़ी है, इसलिये कह सकते हैं कि अनुवाद अच्छा हुआ है। अनुवाद की भाषा बड़ी सरल है। पुस्तक वस्तुतः नीति पुष्प-दान है ॥

११. मेवाड़-माथा—लेखक—पाण्डेय लोचन प्रसाद। प्रकाशक—हरीदास वैद्य, २०१-हरीसन रोड कलकत्ता, पृष्ठ संख्या ७८ मूल्य ॥१)

इस पुस्तक में पाण्डेय जी ने मेवाड़ का सुप्रसिद्ध वीर भूमि का गुणानुवाद खड़ी बोली के पद्य में किया है। एक तो मेवाड़ का प्रचीन गौरव और दूसरे पण्डेय जी जैसे कवि, पुस्तक को पढ़ कर बुढ़ों का लहू भी जोश में आजायगा। मेवाड़ के योधाओं का निम्न लिखित आदर्श वाक्य सारे पुस्तक का सार है:—

सिद्धान्त यह सीसोंदियों का जानता संसार है।
"जो टेक रखते धर्म की, रखता उन्हें करतार है"

इस समय भारत वर्ष में ऐसी पुस्तकों के प्रचार की बड़ी आवश्यकता है, क्योंकि शत्रु धर्म देश से प्रायः लुप्त ही हो चुका है ॥

१२. मौर्य-विजय-रचयिता श्री सियाराम शरण गुप्त। पृष्ठ ३४। मूल्य १। मिलने का पता—श्री रामकिशोर गुप्त, चिर गांव, (झांसी)

श्री सियाराम शरण गुप्त आर्यभाषा के सुप्रसिद्ध कवि श्री मैथिलि शरण गुप्त के छोटे भर्तृ हैं। इस कविता के नायक चंद्र गुप्त हैं। विषय को कवि ने बड़ी उत्तम रीति से प्रकट किया है। भाषा खड़ी बोली है। आवरण पत्र पर छपा है।

"जिसके समक्ष नएकभी विजय सिकन्दर की चली,
वह चंद्रगुप्त महीप था कैसा अपूर्व महाबली।
जिसने कि सिल्यूकस समर में हार तो था ले गया,
कान्धार आदिक देश देकर निज सुता था देगया" ॥
पुस्तक की छपाई और कागज बहुत सुन्दर हैं।

१३—भोजन विधानम्—निरामिष भोजन सुरा पान विवर्जन, फलाशन निरग्न भोजनसमेतम्, तथा पाक विधिः, लेखक—श्री दुर्गा प्रसाद । मिलने का पता—वज्ररचन्द्र शर्मा, वैदिक बुक डिपो, लाहौर । पृष्ठ संख्या ७३ । मूल्य १)

इस पुस्तक में सात्विक भोजन बनाने की विधि दर्ज है । साथ ही मांस भक्षण के दोष भी दिखलाए गए हैं । घर में प्रति दिन के खाने की शाक भाजियों के अतिरिक्त डबल रोटी, जलेबी, मालपूड़ा और मुरब्बा आदि बनाने की भी विधि दी गई है । निरामिष भोजियों के लिये यह पुस्तक लाभदायक होगी । पुस्तक की भाषा, छपाई और कागज़ कुछ अधिक अच्छे होने चाहियें ॥

१४. पाटलिपुत्र—यह साप्ताहिक पत्र कोई छ मास से बांकी पुर से निकलता है । पत्र के सम्पादक हैं श्रीयुत काशी प्रसाद जायसवाल एम० ए० बैरिस्टर-पेट-ला । पत्र के स्तम्भ इतिहास, साहित्य सम्पादकीय, सफाई और स्वास्थ्य, समाचार, और उपन्यास आदि शीर्षकों में विभक्त रहते हैं । इतिहास और साहित्य पर कई उत्तम २ लेख प्रकाशित हो चुके हैं । पत्र का कागज़ और टायप अच्छा है । वार्षिक मूल्य २) । मिलने का पता—मैनेजर, पाटलि पुत्र, बांकीपुर (विहार) ॥

१५. हिन्दी समाचार—भारत की भावी राष्ट्र भाषाका यह नया साप्ताहिक भारत की राजधानी दिल्ली से निकलता है । इसका कागज़, और छपाई, उत्तम होते हैं । प्रत्येक अङ्क में एक दो पद्य भी रहते हैं । यदि लेख कुछ कसरे हों तो

अधिक अच्छा हो । वार्षिक मूल्य २॥) मैनेजर, हिन्दी समाचार, देहली से प्राप्तव्य ॥

१६. हितकारी—यह आर्य भाषा का मासिक पत्र हाल ही में मुलतान शहर से निकलना आरम्भ हुआ है । हम ने इस के तीन अङ्क देखे हैं । इस के प्रत्येक अङ्क में २४ पृष्ठ रहते हैं । राष्ट्र भाषा के प्रचारार्थ जितने भी पत्र निकलें थोड़े हैं । हितकारी के कई कई लेख अच्छे उपादेश्य होते हैं । वार्षिक मूल्य १) । मैनेजर, हितकारी, मुलतान शहर के पते से प्राप्तव्य ॥

१७. बाल मनोरञ्जन लेखमाला—यह नवीन मासिक पुस्तक आगरा (मालवा) स्टेट ग्वालियर से निकलनी आरम्भ हुई है । इस के सम्पादक हैं पं० गणेश दत्त शर्मा वैदिक "इन्द्र" । प्रथम पुस्तक जो हमारे पास पहुंची है उस में २४ पृष्ठ हैं और आवरण पत्र पर लिखा है "नवयुवकों और बालकों के लिए उपयोगी पुस्तक" । पुस्तक के कुछ एक लेख पढ़ने योग्य हैं, परन्तु अधिक ऐसे हैं जो "असमाप्त" हैं और बालकों की समझ में आने वाले नहीं । यदि सम्पादक जी इस माला को पूना नगर से निकलने वाले मराठी मासिक पत्र "आनन्द" की शैली पर चलाएं तो बहुत अच्छा हो । लेख माला की छपाई अच्छी है । वार्षिक मूल्य १॥) है ।

१८. रंगीन चित्र तथा ग्राम नियम—पं० वज्ररचन्द्र शर्मा, वैदिक बुक डिपो, लाहौर, ने हमारे पास निम्नलिखित चीज़ें भेजी हैं ।

१. स्वामी दयानन्द का रूल-दार चित्र-यह चित्र समाधि अवस्था का है। चारों ओर सुन्दर पुष्प माला बनी है। देखने में बड़ा सुन्दर और प्रभावशाली है। मूल्य ॥) है।

२. यम नियम-यह बड़ी सुन्दर आकृति है। इसमें यम नियम भिन्न २ रंगों में छपे हैं। घर की सजावट और यम नियम का ध्यान दोनों काम इस से पूरे होते हैं। मूल्य २) प्रति।

३. "ओ३म्," "नमस्ते," "शुभागमनम्," और "स्वागतम्," ये चार वाक्य रंगीन और सुन्दर अक्षरों में छपे हैं। घर में लगाने के लिए अच्छा है। मूल्य प्रति मोटो दो पैसे। सारा चाट्ट २)

वङ्गला ।

१६. विजया—बंगाली भाषा की यह सचित्र मासिक पत्रिका २० पटुआ टोळा लेन, कलकत्ता से निकलती है। इसके प्रत्येक अङ्क में दो रंगीन सुन्दर चित्र रहते हैं। बंगाल के उच्च शिक्षा प्राप्त बड़े २ विद्वान इसमें लेख लिखते हैं। यदि किसीने यह पता लगाना हो कि बंगाली साहित्य कितना उन्नत है तो इस पत्रिका का एक अंक मंगा कर देख ले। वार्षिक मूल्य ३)। मैनेजर, विजया, से उपरोक्त पते से मिल सकती है।

२०. तपोवन—यह सचित्र मासिक पत्र अभी तीन मास से ही निकलना शुरू हुआ है। इस के लेख और कविताएं उपादेय होते हैं। चित्रों में प्रायः प्राचीन भारत के दृश्य दिखलाए जाते हैं। वार्षिक मूल्य २॥) मिलने का पता—मैनेजर, तपोवन, बंगला प्रेस, १९१, बो बाज़ार फ्रीड, कलकत्ता ॥

एक अमरीका निवासी आर्य भगिनी का पत्र ।

कोई धर्म चाहे कितना ही उच्च और पवित्र क्यों न हो जब तक उसको धारण करने वाले नर नारी अच्छे न होंगे कभी भी उसका स्वच्छ स्वरूप प्रकट नहीं हो सकता। धर्म एक बीज है जिस के लिये अच्छी भूमि की आवश्यकता है क्योंकि बीज चाहे कितना ही अच्छा क्यों न हो रेत में कभी फल फूल नहीं सकता। भगवान भास्कर की सुवर्णाय किरणें और अमृत तुल्य गौ का दूध भी मैला पात्र में मैले प्रतीत होने लगता है। यही अवस्था इस समय भारतवर्षीय आर्य जाति की है। परम पुनीत वैदिक धर्म भी हम जैसे कायरों और पतितों के सम्पर्क से आज पतित और कुत्सित कहला रहा है। जब राम और कृष्ण जैसे नर पुङ्गव इस के अनुयायी थे तब ही यह सर्व श्रेष्ठ था। दूसरी ओर ईसाई धर्म को देखिये। बाइबिल की शिक्षा उपनिषदों के तत्त्व ज्ञान के सामने ऐसी ही है जैसा कि सूर्य के सामने दीपक। परन्तु आज वही बाइबिल संसार के आधे से अधिक लोगों का धर्म ग्रंथ बन रहा है। कारण यह है कि ईसाई मत का बीज उन लोगों में पड़ा है जो धीर, वीर और क्रियात्मक हैं। उन महावीरों के प्रताप से ही खीष्ट मत का इतना मान और प्रचार हो रहा है। हमारा विचार है कि वर्तमान अवस्था में यदि वैदिक धर्म को सार्व भौम धर्म बनाना असीष्ट

हो तो वह केवल अमरीका और योरूप निवासियों में प्रचार के द्वारा ही हो सकता है। वे लोग जब एक बार इसे अपना लेंगे तो अवश्यमेव इसे सारे संसार में फैला देंगे क्योंकि वे हमारी तरह आलसी और परावलम्बी नहीं।

लाहौर के श्रीमान भाई परमानन्दजी एम० ए० जिन दिनों अमरीका (संयुक्त राज्य) में थे तो वहाँ अपनी उपजीविका पैदा करने के साथ-साथ वे वैदिक धर्म का प्रचार भी किया करते थे। आप के प्रयत्न से वहाँ कई लोगों के विचारों में परिवर्तन आ गया है। आप गत वर्ष तीन बरस के बाद स्वदेश लौटे हैं। अब वे लोग उन्हें पुनः अमरीका में आकर वैदिक धर्म का प्रचार करने के लिए निमन्त्रण भेज रहे हैं। उन लोगों में से एक देवी के अन्दर वैदिक धर्म के लिए असाधारण प्रेम है। उस देवी का ईसाई नाम है ए० एम० ई० डब्ले। उस का पूरा पता यह है:—

A. M. E. Dudley, P. O. Box 497.
San Diego, California, U. S. of N. A.

उस ने अब अपना नाम बदल कर 'माया' रख लिया है। श्रीमती माया देवी के कई पत्र श्रीमान भाईजी को आए हैं। उन अनेक पत्रों में से एक में से कुछ एक उद्धरण हम यहां देते हैं जिन से ज्ञात हो जायगा कि हमारी इस धर्म वहिन के अन्दर वैदिक धर्म के लिए कितना अगाध प्रेम है। अपने १२ दिसम्बर सन् १४ के पत्र में यह लिखती हैं:—

“ये सब, आपको मालूम रहे, एक विशेष उद्देश्य—कैलेफोर्निया में आप के प्रचार करने के लिए है। निस्संदेह मैं ऐसी बात नहीं सुझा सकती। परन्तु ऐसे कार्य के लिए और कौन

इतना योग्य होगा ? इस लिए आप ही क्यों न इसे करें ! वस्तुतः आप भारतीय लोगों के लिए ईसाई प्रचारकों की शैली का अनुकरण और शत्रु के देश पर चढ़ाई करने के लिए यह बहुत अनुकूल समय है। काम के लिए मार्ग पहले ही खुल चुका है। केवल धनका प्रश्न है। जब तक हम धनाढ्य लोगों को आकर्षित नहीं कर लेते तब तक रुपए का प्रबंध करना आवश्यक है। आर इस बात का यहां बहुत खयाल रखना पड़ता है।

जब से आप का पत्र आया है कि मैं कैलेफोर्निया को पुनः लौटने के प्रश्न पर विचार करने को उद्यत हूँ मेरे मन में कई प्रकार के विचार तरंग उठ रहे हैं। ठाकुर दास से मैं ने इस विषय पर बहुत बातें की हैं और कई तजवीज़ें सोची हैं। आपका यहाँ आकर धन प्राप्ति के लिए बल्ले बनाना अपने उद्देश्य के लिए हाथी कारक होगा। अतः हमने यह सोचा है कि इस मामले में हम अपना हाथ बटाएंगे। हम बड़े पक्के मित्र हैं। वह मुझे बीबी जी कहकर बुलाता है। जो कोई भी काम हम हाथ में ले हम उसे अपने साथ सम्मिलित कर सकते हैं। जिस प्रकार मैं और ठाकुर दास रात्रि को अंगीठी के पास बैठकर मेरी बहु मूल्य और अत्युत्तम सुगन्धित धूप की बत्ती जलाया करते और आपको चित्र के पास रक्खा करते थे, और जिस प्रकार मैं सदैव कहती थी कि हम अपने प्यारे परमानन्द के कल्याण और स्वस्ति के लिए मंगल कामना और शुभ चिन्तन करते हुए यह जलाते हैं यदि आप हमें उस अवस्था में यहां देख पाते तो कैसी हंसी उड़ाते। आप चाहे मेरे इस मूर्ति

पूजकों जैसे व्यापारको अच्छा न समझें परन्तु जिस भाव से प्रेरित होकर मैं ऐसा करती थी उसे आप कदाचित् बुरा न कहेंगे। आप नहीं कह सकते कि ऐसा विचार निकम्मा है। आपको सदैव मेरा और मेरे मूर्ति पूजक भाव का कुछ न कुछ लिहाज करना चाहिए, क्योंकि यदि यह आवेग मेरे भीतर प्रधान न होता तो मैं प्रार्थना-सभाओं में बैठती और ईसाई मत के मार्ग पर—जिस से मुझे इतनी घृणा है—चल रही होती।

इसके आगे वह लिखती है—

More than all else I want to go to India. With Thakur Das I lived in India, and we talked and planned of a day when I might in reality be one of that land—and all that it implies. Great are the plans we have made. Sometimes it was right funny. I would insist that I would be yogin and he would agree with that, but he would not permit me to wear anklets, because such were not becoming to a yogin. I shall go there. And shall live entirely among the Hindus, wearing Hindu clothing and in all things except color I shall be a Hindu. I am going to be a Brahmin, too. Oh, he has it all arranged what I shall do. And he has promised that until I could go with him he would not return to India. We shall do great work for India some day—some day. My soul dwells in that land. Even I dream that I may take up a work like that of Nivedita's, and that my one talent-mind and pen may be used to the end that the world shall be the wiser for a knowledge of Indian thought, ideals and literature.

अर्थात्—सब से बड़ी बात यह है कि मैं भारत को जाना चाहती हूँ। जिन दिनों ठाकुर दास और मैं एकट्ठे थे, मैं ऐसा अनुभव करती थी मानों मैं भारत में निवास कर रही हूँ। हम ने लक्ष्मी

चौड़ी बात चीत के बाद उस दिन का निश्चय कर लिया था जब कि मैं वास्तव में ही उस देश की—और जो चीत इसके अन्तर्गत है उनकी—बन जाऊँगी। हमने बहुत बड़ी कल्पनाएँ बांधी हैं। किसी २ वक्त तो ये सर्वथा हासकर होती थीं। मैं बल देती थी कि मैं जरूर योगिनी बनूँगी और वह इस पर सहमत हो जाता था; परन्तु वह मुझे धुंधले पहिरने की आज्ञा नहीं देता था क्योंकि ये योगिनी के योग्य नहीं। मैं वह अवश्य जाऊँगी। और सर्वथा हिन्दुओं में रहूँगी, हिन्दुओं जैसे ही कपड़े पहनेंगी, रंगत को छोड़ कर शेष सब बातों में मैं हिन्दु बन जाऊँगी। साथ ही, मैं ब्राह्मण भी बनना चाहती हूँ। ओह, मुझे जो जो कुछ करना होगा वह सब उसने ठीक किया हुआ है। उसने मुझे वचन दिया है कि जब तक मैं उसके साथ न जा सकूँ वह भारत को वापिस नहीं लौटिगा। हम किसी न-किसी दिन-भारत के लिए बड़ा भारी काम करेंगे। मेरी आत्मा उस देश में निवास करती है। यहां तक कि मैं निर्वादा जैसा काम करने की कल्पना करती हूँ, और मेरी एक ही क्षमता—विचार और लेखनी—इस काम में लगेगी ताकि संसार भारतीय साहित्य, आदर्श और विचार का ज्ञान लाभ करके पहले से अधिक बुद्धिमान बन जाए।

जो कोई भी काम हम यहां करेंगे उसे भारत में जाने और उस देश के लोगों के साथ मिलने से अधिक शक्ति मिलेगी। अभी यह बिल्कुल स्वप्न मात्र है। मैं नहीं कह सकती कि "मुझे इस का ज्ञान है क्योंकि मैं उन लोगों में रह आई हूँ।"

आप अपनी बहिन की जिस का नाम अब माया है इस कल्पना सृष्टि पर हँसेंगे ।

मंगलामिलाषिणी

आपकी बहिन, माया” ।

पाठक ! तनिक विचारिए, वैदिक धर्म का प्रचार कौन कर सकता है, भारत वासी या अमरीका निवासी ? हम श्री- भाई जी से प्रार्थना करते हैं कि यदि अवस्थान्तर के कारण वह अव स्वयम् अमरीका नहीं जा सकते तो वहाँ प्रचार का कोई अन्य उपाय अवश्य निकालें ।

“धर्माभिलाषी”

वैदिक काल-सुवर्णीय समय ।

(लेखक-एक आर्य)

बहुत से विचारकों का मत है कि प्राचीन समय में मनुष्य अविद्यान्धकार और भ्रमजाल में पड़ा हुआ था । वहाँ से निकल कर ही अब उसने सभ्यता और ज्ञान के प्रकाश में पदार्पण किया है । उनके विचार में मनुष्य की उन्नति अज्ञान से ज्ञान की ओर, और असभ्यता से सभ्यता की ओर हुई है, पहले लोगों के ब्रह्म विषयक विचार बड़े भ्रान्तियुक्त और अनिश्चित थे, वर्तमान समय में ही लोगों को परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हुआ है, पहले लोग जड़ पदार्थों के उपासक थे । अध्यात्मवाद अभिनव समय की उन्नति का ही फल है । यद्यपि ऐसे विचारक अपने अन्य गुणों के कारण हमारे सम्मान के योग्य हों परन्तु उनका यह सिद्धान्त सर्वथा निःसार है । जितने भी प्रमाण इस विषय के हैं वे सब भिन्न परिणामों पर ले जाते हैं ।

सब जातियों की परम्परागत स्मृति, आदिम ब्रह्मविद्या और तत्त्व-ज्ञान के खण्ड जो सब जातियों की पवित्र पुस्तकों में इधर उधर बिखरे हुए पाए जाते हैं, और आर्य जाति का वास्तविक अनुभव जो कि ऐतिहासिक लेखों के रूप में विद्यमान है, ये सब इस बात को प्रमाणिक करते हैं कि मनुष्य जाति अपने शैशव काल में सभ्यता के स्वच्छ और दीदीप्यमान प्रकाश में से जगमगा रही थी ; और कि कालचक्र मनुष्य की गति सदैव प्रकाश से अन्धकार की ओर व्युत्क्रम रही है ।

यूनान, रोम तथा मिश्र की देवमालाएं और हमारे अपने पुराण बताते हैं कि सतयुग या सुवर्णीय समय भूत काल में था, वह भूत जाता रहा परन्तु अभी तक विस्मृत नहीं हुआ । मनुष्य उसके प्रकाश और पवित्रता से शून्य पतित होता आया है । प्रत्येक काल और प्रत्येक देश के कवि और नीति उपदेशक उस आनन्दमय समय की याद करके ठण्डी सास भरते आए हैं जबकि उनके पुरुषा हर प्रकार की अविद्या और अपवित्रता से रहित थे जिन में कि उनके वर्तमान वंशज फंसे हुए हैं ।

संसार में आप कहीं चले जाएँ आपको हर जगह यह विश्वास मिलेगा कि एक समय ऐसा था जब कि लोग वर्तमान की अपेक्षा अधिक अच्छे थे । यह सार्वभौम विश्वास इसी तथ्य का परम्परागत स्मारक चिन्ह हो सकता है कि मनुष्य के इतिहास के आदि कालों में ज्ञान और पवित्रता की जो मात्रा थी वह मनुष्य की अधोगति में प्रायः विरुद्ध होगई है । इतिहास

में ऐसे तो सहस्रों उदाहरण मिलते हैं जिन में मनुष्य ज्ञान और पुण्य को छोड़ कर अविद्या और पाप में प्रवृत्त हुआ, परन्तु ऐसा एक भी उदाहरण नहीं मिलता जिस में बाह्य प्रकाश के बिना किसी व्यक्ति या जाति ने अविद्या से निकल कर ज्ञान में पदार्पण किया हो।

प्राचीन काल के जाङ्गलिक असभ्य लोग जिन पर किसी सभ्य जाति का प्रभाव नहीं पड़ा आज पर्यन्त भी वैसे ही मूर्ख हैं जैसे कि वे कई शताब्दियां पूर्व थे। आदि काल में मनुष्य समाज अविद्या अन्धकार के घने बादलों से आच्छादित था। इस सिद्धान्त की निःसारता को प्रकट करने के लिए केवल यही एक तथ्य पर्याप्त है। परन्तु इस के विरुद्ध एक और भी प्रबल प्रमाण है। हमारे पूर्वजों के अति प्राचीन ग्रन्थों की प्रशंसा करते आज प्रबुद्ध जातियां नहीं थकतीं, और महाभारत तथा रामायण से पता लगता है कि उस समय का मनुष्य समाज आज की अपेक्षा बहुत उन्नत था। इस बात से कोई भी इनकार नहीं कर सकता कि उनका आचार, उनकी पवित्रता, उनकी मानसिक अवस्था हमारी अपेक्षा बहुत उत्तम थी।

वेदों के अद्वितीय पण्डित श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती ने निघण्टु, निरुक्त ब्राह्मणादि वेद की टीकाओं के अनुसार जो वेद मन्त्रों की व्याख्या की है उस से भी यही सिद्ध होता है कि संसार का सुवर्णीय युग केवल वैदिक काल ही था। वेद मन्त्रों का अर्थ करने के लिए केवल इन्हीं टीकाओं पर विश्वास किया जा सकता है। अपनी शुद्धता के कारण ही इन टीकाओं की बड़ी कदर थी, और महाभारत युद्ध से

पूर्व जब कि वेदों का पठन पाठन बहुत सामान्य था, वेद के विद्यार्थी सदैव इन से सहायता लेते थे। ये प्रामाणिक ग्रन्थ हमें विश्वास दिलाते हैं कि वेदों में प्रकृति के सारे नियम और विज्ञान के सब सत्य सिद्धान्त, क्या आध्यात्मिक और क्या प्राकृतिक, भ्रूणावस्था में मिलते हैं जैसे कि एक बड़ा वृत्त छोटे से बीज के अन्दर विद्यमान होता है।

जब वेद जैसी पुस्तक के पठन पाठन का बहुत प्रचार था और “कर्म” का सिद्धान्त जिस के अधीन कि ‘जीव’ है, भली भाँति समझा कर सब के हृदय पर अङ्कित कर दिया जाता था, तो मनुष्य समाज, जैसा कि आवश्यक था, अत्युच्च दशा में थी। सामाजिक, धार्मिक, और मानसिक दृष्टि से अति उज्ज्वल थी। यह आर्य सभ्यता बहुत देर तक अपनी ज्योति से संसार को दीदीप्यमान करने के पश्चात् अयोगति को प्राप्त हो गई और इसी के खण्डहरों पर मिश्र की और तत्पश्चात् यूनान और रोम की श्रेष्ठ सभ्यताएं तैयार हुईं, और वे भी अन्त को पश्चिम पर अपने उत्तम प्रभाव डालने के बाद लोप हो गईं।

भाषा तत्व ज्ञान सम्बन्धी खोजों ने स्पष्टतया प्रमाणित कर दिया है कि रोम, यूनान, और भारत के आर्य लोगों का परस्पर घनिष्ठ संबंध था। इन लोगों के तत्व ज्ञान के अध्ययन से भी यही सिद्ध होता है कि इन का सम्बन्ध केवल शब्दों में ही नहीं बल्कि विचारों में भी था। भारतीय आर्य जिन्हें (जो अब हिन्दू कहलाते हैं) सभ्यता के कर्त्ता थे यूनान मिश्र और रोम उसके शिष्य और आदाता थे, यह इसी वर्ष से स्पष्ट है कि ज्ञान का प्रकाश ऋषियों के मन में पहले पहल

आर्यावर्त में हुआ था, और उस ज्ञान को सुरक्षित रखने और उसका प्रचार करने का सौभाग्य उन के वंशजों को ही प्राप्त था। जो कुछ सत्य दूसरी जातियों की पुस्तकों में दीख पड़ता है वह उस ज्ञान के भण्डार—वेदों की केवल मात्र एक पद्धति, एक प्रकरण, या अधिक से अधिक एक अध्याय है। जो कोई भी मनुष्य वेदाध्ययन करेगा और महा-भारत काल से पूर्व की लिखी हुई ब्राह्मण, निरुक्त, निघण्टु, और पाणनीय व्याकरण रूपी टीकाओं की चाबी से वैदिक रहस्यों को खोलने का यत्न करेगा वह हमारे कथन को सत्य पायेगा।

वेदों की निन्दा करने वाले या उसके ईश्वरीय ज्ञान होने में सन्देह करने वाले या तो वे लोग हैं जिन्होंने सायण, महीधर, उवट्ट, और रावण आदि के भ्रान्ति जनक भाष्य पढ़े हैं या वे हैं जिनके पास सत्य को जानने के लिए नहीं साधन हैं न ही रुचि, या जिन्हें अपने देश की निन्दा करने से लाभ पहुंचता है, या कम से कम वे ऐसा मन्द भाग्य हैं कि जहां दूसरों को जातीय परिश्रम और कीर्ति के स्मारक चिन्ह दीख पड़ते हैं वहां वे सिवाय जातीय लज्जा और बुद्धि वैकल्प के और कुछ नहीं पा सकते। उपरोक्त भ्रान्ति जनक भाष्य बहुत अर्वाचीन समय के बने हुए हैं जब कि सारी विद्या, साहित्य, सच्चा वैदिक पाण्डित्य समाप्त हो चुका था। इन भाष्यकारों ने प्राचीन ऋषियों की व्याख्याओं को छोड़ कर अपने समय की प्रवृत्ति के अनुकूल अलग २ व्याख्या घड़ लीं, इस लिए वे तनिक भी विचार करने योग्य नहीं।

“एक आर्य”

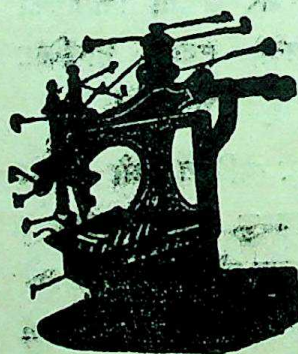
मिसिस कमलाबाई की अबला संजीवनी औरतों के लिये गोलियां

गर्भ स्थान और औरतों के माहवारी (खून) वगैरा सब दर्दों के लिये देशी इलाज. हजारों औरतें मिसिस कमलाबाई की गोलियां घर में रखती हैं. और जब हर एक माहवारी के संबंध में जैसा कि माहवारी का साफ न आना, पेडु का दर्द, माहवारी मामूली वक्त पर न आना और गर्भाशय में किसी तरह का फीसाद रहना वगैरा हर कृत होती है. तब तुरन्त ही औरतें इन गोलियों का इस्तेमाल करती हैं. और दूसरी औरतों को इस के लिये सिफारिश करती हैं। इस लिये यह दवा जल्दी २ विक रही है. दाम १ रु० डा० ३० और बी० पी० ४ आ० ज्यादा हकीकत के लिये फहरिस्त मुफ्त।

मिसिस कमलाबाई जी. एम. सी.

कालवादेवी रोड-बंबई

सादेसात रुपए में हमारी सीनेकीकल।



अधिकारी, व्यापारी, स्त्रियां, सभ्यजन सभी इसकी प्रशंसा करते हैं। अहमदाबाद मोरि-यंटल लायफ आफिस से श्रीमती खुरशेदबाई धनजी भाई जमशेद जी मेघोरा लिखती हैं—आपकी सीने की मशीन बहुत संतोष दायक काम देती है। एक और भेज दीजिए + कलका सब काम बहुत सादा है। स्क, डिस्मिस, और टेबल हुक सहित इसका मूल्य (१०॥ पोस्टेज स्व—॥)।

भारती एण्ड कम्पनी, बम्बई नं० ४

भारत के प्राचीन इतिहास पर एक हजार वर्ष की एक अपूर्व पुस्तक !

१०वीं शताब्दि के भारत का सच्चा चित्र !

अनुवादक

एक निष्पक्ष यवन यात्री की सम्पत्ति !

श्रीसन्तराम बी०ए०

आर्यों के इतिहास का शुक्ल पत्र ।

अलबरूनी की प्रसिद्ध अरबी पुस्तक का हिन्दी अनुवाद

यदि आप भारत के धर्म, समाज, ज्योतिष, भूगोल, साहित्य, तथा इतिहास के विषय में १०वीं शताब्दि के एक निष्पक्ष मुसलमान विद्वान का कथन जानना चाहते हैं तो इस पुस्तक को मंगाइए ।

यदि आप प्राचीन भारत के गौरव को एक विदेशी के मुख से सुनना चाहते हैं तो इस पुस्तक को पढ़िये !

मूल अरबी पुस्तक भारतवर्ष में नहीं मिलती । जर्मनी के एक विद्वान ने इसका सम्पादन किया है। इस अत्यन्त रोचक पुस्तक के लेखक अलबरूनी महाशय संस्कृत के बड़े विद्वान थे । पुस्तक को पढ़ कर प्राचीन भारत के विषय में अनेकानेक नई बातें मालूम होंगी । पुस्तक छप रही है । पहले प्रार्थनापत्र भेजने वालों से तीन चौथाई मूल्य लिया जावेगा । मंगाने के लिये शीघ्र पत्र लिखिए ।

नोट—पुस्तक का प्रथम भाग १५० पृष्ठ से बढ़ जायगा और इस का मूल्य चार पांच आने से अधिक न होगा । दो चार इकट्ठी पुस्तकें मंगाने से डाक व्यय में बहुत रियायत रहेगी ॥

सीता वनवास (उर्दू) ।

(अनुवादक श्री० सन्त राम बी०ए०)

बंगाल के प्रसिद्ध लेखक पं० ईश्वर चन्द्र विद्यासागर की जगद्विख्यात पुस्तक का उर्दू अनुवाद । कागज़ चिकना और सुन्दर पहले मूल्य छैः आने था । अब घटाकर चार आने कर दिया गया है, क्योंकि हम उर्दू स्टाक को ख़तम करके 'भाषा' की ही सेवा करना चाहते हैं । थोड़ी कापियां रह गई हैं शीघ्र मंगाइये ।

हिमालय निवासी महात्माओं के आख़री दर्शन—आधी कीमत अर्थात् दो पैसे में ।

मिलने का पता—

मैनेजर, “उषा” लाहौर ।

छोटे बच्चों की ताकत बढ़ाने वाली

मशहूर दवाई

शीशी का
मूल्य चारा
आना



डाक म. स.
घा.
चार अ. न. अने

के. टी. डोंगरे और कं.,
गिरगाम, बम्बई

वैदिक धर्म सम्बन्धी हिन्दी पुस्तकें ।

सत्यार्थ प्रकाश		III ॐ)	बाल शिक्षा	
वैदिक इतिहासार्थ-निर्णय		१ II)	नारी धर्म विचार दोनों भाग	
संस्कार चन्द्रिका अर्थात् टीका संस्कार			नारी उपदेश	
विधि		२)	स्त्री आरोग्यता	
व्याख्यान पञ्चक		III)	स्त्री हितोपदेश	
व्याख्यान मुक्तावली		II)	संगीत रत्न प्रकाश पूर्वार्ध पांचों भाग	
न्याय दर्शन		१ I)	संगीत रत्न प्रकाश उत्तरार्ध दोनों भाग	
सांख्य दर्शन		III)	शान्ता उपन्यास	
दयानन्द चरित बंगाली से अनुवाद		१ I)	वीर मातार्थ्य	
सत्यार्थ प्रकाश शब्दार्थ कोष		II)	भारतीय शिष्य ईसा	
बाल सत्यार्थ प्रकाश		I-)		

वजीरचन्द शर्मा प्रोप्रायटर,

वैदिक पुस्तकालय लाहौर ।

टिप्पणी-इनके अतिरिक्त अन्य वैदिक धर्म सम्बन्धी पुस्तकें भी मंगवा सकते हैं ॥

अमृत चमत्कार

गुप्तरोग से पीड़ित पुरुषों के लिये दो अमृत तुल्य दवायें



मदनमंजरी गोलियां

धातु जो प्राणी मात्रका जीवन है, जब किसी भी कारणसे खराब, पतला या क्षीण होता अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, ये मदनमंजरी नामक गोलियां धातुविकार के सब रोगों का कर, रुधिर को सुधारकर, वीर्य को बढ़ाकर, ज्ञानतंतुओं को सतेजकर, और मूत्रमें, ये या किसी और तरह से धातु के जानको रोककर सच्चा और स्थिर पुरुषत्व देती हैं।

ये गोलियां पाचनशक्तिको सुधारकर दस्त साफ लाने में, मस्तिष्क को स्वच्छकर स्मरण को प्रफुलित करने में और नपुंसकताका नाश कर कामको प्रदीप्त करने में बहुत ही विजयी हो चुकी हैं, प्रतिमास हजारों डिबियाएं विकती हैं यही इनकी सब से बड़ी जमानत विजय है।

कीमत गोली ४० की रु० १)

शक्तिके लिये लेप ।



नपुंसकत्वारी घृत

इस घी का लेप करने से हस्त मैथुनसे और बालकपन में अज्ञानता से किए हुए, अनेक कुर्मोंसे उत्पन्न हुई पुरुषके गुप्त भागकी शिथिलता, बकृता अर्थात् टेढ़ापन, नसोंकी लो आदि सब नपुंसकता संबंधी दोष दूर होकर परिपूर्ण शक्ति प्राप्त होती है, पुरुष के शीर्षपर बहुत अच्छी तरह असर करनेवाली इसके सिवाय कोई दूसरी दवा भाग्य से ही यह बात कितने ही विद्वान डाक्टरों और अनुभवी वैद्योंकी रायसे साबित हो चुकी है।

तोला २ का रु० १)

ऊपर लिखी दोनों दवाइयोंका एक साथ उपयोग करने से एक सप्ताह के भीतर, कैसा शक्ति पुरुष क्यों न हो, अपनी गई हुई शक्तिको प्राप्त कर इच्छा परिपूर्ण करने में प्राप्त करता है, विशेष विश्वास दवाका उपयोग करने से होगा।

राजवैद्य नारायणजी केशवजी,

मालिक—आयुर्वेदोदय औषधालय—जामनगर काठियावाड़ ।

शोकीन मिज़ाज तबज्जह फरमायें । लुफ्त जवानी का उठायें ।

यह वह चीज है जिसकी तलाश में बूढ़े और जवान रातदिन लगे रहते हैं । मुल्क फ्रांस के एक तजुर्वेकार डाक्टर ने दुनियां में पैदा कर दिया है । आदमी कैसा ही नहीं और सुस्त कमजोर क्यों न हो, एक गोली दूध के साथ खाने से आधे घण्टे बाद वह ताकत पैदा होती है कि बूढ़े, जवानों को शान्त करदे । एक वक्स एक आदमी को चौबीस मरतबे, चौबीस आदमी को एक मरतबे काफी है । फायदा न हो तो दूने दाम, इस खूबी पर फी वक्स का दाम १॥) रु० तीन वक्स एक साथ लेने से ४) रु० पारसल खरचा ।)

चन्द्रमुखीकरण ।

यह दवा विलायती खुशबूदार फूलों की रूह है इसे एक विलायत के मशहूर डाक्टर ने बनाकर अभी अभी खाने किया है सात दिन बदन और चेहरे पर मलकर न्हाने से स्याह रंगत भी गुलाब के फूल की भांति सुख और सफेद मक्खन के माफिक मुलायम हो जाती है जिस में से खुसबू की प्यारी प्यारी लहूर निकलने लगती हैं । सटिछा माता के दाग, आंखों और गालों के स्याह दाग, झाई छीप, झुर्रियां, मुहासे आदि को मिटाकर पेसी खूब सूरती आजाती है कि चेहरा चांद के माफिक चमकने लगता है । तारीफ ये है कि जो रंगत और खूब सूरती इससे पैदा होती है, हमेशा कायम रहती है क्योंकि यह वह पौडर नहीं है जिसे बाजारी औरत लगा कर घड़ी दो घड़ी को सफेद चमड़ी कर लेती हैं । अपनी प्राण प्यारी को चन्द्रमुखी बनाना है तो इसे जरूर मंगाइये । कीमत फी बोतल ॥) रु० पारसल खरचा ।-) तीन बोतल एक साथ लेने से पारसल खरचा माफ ।

खुशबूदार रमेश साबुन ।

बिना किसी तरह की तकलीफ के वालों को उड़ाकर जिलद मुलायम और पेसी चमकदार कर देता है, मानों बाल यहां कभी हुए ही नहीं, इसका चन्द रोज का वर्ताव रहा तो इस जगह बाल आने ही बन्द होजायेंगे तीन टिक्कियों का वक्स का दाम ॥) पारसल खरचा ।-)

पता—रमेशचन्द्र एगड को (ब्रांच नं० ८) स्वामीघाट मथुरा ।

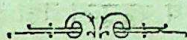
स्त्रियों के लिये अत्यन्त उपयोगी अपूर्व हिन्दी पुस्तकें ।

जिनके लिये सरकार और देशी रियासतों ने पारितोषिक दिए हैं । जिन्हें पुस्तकालयों इनामों और स्कूलों की पढ़ाई के लिए नियत किया है ।

	रु० आ० पा०		रु० आ० पा०
१-आदर्श माता	०-८-०	४-मनोहर कहानियां (साचित्र)	०-६-०
२-माता और कन्या (सजिलद)	०-६-०	५-हिन्दी बंगला शिक्षा ...	०-१-०
३-नारी पुष्पावली...	०-४-०	६-आदर्श माता (गुरुमुखी)	०-८-०

मिलने का पता—श्रीमती हेमन्त कुमारी चौधरी, लेडी सुपरिण्टेण्डेण्ट विक्टोरिया स्कूल, पटियाला ।

आयुर्वेद मार्गोपदेशिका ।



इस उपयोगी पुस्तक में कितने ही लक्षण देने योग्य रोगों का बला-बल, हेतु और चिकित्सा ऐसी स्पष्ट रीतिसे समझाए गए हैं कि एक साधारण मनुष्य भी समझ सके । उपाय भी ऐसे दिखाये हैं कि जो सरलता से बन सकें और अच्छा असर करें । अपना, अपने कुटुंब और स्नेहियों का स्वास्थ्य ठीक रखने के लिये यह पुस्तक अपने पास रखकर नित्य पाठ करने योग्य है ।

आकार रॉयल सोलह पेजी दस फॉर्म मूल्य ०-५-० पांच आने, चाहे वी० पी० से चाहे पहले दाम भेजकर मंगा सकते हैं ।

वैद्यशास्त्री माणिशंकर गोविंदजी

आतंक निग्रह औषधालय

जामनगर—काठियावाड़,

सम्पादकों की सम्मति ।

हिन्दी बङ्गवासी—डाक्टर एस, के वर्मन को कलकत्ते में रहकर जो नहीं जानता वह सी को नहीं जानता । आपकी अनेक औषधियां देश देशान्तरों को प्रति दिन जाया करती हैं ।

डाक्टर वर्मन ने अपनी अम्रान्त विचार शक्ति और प्रतिभा से अपनी औषधियों और अपने औषधालय की प्रशंसनीय उन्नति की है ।

भारतमित्र—आपने अपने सच्चे व्यवहार और अच्छी अवच सस्ती दवायों से बड़ा नाम पाया है ।

इनकी दवाइयों में यह बड़ा गुण है कि वे बहुमूल्य नहीं होतीं, अल्प आय वाले भी सहज ही उन्हें खरीद सकते हैं ।

श्री वेङ्कटेश्वर समचार बम्बई—कलकत्ते के डाक्टर एस, के, वर्मन हैजे के लिये कपूर का अर्क बनाकर बड़ा नाम पा चुके हैं ।

भारत जीवन पत्र बनारस—२ शीशी अर्क कपूर से करीब २० आदमी अच्छे भये आपकी दवाएं तमाम भारतवर्ष में प्रसिद्ध हैं ।

मारवाड़ी बन्धु कलकत्ता—डाक्टर साहब की औषधियां कैसी सुलभ और सच्ची हैं, इसका परिचय देने की आवश्यकता नहीं । इनकी औषधियों के प्रचार होने पर सर्व साधारण, बंचक औषध विक्रेयताओं से बचकर अवश्य उपकृत हुए हैं । आशा है कि पेटेण्ट औषधियों के रसिक जन इन वस्तुओं से लाभ उठावेंगे ।

सरस्वती इलाहाबाद—कलकत्ते के डाक्टर एस, के, वर्मन की २।१ दवाइयों की परीक्षा करने से मालूम हुआ कि वे भी अच्छी हैं यह वक्स हर गृहस्थ के घरमें रखने योग्य है ।

पैसा अखबार लाहौर—मैंने आपका अर्क कपूर हैजा, बदहजमी चो पेट के दर्द आदि में इस्तेमाल कराया, हर मौके पर फायदेमन्द और हुकमी इलाज पाया । मैं सफर में भी अर्क कपूर की शीशी पास रखता हूँ ।

आफताब डेकान मन्द्राज—मैंने आपकी धातुपुष्ट की गोलियां इस्तेमाल कीं इनका असर तीर बहदफ पाया । इसलिये और सब अदवियात मुजरब होंगी ।

लिटन गज़ट दिल्ली—एक शीशी आईओडाईजड सालसा खून साफ करने वाली दवा हमने मंगवा कर इस्तेमाल की जो खून साफ करने में बेनज़ीर है ।

डा: एस, के, वर्मन ५, ६, ताराचंद दत्त स्ट्रीट, कलकत्ता ।

न० १८

जब आप सब तरह की दवा सेवन करके थक जायें तब डाक्टर वर्मन की पेटेण्ट दवायों की परीक्षा करें, आशा है इससे अवश्य लाभ उठावेंगे । साथ यह भी याद रखें कि धोखे में नकली दवा न खरीदें, कारण नकली वर्मन अनेक उपजे हैं ।

वीनस दन्त मञ्जन.

प्रति दिन के इस्तेमाल के लिए सब से उत्तम और सब से सस्ता, रोग नाशक मंजे है। हमें इस के लिए सुवर्ण पदक और अच्छे से अच्छे प्रशंसापत्र मिले हैं। यह मुँह के रोगों व दूर करता है, मसूढ़ों को दृढ़ बनाता है, और दान्तों को गिरने से बचाता है। साथ ही इस सुगंध और स्वाद भी अत्युत्तम है।

मूल्य एक डिविया का डेढ़ आना ०—१—६

„ एक दर्जन डिविया का एक रुपया १—०—०

पार्सल और डाक का खर्च अलग।

हमारी तैय्यार की हुई चीज़ों के मुफ्त बड़े सूची पत्र के लिये निम्न लिखित पते पर पत्र लिखो।

मैनेजर—वीनस कैमीकल वर्क्स,

८७, सर्पेन्टाइन लेन, कलकत्ता।

भारत की राजधानी

में

“हिन्दी—समाचार”

(साप्ताहिक)

अपने देश, अपनी जाति और अपनी भाषा (हिन्दी) का पक्षपाती भारत की राजधानी दिल्ली से निकलने वाला यह साप्ताहिक समाचार पत्र है। इस में अच्छे २ मुख्य लेखों, गवेषणापूर्ण निष्पक्ष भाव भरी टिप्पणियों, ऐतिहासिक और साहित्य से सम्बन्ध रखने वाले विविध विषयों, उपदेश और शिक्षापूर्ण आख्यायिकाओं और उत्तमोत्तम भाव भरी रोचक कविताओं का समावेश है। साहित्य की बातों की कमी नहीं है। ताज़े ताज़े युद्ध समाचार व अन्य विविध देशी विदेशी खबरें देने का पूरा प्रबन्ध है। कागज़ और छपाई बढ़िया है। नमूना मुफ्त, वार्षिक मूल्य २॥) ६०, दीन छात्रों व धार्मिक संस्थाओं से २) मात्र। विज्ञापन देने और क्रोड़पत्र बंटवाने के लिये बड़ा सुभीता है। शीघ्र पत्रव्यवहार कीजिये।

प्रबन्ध कर्ता:— हिन्दी समाचार—दिल्ली

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ



सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

कफ, खांसी, दमा, जाड़े का बुखार, हैजा, शूल, संग्रहणी, आंव लोह, अतिमार, पेटका दर्द, कै का होना, जी मचलाना, हाथ पैर और कमर का दर्द, बच्चों के हरे पीले दस्त, कुकर खांसी, दूध पटक देना आदि की स्वादिष्ट सुगन्धित दवा है। कीमत फी शीशी ॥)

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ



सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

बिना किसी तरह की तकलीफ या जलन के दाद को जइसे खोने वाली दवा है कीमत फी शीशी ॥)

हमारी दवा के प्रशंसापत्रों सहित सचित्र सूचीपत्र कलेंडर मंगाने से सबको मुफ्त मिलेगा मिलने का पना—**क्षेत्रपाल शर्मा मालिक सुख संचारक कं. मथुरा**

ONE Paying Course.

'Accountancy' Course is Taught by correspondence. No condition of age or University certificate.

No study by heart. Fee wonderfully moderate. Course is most useful for promotion and employment. Certified persons earn from Rs. 60 to 100 P. M. There is no dept, where Accounts are not wanted. Success guaranteed. Candidates are prepared for L. C. C., examination. School is recognised by Government. Candidates are working daily. Write to-day for prospectus to.

C. C. EDUCATION OFFICE,

Poona city

Wanted agents every where. Liberal Commissions given

सच्चा मित्र वह है जो दुःख में घर और बाहर सहायता करे । जिस को कभी कोई पृथक् करना न चाहे, व्याधि में, देशान्तर में, शोक में, दुःख में जो महौषधि का काम देवे ॥

कलियुग में कहते हैं सच्चा मित्र नहीं मिलता है ॥

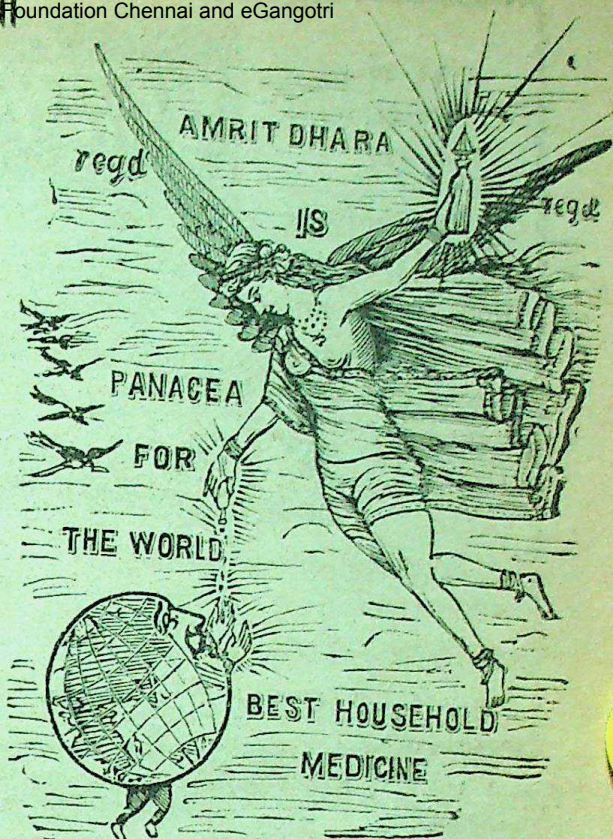
पं० ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य, सम्पादक
उर्दू तथा हिन्दी वैद्यक पत्र देशोपकारक
की ईजाद की हुई सर्व रोगघ्न औषधि—
(रजिस्टर्ड “अमृतधारा” (regd.))

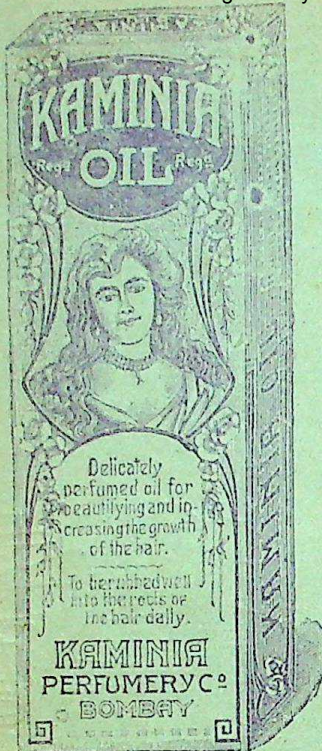
सच्चे मित्र का काम देती है, हम को इस औषधि को निकाले हुए ८ वर्ष हुए हैं, इस थोड़े काल के अन्दर लाखों स्त्री पुरुष इस से लाभ उठा चुके हैं। लगभग

२० हजार सर्टिफिकेट हमारे पास मौजूद हैं, जिन में से कुछ ‘अमृत’ नाम पुस्तक में दिये हैं, जो लिखने पर मुफ्त भेजी जाती है ॥ ‘अमृतधारा’ हर देश में, हर ऋतु में, हर घर में हर पुरुष को रखनी चाहिये, न जाने किस समय कोई अचानक कष्ट होजाय, जब यह उसको दूर करके सच्ची मित्रता का प्रमाण देगी। अबम्भा है, परन्तु सर्वथा सत्य है, कि यह एकही औषधि प्रायः सर्व रोगों को जो बूढ़ों, बालकों, जवानों, पुरुषों, तथा स्त्रियों को हाते रहते हैं, अचूक इलाज है। पशु, पक्षी आदि के रोगों को भी दूर करती है। इलीवास्ते जो १ बार आजमाता है, सदा के लिये मित्र बनता है। ‘अमृतधारा’ सर्व प्रकार की बाह्य तथा अन्तराय पीड़ा, जैसे शिर पीड़ा, कान दर्द, दन्त पीड़ा, पेट शूल, गंठिया, दरद, चोट आदि लगने की पीड़ा, सर्व प्रकार के विष, जैसे—भिद, बिच्छु, कुत्ता, सर्प, मूमा, आदि का डंक, किसी विष का खाया जाना, श्वास, काम, जुकाम, विशुचिका (हैजा), अरुचि, अफारा, अतिसार, संप्रहणी, वमन, अपस्मार, फोड़ा, फिसी, दाद, चम्बल, अर्, रक्तपित्त, स्त्रीरोग, बाल रोग, वाईगोला, पीला, पेग, पाण्डु रोग, क्षय, प्रदर, साम रोग आदि २ रोगों को खाने या लगाने से शीघ्र नाश करती है।

और अपूर्वता यह कि गुण तत्काल होता है—महीनों के रोग दिनों में और घण्टों के मिष्टों में नाश होते हैं—१ बार तो आजमावे ॥ कीमत फी शीशी २॥, आधी शीशी १॥, नमूना फी छोटी शीशी ॥),

‘अमृतधारा’ का इस कदर नाम देख कर कई लोगों ने उन्हीं गुणों की औषधियों के विज्ञापन दिये हैं, कोई मुख्य ‘अमृतधारा’ के सुख को नहीं जानता है, यह कवल हमारा निर्मित है, इस की नकल हम भी ॥) फी शीशी को बेचते हैं, इस वास्ते धोखे स बचें। और ‘अमृतधारा’ के बिना कोई ऐसी औषधि न खरीदें, कवल ‘अमृत’ या ‘धारा’ शब्दों पर ध्यान न दें, ‘अमृतधारा’ पूर्ण नाम याद रखें।





स्त्रियों, मर्दों और लड़कों के लिये । कामिनिआ ऑइल ।

(रजिस्टर्ड)

—:(*)—

बालों की शोभा बढ़ाने वाला यह एक अत्यन्त सुगंधित तेल है।
गिरने वाले बालों को अटककर, सुन्दर, तेजस्वी, गुच्छेदार, मुलायम
और चमकीले बनाता है। सिर में मलते ही कामिनिआ की मधुर मधुर
सुगंध से दिमागमें तरावट आने लगती है। बिगड़ा हुआ मन प्रफुल्लित हो
उठता है। शिरका दर्द दूर भागता है। इसलिए विद्यार्थियों, दिमाग
से काम करने वालों, और अच्छे बालों वाली स्त्रियों, सभी को
कामिनिआ ऑइल का नित्य व्यवहार करना चाहिये। कामिनिआ
ऑइल के कई उत्तमोत्तम गुणों की परीक्षा करके मैसूर प्रदर्शनी

में उसे सोने का चान्द और कितने ही सर्टिफिकेट मिले हैं। बाज़ारी, सस्ता और हलका
तेल खरीद कर अपने बाल खराब मत करो। खरीदते समय कामिनिआ ऑइल (रजिस्टर्ड) बराबर
देखकर खरीदो।

कीमत	१	शीशी	रुपया १-०-०	डाकमहसूल	०-४-०
"	२	"	रुपया २-१०-०	"	०-७-०

भरपूर सुगंध से युक्त दिलपसंद । ओटो दिलवहार ।

(रजिस्टर्ड)

ओटो दिलवहार को सेंट कहो या इत्र कहो क्योंकि उसमें सिरिट का नाम तक नहीं है।
इस सेंट से रुमाल या कपड़े पर दाग नहीं पड़ता। यह सेंट कई किस्म के नये नये फूलों के अर्क
बनाया हुआ है। इस सेंट की दो या चार बूँदें कपड़े पर डालने से उसका सुगंध कई दिन तक बराबर
कायम रहता है। ओटो दिलवहार का कार्ड (८) आने का टिकिट भेजने से मुफ्त मिलता है उस कार्ड
के सुगंध से दिमाग तर होने के बाद ओटो दिलवहार सेंट की शीशियां भंगाइये।

दाप—छोटी शीशी II) आना, मझली III) आना, ३ औंस की शीशी २) रुपये।

डाक महसूल अलहदा।

ह ३ ६ ३ ६

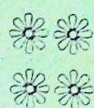
सोल एजेंट्स—दी ऐंगलो इण्डियन ड्रग एण्ड केमिकल कम्पनी,
जुम्मा मसजिद, बम्बई।

भैरोप्रसाद प्रिण्टर के प्रबन्ध से पञ्जाब प्रिंटिंग वर्क्स अनारकली लाहौर में

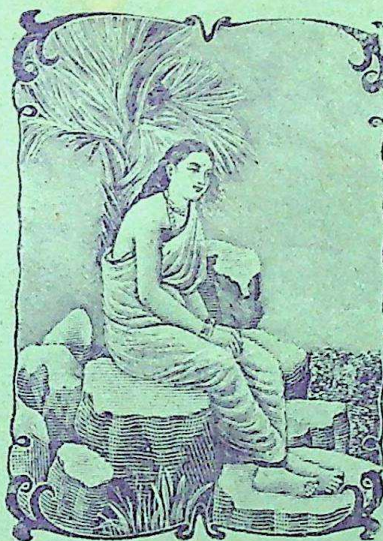
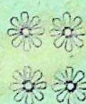
चित्र १६७२

रजिस्टर्ड नं० एल० ५१३.

ॐ ज्योतिषां ज्योतिरागात्रिः प्रकृतो यजनिष्ठ विष्वा । ॐ



उषा



लाहौर

वार्षिक मूल्य ३)

सम्पादक सन्तगम बी० ए०
Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

प्रति संख्या १)

विषय सूची ।

विषय	पृष्ठ
१—गुफा निवासी तिव्वती लामे ...	५७
२—श्याम सुन्दर (कविता)—कवि श्री द्विजेन्द्रलाल राय ...	६३
३—पंजाब में सम्मेलन—ले० एक युक्त प्रदेशी	६४
४—क्या जैन धर्म की अहिंसा सांसारिक उन्नति में बाधक है? लेखक—श्री० ऋषभ- दास जैनी बी० ए०, एल० षल० बी० ...	६५
५—जय जय भारतवर्ष (कविता)—कवि श्री० द्वारिकाप्रसाद गुप्त (रसिकेन्द्र) ...	७०
६—त्रयवाद लेखक—पं० लोकनाथ शर्मा ...	७२
नारी उपयोगी पृष्ठ	
७—बच्चों की छोटी छोटी बीमारियाँ और उनका इलाज । लेखक—रुमान एम० ए० कुरैशी, इण्डियन मेडिकल सर्विस ...	७४
८—चंचला (उपन्यास) लेखक महाशय कृष्ण अमृतसरी आर्योपदेशक ...	७९
९—विविध विषय ...	८४
१०—पुस्तक परिचय ...	९०
११—हिन्दी विश्वकोषके चमत्कार। ले०—चौधरी रामसिंह आर्य्य सेवक... ...	९३
१२—मनोरञ्जक श्लोक (कविता)—कवि श्री० द्वारिकाप्रसाद गुप्त रसिकेन्द्र ...	९५

अमेरीकन इलाज ।

अन्धे देखने लगते हैं,
आँख के मोती बिन्दू बिना नस्तर
दूर होते हैं, !!!

केटरैक्टोडाईन ।

“अभी यह नक्की हुआ है कि आँख के मोती
बिन्दू बिना नस्तर दूर होते हैं, इसके लिये
केटरैक्टोडाईन एक बड़ी भरोसे लायक और अजब
दवा है, मोती बिन्दू के रोगियों को अब शस्त्र
क्रिया (नस्तर) कराने की सुसुविध में पड़ने का
कुछ कारण नहीं रहा है। मोती बिन्दू पर शस्त्र
क्रिया कराने वाले सब रोगियों को आराम हो जाता
है, ऐसा मत समझना, परन्तु केटरैक्टोडाईनसे
एक भी बीमार निराश होता नहीं है। एक
शीशी का मूल्य ५) रु० डाक महसूल ४ आना।

डा० नवरत्नका बनाया

पका काला खेजाव ।

यह कलप याने खेजाव लगाने से मूठ, दाढ़ी
और सिरके सफेद वाल पांच मिन्टमें खुबसूरत
काले हो जाते हैं, बालों के शोकीनों याद रखो कि
इसके बरोबर आज कोई भी खेजाव नहीं है। यह
खिजाव लगाने में सहूल है, खुशबू में ठीक है,
और तासीर में अक्सीर है। रंगमें पका है और
कीमतमें सस्ता है। कीमत १ रुपया, डाक महसूल
माफ ।

मेसर्स नवरत्न एण्ड सन्स

फाजवा देवी रोड, बंबई नं० २

उषा-लाहौर.



राजर्षि गोपाल कृष्ण गोखलेकी महानिद्रा.

जन्म १९२३ विक्रम.

मृत्यु १९७१ विक्रम.

Manoranjan Press,
Girgaon-Bombay.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

उषा

सचित्र मासिक पत्रिका

भाग २

चैत्र-१९७२-मार्च १९१५

संख्या ३

गुफा निवासी तिब्बती लामें ।

ति

बत एक गुप्त देश है । बाह्य संसार को इस की भीतरी अवस्था का बहुत कम ज्ञान है । कभी २ कोई साहसी पर्यटक प्राणों को हथेली पर रखकर उस अज्ञात देश में जा निकलता है तो उसके द्वारा बाह्य जगत को वहां के आचार विचार, जल वायु और विचित्र रीति रिवाजों का थोड़ा बहुत पता लग जाता है । हमारे देश, नहीं नहीं सारे संसार में तिब्बत के यतियों के विषय में जिन्हें लामा बोलते हैं, नाना प्रकार की किम्बदन्ति प्रचलित है । कोई कहता है लामा कोग दो सौ वर्ष जीते हैं, कोई कहता है वे आजन्म ब्रह्मचारी और चिरकाल तक

निराहारी रहते हैं । इस प्रकार जितने सुंह उतनी बातें हैं । कुछ वर्ष हुए स्वीडन देश निवासी प्रसिद्ध पर्यटक डाक्टर स्वेन हीडिन महोदय इस "गुप्त देश" के रहस्यों का पता लेने वहां गए थे । आपने वहां जाकर जहां मान सरोवर की पवित्र झील देखी वहां लामाओं की कठिन तपस्या को भी देखा । उसी दारुण तपस्या का ही वृत्तान्त पाठकों की भेंट किया जाता है । हीडिन साहिब लिखते हैं:—

मैंने देखा कि गिरि आंचल में "डुपकंग" अर्थात् एक कुटिया है जिसके अन्दर बैठा हुआ तपस्वी अपने दिन रात व्यतीत कर रहा है । कुटि

* "Trans—Himalaya" by Sven Hedin से संकलित ।

की केवल एक ही कोठड़ी है जिसका प्रत्येक पार्श्व पांच पग लम्बा है। इस के मध्य में पानी का एक निक्षर है। इसकी दीवारें बड़ी दृढ़ और मोटी हैं। इनमें एक भी खिड़की अथवा झरोका नहीं। द्वार का मार्ग बहुत नीचा है और लकड़ी के फाटक को बन्द करके ताला लगा हुआ है। परन्तु इतना ही पर्याप्त नहीं समझा गया बल्कि द्वार के आगे काष्ठ और छोटे छोटे पत्थरों की एक दीवार खड़ी की हुई है जिसके कि छोटे छोटे छिद्र भी पत्थरों से भरदिष्ट गए हैं। द्वार बिल्कुल दिखई नहीं देता। परन्तु मार्ग के साथ ही एक छोटी सी मोरी है जिसमें से कि तपस्वी के लिए भोजन अन्दर भेजा जा सकता है। इस लम्बे और तंग निर्गम द्वार में से दिन का बहुत थोड़ा प्रकाश कोठरी में प्रवेश करता होगा, और यह भी सीधा नहीं जाता होगा क्योंकि कुटि का अग्र भाग एक दीवार से बन्द किया हुआ है जो कि एक छोटा सा आंगन सा बनाती है। इस आंगन में केवल वह यति ही जा सकता है जो कि तपस्वी के लिए प्रतिदिन भोजन ले जाता है। कोठरी की सपाट छत के ऊपर एक चिमनी है क्योंकि तपस्वी यदि चाहे तो हर छूटे दिन अपने लिए चाय बना सकता है और इसी मतलब के लिए मास में दो बार उस मोरी के द्वारा ईन्धन अन्दर पहुँचाया जाता है। चिमनी के मार्ग से भी शायद कुछ प्रकाश अन्दर जाता होगा। इन्हीं दो रास्तों से कोठड़ी का वायु बदलता रहता है।

मैंने पूछा—इस कोठड़ी में जो लामा अब बन्द है उसका नाम क्या है?

“उसका कोई नाम नहीं,। और यदि हमें मालूम भी हो तो हम उसे उच्चारण करने का साहस

नहीं कर सकते। हम उसे केवल “लामा रिनपोच” कहते हैं” (लामा का अर्थ है ऐसा व्यक्ति जिस से बढ़िया और कोई न हो, और रिनपोच का अर्थ है रत्न। सो सारे का अर्थ हुआ “लामा रत्न”) “वह कहां से आया है”?

“उसका जन्म स्थान नक्संग अन्तर्गत नगौर नामक एक स्थान है”।

“क्या उसके सम्बंधी वर्ग हैं?”

“यह हमें ज्ञात नहीं, यदि है भी तो उन्हें मालूम नहीं कि वह यहाँ है”।

“कितनी देर से वह इस अन्धेरी कोठड़ी में बन्द है?”

“उसे अन्दर गए हुए तीन वर्ष हो चुके हैं”।

“और कितनी देर वह अन्दर रहेगा”?

“मृत्यु पर्यन्त”।

“क्या उसे मृत्यु से पूर्व कभी भी दिन के प्रकाश में आने की आज्ञा नहीं”?

“नहीं; उसने बड़ा कठिन व्रत धारण किया है कि मेरा शव (लाश) ही कोठड़ी से बाहर निकलेगा”।

“उसकी क्या आयु है”?

“हम उसकी आयु नहीं जानते, परन्तु वह चालीस के लगभग दीखता था”।

“यदि वह बीमार होजाय तो फिर क्या होता है? क्या उसे सहायता नहीं मिल सकती”?

“नहीं। उसे किसी भी मनुष्य से बात करने की आज्ञा नहीं। यदि वह बीमार होजाय तो उसे धैर्य से अपने प्राणान्त या पुनः स्वस्थ होने की प्रतीक्षा करनी चाहिए”।

“तुम्हें तो कभी पता नहीं होता होगा कि वह कैसा है?”

“उसकी मृत्युसे पहले नहीं। प्रतिदिन ‘सम्बा’ का एक प्याला, और छठे दिन मक्खन औ चाय का एक एक टुकड़ा उस मोरी के अन्दर धकेल दिया जाता है। रात्रि समय वह इसे खालेता है और खाली प्याला दूसरे दिन के भोजन के लिए वहीं रखदेता है। जिस दिन हम देखें कि मोरी में प्याला वैसे ही भरा भराया पड़ा है तो हम समझ जाते हैं कि गुफा में पड़ा हुआ मनुष्य अस्वस्थ है। यदि दूसरे दिन भी प्याला ज्यों का त्यों पड़ा रहे तो हमारी आशङ्का बढ़ जाती है, और यदि छः दिन तक भोजन वहीं पड़ा रहे तो हम समझ लेते हैं कि वह मर गया है, तब तोड़कर द्वार खोल दिया जाता है”।

“इस तरह कभी हुआ भी है?”

“हां हुआ है। तीन वर्ष हुए एक लामा मर गया था उसने बारह वर्ष इसी गुफा में व्यतीत किए थे। पन्द्रह वर्ष हुए यहां एक लामा चालीस वर्ष पर्यन्त एकान्त में बन्द रहने के पश्चात् मरा था। वह बीस वर्ष की आयु में अन्धेरी कोठड़ी में प्रविष्ट हुआ था। निस्सन्देह ‘बम्बो’ ने ‘टोक्क’ में एक लामा के विषय में सुना था कि वह लंग-गण्डन-गोम्पा की धर्मशाला की गुफा में पूरे उन्हत्तर वर्ष तक संसार और दिन के प्रकाश से सर्वथा अलग रहा”।

“परन्तु क्या मोरी में ‘सम्बा’ का प्याला धरने वाले लामा से बन्दी का बात करना सम्भव नहीं? वहां तो इस बात की सत्यता का साक्षी कोई भी विद्यमान नहीं होता”।

मेरे आवेदक ने मुसकया कर कहा—“ऐसा होना कभी सम्भव नहीं, और नहीं इसकी आशा है, क्योंकि यदि बाहर का यति (लामा) मोरी

में मुंह डालकर तपस्वी के साथ बात करने का यत्न करे तो वह सदैव के लिये निन्दित ठहराया जायेगा। और यदि अन्दर का तपस्वी बोल पड़े तो उसका पिछले तीन वर्ष का तप नष्ट हो जायेगा। इस बात को वह पसन्द नहीं करेगा। यदि लिंगा या ‘सम्दे-पुक’ में कोई लामा बीमार होजाए, तो वह कागज के एक टुकड़े पर अपना रोग लिखकर तपस्वी से प्रार्थना कर सकता है कि वह रोग को दूर करने में सहायता दे, और वह पत्र ‘सम्बा’ के प्याले में रखकर मोरी के अन्दर धकेल दिया जाता है। तब तपस्वी रोगी के निमित्त प्रार्थना करता है, और यदि रोगी की प्रार्थना की शक्ति में विश्वास हो, और इस अन्तर में यदि वह कोई अनुचित बात चीत न करे तो लामा रिनपोच की प्रार्थना का प्रभाव दो दिन के पश्चात् मालूम होजाता है और रोगी स्वस्थ हो जाता है। इसके विपरीत तपस्वी कभी भी लिखकर बात चीत नहीं करता।”

“हम इस समय उस से केवल दो पग की दूरी पर हैं क्या वह जो कुछ हम कहते हैं उसे नहीं सुनता या कमसे कम उसे इतना मालूम नहीं होता कि गुफा के बाहर कोई बातें कर रहा है?”

“नहीं हमारे शब्द की ध्वनि उस तक नहीं पहुंच सकती क्योंकि दीवारें बहुत मोटी हैं, और यदि सुनाई भी दे जाए तो वह इस पर ध्यान न देगा क्योंकि वह समाधि में मग्न है। उस का अब इस संसार से कुछ सम्बंध नहीं। सम्भवतः वह दिन रात एक कोने में चौकड़ी लगाकर बैठा रहता है और जिन प्रार्थनाओं को उसने कण्ठस्थ

किया हुआ है या जो पुस्तकें उसके पास हैं उन के पाठ में लगा रहता है ।”

“ तब तो उसे पढ़ने के योग्य पर्याप्त प्रकाश पहुंचता होगा ?”

“ हां, दो सूरतियों के सम्मुख काष्ठफलक पर एक घी का दिया जल रहा है, और इसी का प्रकाश उसके लिए पर्याप्त है । जब दिया बुझ जाता है तो अन्दर घटा टोप अन्धकार छा जाता है । ”

मेरे मन में विचित्र विचार उठने लगे और मैंने यति से आज्ञा लेकर उस मार्ग पर चलना आरम्भ किया जिसपर कि तपस्वी आयु भर में एक बार ही चला था । हमारे सामने वह शोभायमान दृश्य था जिसे कि उसने अब कभी नहीं देखना था ।

जब मैं डेरे में जा बैठा और उस मठ वाली घाटी पर दृष्टि पात करने लगा तो मेरे मन में उस अमागे मनुष्य का ख्याल आने लगा जोकि उन अन्धेरी कोठरी में बैठा हुआ था ।

एक दिन, हीन, अज्ञात मनुष्य के रूप में वह लिंगा में आया जहांकि उसने सुन रक्खा था कि एक मृत्यु-गुफा खाली पड़ी है । यहां आकर उसने लामाओं को सूचना दी कि मैंने सदैव के लिए अन्धकार में रहने का प्रण कर लिया है । इस असार संसार में जब उसका अन्तिम दिवस चढ़ा तो लिंगा के सारे लामा लोग गम्भीर मौण धारण किए, मानो शव के साथ श्मशानभूमि की ओर जा रहे हैं, गुफा रूपी श्मशान तक उसके साथ गए और उसे सारी आयु के लिए बन्द कर दिया । मैं कल्पनिक नेत्रों से देख रहा था कि किस प्रकार रक्त

वर्ण अंगरक्खे पहिरे, गम्भीर भाव से मौण धारण किए, शरीर को आगे की ओर झुकाये और नेत्रों को पृथ्वी की ओर लगव सहज सहज पग धरते हुए लामा लोग जा रहे होंगे मानो वे चाहते हैं कि अमागा मनुष्य यथासम्भव प्रकाश और सूर्य का कुछ और आनन्द लूट ले । उसके इस धैर्य को देखकर जिसके सामने कि प्रत्येक चीज़ जिसकी कि मैं कल्पना कर सकता हूं, जहांतक कि ऐसे भय जिनका कि आवश्यक परिणाम मृत्यु है, मुझे कुछ प्रतीत होते थे । क्या उनका हृदय उसकी प्रशंसा से भरपूर था ? जहांतक मेरा विचार है हीरोसी जैसे वीर के, यह जानते हुए भी कि ऊपर से तोपखाना मुझे नष्ट करदेगा, पोर्ट आर्थर का द्वार बन्द कर लेने में अपने आपको चालीस या साठ वर्ष तक जीते जी अकेले दवादेने की आज्ञा देने की अपेक्षा कम धैर्य की आवश्यकता है । पहली अवस्था में कष्ट अल्पकालिक है और कीर्ति अक्षय, परन्तु दूसरी अवस्था में मनुष्य मृत्यु के पश्चात् भी ऐसाही अज्ञात रहता है जैसा कि उससे पूर्व, और कष्ट असीम है । इसके सहन करने के लिए इतने धैर्य की आवश्यकता है कि उसकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते ।

इस में कोई सन्देह नहीं कि दूसरे लामा लोग बड़े प्रेम और करुणामय भावसे उसके साथ जाते हैं, परन्तु तनिक उसके अपने मनकी अवस्था को विचारिए । हम सब ने एक दिन इसी मृत्यु मार्ग पर चलना है परन्तु कब चलना है यह हमें ज्ञात नहीं । वह इस बात को जानता था, उसे मालूम था कि आज के बाद सूर्य देव के दर्शन मेरे भाग्य में न होंगे, और इस गुफा रूपी श्मशान

के चारों ओर फैली हुई इस सुन्दर गिरि माला के रम्य और मनोहर दृश्यों का आनन्द मेरे नेत्र अब न ले सकेंगे।

अब वे अपने लक्ष्य पर पहुंच गए हैं, श्मशान का द्वार मुंह खोले दिखाई दे रहा है। वे उसके अन्दर प्रवेश करते हैं; ध्वजियों की बनाई हुई गुदड़ी एक कोने में थिठाई है; देवताओं की मूर्तियों को खड़ा कर दिया है और पवित्र पुस्तकों को अपने स्थान में धर दिया है; एक कोने में एक लकड़ी का चौखट, जैसा कि वच्चे के चलना सीखने के लिये 'गड्डीरना' होता है, रख दिया है जिसका कि वह मृत्यु से पहले उपयोग नहीं करेगा। वे बैठ जाते हैं और प्रार्थनाएं पढ़ने लगते हैं। ये प्रार्थनाएं वे नहीं जो साधारणतया शव पर पढ़ी जाती हैं परन्तु ये दूसरी हैं जिनका कि सम्बंध उत्कीर्तित प्रकाश और निर्वाण जीवन के साथ है। वे उठते हैं, उससे विदा चाहते हैं, और बाहर निकलकर द्वार बन्द कर देते हैं। अब वह अकेला है। दूसरे मनुष्य की आवाज उस तक नहीं पहुंच सकती। अब उसके जाप को सुनने वाला भी उसके पास कोई दूसरा व्यक्ति नहीं।

धैर्य और सहिष्णुता का कमाल है! साधारण मनुष्य ऐसी अवस्था में मानसिक विश्राम से पागल होकर बाहर निकलने के लिए दीवार से सिर दे पटकें, और लड़के बहने से निर्वल होकर मर जाए। परन्तु तपस्वी लामा ऐसा नहीं करता। वह चुपचाप धैर्य से मृत्यु की प्रतीक्षा करता रहता है। अन्दर रहने से उसे बाहर की सब वस्तुओं की विस्मृति हो जाती है। उसे समय की कल्पना भूल जाती

है और उस अन्धारी कोठगी में दिन और रात, ग्रीष्म और हेमन्त, के परिवर्तनों का ज्ञान केवल ताप के धटने बढ़ने से ही होता है। लामा मृत्यु से नहीं डरता बल्कि बड़ी प्रसन्नता से उसकी आकांक्षा करता है ताकि वह इस कैद से छुटकारा पाए। यदि मृत्यु के समय उस की चेतनता स्वच्छ हो तो वह लकड़ी के छोट्टे से चौखट को अपनी मुजाओं के नीचे रख लेता है ताकि वह उसी पवित्र स्थिति में मरे जिस में कि भगवान बुद्ध की सहस्रों प्रतिमाएं बनी हुई मिलती हैं।

यदि लामा चाहे तो इस काल कोठड़ी से बाहर भी आ सकता है। इसके लिए उसे केवल इतना करना आवश्यक है कि वह कांयले या काजल से एक पत्र पर लिखे कि मैं अब अंदर नहीं रहना चाहता और उस पत्र को 'सम्वा' के खाली प्याले में रखदे। परन्तु लामे कहते हैं कि ऐसी बात आज तक कभी नहीं हुई। एक बार एक लामा ने जो कि उन्हत्तर वर्ष बन्द रहा था मृत्यु से पूर्व एक बार प्रकाश को देखने की अभिलाषा प्रकट की थी। उसने बाहर निकलने की आकांक्षा एक पत्र द्वारा जतलाई थी। वह मुड़ कर दुहरा हो गया था। उसका आकार वच्चे जितना छोटा और उसका शरीर हड्डियों और चाम की हलके भूरे रंग की झिल्ली रह गया था। उसके नेत्र बहुत चमकीले थे। न उन में देखने की शक्ति थी न उनका कोई रंग था। उस के बाल बिल्कुल श्वेत थे और शिर के चारों ओर बिखरे हुए लटक रहे थे। उसके शरीर पर एक चीथड़ा रह गया था, शेष सब वस्त्र काल के प्रभाव से नष्ट हो गए थे। उसकी थोड़ी सी डाढ़ी थी, न कभी वह न्हाया था न कभी नख

ही काटे थे । जो लामे उसे गुफा में छोड़ने गए थे उन में से अब एक भी जीवित न था । उस समय वह आप नवयुवक था, और उसके समकालीन लामे काल की भेंट हो चुके थे । नए लोगों में से वह किसी से भी परिचित न था । अभी उसको सूर्य के प्रकाश में लाए ही थे कि प्राण पक्षी शरीर रूपी पिंजरे को छोड़ गया ।

कई लामे सदैव के लिए गुफा में जाने से पूर्व घोड़ी २ देर के लिए परीक्षा करके देख लेते हैं । पहली बार छः मास तक बन्द रहते हैं, और दूसरी बार तीन वर्ष और ६३ दिन तक । म० वेडल की सम्मति है कि यह अनुष्ठान उन्होंने भारतीय बौद्धों से सीखा है । भारत में यह शैली है कि आत्म-समीक्षा और आध्यात्मिक विषयों का स्वच्छ ज्ञान प्राप्त करने के लिए समय समय पर कुछ काल के लिए लोग एकान्त सेवन किया करते हैं । तिब्बतियों ने साधन को ही परिणाम बना लिया है ।

काल कोठड़ी में बैठे हुए तपस्वी को एक बात ही धैर्य बन्धाती और इस परम यातना को सहन करने की शक्ति प्रदान करती है । वह सोचता है कि अन्धारी कोठड़ी में यह छोटा सा नश्वर जीवन अनन्त काल के प्रशस्त प्रकाश के सामने तुच्छ है । अन्धकार में यह अल्पकालिक निवास केवल एक तैयारी है । दिन और रात एकान्त में बैठा हुआ तपस्वी जीवन और मृत्यु के प्रश्नों पर विचार करता रहता है और इसी बात पर दृढ़ विश्वास रखता है कि इस परीक्षा काल की समाप्ति पर वह पुनः एक उत्कीर्णित जीवन लाभ करेगा । यह केवल विश्वास ही है जो उसे इतना दृढ़ धैर्य प्रदान करता है ।

“सम्वा” का प्याला जो कई वर्षों से प्रति दिन भरा जाता था जब बराबर छः दिन तक वैसा का वैसा पड़ा रहे तो समझे कि तपस्वी का देहान्त हो गया । तब गुफा का द्वार खोलकर धर्मशाला का बड़ा महन्त शव के पास आ बैठता है और उसके निमित्त प्रार्थना करता है । बाकी लामे ‘डूकंग’ में जाकर पांच छः दिन तक प्रार्थना करते रहते हैं । तब शव को श्वेत कपड़े से ढांप दिया जाता है और शिर पर एक प्रकार की टोपी जिसे रिंगा कहते हैं, देकर चिता पर जला दिया जाता है । फिर भस्म को इकट्ठा करके गंध कर गारा जैसा बना लेते हैं और उसके छोटे २ स्तम्भ बना कर ‘छोटैन’ में रख छोड़ते हैं ।

जब कोई साधारण लामा मर जाय तो उसके टुकड़े २ करके पक्षियों के खाने के लिये फेंक दिया जाता है । यह क्रिया पांच लामे करते हैं । यद्यपि ये उसी धर्मशाला में रहते, ‘डूकंग’ में प्रार्थना करते और दूसरे लामाओं के साथ चाय पीते हैं, फिर भी वे अलूत समझे जाते हैं और उन्हें दूसरे लामाओं के साथ सहभोज की आज्ञा नहीं । जब आस पास के गाँवों में कोई गडरिया मर जाय तब भी उन्हें ही बुलाया जाता है, परन्तु मृतक के सम्बन्धियों का यह कर्तव्य होता है कि उन के लिए घोड़े भेजें । साथ ही मृतक की जायदाद धर्मशाला को देनी पड़ती है ॥



श्याम सुन्दर ।

(कवि—श्री द्विजेन्द्र लाल राय)

रागिणी—भैरवी, ताल व्रत ।

गिरि-गोवर्द्धन-गोकुल चारी,

यमुना-तीर-निकुञ्जविहारी,

श्याम सुठाम, किशोर विमङ्गिम,
चित्त-विनादन-कारी ।

पीताम्बर, वन पुष्पविभूषण,

चन्दन-चर्चित, मुरलीधारी ।

जिनि रक्से मोहित वृन्दावन,
उकलत यमुना-वारि ।नूपुर शिञ्जित, नृत्य विमोहन,
कपट चपल चतुराली,प्रेम निमीलित, नयन-विलोल,
कदम्बतले वनमाली ।

नन्दकि नन्दन, मायि यशोदा,

नयनाञ्जन, व्रज-चाल-पियारी,

जिनि लागि थि कुल ढोड़ि राधा
आकुल सव व्रजनारी ।कंस-विनाशक, मथुरापति जय,
निखिल-भक्त-जन-शरण,दुर्जन-पीडक, सञ्जन-पालक,
सुर-नर-वन्दित चरण ।

जय नारायण ! श्रीश ! जनार्दन !

जय परमेश्वर ! भव-भय-हारी !

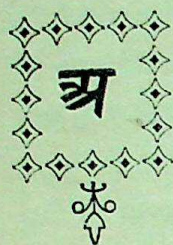
जय केशव ! मधुसूदन ! जय

गोविन्द ! मुकुन्द ! मुरारि !

नोट—यह कविता बंगला के प्रसिद्ध मासिक पत्र 'भारत वर्ष' से ली गई है । हमने केवल बंगला लिपि के स्थान में देव नागरी लिपि का प्रयोग किया है शेष सब शब्द ज्यों के त्यों वही रखे हैं ।

(सम्पादक)

पंजाब में सम्मेलन ।



बकी बार हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की बैठक लाहौर में होगी । पंजाब में उर्दू का बहुत प्रचार है । उर्दू के पत्रों के पाठक वहाँ हजारों ही हैं । और हजारों क्या लाखों ही पढ़े लिखे हिन्दू कहलाने वाले व्यक्ति ऐसे हैं जो हिन्दी और नागरी के विषय में न तो कुछ जानते हैं और न जानने की परवाह ही रखते हैं । मतलब यह है कि मुसलमानों का प्रभाव जैसा पंजाब पर है वैसा और कहीं नहीं है । पंजाब के हिन्दू लड़के जो युक्त प्रान्त में पढ़ते हैं कभी २ हिन्दी से बेतरह नफरत करते देखे गये हैं । यह कपोल कल्पित बात नहीं, अनुभव की बात है । एक लड़के से जब इस लेख के लेखक ने पूछा कि हिन्दू होकर भी तुम हिन्दी से नफरत क्यों करते हो तो उसने कड़क कर उत्तर दिया, “मेरी मादरी जुवान पश्तो है” । जब उस से पश्ता बोलन को कहा गया तो बोला कि “मैं पश्तो नहीं जानता, लेकिन हिन्दी की मादरी जुवान कहने में शरम मालूम होती है । मैं तो पंजाबी ही बोलना पसंद करता हूँ, उर्दू भी खूब जानता हूँ, मुझे हिन्दी से क्या मतलब ।” जहाँ के नवयुवकों की यह दशा है उसी प्रांत में अबके हमरा सम्मेलन होगा । दशा और भी बिगड़ गई होती अगर आर्य समाज ने पंजाब में हिन्दी के लिये प्रयत्न न किया होता तो । अतएव इस विषय में हिन्दी संसार, बल्कि सारी हिन्दू जाति लाला हंसराज सरीखे आत्म

त्यागी सज्जनों की कृतज्ञ है । हमें शोक होता है जब हम अपने पंजाबी वी० ए० एम० ए० भाइयों को उर्दू में अच्छी पुस्तकें लिखते हुए और हिन्दी के प्रति उदासीन देखते हैं । पंजाब में कुछ दिनों पहिले हिन्दी का एक भी नाम लेने लायक अखबार न था । इतना बड़ा पंजाब ! आर्यों की आदिभूमि ! और वहीं आर्य भाषा की यह दशा !! अब दो एक अखबार या पत्रिकाएँ निकली भी हैं परन्तु उनके ग्राहक यथेष्ट नहीं । ऐसी कठिनाइयों के सामने भी हिन्दी की सेवा में कटिबद्ध रहने वाले हम अपने इन स्वार्थ त्यागी भाइयों को धन्यवाद देते हैं । लेकिन यह कुछ कम शोक और लज्जा की बात नहीं है कि जहाँ उर्दू को लाखों पाठक मिल गये हैं वहाँ हिन्दी को हजारों भी नहीं मिलते । हिन्दुओं ने उर्दू को अपना रक्खा है और हिन्दी की ओर से उदासीनता धारण कर रक्खी है । हमारा यह मतलब नहीं है कि उर्दू का वायकाट कीजिये, हमारा यही मतलब है कि आप हिन्दी को अपनाइये । बिना उर्दू के जितना काम न चल सकता हो उतना काम उर्दू में कीजिये बाकी हिन्दी को स्थान दीजिये । अगर पंजाब में शिक्षित हिन्दू सज्जन यह निश्चय कर लें कि हम अपने बाल बच्चों को पहिले हिन्दी में शिक्षा दिलावेंगे, और हिन्दी की ओर से उनके हृदय में प्रेम उत्पन्न करेंगे तो जल्द ही हिन्दी की दशा सुधर जाय ।

सम्मेलन अबके लाहौर में होगा लेकिन जहाँ तक हमें मालूम है अभी कोई कमेटी प्रबंध इत्यादिक के लिये नहीं बनी । अगर यही दशा रही तो हमें भय है कि सम्मेलन की वहाँ

जाने से लाम की जगह कहीं हानि न पहुंचे। उदासीनता का कोई कारण भी समझ में नहीं आता। अगर कोई प्रबन्ध कारिणी समिति बनी भी हो तो उसकी सूचना अखबारों में नहीं निकली। लखनऊ जैसे उरदू प्रधान नगर में सम्मेलन आशातीत सफलता से होगया। हमें आशा होती है कि लाहौर का सम्मेलन उससे भी अधिक सफलता पूर्वक होगा और पंजाब में हिन्दी के लिये युगांतर उपस्थित करेगा। परन्तु उधर के लोगों की इतनी दिलाई देख कर यहां वाले आश्चर्य कर रहे हैं, और तरह २ की शंकायें उनके चिरा में उत्पन्न हो रही हैं। कृपया उनका समाधान कीजिये और बतलाइये कि सम्मेलन के लिये अबतक क्या काम हुआ है।

एक युक्त प्रदेशी।

या जैन धर्म की अहिंसा सांसारिक उन्नति में बाधक है ?

(लेखक-श्री ऋषभ दास जैनी बी. ए., एल. एल. बी.)

♦♦♦♦ अहिंसा जैनधर्म का मुख्य उपदेश है।

अ

♦♦♦♦ 'अहिंसा परमो धर्मः' जैनधर्म का प्रसिद्ध मोटा अर्थात् मुद्रा लेख है परन्तु इसी पत्रिका के गत कार्तिक मास के अंक में प्रोफेसर गोविंद

राम जी एम० ए० ने आर्य जाति की अधोगति के कारण, शीर्षक लेख में यह दिखलाया है कि जैन धर्म की अहिंसा और दया ने आर्य जाति और भारत वर्ष को महान हानि पहुंचाई है। जैन धर्म की अहिंसा ने लोगों के दिलों को कोमल करके

जाति को निर्बल, कायर और नपुंसक बना दिया है। प्रोफेसर साहब के कहने का आशय है कि जैन धर्म का पालन करते हुए शारीरिक और लौकिक उन्नति नहीं हो सकती। प्रोफेसर साहब का यह कथन कहां तक सत्य है इसी पर विचार करने के लिए आज मुझे अपने भिन्न वाद दयाचक्र जी गापलीय बी० ए० मंत्री जीव दया विभाग, भारत जैन महामंडल, लखनऊ की प्रेरणा से कुछ लिखने की आवश्यकता हुई है। आशा है कि पाठक गण और विशेष कर प्रोफेसर साहब ध्यान पूर्वक इसे पढ़ने की कृपा करेंगे।

अहिंसा और अधोगति का कारण-इस अनोखे कार्य कारण के सम्बंध से बुद्धि विस्मित होती है। अहिंसा और शारीरिक निर्बलता तथा कायरता का कारण इस विचित्र कार्य कारण के सम्बंध को समझना भी सूक्ष्म बुद्धि का काम है। क्या यह बड़ी अहिंसा नहीं जिसका पातंजल ऋषिने अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पांच यम व नियम स्थापित करके उपदेश दिया है। हां बड़ी अहिंसा है, परन्तु प्रोफेसर साहब के सिद्धांतानुसार पातंजल ऋषि का उपदेश और उनके ग्रंथ आर्य ग्रंथ नहीं हैं। उनका श्रद्धान है कि जिस ग्रंथ में अहिंसा परमो धर्म का उपदेश है वह आर्य ग्रंथ नहीं। आप लिखते हैं कि "बौद्ध और जैन धर्म का हम पर ऐसा प्रभाव पड़ा है कि हम नमी की ओर बहुत झुक गए यहां तक कि हमने अहिंसा ही को परम धर्म मान लिया हालांकि मेरा विश्वास है कि 'अहिंसा परमो धर्मः' ये विशेष शब्द किसी भी आर्य ग्रंथ में नहीं मिलते।"

अस्तु अब हमको देखना यह है कि जैन धर्म के ग्रंथों में अहिंसा किस प्रकार वर्णन की गई है और वह लौकिक उन्नति के विरुद्ध है या नहीं। अहिंसा हिंसा से बचने का नाम है और अहिंसा का लक्षण जैन शास्त्रों में इस तरह किया गया है कि "प्रमत्त योगात्प्राण यपरोपणं हिंसा" अर्थात् कषाय के वश होकर अपने अथवा दूसरे के प्राणों के घात करने का नाम हिंसा है। काम, क्रोध, लोभ, माद, माया आदि कषाय हैं। इनके वश होकर जो अपने अथवा दूसरे के प्राणों का घात करना है वही हिंसा है। ज्ञान आत्मा का स्वभाव है। इन कषायों से आत्मा का स्वभाव अर्थात् ज्ञान नष्ट होता है। केवल बद्ध करने का नाम ही हिंसा नहीं। इन कषायों से बद्ध करने का नाम भी हिंसा है। यदि ये कषायें तीव्र हैं तो अधिक हिंसा होती है, परन्तु यदि ये मंद हैं तो कम। यदि मनुष्य का मन इन कषायों से پاک है परन्तु उस से बिना घात करने के भाव के घात हो जाता है तो हिंसा नहीं होती है। अथवा दूसरों को लाभ पहुंचाने में, परोपकार करने में, दूसरों की रक्षा करने में किसी का घात होता है तो उस में भी हिंसा नहीं होती है। जैन धर्म की अहिंसा यह कदापि नहीं कहती कि राजा अपनी प्रजा की रक्षा न करे और यदि कोई शत्रु देश पर चढ़ाई करे तो उस समय अपने देश और अपनी प्रजा की रक्षा के लिए उस से युद्ध न करे। हां यदि बिना किसी कारण के केवल लोभ का दास होकर राजा दूसरों का देश छीनने के लिए युद्ध जरत है, सहस्रों मनुष्यों का खून करता है तो अवश्य हिंसा है। प्रोफेसर साहब ने एक जैनी राजा का उदाहरण दिया है कि वर्षा

ऋतु में शत्रु से नहीं लड़ा और उसका देश शत्रु ने ले लिया। यदि वास्तव में कोई राजा वर्षा ऋतु में जब शत्रु ने उस पर चढ़ाई की इस भाव से कि इस ऋतु में लड़ने से कीड़े की हिंसा होगी, नहीं लड़ा तो उसने कदापि जैन धर्म के सिद्धांत के अनुसार नहीं किया, बल्कि उसने विपरीत किया। केवल उस एक के करने से जैनधर्म को दोष लगाना निर्मूल है। जैनधर्म में अहिंसा अपने २ पद के अनुसार बतलाई गई है। जैन धर्म में वर्षा ऋतु में छोटे २ जीवों की हिंसा के विचार से साधुओं को विहार करने की मनाई है, पर गृहस्थियों को कहीं मनाई नहीं। इस के अतिरिक्त जैन धर्म में ऊंची श्रेणी और नीची श्रेणी के सब जीवों के घात में एकसी हिंसा नहीं मानी गई है। मनुष्य के मारने में पशु के मारने से अधिक हिंसा होती है। पंचेन्द्रिय पशुओं के घात में कीड़े मकौड़े वगैरह दो इन्द्रिय तीन इन्द्रिय चार इन्द्रिय वाले जीवों के मारने से अधिक हिंसा है। कीड़े मकौड़े वगैरह नीची श्रेणी के जीवों के घात में वनस्पति के घात की अपेक्षा अधिक हिंसा है। हिंसा की अधिकता वा न्यूनता हिंसक के भावों और संकल्पों की अवस्था पर अधिकतर निर्भर है। भावार्थ जैन धर्म की अहिंसा का सिद्धांत ग्रहस्थी को अपने कार्य व्यवहार करने का निषेध नहीं करता।

जैन धर्म में हिंसा के मुख्यतया दो भेद किए गए हैं :- (१) संकल्पी हिंसा, (२) आरम्भी हिंसा। कषायों के वशीभूत होकर केवल स्वार्थ और लाभ के लिए दूसरे को हानि पहुंचाना अथवा मारने के अभिप्राय से जो जो दूसरों का बद्ध किया जाता है वह संकल्पी हिंसा है। उससे ग्रहस्थी

को भी वचना चाहिए परन्तु कषाय के वश न होकर सांसारिक कार्यों के करने में, परोपकार करने में, अपनी तथा दूसरों की अन्याय से रक्षा करने में जो हिंसा होती है वह आरम्भी हिंसा कहलाती है। ऐसी हिंसा की ग्रहस्थी के लिए मनाई नहीं है। ऐसी हिंसा में हिंसा करने वाले के दिल में दूसरों के साथ कोई द्वेष वा शत्रुता का भाव नहीं होता है, दूसरे को बद्ध करने की इच्छा नहीं होती है किन्तु उस के भाव तो कार्य व्यवहार करने या दूसरों की रक्षा करने वा परोपकार करने के ही होते हैं। अब यदि उस में दूसरे जीवों का घात हो जाता है तो वह बिना कषाय और बिना इच्छा के होता है। ऐसी हिंसा वास्तव में हिंसा की सीमा तक नहीं पहुंचती है। इस प्रकार की हिंसा को आरम्भी हिंसा कहते हैं जो वास्तव में हिंसा के लक्षण के अनुसार ग्रहस्थियों की अवस्था की अपेक्षा हिंसा नहीं है।

यह विचार कि जैन धर्म की हिंसा ने लोगों के दिलों को कोमल बना कर उनको कायर, निर्बल और नपुंसक बना दिया सर्वथा निर्मूल है। अहिंसा धर्मका पालन कायर निर्बल और नपुंसक से कदापि नहीं हो सकता। अहिंसा का पालन वही कर सकता है जिसने अपनी कषायों को शमन कर लिया हो और इन्द्रियों को दमन कर लिया हो। अहिंसा धर्म पर वही आरुढ़ हो सकता है जो शरीर के दासत्व और स्वार्थ परता को एक ओर रखकर सब जीवों का हृदय से शुभ चिन्तक हो और सब से निस्वार्थ भात्रि भाव रखता हो। क्या कायर और निर्बल इन्द्रियों को दमन कर सकते हैं? कदापि नहीं।

क्या नपुंसक शरीर की गुलामी और स्वार्थ परता को छोड़ सकते हैं? कभी नहीं। जैन धर्म की अहिंसा क्षत्रिय से यह नहीं कहती कि तुम न्याय का युद्ध मत करो, देश और प्रजा की रक्षा मत करो। वैश्य को व्यापारदि करने से मना नहीं करती। शूद्र को शिल्प तथा सेवा आदि करने से मना नहीं करती। ब्राह्मण से निःसंदेह कहती है कि तुम जहां तक हो सके दुनिया के झगड़ों में और आरम्भ में मत फंसो। आत्मिक उन्नति करो। जैन धर्म की अहिंसा सब से यह अवश्य कहती है कि अपनी जिह्वा के क्षणिक स्वाद के लिए अथवा अपने शरीर को मोटा ताजा करने के लिए दूसरे जीवों का बद्ध करके उनके शरीर को मत खाओ। अपने शौक के लिए दूसरे जानवरों को शिकार मत करो। धर्म की आड़ में देवी देवताओं के आगे बेचारे निरापराध मूक प्राणियों का रक्त मत बहाओ। जैन धर्म के तीर्थंकर सब क्षत्रिय हुए हैं। उन्होंने राज्य किए हैं, बड़े बड़े युद्ध किए हैं। देश और प्रजा की रक्षा की है। ज्ञान विज्ञान कला कौशल्य का उन्नति दी है। हां यह अवश्य है कि उन्होंने बेचारे मूक प्राणियों का शिकार नहीं किया। उनको मार कर उनके शरीर से पेट नहीं भरा है। धर्म के नाम से खून बहाने की आज्ञा नहीं दी है।

पाठक गण! जाति की कायरता और नपुंसकता का कारण अहिंसा कदापि नहीं है। इस का कारण ब्रह्मचर्य का पालन न करना। वीर्य का नाश कर देना, बाल्य काल में विवाह कर देना, मांस भक्षण और मदिरा पान का अधिक प्रचार होना है जिस से लोगों की प्रकृति ऐसी ढोलाई है कि कषाय अधिक प्रबल

होकर विषय घासना की ओर उनका चित्त झुक जाता है और वे ब्रह्मचर्य स्थिर नहीं रख सकते। वर्तमान में मांस भक्षण का प्रचार बहुत बढ़ा हुआ है और बढ़ता जाता है। गंगा जमुना के दोआबे को छोड़कर सम्पूर्ण देश में हिन्दू भाई निःसंकोच विना किसी रोक टोक के खुल्लम खुला मांस भक्षण करते हैं। गो हत्या बंद करना चाहते हैं, और घी दूध के न मिलने की शिकायत करते हैं परन्तु स्वयं मांस भक्षण करना छोड़ते नहीं। गो हत्या के विरुद्ध हल्ला करते हैं परन्तु गो हत्या कम करने का एक इलाज जो स्वयं उन के हाथ है वह करते नहीं। हमारा विश्वास है और हम बलपूर्वक कहते हैं कि यदि आज हम हिन्दू लोग मांस खाना छोड़ दें तो भारत वर्ष में गो हत्या आधी जरूर हो जाए और घी दूध बाहुल्यता से मिलने लगे।

प्रोफेसर साहब का जैन धर्म की अहिंसा को दूषण देना सरासर अन्याय है। अहिंसा ने जाति को कायर, निर्बल और नपुंसक की नहीं बनाया और न कभी बनावेगा। यदि आप जाति में शारीरिक बल और लौकिक उन्नति के इच्छुक हैं तो अपने बालकों को २५ वर्ष अथवा कम से कम २१ वर्ष की अवस्था तक ब्रह्मचारी रखिये। बचपन की शादी को छोड़िये, बच्चों को बुरी संगति और संसार की चमक दमक से बचाइये, गुरुकुल में उनका प्रवेश कराइये, जिस तरह पूर्व काल के ऋषियों ने जीवन व्यतीत किया है उसी जीवन का अनुसरण उन से कराइये। मांस मदिरा तामसी भोजन जो सैकड़ों रोगों की खानें हैं उन से हटाइये और स्वयं भी छोड़िये क्योंकि जबतक आप स्वयं उनको न छोड़ेंगे आप के

बच्चे कदापि नहीं छोड़ सकते। उनको सादा जल्दी पचने वाला, पौष्टिक भोजन, घी, दूध, फल भेजे खाने को दीजिए, फिर देखिए कि जाति में शारीरिक बल, दीर्घ आयु और हर प्रकार की उन्नति होता है या नहीं। राम मूर्ती को देखिये। क्या उन से भी अधिक वलिष्ट आप बनाना चाहते हैं? ये क्या खाते हैं इस पर कभी आपने विचार किया। प्राचीन काल में स्पार्टा के लोग कितने वीर थे। वे क्या खाते थे, आप जानते हैं? अंग्रेजी डाक्टरों के अनुभव देखिए, आर्डर आफ दी गोल्डन एज की पुस्तकों का ज़रा अवलोकन कीजिए। कितने अनुभव किए गए हैं और सब हालतों में यही परिणाम निकला है कि शाकाहारी मांसाहारियों से अधिक पुष्ट होते हैं जैन धर्म की अहिंसा यह कदापि नहीं कहती कि अपने शरीर को पुष्ट मत करो, ताकत मत दो और उसे सुखा दो। हां यह जरूर कहती है कि जिस प्रकार डाका मार कर, दूसरों का धन छीन कर अपनी सम्पत्ति बढ़ाना अच्छा नहीं उसी प्रकार दूसरे जीवों को मारकर उन के शरीर से अपने शरीर को हृष्ट पुष्ट करना अच्छा नहीं है। अपने शरीर को सात्विक भोजन दो, तामसी भोजन मत दो। न जैन धर्म यह कहता है कि तुम व्यायाम मत करो या खेल मत खेलो। हां शिकार से कि जिस में बेजवान जानवरों का खून बहाया जाता है दूर रहो। भावार्थ जैन धर्म की अहिंसा शारीरिक उन्नति और समाज व देश की उन्नति के कदापि विरुद्ध नहीं है।

प्रोफेसर साहब का मत है कि ऊंची श्रेणी के जीवों की प्राण घृष्टि निचली श्रेणी के जीवों

के प्राण त्याग से होती है और इसी सिद्धांत पर आप हिंसा के पक्षपाती मालूम होते हैं। ऐसा कदापि नहीं हो सकता। प्रथम तो यह सिद्धांत ही सर्वथा ठीक नहीं है। ऐसा भी देखा जाता है कि निचली श्रेणी के जीवों की प्राण वृद्धि ऊँची श्रेणी के प्राण त्याग से होती है। पशु और मनुष्य के मरने से हज़ारों कीड़ों की उत्पत्ति होती होती है। मनुष्यों और पशुओं का प्राण त्यागना ही उन कीड़ों की वृद्धि व उन्नति का कारण है। सिपाही युद्ध में मरता है। उसके शरीर से हज़ारों जंगल के जीवों की पालना होती है। अनेक प्रकार के वृक्ष ऐसे होते हैं कि उनकी उन्नति और वृद्धि पशुओं के खून और हड्डी वगैरा से होती है। उदाहरण के लिए अंगूर की बेल है। जबतक उसमें उस से कहीं ऊँचे जीवों का मांस न डाला जाए तबतक उस पर अंगूर अच्छी तरह फूलने ही नहीं। अतएव सर्वथा यह कहना कि ऊँची श्रेणी के जीवों की प्राण वृद्धि निचली श्रेणी के जीवों के प्राण त्याग से होती है अथवा निचली श्रेणी के जीवों की प्राण वृद्धि ऊँची श्रेणी के जीवों के प्राण त्याग से होती है, दोनों गलत हैं। संसार में दोनों अवस्थाएँ पाई जाती हैं। कहीं ऊँची श्रेणी के जीवों की वृद्धि निचली श्रेणी के जीवों के प्राण त्याग से देखी जाती है और कहीं इस के विपरीत ऊँची श्रेणी के जीवों का प्राण त्याग निचली श्रेणी के जीवों की उत्पत्ति का कारण होता है। कोई एक नियम नहीं है। संसार के भिन्न भिन्न जीवों के भूत कर्मों के अनुसार विचित्र अवस्था है। यदि ज्ञान दृष्टि से देखा जाए तो मनुष्य और तिर्यच आदि सब में असली चीज़ आत्मा है और आत्मा के

सच्चे जीवन के लिए जड़ के खाने की कोई आवश्यकता नहीं है। आत्मा अजर अमर है। न जड़ के खाने से जीवित रहती है और न जड़ के न खाने से मरती है। अपने स्वभाव ज्ञान से सदा जीवित रहती है परंतु सांसारिक अवस्था में जो आत्मा का सम्बंध शरीर से है उस शरीर को स्थिर रखने के लिए जड़ पदार्थ के खाने की जरूरत पड़ती है। अब जब कि जड़ पदार्थ ऐसी दशा में भी पाया जाता है कि जिस में उस से दूसरे जीवों का शरीर बना हुआ है अतएव दयावान पुरुष का काम है कि वह अपने आहार के लिए ऐसे पदार्थ को काम में लावे कि जो दूसरे जीवों के शरीर को न बनाए हुए हो या ऐसे पदार्थ को कि जिस से बहुत ही छोटी श्रेणी के जीवों का शरीर बना हुआ हो, अर्थात् अपने भोजन के लिए ऐसे पदार्थ को ग्रहण करे कि जिस से दूसरे आत्माओं को जहाँतक सम्भव हो बहुत ही कम दुःख पहुँचे या दूसरे जीवों को अपने शरीर से पृथक् न होना पड़े। इसी का नाम खाने पीने में अहिंसा सिद्धांत का पालन करना है और यह कदापि मनुष्य के शरीरिक बल और लौकिक उन्नति प्राप्त करने में बाधक नहीं हो सकती।



जय जय भारतवर्ष ।

जय जय भारत-वर्ष ।

(कवि-श्री द्वारिकाप्रसाद गुप्त रसिकेन्द्र)

जय जय प्यारे भारत-वर्ष !

तेरी महिमा कही न जाती ।

(१)

टेक ।

तू था स्वर्ग समान पवित्र,

तुझ में गुण थे विपुल विचित्र ।

सब थे सज्जन महच्चरित्र,

जिनकी कीर्ति-ध्वजा फहराती ॥

जय २ प्यारे भारतवर्ष ॥१॥

(२)

होता घर २ वेदोच्चार,

विद्या का था श्रुतल प्रचार ।

त्यों था सदा सत्य व्यवहार,

उन्नति पूर्ण दृष्टि थी आती ॥

जय २ प्यारे भारतवर्ष तेरी महिमा कही न जाती ॥२॥

(३)

तेरे सुत थे प्रतिभावान,

रण में कुशल धीर बलवान ।

जिनके शब्द-बोध थे बाण,

कौशल-कला नई दरशाती ॥

जय २ प्यारे भारतवर्ष तेरी महिमा कही न जाती ॥३॥

(४)

तेरा अमृत सम था भोग,

जिस को रहे तरसते लोग ।

क्योंकर तब बढ़ते यों रोग ?

सबकी देह पुष्ट दिखलाती ॥

जय २ प्यारे भारतवर्ष ।

तेरी महिमा कही न जाती ॥४॥

(५)

भारी होता था व्यवसाय,

जिस में नहीं जरा अन्याय ।

कैसे वैज्ञानिक थे हाय !

जिनकी कृतिकारां मन भारती ॥

जय २ प्यारे भारतवर्ष !,

तेरी महिमा कही न जाती ॥

(६)

अब क्या दशा हुई प्रतिकूल,

सचमुच है हम सब की भूल ।

हा हा ! फूल बनगये शूल,

उलटा राग, रागिनी गाती ।

जय जय प्यारे भारतवर्ष !,

तेरी महिमा कही न जाती ॥

(७)

अब भी हा ! तेरी सन्तान ।

देती नहीं पूर्णतर ध्यान ।

भूली है तेरा सम्मान !

आलस में होकर मदपाती !

जय जय प्यारे भारतवर्ष !

तेरी महिमा कही न जाती ॥७॥

(८)

भारत ! अतः आपही आप,

मेढो सन्तानों का ताप ।

जपने लगे पुण्य का जाप !

ऊषा तुमको विनय सुनाती !

जय जय प्यारे भारतवर्ष, तेरी महिमा कही न जाती ।

त्रयवाद ।

परमात्म तत्व प्रकाश

(लेखक-पं० लोकनाथ शर्मा अय्योपदेशक)

तृतीयाध्याय



परमात्मा का जगत् से क्या संबंध है इस पर विद्वान् पुरुषों ने पृथक् २ अनुसंधान किया है इसलिये यहां पर विभिन्न सम्मतियाँ हैं। भिन्न सम्मतियों के होते हुवे भी इस ब्रह्मांड का एक मात्र चेतन कर्ता परमात्मा है, और जगत् के साथ उसका व्याप्य व्यापक भाव से संबंध है इन पर सारे विचारशील ईश्वरवादियों की एकता ठहरती है। ब्रह्म के अस्तित्व तथा जगत् के कर्तृत्व को स्वीकार न करते हुवे भी नास्तिक लोग संसार क्या है? और कैसा भासता है? इन प्रश्नों का निम्न लिखित प्रकार से उत्तर देते हैं। वे मानते हैं कि चित्त न ही जड़ पदार्थ है न ही चेतन पदार्थ विद्यमान है; संसार केवल कलना मात्र है, जितने पदार्थ दृष्टि गोचर होते हैं वे न तो आदि में उपस्थित थे और न ही अंत में उपस्थित होंगे; अब मध्य में जो प्रतीत हो रहे हैं वे केवल प्रतीति समय में ही देखे जाते हैं पश्चात् नष्ट भ्रष्ट हो जायेंगे। जैसे उत्पत्ति के समय घट ज्ञान नहीं था और ध्वंस के पीछे नहीं रहेगा किन्तु घट ज्ञान के समय में भासता है पुनः पदार्थान्तर में ज्ञान जाने से घट ज्ञान नहीं रहता इसलिये शून्य ही एक तत्व है

तादितर कुछ भी नहीं। * कोई एक ऐसा मानते हैं कि बाहर से पदार्थ ना प्रत्यक्ष होता है, भीतर से नहीं होता, जैसे 'पीतमिदं वस्त्रं' इस प्रतीति में पतियुक्त वस्त्राकृति बाहर से प्रतीति होती है अंदर से नहीं। † कोई ऐसा कहते हैं कि बाहर से अर्थ का अनुमान होता है क्योंकि बाहर से कोई भी पदार्थ सांगोपांग प्रत्यक्ष नहीं होता किन्तु एक देश प्रत्यक्ष होने से शेष में अनुमान किया जाता है ‡ कोई अभाव से भाव की उत्पत्ति मानते हैं। उनका कथन है कि जैसे बीज का मर्दन किये बिना अंकुर उत्पन्न नहीं होसका और बीज को फोड़ कर देखें तो अंकुर का अभाव होता है परन्तु पीछे से अंकुर निकल आता है, इसी प्रकार अभाव से भी भाव उत्पन्न हो जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि सब पदार्थ उत्पत्ति और विनाशवाले हैं, इस लिए सब अनित्य हैं। कोई कहते हैं कि संसार स्वयं पैदा होकर रहता है और स्वयं ही नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। कोई ऐसा भी मानते हैं कि इन निखिळ जात वस्तुओं का उत्पन्न करने वाला एक है किन्तु ये सारी की सारी उस से बेअखतियार उत्पन्न होती हैं। कोई ऐसा मानते हैं कि जगत् भी विनष्ट हो जाता है और ईश्वर भी अविनाशी नहीं * ।

कोई कहते हैं कि 'अहं' के बिना और सब पदार्थ परिणामी हैं। 'अहं' से ही सब कुछ उत्पन्न

* माध्यमिक बौद्धों का ये सिद्धान्त है।

† वैभाषिक बौद्धों का ये सिद्धान्त है।

‡ ये सौ त्रान्तिक बौद्धों का सिद्धान्त है।

* कांट दार्शनिक का ये मत है।

हुमा है। 'अहं' स्थिर है और सब अस्थिर † है।

जगद्विषयक इत्यादि काल्पनिक तरंगों में अनेकधा लोग गोते लगाते रहे, परन्तु जगद्विषयात् भगवान् श्री कृष्णचंद्रजी के (नास तां विद्यतेभावो ना भावो विद्यतेततः) इस युक्तियुक्त प्रमाण से और अन्य भी बहुतसे प्रमाणों से जगत् का अनादित्व स्वीकार करना पड़ता है और संसार का परिवर्तन भी मानना पड़ता है, अर्थात् कारण से कार्योत्पत्ति और कार्य नष्ट होने पर भी कारण की नित्यता को स्वीकार करना पूर्व पक्ष खंडन। ‡ जड़ पदार्थों में स्वयं परिवर्तन न होने के कारण नहीं यह माना जा सकता है कि संसार स्वयं उत्पन्न और नष्ट होता है और नाहीं कोई ऐसा उदाहरण है। कुंभ कार के चक्र तथा घुंजन आदि को चलता देख कर हमें चिंतित नहीं होना चाहिए। उनके अन्दर पहिले पहिले शक्ति उत्पन्न करने वाला चेतन उपस्थित है, जिसके निमित्त ये सारी क्रिया होती रहती है। और प्रकृति भी नित्य है। यह जो जात का उपादान कारण है। इस में निमित्त से परिवर्तन होना भी नियमित सिद्धान्त है। उस प्रवर्तक का भी पूर्ण अधिकार हुए बिना यत्र तत्र परिवर्तन न हो सकेगा, यदि वह सर्वत्र उपस्थित न हो। अतः परमात्मा का व्यापक भाव से सर्वत्र स्थित होना सिद्ध है। यही अनखिल प्रकृति में

† शीलेग दार्शनिक का ये सिद्धान्त है।

‡ लेख के बढ़जाने के भयसे सारे पूर्व पक्ष का खंडन न करके दो एक मंतव्यों का ही खंडन किया जाता है। स्थाली पुलाक न्याय से साग पूर्व पक्ष खंडित है क्योंकि अयुक्त है।

परिवर्तन करता है और संसार को नियमित चला कर व्यवस्था ठीक रखता है।

चतुर्थाध्याय ।

ईश्वर के अस्तित्व, जगत् कर्तृत्व तथा जगत् संबंध को मान चुकने पर उसके सदृश भी कोई है वा नहीं यह प्रश्न है जो स्वभावतः उठता है। जो भी पदार्थ हो उसमें न्यूनता सदृशता, अधिक्य इनमें से एक का होना आवश्यक है। प्रत्येक पदार्थ किसी अन्य पदार्थ से या न्यून होगा या उसके सदृश अथवा अधिक होगा। ईश्वर की अन्य सारे पदार्थों से, न्यूनता, सादृश्य आधिक्य इनमें से क्या संभावना हो सकती है इसका उत्तर जितना विचार पूर्ण है उतना महत्व का भी है, अर्थात् परमात्मा न किसी से न्यून है न किसी के बराबर बल्कि सब से उत्कृष्ट है।

‘न्योन्य वाद खंडन’ ।

न्यून होने के मुख्य तीन कारण हैं १ म, बल से न्यून होना, २ य ज्ञान से, ३ य अधिकार से न्यून होना। परमात्मा का बड़े २ श्रेणों को पछाड़ देने वाले योद्धाओं को क्षणभर में सब साज बाजों से पृथक् करके मृत्यु की गोद में शयन करा सर्वदा के लिये उन के उस घमंड को तोड़ देना और उन के कर्मानुसार नीच से नीच योनि में धकेल देना उसके बल वत्तर होने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। कोई कितना ही बली क्यों न हो ईश्वर के बल के आगे कुछ चलती नहीं बनती। प्रकृति जड़ होने से ज्ञान शून्य है। जीव भी अल्प ज्ञान वाला है, कृत कार्य को भूल जाता है यहां तक कि आठ दिन पूर्व भाक्षित पदार्थ को भी भूल जाता है। बिना

परिश्रम से ज्ञान की उपलब्धि भी इसे नहीं होती। उपलब्धि में भी बहुत प्रकार की त्रुटियाँ होती हैं। ईश्वर में यह बात नहीं है। उसका ज्ञान सत्य और निर्भ्रान्त है जिस से प्रत्येक जीव के जन्म जन्मान्तरों में किये हुये कर्मों को यथा काल फल देने में गंध मात्र भी त्रुटि नहीं होती।

अधिकार में, पुरुष निज परिश्रम से और बल से उन्नति करता है। जितना बल प्राप्त करेगा उतना अधिकारी होगा। एक राजा अपने सैन्य बल से उस देश को विजय करके अपने अधीन बना सकता है जिस देश का राजा सैन्यबल में उससे न्यून हो। उसमें भी एक पुरुष सारे राज्य को अधिकार में रखने के लिये पर्याप्त नहीं है। अधिकार उसी के विपर्ययसे छीना भी जा सकता है। पुरुषों के अधिकार सीमा ही होती है, अधिक से अधिक एक व्यक्ति (यद्यपि असंभव है) एक ब्रह्मांड पर अधिकार रख सकता है इस से अधिक नहीं। परन्तु परमात्मा का असंख्य ब्रह्मांडों पर अधिकार ही नहीं पूर्ण आधिपत्य है जो छिन नहीं सकता। अतः इन तीनों प्रकारों से ईश्वर किसी से न्यून नहीं अपितु सर्वोपरि है।

‘सदृशत्व वाद खंडन’

प्रत्येक परस्पर सदृश पदार्थ भी इन तीन मुख्य कारणों से समझा जाता है। १. काल से सदृश होना, २. स्वभाव से, ३. कर्म करने से सदृश होना। यदि कोई पदार्थ किसी अन्य पदार्थ से एकांशमें सदृश होतो वह सदृश नहीं कहलाता। वास्तव में सदृश वह है जो सर्वांश में तुलना रखता हो। यद्यपि संसार में कोई भी वस्तु एक दुसरे से सदृशता नहीं रखती तो भी सादृश्य कल्पना की जाती है। वास्तविक विचार तो ये है कि

सादृश्य कल्पना ही व्यर्थ है। दो गेहूँ के बीजों को एक काल में बो देना कभी नहीं हो सकता और उनका सादृश्य कथन करना उचित नहीं। बीजों के पतन के समय काल का सादृश्य नहीं रहेगा मुठ्ठी से बीजों के छूटने में कालान्तर होता है वैसा ही पतन काल में होगा। यदि कुछ काल के लिये मान लें कि मुठ्ठी से बीज एक ही काल में छूटे और एक ही काल में क्षेत्र में पड़े फिर भी उन व्यवस्था में वहाँ स्थानान्तर भेद अवश्य होगा। इत्यादि सब में है तो सिद्ध हुआ कि वास्तव में सदृश भावना व्यर्थ है परन्तु अधिकांशों में बराबरी देखकर हम लोग सदृशता का वर्णन करते हैं। इसी नीतिका अनुसरण करते हुये ईश्वर के सादृश्य वर्णन में यदि काल से सादृश्य मानें तो हो सकता है। जीव तथा प्रकृति का सादृश्य परमात्मा से है, क्योंकि जैसे अनादि काल से अनन्त काल तक परमात्मा है वैसे ही जीव और प्रकृति भी हैं। इस अंश में सहधर्मता है, आगे वैधर्म होने से सदृशता नहीं रहती। स्वभाव से प्रकृति जड़ है और ब्रह्म चेतन है। यदि च जीव भी चेतन है, परन्तु उसमें आनन्द नहीं। परमात्मा सच्चिदानन्द है इस लिये स्वभाव से सदृशता नहीं हो सकती। कर्म करने में प्रकृति असमर्थ है, जीव परिमित कर्म कर सकता है और कर्म करने में स्वतन्त्र है, फल भोगने में परतन्त्र है। ईश्वर न कर्म करता है न फल भोगता है, साक्षी रूप और अधिष्ठाता होने से जीव को कर्म फल भुगाता है और प्रकृति को नियम में रखता है। परमात्मा का इन दोनों से अन्यान्य कारणों से भी असादृश्य स्थापित होता है। इस लिये नाही ईश्वर किसी से न्यून

है न किसी के सदृश । जड़ता, अल्पज्ञता आदि निकृष्ट गुणों को छोड़कर शेष श्रेष्ठगुण जो किसीमें हैं वे परमात्मा में भी हैं । यथा प्रकृति सत् है, जीव सच्चित और ब्रह्म सच्चिदानन्द है । इन तीन प्रकारों से परमात्मा में सादृश्य नहीं हो सकता । न्यून वा सदृश होने से उसकी उत्कृष्टता स्वयं सिद्ध है । अनन्त शक्ति शाली परमात्मा सर्वाधार होने से सर्व वन्धा है ।”

नतस्य कार्य कारणं च विद्यते

नतत्समञ्चाभ्यधि कश्च दृश्यते ।

परास्य शक्ति विविधैव श्रयेत

स्वाभाविकी ज्ञान बल क्रिया च ॥

उपनिषदि ।

‘परमात्मा की प्राप्ति के साधन’

प्राप्ति उसकी होती है जो पूर्व प्राप्त न हो किन्तु परमेश्वर सर्व व्यापक होने से प्राप्त ही है पुनः प्राप्ति क्या ? ऐसा भी देखा जाता है कि वस्तु के पास होते हुवे भी ज्ञान नहीं होता, जैसे किसी ग्रामीण को घड़ी देकर पूछें कि समय क्या है ? वह घड़ी रक्ता हुआ भी नहीं बता सकता, जब तक कि उस को समय जानने के नियम न समझा दिये जावें । उसी प्रकार हमारी भी व्यवस्था है । परमात्मा के घर घर वाली होते हुवे भी हम उसे नहीं जान सकते । उसको जानने के वास्ते सर्व शास्त्रों में योग साधन ही उपाय कथन किया गया है, और उस योग सिद्धि को करने के लिये पतंजलि महाराज ने आठ अंग बतलाये हैं जो ये हैं:—

यमनियम, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधयोऽष्टा षड्गानि । यम (जो अहिंसादि पांच

प्रकार का है) नियम (जो शौचादि पांच प्रकार का है) आसन (ससुख शरीरादि की स्थिरता को स्थिर करना) प्राणायाम (वाह्याभ्यंतरा क्षपी आदि चार प्रकार का) प्रत्याहार (मन इंद्रियों को रोकना) धारणा (मन का चाञ्चल्य मिटा कर उसे नाभि-हृदय-मस्तक-नासिका-आदि में स्थिर कर ओङ्कारका जाप करना) ध्यान (सब से निवृत्त होकर अन्तर्यामी परमात्मा के आनन्द स्वरूप प्रकार में मग्न हो जाना) समाधि । ये आठ योगांग हैं । इनसे पुरुष को परमात्मा की प्राप्ति हो सकती है । इस में तो विवाद ही नहीं कि जो वस्तु प्राप्त हो जाय उससे उपयोग न लिया जा सके । बस जब परमात्मा की प्राप्ति हो गई तब समझो कि सर्व प्राप्ति होगई । ब्रह्म प्राप्ति होने पर कोई ऐसी वस्तु शेष नहीं रहती जिस के प्राप्त करने की जीवात्मा को इच्छा उत्पन्न हो । परमात्मा एक ही है (एक मेवा द्वितीयं) उसे प्राप्त करने पर दूसरी तीसरी भावनी कुछ भी नहीं रहती । अन्तर्यामी परमात्मा की प्राप्ति से जीव के अविद्यादि क्लेश रोग और सर्व प्रकार के विघ्नों का नाश हो जाता है जैसा कि सामान्य काष्ठ पर वज्र पात उसका नाश किये डालता है, (नरत्वं दुर्लभं लोके) इस दुर्लभ मनुष्य जन्म का जो वास्तविक उद्देश होता है पुरुष उसे पूरा करके असीम वा अखंड्य सुख मोक्ष को प्राप्त हो जाता है । यह है शास्त्रानुकूल ईश्वर प्राप्ति के साधन । इन के द्वारा ब्रह्म प्राप्ति करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य होना चाहिये” ।

नारी उपयोगी पृष्ठ

बच्चों की छोटी २ बीमारियाँ

और

उन का इलाज ।

(लेखक कप्तान एम० ए० कुरैशी, इण्डियन मेडिकल सर्विस)



आँखें आ जाना—इसका प्रायः कारण अस्वच्छता और मैल होती है । यदि बच्चे की आँखें साफ सुथरी रखी जाएं और नियम पूर्वक दिन में एक दो बार धो डाली जाएं तो कभी दुखनी नहीं आती ।

रसौन्त हमारे देश में बाहर लगाने के लिए बहुत प्रयुक्त होती है और बहुत अच्छी है । यदि पीड़ा बहुत सख्त हो तो इस में एक दो रत्ती अफीम मिलाकर लगाना चाहिए, आराम होगा । आँखों के अन्दर डालने के लिए सब से उत्तम वस्तु फटकड़ी है । एक छटांक पानी में पांच छः रत्ती फटकड़ी मिलाकर आँखों के अन्दर दिन में चार पांच बार डालना चाहिए । यदि पलकें बहुत सूजी हों विशेषतः सवेरे के समय, तो उन्हें गरम दूध से धोना चाहिए, इसके बाद फटकरी का पानी डालने से बहुत आराम होगा । यदि मैल बहुत निकलती हो तो नीलाथोथा कोई २ रत्ती एक छटांक पानी में मिलाकर डालो, या उसी तरह बाज़ार से ज़िंक लोशन बहुत मिलता है । यदि एक छटांक पानी में तिहाई छटांक चीनी (बहुत

साफ हो)मिला कर उस शरबत से दिन में प्रत्येक दो घण्टे के बाद आँखें धोई जायें तो न केवल आँखें बहुत जल्दी अच्छी हो जाती हैं बल्कि पीड़ा आदि से भी बहुत आराम होता है, यह विधि बहुत सरल और अत्युत्तम है ।

यदि पलकें चिपक जाती हों तो कस्टरायल (अरिण्डी का तेल) के एक दो दिन्दु सोने से पहले डालने चाहिये ।

२-ज्वर—मौसमी या मलेरिया ज्वर का हम वर्णन नहीं करते, बल्कि यहाँ उस ज्वर का ज़िक्र किया जाता है जो बच्चों को प्रायः थोड़ी सी बीमारी या कष्ट के कारण हो जाता है । इलेम (जुकाम) दान्त निकलने इत्यादि से हलका ज्वर हो जाता है, और विशेष करके कंठ से बच्चों में यह जरूर ही हो जाता है । ज्वर के चिन्ह ये हैं । बच्चा दूध नहीं पीता, या भोजन नहीं खाता, बेचैन रहता है, सोते समय बुड़बुड़ा उठता है, शरीर गरम और शुष्क (खुशक) प्रतीत होता है, विशेषतया शिर तो बहुत गरम लगता है, श्वास (सांस) जल्दी २ और नाड़ी बहुत ही शीघ्रता से चलती है ।

जब बालक को ज्वर हो तो सब से पहले उसे एक खुराक कस्टरायल (अरिण्डी का तेल) देना चाहिए । यदि अशान्ति हो तो गरम स्नान कराकर बिछौने पर ढंक कर सुला देना चाहिए । मामूली ज्वर तो केवल इसी से ही उतर जाते हैं । याद रहे कि जुलाव बड़ा आवश्यक है, और इस के लिए जरूरी है कि कोई नरम और हलका भोजन—जैसाकि केवल दूध ही दिया जाए । या प्यास अधिक हो तो दूध और थोड़ा सा सोंडाबाटर अथवा दूध और पानी मिलाकर दो । वर्ष के

छोटे २ टुकड़े चूसने से कभी २ प्यास बन्द हो जाती है। यदि बच्चा वमन (के) करता हो तो बर्फ विशेषता उसके लिए उपयोगी है। कई बार जो का पानी या अण्डे का पानी बहुत ठीक होगा। यदि ज्वर साधारणतः किसी भोजन के न पचने या कब्ज आदि के कारण हो तो इस रीति से शीघ्र उतर जाता है। परन्तु स्मरण रहे कि कई भयानक रोग ज्वर के बिगड़ने से ही उत्पन्न हो जाते हैं अतः सावधान रहना आवश्यक है कि यदि ज्वर थोड़ा भी बढ़ जाय तो डाक्टर को दिखा दें।

बच्चा को ज्वर थोड़ी २ सी बीमारी के कारण भी ज़ियाश हो जाता है। साधारण जुकाम या कब्ज से १०२ या १०३ दर्जे हो जाना कुछ अजब नहीं, और सख्त धूप में फिरने से शायद १०४ भी हो जाय। परन्तु यदि इस अवस्था में वह ज्वर दो तीन दिन तक लगातार प्रातः और सायं १०२ दर्जे या अधिक रहे तो भयानक रोग का चिन्ह है।

१-दान्त की पीड़ा—जिसे हमारे यहां दान्त को कीड़ा लग जाना कहते हैं वह प्रायः दान्त खराब होजाने के कारण होता है। बहुधा दान्त खराब हो जाने का कारण अस्वच्छता अर्थात् दान्त साफ न करना या अपव (बद हजमी) होती है जिस के कारण लहू के बिगड़ जाने से दान्त भी खराब हो जाते हैं। बच्चों को दान्त साफ रखने का प्रति दिन उपदेश करना चाहिए। इसके लिए या तो कोई पाऊंडर बाज़ार से मोल ले सकते हैं या मामूली पिसा हुआ लकड़ी का कोयला और उस में थोड़ा सा नमक मिलाकर ठीक होगा। कोयले के अधिक प्रयोग से मसूदे काले हो जाते हैं नहीं तो यह अति उत्तम मंजन है।

दान्त की पीड़ा के लिए यदि पीड़ा के स्थान पर कत्था मला जाय तो आराम होगा। नहीं तो बाहर राई की पोल्टस बांधो। अफीम से यद्यपि बड़े लोगों को आराम हो जाता है परन्तु बच्चे को कभी न देनी चाहिए। सब से उत्तम और आराम देने की विधि यही है कि दान्त निकलवा दिया जाय।

४-मूत्र निकल जाना—वैसे तो बच्चा एक वर्ष की आयु में मल और मूत्र त्याग करने की हाजत बता सकेगा परन्तु कई नारोग बच्चे दो वर्ष की आयु तक भी बिछौने पर मूत्र कर देते हैं। यदि तीन वर्ष की आयु तक यही दशा रहे और बच्चे का दिन को और रात को कपड़ों और बिछौने पर मूत्र निकल जाय तो उसका इलाज करना चाहिए।

भारी रोगों के अतिरिक्त इस बीमारी के साधारण कारण ये हैं—मूत्र की इन्द्रिय का धोकर साफ न रखना, पेट में कीड़े, शरीर की निर्बलता। कई बच्चे स्वभाव से ही आप कपड़ों में मूत्र कर देते हैं, और कई लोग बड़े होकर भी इस रोग में ग्रस्त रहते हैं।

इसका इलाज निम्नलिखित बातों को लक्ष्य में रखकर करना चाहिए—मूत्र की इन्द्रिय को साफ रखने से ही कई बच्चों का यह रोग दूर हो जाता है। दूसरे यह भी देखा गया है कि बच्चे को रात के समय या सायंकाल भोजन पर यदि पानी न पीने दिया जाय तो रात को उसका मूत्र नहीं निकलता।

हमारे अपने अनुभव की बात है कि एक १७ वर्ष की आयु का लड़का इस रोग में ग्रस्त था। बहुत चिकित्सा उपचार किया कुछ आराम न

हुआ। जब हमारे पास आया तो उसको हम ने सायंकाल भोजन के साथ पानी न पीने का इलाज बतलाया। एक सप्ताह उसने इस के अनुसार आचरण किया, और इस सारे सप्ताह में इसको आराम रहा। यदि इन साधारण इलाजों से बच्चा अच्छा न हो तो डाक्टर से परामर्श करके इलाज करना चाहिए, क्योंकि सम्भव हो सकता है कि मूत्राशय (मूत्राशय) में पथरी हो और उसका इलाज बहुत शीघ्र होना चाहिए।

जो बच्चे स्वभावतः मूत्र कर देते हैं उनको दण्ड देना या मारना पीटना व्यर्थ है। परन्तु यदि इसके स्थान में कुछ पारितोषिक का लालच दिया जाए तो अच्छा होगा। यदि पेट में कीड़े हों तो उनका इलाज करना चाहिए।

५. कवज—जो बच्चे मां का दूध पीते हैं उनमें प्रायः कवज के होजाने का यह कारण होता है कि दूध में घी के अंश अर्थात् मलाई कम होती है। इसलिए माता के लिए उचित है कि अपने भोजन में अच्छा दूध मलाई आदि बढ़ादे। यदि दिन में बच्चे को बाजारी दूध दिया जाता हो तो उसमें थोड़ी मलाई अधिक डालनी चाहिए।

दूध चूसने वाले बालकों—को समय पर मल त्याग करने का स्वभाव डालना चाहिए। यदि स्वभाव करादिया जाएगा तो समय पर स्वयमेव मल (पाखाना) त्याग देंगे। याद रहे बच्चे को दवाइयों पर डालकर मल त्यागने का स्वभाव नहीं डालना चाहिए, अन्यथा फिर सदैव उसके अन्दर विकार ही रहेगा।

यदि बच्चे को सदैव कवज रहती हो तो पहले यह देखना होगा कि दूध में तो कुछ विकार

नहीं, अतः दूध का ठीक करना आवश्यक है। विशेषतः उन बच्चों में कवज अधिक रहती है जो बाजारी दूध पर चलते हैं या जिन्हें माता के दूध के अनिश्चित अधिकतर बाजारी दूध ही दिया जाता है। दूध में पानी के स्थान में यदि जोका पानी डाला जाए तो कवज दूर होजायगी।

कभी २ जुलाब की औषधि देना लाभदायक है परन्तु जब बच्चे को सदैव कवज रहे तो इन का सेवन नहीं करना चाहिए, क्योंकि इनसे यह हो जाता है कि एक बार तो पाखाना होगया परन्तु फिर कवज हो गई। अतः चाहिए कि पेसा इलाज किया जाए कि जिस से बिना औषधि के ही लाभ हो। जहां तक होसके पहले और विधियां बरतनी चाहिए, और यदि उन से फायदा न हो तो फिर औषधि का प्रयोग कर सकते हैं।

साधारण कवज के लिए पेट पर मालिश करना अत्युत्तम विधि है। यदि इस से फायदा न हो तो बच्चे के पिचकारी (अनीमा) करनी चाहिए।

यदि इन विधियों से कवज अच्छी न हो तो डाक्टर को दिखाकर इलाज कराओ। सम्भव है कोई सख्त बीमारी हो।

बड़े बच्चों में—कवज का रोग प्रायः भोजन के कारण होता है। यदि भोजन शुष्क हो या घी कम हो तो कवज अवश्य ही होजाया करती है। भोजन में हरी भाजियां, ताज़ा फल, घी, मलाई आदि के कम होने के कारण भी यही दशा होती है। अतः कवज को दूर करने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रहे।

याद रहे कि हलकी कवज दूर करने के लिए

ताज़ा फलों से बढ़कर कोई उत्तम औषधि नहीं । इसके लिए ताज़ा संगतरा (विशेषतः इसका निबोड़ा हुआ रस) सेब, अंजीर, अंगूर आदि सब अत्युत्तम हैं (केले से कबज़ हो जाया करती है) ।

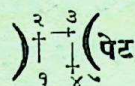
फिर पेसी चीज़ें जैसाकि ताज़ा निम्बू निबोड़ कर गरम पानी और चीनी मिला कर यदि भोजन से एक घण्टा पहले पिलाया जाए तो स्वादिष्ट होने के अतिरिक्त कबज़ को भी दूर करता है । इसी प्रकार यदि प्रातः उठते ही बच्चे को एक प्याला भर ठण्डा पानी खाली पेट प्रतिदिन पला दिया जाए तो कबज़ के लिए अत्युत्तम है । इस से पाखाना प्रतिदिन अच्छी तरह होजाया करेगा । खाना खाने के बाद शहद का एक छोटा चमचा दिन में एक दो बार खिलाना भी बहुत अच्छा है ।

ये सब विधियां कबज़ दूर करने के लिए बहुत अच्छी हैं और दवाई खाने से पहले इन्हीं को बरतना चाहिए ।

पेट पर मालिश करना भी कब्ज को दूर करता है । मीठा तैल (कास्टरायल हो तो अधिक अच्छा है) हाथ पर लगाकर यदि सायकाल पेट पर हलकी हलकी मालिश करदी जाए तो कब्ज को दूर करती है । इसके लिए मालिश पेट की दाईं ओर से शुरू करके बाईं ओर को करनी चाहिए । चित्र में हमदिखाते हैं कि मालिश किस प्रकार हो । मालिश कोई दस मिनट या कुछ कम तक होनी चाहिए, परन्तु जिस प्रकार चित्र में दिखाया गया है उसी प्रकार हो । और पिचकारी करो ।

यदि ये सब विधियां लाभदायक न हों तो कस्टरायल या कोई और औषधि देनी पड़ेगी,

परन्तु याद रहे कि यदि दवाई के बिना कब्ज दूर हो सके तो बहुत अच्छा होगा ।



१ से २ तक ऊपर को भलों, २ से ३ तक बाईं तरफ को और फिर ३ से ४ तक नीचे की ओर ।

६. पाखाना वाली जगह का बाहर निकल आना।

इस के कारण प्रायः ये होते हैं—(१) कब्ज के कारण ज़ोर लगाने से जगह बाहर निकल आती है । (२) यदि औषधियां अर्थात् जुलाब (विरेचन) बहुत दिए जाएं तब भी यही होता है । (३) अतिसार (दस्त) लग जाने से (४) जिस बच्चे के पाखाने में कीड़े निकलते हों उस में भी यही होता है । (५) कई बार मूत्र बहुत मुश्किल और ज़ोर लगाने से निकलता है उससे पाखाना वाली जगह भी बाहर निकल आती है ।

बिकित्सा—यदि पेसा ही कोई कारण हो तो उसके लिये बच्चे को बिठौने पर लिटाकर और उंगली को वैज्ञेलीन या घी लगाकर सहज सहज से अन्दर करना चाहिए । यदि बहुत जलन हो और जगह बहुत सूज गई हो तो ठण्डे पानी से कुछ टकोर करनी चाहिए, और फिर उस को अन्दर करना चाहिए । यदि प्रतिदिन यही हाल हो या प्रत्येक पाखाना करने के बाद निकल आया करे तो बच्चे को कुछ दिन उठने नहीं देना चाहिए । पाखाने के लिए भी न उठे और उस जगह कपड़ा रखकर ज़ोर से बांध देना चाहिए । इस अन्तर में किसी बरतन या टब में तीन या चार इंच गहुरा पानी डाल और उस

में कोई मुट्ठी भर नमक मिला बच्चे को एक दो मिन्ट तक प्रतिदिन उस में बिठाना चाहिए। इस विधि से फिर न उतरेगी। हां यदि इसका कारण कोई और रोग हो यथा पेट में कीड़े, तो उसका इलाज आवश्यक है।

७. शिर में जूं-इसके लिए सब से उत्तम विधि यह है कि शिर पर मिट्टी का तेल खूब अच्छी तरह मल दिया जाए। एक दो बार के लगाने से सब मर जाएंगी। मिट्टी का तेल शिर को या केशों को कुछ हानि नहीं पहुंचाता बल्कि कई लोगों की सम्मति है कि इस से शिर के बाल लम्बे होते हैं।

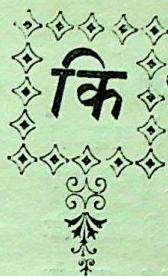
यदि यह ठीक न हो या इस से फायदा न हो तो कारबालिक एसिड एक भाग २० भाग मीठे तेल में मिलाकर शिर पर लगाओ। एक दो बार के लगाने से बहुत फायदा होगा।

८. कान में पीड़ा—इसके लिए रत्ती भर अफीम को थोड़े से मीठे तेल में मिलाकर कान में एक दो बिन्दु डालकर ऊपर से थोड़ी सी रूई रखदो। (परन्तु रूई को ज़ियादा अन्दर न करो) इस से आराम आजायगा। कान के नीचे गर्दन पर गरम पानी की टफोर भी अच्छी होती है। यदि कान से पीप बहती हो तो इसका इलाज आप स्वयम् कभी न करो, अन्यथा सम्भव है कि बच्चे के कान का परदा फट जाए या और कुछ खराबी हो जाए। डाक्टर से इलाज कराओ।

चंचला ।

एक सच्चा उपन्यास

(लेखक-म० कृष्ण अमृतसरी आर्योंपदेशक)



कि

सी नगर में दो कन्याओं ने विद्या पढ़ना आरम्भ किया। एक का नाम सुशीला और दूसरी का नाम चंचला था। चंचला का पिता शुद्धाचारी न था, परन्तु सुशीला की माता वा पिता शुद्धाचारी और धर्मात्मा थे। सदा धर्म की बातें, परमेश्वर के भजन, सन्या, अग्निहोत्रादि किया करते थे। एक दिन चंचला और सुशीला पाठशाला से पढ़कर गृह को लौटतीं तो मार्ग में चंचला कहने लगी—“सुशीला बहन ! तुम्हारा विवाह कब होगा” ? ।

सुशीला—“चुप रहो चंचला, तुम बड़ी मूर्खा हो, ऐसी बात ब्रह्मचारिणियों को तो कभी सुननी भी नहीं चाहिये। हम ने तो अभी विद्या पढ़नी है। यह समय विद्या पढ़ने का है न कि कोई और काम करने का। ऐसी बात कभी मेरे साथ मत करना” ।

चंचला—अच्छा तो तुम मेरी सहेली नहीं हो ?

सुशीला—मैं ऐसी कन्या को सहेली क्या बुलाना भी नहीं चाहती।

चंचला—बहिन, विवाह करना क्या बुरी बात है ?

सुशीला—बुरी बात भी है, अच्छी बात भी है।

❦ चंचला—का वर्तमान नाम सरस्वती देवी है। उसने अब अपना नाम प्रकाशित करने की आज्ञा दे दी है—लेखक ।

चंचला-बहिन, यह मुझे कृपया समझाइए कि जो वस्तु अच्छी होती है वही तुरी कैसे हो सकती है ।

सुशीला-देखो चंचला मार्ग में बातें करना योग्य नहीं, कल रविवार पाठशाला में लुट्टी है मेरे गृह में आना फिर सब बातें बताऊंगी ।

चंचला बहुत अच्छा कहकर अपने गृह को चली गई और अपनी माता से जाकर पूछने लगी कि तुम तो सदैव मुझसे यह कहती हो कि तुम्हारा विवाह करेंगे; तुम्हें भूषण डालेंगे; तुम्हारे सुसराल वाले बड़े धनाढ्य हैं वे तुम्हें सोने से पीली कर देंगे। सो मैं ने आज अपनी सहपाठिनी से सुना है कि ब्रह्मचारिणियों को विवाह की बात सुननी भी दोष है ।

चंचला की माता-“सुन बेटी! अब हमने तुम्हारा विवाह नियत कर दिया है। यही समय तुम्हारे खाने पहिनने का है। और दश वर्ष के अन्दर ही कन्या का विवाह करने से पुण्य होता है” ।

चंचला रात भर विचारती रही। उसका चित्त में यही ख्याल रहा कि कब दिन चढ़े और मैं सुशीला से मिलूं ।

अभी ब्रह्म महर्षि के समय तारे टिमटिमा रहे हैं। ठंडा २ समीर मन्द मन्द बह रहा है। आकाश निर्मल है, वृत्तों में पक्षी भी अपनी मधुर वाणी से सब को आनन्दित कर रहे हैं। ऐसे समय में चंचला की आंख खुल गई। फिर क्या था क्षण उसी समय स्नानादि कर सुशीला के गृह में पहुंची। देखती क्या है कि वेद मंत्रों की ध्वनि से भवन गूंज रहा है ।

चंचला-बहिनजी, नमस्ते !

सुशीला-आहा! बड़ा अच्छा हुआ, चंचला । सुशीला ने चंचला को आसन देकर अपने साथ बैठा लिया। सुशीला के माता पिता सर्व कुटुम्ब सहित अग्निहोत्र कर रहे थे। जब अग्नि होत्र समाप्त हुआ तो सुशीला के पिता ने कुटुम्ब सहित स्वाध्याय किया और धर्मोपदेश भी किया। चंचला यह घटना देखकर अति प्रसन्न हुई। उठ कर गृह को देखती है तो हर एक वस्तु अपने २ स्थान पर धरी हैं। दीवारों के साथ कई धर्मात्मों, ऋषियों, वादेवियों के चित्र लटकर रहे हैं। कहीं गायत्री आदि वेद मंत्र लिखे हुए हैं। कहीं धर्म सम्बन्धी श्लोक लिखे हैं। कहीं ब्रह्मचर्य की महिमा का उपदेश लिखा हुआ है ।

चंचला-(चकित हो कर) बहिनजी, आपका गृह तो स्वर्ग धाम है। आप के माता पिता ऐसे विद्वान हैं इसी लिए आप बुद्धिमती हो। आप कृपया मुझे कल वाली बात सुनाइये ।

सुशीला-बहिन, यद्यपि मैं जानती हूं कि बड़ी आयु में विवाह करना ही धर्म है और मैंने पढ़ा भी है और माता पिता से उपदेश भी सुनती रहती हूं परन्तु मैं चाहती हूं कि मेरी माता जी से तुम यह शिक्षा ग्रहण करो क्योंकि उनके पास होते हैं आपको शिक्षा देती कुछ शांभा नहीं पाती ।

चंचला-तो बहिन जी, आप ही माता जी से कह दीजिये ।

सुशीला-माताजी! आप ब्रह्मचर्य के विषय में जो उपदेश मुझे किया करती हैं वह आज इनको भी कीजिये ।

सुशीला की माता-देखो पुत्री, चंचला ! इस विषय में उपदेश तो बहुत लंबा है परन्तु

संक्षेप से मैं दो तीन बातें सुनाती हूँ, सो इसी से सब कुछ समझ लेना।

जब कच्चा बीज भूमि में बोया जाय तो वह उगता नहीं, यदि उग भी पड़े तो सड़ जाता है। यदि बीज पक्का हो परन्तु भूमि का ऋतु समय न हो तो भी बीज नष्ट हो जाता है। जैसे गेहूं के समय में मक्की, मक्की के समय में गेहूं बोई जाय तो फल नष्ट हो जाता है इसी प्रकार परमात्मा की सृष्टि में सब वस्तुओं को देखो। सूर्य का उदय अस्त होना, चन्द्रमा का घटना बढ़ना, समुद्र में उवार भाटा आना, अन्न, फल आदि पदार्थ का पकना, ऋतुओं का बदलना ये सब नियत समय पर ही होते हैं। जो वस्तुयें परमात्मा के आधीन हैं वे नियत समय पर होती हैं, अतः जो वस्तुयें मनुष्य के आधीन हैं सो वे भी नियत समय पर ही करनी चाहियें। जो मनुष्य नियत समय रूपी ईश्वरीय सृष्टि नियम को तोड़ता है वह पाप करता है और दुःख उठाना है। इसी प्रकार जो छोटी आयु में ब्रह्मचर्य और विद्या पढ़ने के समय विवाह कराता है वह बल बुद्धि का नाश कर बैठता है। फिर सारी आयु भर पलुताता है, परन्तु समय हाथ नहीं आता। देखो! जब कच्चा फल तोड़ा जावे तो फिर उगता नहीं है, पक्का उगता है। इसी प्रकार न्यून से न्यून १६ वर्ष कन्या और २५ वर्ष पुरुष का विवाह समय है। यह समय विद्या पढ़ने का है। जो माता पिता अपनी सन्तान को विद्याहीन रखते हैं वे सन्तान के शत्रु हैं, जैसा कि कहा है—

माता शत्रु पिता वैरी येन बालो न पाठिता
न शोभ्यते सभा मध्ये हंस मध्ये बको यथा

अर्थ—वे माता शत्रु पिता वैरी हैं जिन्हों

ने अपनी सन्तान को नहीं पढ़ाया, क्योंकि वह सन्तान विद्वानों की सभा में फिर मुख रहकर शोभा नहीं पाती जैसा कि हंसों की सभा में बगुला।

परन्तु यह स्मरण रहे कि विद्या पढ़ना इसे नहीं कहते कि आर्य भाषा के कुछ अक्षर पढ़ कर किसी कहानियों में प्रवृत्त हो गए। सत्य असत्य का निर्णय करके सत्यानुसार आचरण करना, वेद शास्त्रों का पठन पाठन करते रहना, अपने जीवन को सुधारकर प्राचीन देवियों वा ऋषि कन्याओं की प्रणाली पर सब कर्तव्यों का पालन करना, सोलह संस्कार और पंच महायज्ञ करते रहना—यही विद्यावती के चिन्ह हैं। देखो, चंचला! विद्या एक शक्ति है। जैसे अग्नि में जलाने की शक्ति है परन्तु उसी अग्नि से बुद्धिमान लोग कई काम लेते हैं, उसी अग्नि से भोजन पकाया जाता है, अनेक प्रकार की मिठाइयां स्वादिष्ट बन सकती हैं। उसी अग्नि से लैम्पो वा दिव्यों में प्रकाश अंधेरी रात्रि में होता है। उसी अग्नि से कई तरह के कला कौशल मैशाने चलते हैं। उसी अग्नि को इञ्जन में डालने से रेल गाड़ी को चलाकर बुद्धिमानों ने सारी दुनियां को लाभ पहुंचाया है, इत्यादि। अर्थात् कई प्रकार के कामों में या यूँ कहिये कि बुद्धिमान लोग इससे कई प्रकार के काम लेते हैं परन्तु मुख लोग इसी अग्नि में द्राघ जला लेते हैं। कई स्त्रियां तंदूरों में रांटी लगाते समय जलती देखी वा सुनी है। कई मुख इसी अग्नि से घरों को जला लेते हैं। बाहर लगे हुए गेहूं के खलवाड़ों को पापी लोग इसी अग्नि से जला देते हैं। देखिए इस जल को पीकर वा उपयोग में लाकर शास्त्र

होती है, परन्तु इसी जल में डूब कर मर भी जाते हैं। इसी प्रकार सृष्टि क्रम के अनुकूल प्रत्येक पदार्थ की शक्ति को ठीक प्रयोग में लाना बुद्धिमानों का काम है, और इस के उल्टे सेवन करना मूर्खों का काम है। इसी प्रकार विद्या एक शक्ति है। इसी विद्या को पढ़ कर स्त्री पुरुष स्त्री धर्मात्मा बन जाते और संसार का उपकार करते हैं। इसी विद्या को लेकर मूर्ख लोग सत्य असत्य को न जानकर धर्म को छोड़ कर दूसरों की हानि करते और अपस्वार्थ में लग जाते हैं। बहुतसी कन्यायें ऐसी देखी हैं कि जो नाम मात्र विद्या पढ़कर सत्य असत्य को न विचारती हुई विद्या के नाम को कलंकित करती हैं। अपने गृह में सब से बढ़कर लड़ती, झूठ बोलती, और छल कपट से सब को कष्ट देना ही अपनी विद्या की खूबी समझती हैं। ऐसी पाठितों से तो अनपढ़ सुशोला देवियां ही अच्छी हैं जो किसी को कष्ट नहीं देती, प्रिय शब्द बोलती, बड़ों की सेवा करती और पातिव्रतधर्म का पालन करती हैं। देखो चंचला, एक नगर में दो पुरुष अपने युवाकाल में पड़े बलवान थे। एक कहता था कि मैं बड़ा और दूसरा कहता था कि मैं बड़ा हूँ, अर्थात् अपने २ शारीरिक बल को दोनों बड़ा समझते थे। उनमें से एक सिक्ख था दूसरा लाला था। उस सिक्ख ने द्वेष में आकर अपने संगे भाई की गर्दन पर कुल्हाड़ा मारा। भाई मूर्छित हो गया और वह अपनी शक्ति दिखा कर भाग गया। दो तीन धर्मात्मा पुरुष शक्ति रखने वाले उसके पाँछे दाड़े। तीन कोस जान पर उसको पकड़ लिया और उसे पोलोस में भेज दिया। इस पर उसे सात वर्ष का कारागार मिला और उसका भाई जिस

के कुल्हाड़ा लगा था उमास के बाद राजी होगया।

दूसरा जो लाला था उस की शक्ति की अब बात सुनो। एक दिन बहुत स्त्रियाँ एक कुँप पर स्नान कर रही थीं। उन स्त्रियों में से एक स्त्री कुँप में गिर गई। उस लाला ने सोचा कि यदि इस स्त्री को मैं न बचाऊँ तो मेरी जवानी पर धिक्कार है। लाला की दुकान उस कुँप के सामने थी। उस की दुकान पर सैंकड़ों रुपये और भूषण पड़े हुए थे। अपने माल को वहीं छोड़कर परोपकार के लिये बड़ी शीघ्रता से उसने कुँप में छलांग मार दी। उस स्त्री को अभी एक दो ही गोते आप थे कि उसने झट पट उसे अपने हाथों पर उठा लिया। अब वह स्त्री लज्जा से कहने लगी कि मैं नग्न हूँ, मुझे लज्जा आ रही है, परन्तु मैं आप का धन्यवाद करती हूँ कि आपने मेरी जान बचा ली। लाला ने उत्तर दिया क्या भाई भगिनियों को कष्ट के समय नहीं उठा सकते। तू मेरी भगिनी है। आप नग्न भी नहीं हो क्योंकि जल में आप का शरीर है। उस वीर पुरुष ने जबतक उसके निकालने का प्रबन्ध न होगया दोनों भुजाओं से उसे पकड़ कर आप दीवार का सहारा लेता हुआ खड़ा रहा और उसके शरीर के साथ अपना शरीर छूने नहीं दिया। जब पुरुष इकट्ठे हुए तब उन्होंने ने रस्सियों द्वारा टोकरी बांधी और स्त्री को कपड़ों में लपेट कर बाहिर निकाला गया। अतः हे चंचला! देख, शक्ति तो दानों में थी परन्तु सिक्ख ने कुछ काम में अपनी शक्ति खर्च की और भाई को मारा परन्तु उस लाला ने श्रेष्ठ काम में खर्च की और उस स्त्री को जान से बचाया। इसी प्रकार विद्या की शक्ति होती है। विद्वान स्त्री पुरुष उत्तम से उत्तम काम भी कर सकते हैं और नीच काम

भी। परन्तु जो नीच काम करता है वह विद्या को कलंकित करता है। कहने को तो बहुत सी बातें हैं परन्तु यह संक्षेप से विद्या का उपदेश है, अब विवाह का उपदेश करती हूँ सो सुनो कि किस समय विवाह होना चाहिये।
देखा सुश्रुतकार परम वैद्य का प्रमाण है।

पंच विंशततो वर्षे—

पुमान्नारी तु षोडशे।

सप्तत्वा गत त्रीयौ तौ—

जातीयात् कुशलौ भिषक्॥१॥

ऊन षोडश वर्षाया—

मप्राप्तः पंच विंशशतिम्।

यद्याधत्ते पुमान् गर्भ—

कुक्षिस्थाः स विपद्यते ॥ २ ॥

जातो वा न चिरंजीवे—

उजीवेद्वा दुर्वलेन्द्रियः।

तस्मा दत्यन्त बालायां—

गर्भाधानं न कारयेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—कम से कम सोलह वर्ष कन्या और पच्चीस वर्ष के पुरुष का गर्भाधान का समय है क्योंकि जितना सामर्थ्य पच्चीसवें वर्ष में पुरुष के शरीर में होता है उतना ही सामर्थ्य १६ सोलह वर्ष में कन्या के शरीर में हो जाता है। इसलिये वैद्य लोग पूर्वोक्त अवस्था में दोनों को समवीर्य्य अर्थात् तुल्य वाले जानें॥१॥

सोलह वर्ष से न्यून अवस्था की स्त्री में पच्चीसवर्ष से कम अवस्था का पुरुष यदि गर्भाधान करता है तो वह गर्भ उदर में ही बिगड़ जाता है॥२॥

और जो उत्पन्न होवे भी तो अधिक नहीं जीवे अथवा कदाचित् जीवे भी तो उसका शरीर और इन्द्रिये अत्यन्त दुर्बल हों। इस लिये अत्यन्त बाला अर्थात् सोलह वर्ष की अवस्था से कम अवस्था की स्त्री में कभी गर्भाधान नहीं करना चाहिये ॥३॥

देखो यूरुप आदि देशों में जो बड़ी आयु में विवाह करते हैं उन का बल बुद्धि तेज पराक्रम बढ़ रहा है। हमारे भारत में भी जब बड़ी आयु में विवाह होते थे तो रामचन्द्र लक्ष्मण भीष्मपितामह, कृष्ण, युधिष्ठिर, अर्जुन आदि धर्मात्मा और ऋषि मुनि योधा पैदा होते थे। सब देशों में इसी का मान होता था। जबसे छोटी आयु में विवाह होने की प्रणाली चली है तब से ही इस देश की बुद्धि तेज पराक्रम नाश होगया और आपस की लड़ाई अपसर्गार्थ में लग कर नाट हो रहे हैं। सो हे चंचला ! मैंने जो ईश्वर के और सृष्टि क्रम सुनाये थे वैसे ही विवाह का भी सृष्टि क्रम से यही नियत समय है। जो ईश्वर की आज्ञा नहीं मानता वह दुःख उठाता है।

चंचला—माता जी, अब मैं समझ गई मैं यत्न करूंगी और अपनी माता को समझाऊंगी कि मुझे सत्य विद्या ग्रहण करने की आज्ञा दे, और कुसमय में विवाह न करे। चंचला आज्ञा लेकर अपने गृह को चली आई।
(अपूर्ण)



विविध विषय ।

बांस के गेहूं ।

श्री सम्पादक जी 'उषा' लाहौर ।

सेवा में कुछ गेहूं के दाने भेजता हूं। यह गेहूं बांस (Bamboo) से पैदा होते हैं। देखने में कोई मनुष्य यह सन्देह नहीं कर सकता कि ये असली गेहूं के दाने नहीं हैं। ये गेहूं की तरह मोटे नहीं होते परन्तु पतले होते हैं और गरीब लोग इस की रोटी बना कर खाया करते हैं। स्वाद भी असली गेहूं का सा होता है। कहा जाता है कि जब महिगी व अकाल समय होता है तब बांस से इस प्रकार के गेहूं पैदा होते हैं और दीन प्रजा के कष्ट निवारण में कुछ सहायता मिल जाती है। और एक विचित्रता यह भी कही जाती है कि बांस में गेहूं एक बार ही पैदा होता है और फसल देकर सूख जाता है। इस बांस के गेहूं का विशेष हाल यदि जंगल महकमा से सम्बन्ध रखने वाले कभी कोई महाशयलियें तो विशेष हाल मालूम हो सकता है। मैं नमूने के तौर पर इस की बाल (ears) भी भेजता हूं। बहुत कम लोगों को इस गेहूं का हाल मालूम है। इस कारण सेवा में यह नोट भेजता हूं। बाल में फूल भी लगा है।

दिलीपसिंह, होशंगाबाद सी० पी० ।

(पौधों की एक ऐसी जाति है जो अपने जीवन काल में केवल एक बार ही अपनी बीज पैदा करने की शक्ति को खर्च कर देती हैं। इन्हें अंग्रेजी में Agave Monocarpic plants अगेव

मानोकार्पिक पौधे कहते हैं। इन में से कई Century plants सैचरी पौधे होते हैं जोकि एक शताब्दि में जाकर बीज देते हैं। कई १० वर्ष पीछे, कई ४० वर्ष पीछे बीज देते हैं इत्यादि। यदि आप गत एक दो शताब्दियों के दुर्मिक्षों पर दृष्टि पात करेंगे तो आपको उन सब के अन्दर एक प्रकार का कालक्रम दीख पड़ेगा अर्थात् यदि वे एक शताब्दि में १७,३०,४०,५६ सम्बर्तों में हुए हैं तो दूसरी शताब्दि में भी उन के अन्दर ऐसा ही क्रम होगा। यह सम्भव हो सकता है कि जल वायु की जो अवस्थाएं दुर्मिक्ष के कारण उत्पन्न हो जाती हैं वही इन में बीज लाने के लिए भी सहायक हों, जिस से दोनों घटनाओं का एक ही समय में हो जाना असम्भव नहीं। परन्तु यहां एक बात का पता लगाना मनोरञ्जन से खाली न होना कि क्या बांस के छोटे बड़े सभी पौधे एक ही समय या दुर्मिक्ष में बीज देते हैं या केवल विशेष आयु के ही। उषा के ग्राहक मण्डल में कई सज्जन जंगलात विभाग में अधिकारी हैं, आशा है वे इस विषय पर प्रकाश डालने का यत्न करेंगे।

सम्पादक) ।

२. वेद और अक्षर विज्ञान ।

आजकल हमारे देश में एक विचित्र विचार प्रवाह चल रहा है। प्राचीन भारत के गौरव को तुच्छ दिखलाना और उस जातीय गौरव पर अभिमान करने वालों पर खिली उड़ाना ही पाण्डित्य और नवीन सभ्यता का चिन्ह समझा जा रहा है। बड़े २ ब्राह्मण विकासवाद आदि पाश्चात्य शूरियों को लेकर अपनी भाषा में लिख देने में ही अभिमान मान रहे हैं। आधुनिक विज्ञान

का लक्षण ही यह होगा है कि जो वेदों को अर्द्ध सभ्य लोगों की चुलबुलाहट और विकासवाद आदि नवीन सिद्धान्तों को निर्भ्रान्त माने वही पण्डित और विद्वान है। वेदों को ईश्वरीय ज्ञान मानना अविद्या अन्धकार का चिन्ह है। वर्तमान समय में जो पशु पक्षी, और वनस्पति दृष्टिगोचर होते हैं बहुत प्राचीन काल में इनके पुरुषाओं का आकार प्रकार और रंग रूप इनके सदृश न था, अपने आदि पुरुषाओं से अवस्थाओं के परिवर्तन के अनुसार इनका रूपान्तर होता आया है—और एक से अनेक रूप हो गए हैं—यही विकासवाद का सारांश है। परन्तु इतने पर ही सन्तुष्ट न होकर आज कल के विद्वान यह कहने लगे हैं कि प्राचीन काल में लोग मूर्ख और असभ्य थे, उन्हें किसी प्रकार का भी ज्ञान न था; उन्होंने ने आवश्यकताओं के अनुसार क्रमशः स्वयम् उन्नति की है; पहले लोग लिखना नहीं जानते थे, अक्षर विज्ञान बहुत पीछे जाकर बना। इन विद्वानों का कथन भौतिक जगत के विषय में चाहे ठीक हो परन्तु मानसिक जगत में वह एक पल भी नहीं ठहर सकता। वेद संसार का सब से प्राचीन पुस्तक है, इस से अधिक पुरातन कोई दूसरा आज तक ज्ञात नहीं हुआ। सो वेदों के समय में कम से कम लोग लिखना जानते थे। देखिए वेद कहता है:—

उय त्वा सातये नरो विप्रासो यन्ति धीतिभिः

उपाक्षरा सहस्रिणी । ऋग्वेद मं० ७ । अ०

१ । सू० २५ । मंत्र ६ ॥

पदार्थ—विद्यार्थिनि। जैसे (विप्रासः) बुद्धिमान् (नरः) मनुष्य (धीतिभिः) अंगुलियों से

(अक्षरा) अकारादि अक्षरों को (उप, यन्ति) उपाय से प्राप्त करते वे जो कन्या (सहस्रिणी) असंख्य विद्या विषयों को जानने वाली हैं उसको जाने वैसे (त्वा) आपके (सातये) सम्यक विभाग के लिए बुद्धिमान मनुष्य (उप) समीप प्राप्त हो।

भावार्थ इस मंत्र का यह है कि जैसे अंगूठा और अंगुलियों से अक्षरों को जान कर विद्वान होता है वैसे ही विद्वान लोग शोधन कर विद्या के रहस्यों को प्राप्त हों। इस से यही सिद्ध हुआ कि गार्हपत्य विकासवादियों तथा उनके भारतीय शिष्यों का यह कथन कि पहले लोग लिखना नहीं जानते थे और कि अक्षर विज्ञान का विकास क्रमशः हुआ ठीक नहीं क्योंकि वैदिक काल में भी लोग लिखना जानते थे।

३—अंग्रेजी का उन्माद ।

कोई समय था कि जन साधारण, विशेषतः हमारे संस्कृत के पण्डित अंग्रेजी को म्लेच्छ भाषा कहते और उसका पढ़ना पाप समझते थे। परन्तु काल की गति बड़ी विचित्र है। आज वही पण्डित वर्ग उसके विपरीत चरम सीमा तक पहुँच गए हैं। आज वे ही बिना अंग्रेजी के बात नहीं करते। उन के निकट संस्कृत या आर्य भाषा की कोई पुस्तक प्रामाणिक नहीं हो सकती जब तक उस पर अंग्रेजी की छाप न हो। वह अपना कोई व्याख्यान प्रभावशाली नहीं समझते जब तक कि उस में दो चार शब्द या वाक्य टूटी फूटी अंग्रेजी के न बोल लें। अंग्रेजी के लिए यह उन्माद यहां तक बढ़ गया है कि वे स्वरचित आर्य भाषा की पुस्तकों का विज्ञापन भी अंग्रेजी में ही देने लग पड़े हैं।

हाल ही में सनातन धर्म सभा लाहौर के वार्षिकोत्सव पर एक विज्ञापन वितरित हुआ था जिस का कुछ अंश यहां उद्धृत करते हैं :—

ओश्मत्तत्सव ।

साङ्गोपाङ्गा विवाह पद्धति ।

The complete Vedic Marriage rites with important notes from the Shastras.

The above book was originally in Sanscrit and is offered to the Public with a commentary in Devnagri (Hindi) by well known Pandit Bhanu Datt, V. M., M. R. A. S., author of several religious tracts in Hindi.

It is hoped that all the Pandits, Prohita specially Pandhas and the general public will benefit by the purchase of this valuable book

हम पण्डित जी से पूछते हैं कि जिन 'पंडितों पुरोहितों और पान्थों' के लिए इस पुस्तक को आप उपयोगी बतते हैं क्या वे अपना अंग्रेजी का विज्ञापन पढ़ सकेंगे ? यदि आपका विज्ञापन देव नागरी अक्षरों में होता तो क्या हानि थी ? क्या आपको आशा है कि कोई नागरी न जानने वाला अंग्रेजी पढ़ा अनुष्य आपकी नागरी में लिखी हुई पुस्तक को खरीदेगा ? यदि नहीं तो फिर इस अंग्रेजी विज्ञापन से क्या लाभ ? सब तो यह है कि हमारे लोगों को चाहे लाभ हो चाहे न परन्तु अंग्रेजी लिखने वा बोलने में वे अपना 'रौब' समझते हैं और यही बात निज भाषा की उन्नति

के लिए हानि कारक है । जब तक अंग्रेजी का यह झूठा 'रौब' दूर नहीं होता किसी प्रकार की भी उन्नति नहीं हो सकती ।

४. भारत वर्ष ।

बंगला पत्रों और पत्रिकाओं की उन्नति को देखकर आश्चर्य होता है । बंगालियों ने साहित्य क्षेत्र में भारत के सभी अन्य लोगों को हार दी है । उनकी भाषा के अन्दर ऐसे २ पत्र निकलने लगे हैं कि जिनकी टक्कर का भारत में कोई अंग्रेजी पत्र भी नहीं निकलता । जिस मासिक पत्र को देखकर हमें उपरोक्त शब्द कहने पड़े हैं उसका नाम "भारत वर्ष" है । इसके सम्पादक हैं श्री० जलधरसेन और श्री० उपेन्द्र कृष्ण बन्धोपाध्याय ।

भारतवर्ष के प्रत्येक अङ्क में कोई दो सौ पृष्ठ और ४ पूरे पृष्ठ के सुन्दर रंगीन चित्र रहते हैं । इनके अतिरिक्त कोई ५२ के लगभग साधारण चित्र अलग हैं । द्वितीय वर्ष के द्वितीय खण्ड की ४ र्थ संख्या हमारे सामने है । इसमें कैलास में हर गौरी, सेन्ट हिलेना, कानपुर का दृश्य, और सती ये चार रंगीन चित्र हैं । आवरण पत्र पर भारतमाता का एक प्रभावशाली रंगीन चित्र है । कागज़ और छपाई ऐसी उत्तम कि देखकर ही नेत्र प्रसन्न होजाते हैं ।

अब विषय सूची देखिए । छोटे छोटे ३० प्रबंधों के अतिरिक्त ४५ बड़े बड़े लेख और कविताएं हैं । श्री मुजुङ्गधर राय चौधुरी एम० ए०, बी० एल०, श्री० राखालदास बन्धोपाध्याय एम० ए० अध्यापक श्री शीतलचन्द्र चक्रवर्ती एम० ए०, श्री यतीशचन्द्र धसु एम० ए०, राजकुमारी श्री० अनन्त

मोहिनी देवी, अध्यापक श्री० तारापद मुखोध्याय एम० ए० श्री० वङ्गिमचन्द्र मित्र एम० ए०, श्री० एल०, अध्यापक श्री भवविभूति विद्याभूषण-एम० ए० श्री० प्रफुल्ल नलिनी सरस्वती, श्रीमती हेम नलिनी देवी, श्री काकिलेश्वर शास्त्री विद्यारत्न एम० ए०, अध्यापक श्री ईश्वरचन्द्र विद्यारत्न, सांख्य वेदान्त दर्शन-तीर्थ, माननीय श्रीयुक्त देव प्रसाद सर्वाधिकारी, एम० ए०, एल० एल० डी० सी० आई० ई०, श्रीमती अनुरूपा देवी, अध्यापक वटुकनाथ भट्टाचार्य काव्यतीर्थ एम० ए०, श्रीमती प्रफुल्लमयी देवी, श्रीमती काञ्चन माला देवी, श्री मती सरोजवासनी गुप्ता श्री० नलिनी मोहन चटोपाध्याय एम० ए०, श्री० गिरीशचन्द्र वेदान्त तीर्थ इत्यादि विद्वान और विदुषी देवियां जिस पत्र में लेख लिखते हैं उसकी साहित्यिक विशिष्टता का अनुमान पाठक स्वयम् ही कर सकते हैं। परमात्मन्! क्या कभी आर्य्य भाषा को भी ऐसे उत्तम पत्रों की माता होन का सौभाग्य प्राप्त होगी! इतने बड़े और सुन्दर पत्र का मूल्य केवल ६ रुपये वार्षिक है। श्री गुरुदास चटोपाध्याय एण्ड सन्स, २०१ कार्नवालिस स्ट्रीट, कलकता के पते से मिल सकता है।

बंगाली और मराठी पत्रों की इतनी उन्नति का रहस्य यह है कि वे लोग अपनी मातृ भाषा से प्रेम करते हैं। उच्च से उच्च अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त बंगाली और मराठे विद्वान मातृ भाषा में लिखना अपने लिए अभिमानका हेतु समझते हैं। हमारे पंजाब की तरह नहीं कि निज भाषा में लिखने पढ़ने से उनकी शान मैली होजाए। दूसरी बात यह है कि वहां हमारी तरह उर्दू, गुरुमुखी, पशतो, आर्य्य भाषा का झगड़ा नहीं। सब हिन्दु

मुसलमान एक भाषा से प्रेम रखते हैं, जिस के कारण उन भाषाओं के पत्रों की ग्राहक संख्या हमारे पत्रों से कहीं बढ़कर होती है। इसीलिए वे पत्र इतने बढ़िया होते हैं। पंजाबियों को चाहे कि उर्दू, गुरुमुखी और पशतो आदि के व्यर्थ झमेले को छोड़कर एक भाषा-आर्य्य भाषा-को अपनाएँ। इसी में हमारा कल्याण है, अन्यथा इस अत्यन्त हानिकारक स्थिति में यहां विद्या का वास्तविक प्रचार होना अति कठिन है।

५. वर्तमान युद्ध और साधु फकीर।

भयानक युद्ध के कारण उपस्थित हुए इस नाजुक समय में प्रत्येक भारतवासी का यह कर्त्तव्य है कि वह यथा सम्भव ब्रिटिश सरकार की सहायता करे। धनी लोग धन से सहायता कर सकते हैं, किन्तु लाखों ऐसे गरीब भी हैं कि जिनकी सेवाओं को अगर भली प्रकार उपयोग में लाया जाए तो वे भी उपयुक्त विधियों से सहायता कर सकते हैं। इस युद्ध के मौके पर भारत के साधु और फकीरों की सेनाओं को काम में लाने की ओर मैं इम्पीरियल रिलीफफण्ड और भारत के हित चिन्तक एवं राजभक्त नागरिकों का ध्यान आकर्षित कराता हूं। यद्यपि साधु और फकीर लड़ नहीं सकते किन्तु सेण्ट जॉन एम्बुलैन्स कौर्स में भरता कर घायलों की टहल सेवा के लिए शिक्षित किए जा सकते हैं। युद्ध काल की दीर्घता से अनुमान होता है कि घायलों की संख्या बहुत ज्यादा होगी। मुझे साधुओं और फकीरों के साथ अधिक वास्ता रहता है इसलिए मैं अपने चिरकाल के अमली अनुभव से कह

सका हूँ, कि अगर उनकी सेवायों को उपयोग में लाकर उन्हें उपयोगी बनाने की ओर विशेष ध्यान दिया जाए तो वह सहर्ष सेण्ट जॉन एम्बुलेंस कौंस में भरती होने को उद्यत हो जाएंगे ।

मुझे आशा है कि भारत के हितचिन्तक और राज भक्त नागरिक मेरे इस सलाह से पूरी सहानुभूति रखते होंगे ।

टहलराम गंगाराम

जमीदार,

देराईस्माईल खां ।

६. पंजाब में आर्य भाषा का प्रचार कैसे हो ?

स्कूल, पत्र, पत्रिकाएँ, पुस्तकें और व्याख्यान निस्सन्देह भाषा प्रचार के भारी साधन हैं परन्तु जब तक कोई भाषा नित्यप्रति जन साधारण की बोलचाल में न आवे तब तक उसका रंग लोगों पर नहीं चढ़ता । वह मुलम्मे की तरह ऊपर रहती है । इसका ज्वलन्त उदाहरण पंजाब में उर्दू और अंग्रेजी है । चिरकाल से स्कूलों, पत्रों, पुस्तकों और कचहरियों द्वारा इन का प्रचार होते हुए भी आज वे हमारे लिए ऐसी ही पराई हैं जैसी कि आरम्भ में थीं । बड़ा से बड़ा मुंशी और योग्य से योग्य बाबू भी दिन भर में एक दो घण्टे से अधिक काल तक उर्दू या अंग्रेजी न बोलता होगा । कितने पंजाबी हैं जो उर्दू या अंग्रेजी में वार्तालाप करने या लिखने में वैसी ही सुगमता अनुभव करते हैं जैसीकि उन्हें अपनी भाषा के प्रयोग में मालूम होती है ? उर्दू और अंग्रेजी कृत्रिम कोष हैं जो पंजाबियों पर चढ़ाए गए हैं ।

अब कुछ दिन से हमारा ध्यान भारत की राष्ट्र भाषा की ओर आकर्षित हुआ है । सिक्खों को छोड़कर आर्य मात्र कम से कम कन्याओं को तो आर्य भाषा की ही शिक्षा दिलाने हैं । कई एक लड़कों के स्कूलों से भी उर्दू बाह्यकृत हो चुकी है । परन्तु फिर भी यह जैसा कि चाहिए हमारे रोम रोम में प्रवेश करती प्रतीत नहीं होती । स्कूलों की मिडिल पास लड़कियाँ भी आर्य भाषा की अच्छी पुस्तकें नहीं समझ सकतीं । वे अपने भावों को आर्यभाषा में उस सुगमता से प्रकट नहीं कर सकतीं जिस प्रकार कि एक बंगाली कन्या बंगला में कर सकती है । इसका कारण केवल यही है कि हम ने आर्य भाषा को उर्दू की भांति केवल पढ़ने के लिए ही रक्खा है, घरों में बोल चाल के द्वारा इसे प्रविष्ट नहीं किया । आर्य भाषा के अध्यापक भी स्कूल में इमला लिखो; जुगराफिया का घण्टा है; खुशखुती दिखलाओ; तकसीम के सवाल निकालो; सबक क्यों नहीं याद किया; तवारीख की किताब क्यों नहीं लाए ? इत्यादि वाक्य बोलते हैं । ऐसी स्थिति के रहते आर्य भाषा का पंजाब में घर करना कठिन है । इसलिए हमें यह यत्न करना चाहिए कि घर में, और मित्रों के साथ बातचीत करते समय नित्यप्रति यथासम्भव आर्य भाषा का ही प्रयोग करें । यदि पहले पहल घर में विशुद्ध भाषा बोलना सम्भव न जान पड़े तो वाक्य में क्रिया को छोड़ कर कम से कम संज्ञाएँ तो सब आर्य-भाषा की ही बोलनी चाहियें । इमला के स्थान में बचो विन्यास, जुगराफिया के स्थान में भूगोल, खुशखुती के स्थान में सुखेख,

तकसीम के स्थान में भाग, सवाल के स्थान में प्रश्न, सबक के स्थान में पाठ, तवारीख के स्थान में इतिहास, किताब के स्थान में पुस्तक कहने में कोई कठिनाई नहीं। इसी तरह घर में 'पानी दी' के लिए जल दी, 'अग बुझा' के लिए अग्नि, बुझा, 'मुँडे खेल दे हन, अते काड़ियाँ दुक खादियां हन' के लिए बालक खेल दे हन, अते, बालिकाएं भोजन खां दिया हन इत्यादि कहने से बच्चों को बहुत से भाषा के शब्द बिना पारश्रम के ही आ सकते हैं। फिर शनैः २ खान्दे हन और जांदे हन के स्थान में (खाते हैं और जाते हैं) भी योजना आरम्भ हो सकता है। हमारी सम्मति में आर्य्य भाषा के प्रचार का यह एक सुगम और उपयोगी उपाय है जिस से शीघ्र ही राष्ट्र भाषा हमारी मातृ भाषा हो सकती है।

सिक्खों से निवेदन।

खालसा भाइयों ! आप श्रद्धेय गुरुओं के शिष्य हैं। गुरुओं की वाणी को पढ़ना और समझना आप का धर्म है। इतना ही नहीं बल्कि उन गुरुमुख वाक्यों को अन्य प्रान्त निवासियों को सुनाना भी आप का परम कर्तव्य है। यह बात निर्विवाद है कि ग्रंथ साहब की भाषा वह भाषा नहीं जो कि आजकल पंजाब के ग्रामीण लोगों में प्रचलित है और कि उसे वे लोग कभी भी भली भाँति नहीं समझ सकते जिन्होंने कि आर्य्य भाषा का अध्ययन नहीं किया। गुरु गोविन्दसिंह जी के सारे ग्रंथ विशुद्ध आर्य्य भाषा में हैं जिन्हें आपकी अपेक्षा संयुक्त प्रान्त के लोग

अधिक अच्छी तरह से समझ सकते हैं। क्या कोई ग्रंथी "ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का वेत्ता" का अर्थ आर्य्य भाषा के न जानने से ब्रह्मज्ञानी ब्रह्म का वेत्ता नहीं करते? परन्तु धुमाग्य से आपने गुरुओं की वाणी को एक ऐसी लिपि में लिख दिया है जिसे कि निवाप आपके ओर कोई नहीं जानता इसी कारण से आप का धर्म एक प्रान्तिक धर्म बन गया है। अतः हमारी प्रार्थना है कि याद आप सिक्ख धर्म के स्वच्छ स्वरूप को प्रकट करना चाहते हैं, और यदि आप सिक्ख धर्म को पंजाब में ही नहीं बल्कि सारे भारत में फैलाना चाहते हैं तो झूटे प्रान्तिक अभिमान को छोड़कर गुरुओं की वाणी और अपने अन्य धार्मिक ग्रंथों को गुरुमुखी अक्षरों की तर्ज बेंड़ियों से मुद्रा करने देव नागरी के भारत व्यापी विशाल क्षेत्र में लाइए। फिर देखिए आग की कैसी उन्नति होती है। देव नागरी में होने से आपके ग्रंथ कम से कम सारे उत्तर भारत में पढ़े जा सकेंगे जिस से आप को बहुत लाभ होगा। देखिये आर्य्य समाज, देव समाज, ब्राह्म समाज, राधा-स्वामी, साधु महारमा समी इन्हीं अग्रों का प्रचार करते हैं। गुरुमुखी को छोड़कर देव नागरी लिपि का अवलम्बन करने से आपके धर्म को कोई हानि नहीं, लाभ ही है। परन्तु गुरुमुखी अक्षर रखने से घोर हानि हो रही है। क्या कोई निष्पक्ष गुरु भक्त हमारे निवेदन पर ध्यान देगा?

पुस्तक परिचय ।

१. आर्थों की वैज्ञानिक उन्नति-लेखक और प्रकाशक। प्रो० बालकृष्ण एम० ए०, अर्थशास्त्र महापाध्याय, गुरुकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार ।

मूल्य २)

इस छोटी सी पुस्तक में प्रोफेसर महोदय ने यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि प्राचीन आर्य लोगों ने विज्ञान में भारी उन्नति की थी। वे विमान, रेल, शक्ति से चलने वाला जहाज़, चुम्बक, विद्युत, जहजों का कम्पस, सूर्य कान्त (आनशी शीशा) चन्द्र कान्त, सम्प्रोहनी, जीवायु तत्व (Germ) गुरुता (Gravitation) गणित सप्त रंगी किरण (Solar spectrum) और विकासवाद आदि को जानते थे। पुस्तक बड़ी मनोरंजक है।

२. सिखों का परिवर्तन अनुवादक स्वामी सोनेश्वरानन्द जी० ए०। मिलने का पता—प्रबन्धकर्त्ता-पुस्तक भण्डार, लाहौर। पृष्ठ संख्या २६२×३३ (परिशिष्ट) मूल्य १॥)

यह पुस्तक डाक्टर गोकुल चन्द्र नारंग एम० ए, पी० एच डी० बार-एट-ला की अंग्रेजी पुस्तक Transformation of Sikhism का सर्वाङ्ग भाषानुवाद है। इस में बड़ी अच्छी तरह से दिखलाया गया है कि किस प्रकार शासनों के अत्याचार और पक्षपात युक्त वर्ताव से धार्मिक सम्प्रदायों को भी राजनैतिक रूप धारण करना पड़ता है। भाई माणिसिंह, भाई तारु सिंह और बाबा बुन्दा आदि सिक्ख वीरों के धर्म

वलिदान और आत्मोत्सर्ग का वर्णन पढ़कर रोमाञ्च होजाता है और उन गुरू के प्यारों के लिए शत्रु शत्रु साधुवाद निकलता है। अनुवाद अच्छा हुआ है, परन्तु छपाई में कहीं २ अशुद्धियाँ रह गई हैं। कई एक चित्र भी दिए गए हैं। तिलाई और वाद्य दृश्य अच्छे हैं। इतिहास प्रेमियों को इस पुस्तक का अवश्य पाठ करना चाहिए। पुस्तक भण्डार इस प्रान्त में आर्य भाषा के प्रचार में अच्छा काम कर रहा है।

प्रहद—मस्टर गोवर्धनजी जी० ए० कई वर्षों तक गुरुकुल काङ्गड़ी में मुख्याध्यापक रह चुके हैं। आपने अब राष्ट्रभाषा तथा वैदिकधर्म की सेवा के विचार से 'प्रहद' नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकाला है। पत्र के जितने अंक आज तक प्रकाशित हुए हैं उन के अवलोकन से मालूम होता है कि प्रहद अच्छी उन्नति करेगा। प्रहद में केवल चटकीले नोट और ताज़े समाचार ही नहीं बल्कि अच्छे विद्वानों के गम्भीर और विद्वतापूर्ण लेख भी रहते हैं। हमारी हार्दिक इच्छा है कि प्रहद उत्तरोत्तर उन्नति करे। वार्षिक मूल्य ३) है। प्रबन्धकर्त्ता, प्रहलाद, देहली के पते से मिल सकता है।

माँ और बच्चा—अनुवादक वा प्रकाशक म० गोवर्धन जी० ए० सम्पादक 'प्रहलाद', देहली पृष्ठ संख्या १३४ मूल्य ॥)

रशिशो रचित एमिलो नामक एक फ्रांसीसी पुस्तक के प्रथम खण्ड के अंग्रेजी अनुवाद का यह भाषानुवाद है। इस में दार्शनिक रीति से बच्चों

के पालन पोषण और शिक्षण की विधि बताई गई है। उदाहरणार्थ इस में बताया गया है कि गुरु कैसा हो, बच्चे कृतज्ञता कैसे सीखते हैं, बच्चे को निडर कैसे बना सकते हैं इत्यादि। यह बड़े शोक की बात है कि हमारे लोगों ने अभी इस उन्नति के मूलाधार-सन्तानों की शिक्षा-की ओर ध्यान देना नहीं सीखा। इन पुस्तक के पाठ से माता पिता को स्वसन्तानों की शिक्षा में बड़ी सहायता मिल सकती है। विषय कुछ सूक्ष्म होने से हमें डर है कि स्त्रियां इस पुस्तक को अपने आप न समझ सकेंगी, इस लिए पिता को इस काम में माता की सहायता करनी चाहिए।

—

स्वामी रामदास । प्रक शक-पुस्तक भण्डार ल. है।
मूल्य २)

इस ३७ पृष्ठ की छोट्टीसी सुन्दर सचित्र पुस्तक में श्री समर्थ रामदासजी का जीवन वृत्तान्त दिया गया है। स्वामी रामदास उन पुण्यामाओं में से थे जो मनुष्यों के कल्याण के लिए संसार में अवतरित होते रहते हैं। मराठों की उन्नति का बीज समर्थजी की ही शिक्षा थी। छत्रपति शिवाजी ने आप से दीक्षा ग्रहण की थी और महाराष्ट्र की राष्ट्रीय जागृति आपके उपदेशों का ही परिणाम था। आपका जीवन बड़ा शिक्षाप्रद है। पुस्तक की भाषा और दृश्य अच्छे हैं, परन्तु छापे की कहीं २ अशुद्धियां रह गई हैं जैसे कि पृष्ठ ६ पर 'प्राप्ति', 'छटे' और 'गुरु' के स्थान में 'प्रान्त', 'छटे' और 'गुरु' छपे हैं जोकि आशा है कि द्वितीय संस्करण में ठीक हो जायेंगी। मूल्य कुछ अधिक प्रतीत होता है।

—

स्वप्न वासवदत्त—अनुवादक तथा प्रकाशक श्री बाबुलाल मयाशंकर दुबे, राजनांद गांव, मध्य प्रदेश। मूल्य छः आना।

यह सुप्रसिद्ध कवि-भास-प्रिचित स्वप्न वासवदत्त नामक संस्कृत नाटक का गद्य परमय आर्थ्य भाषा अनुवाद है। भास एक पुराने कवि हैं परन्तु उनके नाटकों का संसार को हाल ही में पता मिला है। ब्राह्मणकोर के महाराजाधिराज के प्रसन्न पुस्तकालय में प्राचीन ग्रन्थों का अच्छा संग्रह है। वहाँ से भास के नाटक मिले हैं। महाराजा की ओर से इन प्राचीन ग्रन्थों के सम्पादन के लिए पं० गणपति शास्त्री नियुक्त किए गए हैं। शास्त्री जी आज तक भास के १३ नाटकों को सम्पादित करके छपवा चुके हैं। स्वप्नवासवदत्त भी उन्हीं में से एक है। नाटक की कथा बड़ी रोचक है। दुबे जी ने इस का अनुवाद करके आर्थ्यभाषा पर बड़ा उपकार किया है। कवि भास के समय का निर्णय करने में विद्वानों में जो विवाद हुआ है और प्रत्येक पक्ष की ओर से जो जो युक्तियाँ दी गई हैं उन का सारांश भी पुस्तक में दिया गया है।

—

फीजी द्वीप में मेरे २१ वर्ष-लेखक पंडित तोताराम जी सुनाख्य, प्रकाशक भारतीभवन फीरोजाबाद (अगरा) पृष्ठ संख्या १६८ मूल्य १०)

जिन लोगों को यह मालूम नहीं कि विदेश में प्राचीन भारतवासियों के साथ कैसा वर्ताव होता है उन्हें इस पुस्तक का एक बार अवश्य पाठ करना चाहिए। डिपो वाले भोले भाले हमारे

देशवासियों को कुल से फीजी आदि द्वीपों में ले जाते हैं और वहाँ जाकर उनके साथ कुत्तों और गधों से भी बुरा बर्ताव करते हैं । स्त्रियों के सतीत्व को नष्ट करते हैं, उनके पतियों को नदी में डुबो देते हैं, और बच्चों को भूके मारते हैं, जन्माभिमानि ब्राह्मणों को चूहड़े चमारों के साथ बिठाकर भोजन देते हैं और उनसे पाखाना उठवाते हैं । पुस्तक में वर्णित अत्याचारों को पढ़कर हृदय कांप उठता है और अपनी वृद्धशा पर रोना आता है । पुस्तक बड़ी सरल और रोचक भाषा में लिखी गई है । हमारी निम्न सम्मति तो यह है कि भारतवासियों के साथ इससे भी बुरा बर्ताव होना चाहिए, क्योंकि हम लोग अभी इतीके योग्य हैं । जिस प्रकार जन्माभिमानि ब्राह्मण क्षत्रिय आदि केवल जन्म, धन, और विद्या के कारण ही अपने को उच्च और चमार, कुर्मी आदि को नीच समझते और उन से कुत्तों से भी बुरा बर्ताव करने को अनुचित नहीं मानते वैसे ही स्वतंत्र देशों के गोरे लोग भारतवासियों को चूहड़े चमार, काला आदमी समझते हैं । पहले अपने भाइयों को समता का अधिकार दो तो दूसरे भी तुम्हें नीच नहीं समझेंगे ।

व्रत धर्म के विरोधी किसी धाममागी ने महाभारत में डाली है या दुर्योधन के पक्ष वालों ने ऐसा अपवाद फैलाया है, जोकि सम्भवतः उन की सन्तान परम्परा में बना रहा और पीछे से किसी ने संगृहीत कर दिया ।

मराठी ।

नव-युग—यह सुन्दर सचित्र मासिक पत्र दो वर्ष से अधिक समय से निकल रहा है । इस के प्रत्येक अंक में ८० पृष्ठ और कई चित्र रहते हैं चित्रों में से एक चित्र रंगीन होता है । कागज बिकना और छपाई अति सुन्दर । रंग ढंग सब उच्च श्रेणी के अंग्रेजी पत्रों जैसा है । बड़े २ वी० ए०, एम० ए० मराठे विद्वान इस में लेख लिखते हैं । श्रीयुत् बिठ्ठल जिवाजी नाडरणी इस के सम्पादक हैं । शोक है कि आर्य भाषा में इस की टकर का भी कोई पत्र नहीं । वार्षिक मूल्य ४) मिलने का पता श्री० डी० कार्शनाथ एण्ड कम्पनी, २०-२४ कस्टम हाउस रोड, फोर्ट, मुम्बई ।

द्रौपदी का पति केवल अर्जुन था । लेखक पं० राजाराम जी, मूल्य -) मिलने का पता—प्रबंधकर्ता अर्षि मंथावली, लाहौर ।

इस १५ पृष्ठ की लघु पुस्तक में पण्डित जी ने अनेक युक्तियों से यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि द्रौपदी के पांच पति नहीं थे, बल्कि एक अर्जुन ही था । आपका विचार है कि पांच पतियों की कथा या तो पति-

मासिक मनोरञ्जन—मराठी भाषा का यह बड़ा पुराना और प्रसिद्ध मासिक पत्र है । इस के प्रत्येक अंक में ८ पेजी २०×३० आकार के कोई एक सौ पृष्ठ और कई चित्र रहते हैं । एक पृष्ठ में प्रायः ४० पंक्तियाँ होती हैं । श्रीयुत् धामन मल्हार जोशी एम० ए०, श्रीमती काशी बाई देवधर, श्री प्रो० हरिगोविन्द लिमये, एम०

ए०, श्री० प्रो० डा० पांडुरंग रामोदर गुणे एम०
ए०, पी एस्० सी०, श्रीयुत वि० आ० तामणे,
एल० एजी, बी० एस० सी० आदि विद्वान् और
विदुषी देवियां इस में लेख और कविता लिखती
हैं। आजकल इस में महायुद्ध चित्रमाळा प्रका-
शित हो रही है। वार्षिक मूल्य ०) मिलने का
पता—प्रबंधकर्त्ता मासिक मनोरञ्जन प्रेस, गिर-
गांव, मुम्बई।

प्राप्ति स्वीकार।

१. वैदिक प्रार्थना पंचविंशति—लेखक
श्री० महाराज स्वामी अच्युतानन्द सरस्वती
मूल्य ॥ इस में २५ वेद मंत्रों की व्याख्या है।

२. भारत-सज्जीविनी—लेखक पं० गोकुल
चन्द्र दीक्षित मूल्य ॥ इस में वैदिक धर्म प्रचार
मतमतान्तरों की उत्पत्ति, उनके सिद्धान्त इत्यादि
बातों का रोचक वर्णन है। मिलने का पता पं०
वजीरचन्द्र शर्मा, वैदिक बुक डिपो, लाहौर।

डाक्टर एस० के० वर्मन का १९७२ का
पञ्चांग-बड़ा सुन्दर सचित्र पंचांग है। ताराचन्द्र
प्रीत कलकत्ता के पते से उक्त डाक्टर महोदय
से मुफ्त मिलता है।

हिन्दी विश्व कोष के चमत्कार।

(लेखक श्रीधरी रामसिंह प्रार्य सेवक)



पाठकों से भूला न होगा कि हमसारा-
कलो पीडिया के ढंग पर एक
हिन्दी विश्व कोष लिखा जा रहा
है, जिसके ३२ पृष्ठ प्रतिमास कलकत्ता

से प्रकाशित होते हैं। आज तक १४ अंक निकल
चुके हैं, जिन में 'अ' अक्षर से लेकर 'अनुक्रमण'
अक्षर पर्यन्त अर्थ प्रकाशित हो चुका है। 'सरस्वती'
'उषा' सङ्गमप्रचारक प्रभृति देश के प्रसिद्ध पत्रों
में इसकी समालोचना भी स्थान पा चुकी है।
उपरोक्त कोष के प्रधान सम्पादक 'वंगला विश्व
कोष' के रचयिता श्री नगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्या
महर्षि, सिद्धान्त धारिधि एम० आर० ए० एस०
हैं। वसु महाशय की अध्यक्षाता में और भी बहुत
से संस्कृत पंडित 'विश्व कोष' का सम्पादन
कर रहे हैं। उपरोक्त कोष के पठ करने से हर्ष
और शोक दोनों एक साथ ही उत्पन्न होने
आरम्भ हो जाते हैं। हर्ष तो इसलिए कि हिन्दी
में यह एक नूतन, अनुठा और बहुमूल्य ग्रन्थ होगी,
शोक इसलिए कि आर्य्य जाति तथा आर्य्य
साहित्य पर विदेशियों के लगाये हुए कलंकों यथा
'प्राचीन आर्य्य मानस भक्षी थे', 'वेद गडरियों के
गीत हैं, वेदों में अग्नि सूर्य्य भिन्न वरुण आदि जड़
पदार्थों की पूजा का विधान है' इत्यादि इत्यादि,
के साथ सहमत होते हुए, हिन्दी विश्व
कोष के सम्पादकों ने आर्य्य सभ्यता की जड़ों
पर निर्देयी होकर कुठाराघात किया है।

पाठकों के विनोदार्थ उपरोक्त कोष के कुछ अंश उद्धृत किए जाते हैं, इनको पढ़ कर भी यदि विदेशी सज्जनों को किसी प्रकार का उपालम्भ दिया जायेगा तो यह उनके साथ सर्वथा अन्याय होगा, क्योंकि आर्य्य जाति के सयोग्य पुरुष उनको दिन प्रति दिन मानते चले जा रहे हैं ।

“मनुष्य की जब आँखें न खुली थीं, ज्ञान का उन्मेष न हुआ था, तब चन्द्र सूर्य्य विद्युत् और अग्नि को ईश्वर समझना ही उस के लिए सम्भव था । उस समय मनुष्य में श्रद्धा न थी, भावना न थी, उसे केवल भय और क्षुब्ध ही मालूम होती थी । बन की सन्ध्याल कोल प्रभृति असभ्य जातियाँ प्राण के भय से भूत वाद्य और नद नदी की पूजा करती हैं, वे यह नहीं जानती सिर परकाल क्या है, और ईश्वर भक्ति किसे कहते हैं । ऋग्वेद में पत्र के बाद पत्र उलट जाइये, मंडल के बाद मंडल, सूक्त के बाद सूक्त पढ़ जाइए आप देखेंगे, कि ऋषि केवल शत्रु भय और अन्नाभाव से व्याकुल थे, वे केवल शत्रु के हाथ से परित्राण पाते और अन्न लाभ के लिए इन्द्र वरुण और अग्नि की पूजा करते थे । इसके बाद ईश्वर बुद्धि आई, परकाल के प्रति मनुष्य को भय उत्पन्न हुआ, अग्नि के अनेक उपकार होने के कारण सब लोग भक्ति पूर्वक इस की पूजा करने लगे” (हि. वि. को० पृष्ठ १०७)

“पूर्व काल से भारतवर्ष में सभी लोग विशेष आदर पूर्वक अजा मांस को भोजन करते आए हैं । पुरोहित के अजपञ्चोदन देने से यजमान स्वर्ग लाभ करते हैं ; आज कल जैसे गृह में बन्धु बान्धव आने से हम तरह तरह की तरकारी मंगाते और पूरी कचौरी बनवाते हैं वैसे ही पूर्व

काल के ऋषि तपस्वी और ब्राह्मण किसी के घर पहुंचने पर गृहस्थ तत्क्षण एक बकरा काट उन अभ्यागत व्यक्तियों को भोजन कराते थे,..... यह विधि सम्मत है कि सन्तों की अभ्यर्थना के लिए समांस मनुष्य के देना कर्तव्य है । गृहस्थ व्यक्ति बकरे को मार कर अभ्यागत ब्राह्मणों को भोजन कराया धर्म शास्त्रकार इस विधि का आदर करते हैं। (हि० वि० को० पृ० १५५)

‘पक्षी का अंडा सुस्वाद और पुष्टिकर होता है । अधिक परिश्रम मानसिक विन्ता, शिर का घूमना प्रभृति स्थलों में अंडा खाने से अनोखा फल देख पड़ता है । हमारे देश में हिन्दू हंस और कछुए का अंडा खाते हैं, मुसलमान मुर्गी का अंडा खाया करते हैं, और इतर जाति वाले लोग अन्यान्य पक्षियों का भी अंडा खाते हैं । अंडे को पका कर भून कर या उसकी कलिया बनाकर सब लोग खाया करते हैं, किन्तु शरीर के अधिक दुर्बल होने से कच्चा अंडा खाना चाहिये । पाव भर दूध एक नो अंडे या फूल कुछ चीनी या शर्करा एक में मिला रोज सवेरे खाये । जिन्हें कच्चे का नाम सुनने से घृणा आये वह इस का अपने सामने तय्यार किया जाना न देखें” ।

हि० वि० को० पृ० २४०-२४१

“कोई कोई लोग अनुमान करते हैं कि इस अनास शब्द से आर्य्य जाति का मतलब निकलता है । आर्य्य अर्थात् जाति की बात न समझ सकते इसी से उन्हें अनास कहिते थे । चीन और प्राच्य भारतवासी मंगोलिया जाति की नाक बहुत चपटी होने और वैदिक आर्य्य लोगों के साथ उसके दृश्यता करने से वेद में वह चपटी-नाक वाली

अनास शब्द से कही गई है। यहाँ की आर्य्य जाति साधारणतः नकटी होती थी इसी से अनेक अनुमान करते हैं कि वेद में अनास शब्द का अर्थ नकटा रखा गया है। (हि० की पृ० ४३०)

सभ्य सुवाचक वृन्द अभी तक हि० वि कोष के १४ ही प्रकाशित हुए हैं, और यह हाल है, आगे खबर नहीं क्या होगा।

इततदारा इशक है रोता है क्या,
आगे आगे देखना होता है क्या।

मनोरञ्जक श्लोक।

अन्योक्तिः आनन्द

(पद्यानुवाद)

केतकी (१) श्लो०

व्यालाश्रयापि विफलापि सकण्टकापि;

वक्रापि पंकिल भवापि दुरासदापि-।

गन्धेन वन्धु रसकेतकि ! सर्वजन्तोः

एको गुठाः खलु निवृत्ति समस्त दोषान् ॥

(चाणक्य)

अनुवाद

(मन्दाक्रान्ता वृत्त)

साँपों का त यद्यपि गूढ़ है, निष्फला, पंक्ता है;

काँट भी हैं पुनरपि महा, पास में वक्रता है।

होता तो भी सुरभि गुणसे, केतकी ! मान ल्याता,

सारे दोष-पूकट गुणये-एकही है छिपाता ॥ १ ॥

(२) (श्लो०) सनवृक्ष)

सुवर्ण उदृशं पुष्पं फलेरत्नं भविष्यति।

आशया सेविता वृक्षः पश्चात् सन् सनायते । २।

(अनुवाद) उपजाति

‘सुवर्णसा पुष्प लगा जहाँ है। तो रत्न होता फल भी वहाँ है।’

ये आशय वृक्ष घना कमाया। पश्चात् तपे सन् सनाय शब्द पाया। २

(रसिकेन्द्र)

SPECIAL WAR ILLUSTRATED PAPERS.

PUBLISHED EVERY WEEK DURING WAR.

The following are specially published during war. They give the full History of war from time to time and contain numerous illustrations. They are of Permanent value as any of them can be handsomely bound in to a volume or volumes after the war is finished.

* The Ill War News—

Published by Ill London,

News Office.

* The Times History of War.
The War Illustrated.

The Penny War Weekly.

The War Budget.

The War of Nations.

* The Great War,

Edited by H. W. Wilson.

* Price annas eight per Part, Postage extra.
Order Back Number with current issues for full War History.

The American and English News Supply Agency,
NEWS AGENTS,
GIRGAUN, BOMBAY.

॥ ओ३५ ॥

वेदार्थ व्याख्या ।

(१) जब से कलकत्ते के प्रसिद्ध "सेठ जयनारायण-रामचन्द्र जी ने ऋषि-दयानन्द कृत वेद भाष्य की पूर्ति के लिए उगारता से दान दिया था, तब से ही गुरुकुल की ओर से इसका प्रयत्न किया जा रहा है ।

(२) प्रथम श्री पण्डित शिवशङ्कर काश्यपीयजी को इस काम पर लगाया गया, परन्तु एक मास के अनुभव से ही पता लगा कि उक्त श्री पण्डित जी की स्वच्छन्द कल्पनाओं पर विचार करने में अन्य भार्य्य पण्डितों का बहुत समय व्यर्थ नष्ट होगा, तथा और भी स्वतन्त्र कारण हुए जिन हेतुओं से श्री पण्डित जी को गुरुकुल भूमि छोड़नी पड़ी ।

(३) उस के पश्चात् गुरुकुल के वेदोपाध्याय को इस काम पर लगाया गया जिन्होंने ने अन्य विद्वानों से पत्र व्यवहार करके अब ऋषि-दयानन्द की बतलाई आर्षि-प्रणाली पर भाष्य का कार्य आरम्भ कर दिया है । इस भाष्य की पूर्ति के लिए प्रतीक्षा करते हुए यदि छपारि का कार्य रोक दिया जाय तो हानि होगी ।

(४) इस लिये निश्चय किया गया है कि इस आर्षि-भाष्य को अङ्कों में छपवाना आरम्भ कर दिया जाय । प्रत्येक अङ्क में २४ पृष्ठ उत्तम कागज पर तो भाष्य रहेगा और टाइपिल के चार पृष्ठों पर वेद-भाष्य सम्बन्धी ही अन्य सूत्राण्य दी जाया करेंगी । वर्ष में १२ अङ्क प्रत्येक ग्राहक को पूरे कर दिए जायेंगे, चाहे वे एक दूसरे से कैसे ही अनिश्चित अन्तर के साथ निकलें । वार्षिक आग्रिम मूल्य २) लिया जायगा, और तमूने की प्रत्येक प्रति के लिए 1) भेजन होंगे । प्रथम अंक की केवल ५०० प्रतियें ही छपवाने का विचार था, परन्तु ईश्वरीय कल्याणी वाणी को अधिक विचार शील जनता तक पहुंचाने के लिए यह निश्चय किया गया है कि "फाल्गुन, १९७१ की समाप्ति (१३ मार्च १९१५) तक" जितने ग्राहक वार्षिक आग्रिम मूल्य २) भेज दें उतनी ही अधिक प्रतिएं इस भाष्य की छपवानी शुरू कर दी जायें ।

ग्राहक बनने के लिए पत्र तथा धन निम्न-लिखित पते से भेजिए:—

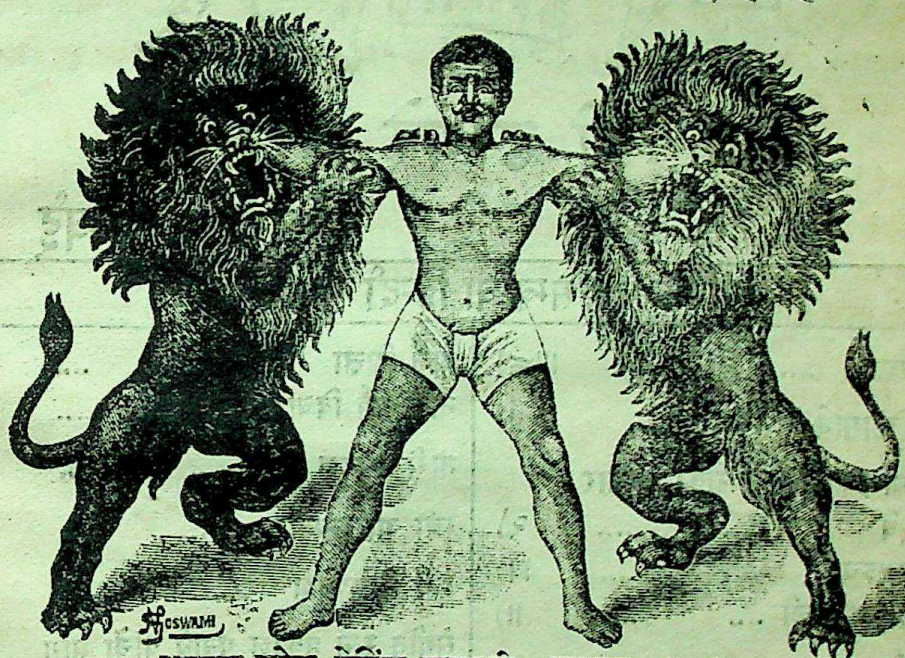
मुख्याधिष्ठाता,

गुरुकुल विश्वविद्यालय,

शामपुर-कांगड़ी P.O., जिला बिजनौर ।

ताकत बहार गोलियाँ

आजकल विज्ञापन का बाज़ार गर्म है। जिस समाचार पत्र की छापक बन्द हो, ताकत बहार गोली के सैकड़ों विज्ञापन ठपे ठपे दृष्टिगोचर होते हैं, जिनकी प्रशंसा में हम बड़ा साहस करके क्या चली कालम के कालम रंगे रहते हैं। लेकिन ! लोगों ने जब वे दवाइयाँ मंगाईं, तो फिस ! फिस !! के सिवाय ज़रा भी ताकत देखने में न आई। ध्यान रहे कि, बहुत से ताकतवादी भी हमारी "ताकत बहार गोलियों" की अधिक बिक्री देख दवा का नाम बदलकर कोफ़ीमत कम करके समाचार पत्रों में विज्ञापन तो ठपवा दिया पर वे लोग हमारी दवा का ठीक ठीक नुसखा न मिलने से ग्राहकों को प्रसन्न न कर सके और फुदक फुदक कर बैठ रहे। हमारा तो कहना है कि, "ह्वाथ कंगनको आरसीकी क्या जरूरत" हम अपने सत्य व्यवहारके भरोसे ही आपके साथ इतनी कड़ी प्रतिज्ञा करते हैं कि आपको पसन्द न आवे तो हम उसे वापिस लेंगे, दाना तरफ़ का डाक मुहसूल ग्राहकों को नहीं देना होगा यानी हमही सहन करेंगे।



जमना कोल रेडिंग कम्पनी मथुरा U. P.

वायस, वस्था के शरीर में जवानी की कुचालों से निर्वलता पेशाव में जलन या चुन। हान। हर समय सुरत रहना, शिर में चक्करों का आना या दर्द होना, हाथ पैरों में कमजोरी थोड़ा चक्कने या परिभ्रम करने से थकावट मालूम होना, किसी काम में मन का न लगना, चेहरे पर खुशकी या पीड़ापन होना, इन सब शिकायतों को दूर कर नयी शक्ति पैदा करती है। बुढ़ापे में जवानी कीसी ताकत मालूम न हो तो दाम वापस। अधिक प्रशंसा कर के कपने मुंह मियां मिट्ट बतना ठीक नहीं। २१ गोली की शीशी का मूल्य १) रु. ५० २ शीशी का मूल्य १।।।) एक रुपया बारह आना। ६ शीशी एक साथ लेन स ५) रुपया। १२ शीशी एक साथ लेने से १) रुपया। डाक मुहसूल वगैरह जिम्मे क़रीदार सूचना—हमारे यहाँसे बंगालका हरपक तरहका कोयला, कोलियारीबालों और कोलमचैटों के मुकाबिले बहुत उम्मा और ठीक समयपर भेजा जाता है।

छोटे बच्चों की ताकत बढ़ाने वाली ।

मशहूर दवाई

शीशी का

मूल्य बारा

आना

डाक मद्रसल

चार अना



के. टी डोंगरे और कं., गिरगाम, बम्बई

वैदिक धर्म सम्बन्धी हिन्दी पुस्तकें ।

सत्यार्थ प्रकाश		III=)	बाल शिक्षा		)II
वैदिक इतिहासार्थ-निर्णय		१II)	नारी धर्म विचार दोनों भाग		१II)
संस्कार चन्द्रिका अथार्थ टीका संस्कार विधि		२)	नारी उपदेश		II=)
व्याख्यान पञ्चक		III)	स्त्री आरोग्यता		II)
व्याख्यान मुक्तावली		II)	स्त्री हितोपदेश		I=)
न्याय दर्शन		१I)	संगीत रत्न प्रकाश पूर्वार्ध पाँचों भाग		II-)
सांख्य दर्शन		III)	संगीत रत्न प्रकाश उत्तरार्ध दोनों भाग		II)
दशानन्द चरित बंगाली से अनुवाद		१I)	शान्ता उपन्यास		II)
सत्यार्थ प्रकाश शब्दार्थ कोष		II)	वीर मातार्ये		I=)
बाल सत्यार्थ प्रकाश		I-)	भारतीय शिष्य ईसा		=)II

वजीरचन्द शर्मा प्रोप्रायटर,

वैदिक पुस्तकालय लाहौर ।

नोट—इनके अतिरिक्त अन्य वैदिक धर्म सम्बन्धी पुस्तकें भी पंगवा सकते हैं ॥

अमृत चमत्कार

गुप्तरोग से पीड़ित पुरुषों के लिये दो अमृत दुष्य दवायें

मदनमंजरी गोलियां

धातु जो प्राणी मात्रका जीवन है, जब किसी भी कारणसे खराब, पतला या क्षीण होता है तब अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, ये मदनमंजरी नामक गोलियां धातुविकार के सब रोगों का नाश कर, रुधिर को सुधारकर, वीर्य को बढ़ाकर, ज्ञानतंतुओं को सतेजकर, और मूत्रमें, स्वप्न में या किसी और तरह से धातुके जानेको रोककर सच्चा और स्थिर पुरुषत्व देती हैं।

ये गोलियां पाचनशक्तिको सुधारकर दस्त साफ लाने में, मस्तिष्क को स्वच्छकर स्मरण शक्तिको प्रफुल्लित करने में और नपुंसकताका नाश कर कामको प्रदीप्त करने में बहुत ही विजयी सिद्ध हो चुकी हैं, प्रतिमास हजारों दिविपाएं विकती हैं यही इनकी सब से बड़ी जमानत और विजय है।

कीमत गोली ४० की रु० १)

राजवैद्य नारायणजी केशवजी,

मालिक—आयुर्वेदोदय औषधालय—जामनगर काठियावाड़।

मिसिस कमलाबाई की

अबला संजीवनी

औरतों के लिये गोलिएं

गर्भ स्थान और औरतों के माहवारी (तुना) बगैरा सब दर्दों के लिये देशी इलाज हजारों औरतें मिसिस कमलाबाई की गोलिएं घर में रखती हैं, और जब हर एक माहवारी के संबंध में जैसा कि माहवारी का साफ न आना, पेडु का दर्द, माहवारी मामूली वक्त पर न आना और गर्भाशय में किसी तरह का फीसाद रहना बगैरा हरकत होती है, तब तुरन्त ही औरतें इन गोलिएं का इस्तेमाल करती हैं, दूसरी औरतों को इस के लिये सिफारस करती हैं। इसलिये यह दवा जल्दी २ विक रही है, दाम १ रु० डा० म० और घी० पी० ४ आ० ज्यादा हकीकत के लिये पहरिस्त मुस्त।

मिसिस कमलाबाई जी. एम. सी.

कालवादेवी एडे-बंबई

मनमोहनी बटिका ।

शोकीन मिज़ाज तबज्जह फरमायें। लुफ्त जवानी का उठावें ।

यह वह बीज है जिसकी तलाश में बूढ़े और जवान रातदिन लगे रहते हैं । मुल्के फ्रांस के एक तजुर्बेकार डाक्टर ने दुनियां में पैदाकर दिये हैं । आदमी कैसा ही नहीं और सुस्त कमजोर क्यों न हो, एक गोली दूध के साथ खाने से आधे घण्टे बाद वह ताकत पैदा होती है कि बूढ़े, जवानों को भांत करदे । एक बक्स एक आदमी को चौबीस मरतबे, चौबीस आदमी को एक मरतबे काफी है । फायदा न हो तो दूने दाम, इस खूबी पर फी बक्स का दाम १॥) ६० तीन बक्स एक साथ लेने से ४) ६० पारसल खरचा ।)

चन्द्रमुखीकरण ।

यह दया विलायती खुशबूदार फूलों की रुह है इसे एक विलायत के मशहूर डाक्टर ने बनाकर अभी अभी खाने किया है सात दिन बदन और चेहरे पर मलकर नहाने से स्याह रंगत भी गुलाब क फूँड की भांति सुख और सफेद मक्खन के माफिक मुलायम हो जाती है जिस में से खुशबू की प्यारी प्यारी लहरें निकलने लगती हैं । सीतला माता के दाग, आंखों और गालों के स्याह दाग, झाँझीप, भुर्राँवां, मुहासे आदि को मिटाकर ऐसी खूब सूरती आजाती है कि चेहरा चांद के माफिक चमकने लगता है । तारीफ ये है कि जो रंगत और खूब सूरती इससे पैदा होती है, हमेशा कायम रहती है क्योंकि यह वह पीडर नहीं है जिसे बाजारी औरत लगा कर घड़ी दो घड़ी को सफेद चमड़ी कर लेती हैं । अपनी प्राण प्यारी को चन्द्रमुखी बनाना है तो इसे जरूर मंगाइये । कीमत फी बोतल १॥) ६० पारसल खरचा ।-) तीन बोतल एक साथ लेने से पारसल खरचा माफ ।

खुशबूदार रमेश साबुन ।

बिना किसी तरह की तकलीफ के बालों को उड़ाकर जिल्द मुलायम और ऐसी चमकदार कर देता है, मानों बाल यहां कभी हुए ही नहीं, इसका चन्द रोज का वर्ताव रहा तो इस जगह बाल आने ही बन्द होजायेंगे तीन टिकर्यों का बक्स का दाम १॥) पारसल खरचा ।-)

पता—रमेशचन्द्र एण्ड को (ब्रांच नं० ८) स्वामीघाट मथुरा ।

स्त्रियों के लिये अत्यन्त उपयोगी अपूर्व हिन्दी पुस्तकें ।

जिनके लिये सरकार और देशी रियास्तों ने पारितोषिक दिए हैं । जिन्हें पुस्तकालयों इनामों और स्कूलों की पढ़ाई के लिए नियत किया है ।

	रु० आ० पा०		रु० आ० पा०
१-आदर्श माता	०—५—०	४-मनोहर कहानियां (सचित्र)	०—६—०
२-माता और कन्या (सजिल्द)	०—६—०	५-हिन्दी बंगला शिक्षा ...	०—१—०
३-नारी पुष्पावली...	०—४—०	६-आदर्श माता (गुरुमुखी)	०—८—०

मिलने का पता—श्रीमती देवना कुमारी चौधरी, लुधियाना सुपरिन्टेण्डेंट विक्टोरिया स्कूल, पटियाला ।

भयंकर युद्ध.

प्राचीन समय में राम और रावण का महायुद्ध, पांडव और कौरवों का महायुद्ध फिर वर्तमान यूरोपीय भयंकर संग्राम को सुनने के लिए आप अतीव उत्सुक दीखते हैं। परन्तु आप को मालूम है कि अपने शरीररणांगण में कभी २ भयानक युद्ध होता रहता है? जीवनसत्ता को हटा देने के लिये या निर्मूल-नष्ट कर देने के लिये मृत्युसत्ता के अनुयायियों का बड़ा आक्रमण होकर कई प्रदेश छिन्नभिन्न होजाते हैं और अच्छे तत्वों की स्थानभ्रष्टता होकर दुःख, दर्द और मृत्यु की जो हुकमी चलती है, आप सचेत रहें, इससे बचने का केवल एकही उपाय है कि जीवन सत्ताको टिकानेवाले अच्छे तत्वों को बलवान बनाया जावे।

शारीरिक जीवनतत्वोंको बलवान बनानेके लिये आतंकनिग्रह गोलियों का सेवन करना यह प्रथम पंक्ति का उपाय है। जिसके प्रभाव से लतावधि मनुष्यों का जीवन सुरक्षित रहा है।

आतंकनिग्रह गोलियां पाचनशक्ति को बलवान बनाती हैं और रक्त तथा वीर्य आदिकी शुद्धि करती हैं। अशक्ति को हटाकर उत्तम शक्ति का साम्राज्य जमा देती हैं। किंवदुना! आप अनुभव करें और शक्ति, सुख, दीर्घायु का लाभ प्राप्त करलें।

मूल्य—गोली ३२ की डिब्बी १ का रु० १ एक.

विशेष जानने के लिये सूचीपत्र मंगाकर देखो।

लाहौर एजन्सी—भारतवस्तु एजन्सी सुतर मंडी

यदि आप संसार सुख, संतानोत्पात्ति, आरोग्य, शरीर रत्नणादिक के मार्ग जानना चाहते हों तो हमारा—कामशास्त्र पुस्तक पढ़िये।

यह पुस्तक जो कोई मांगे—मंगावे उन्हीं को बिना मूल्य और बिना डाक खर्च के भेजा जाता है। आज ही एक कार्ड लिखकर मंगा लें।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविंदजी
जामनगर (काठियावाड़)

मनमोहनी बटिका ।

शोकीन मित्राज तबज्जह फरमायें । लुत्फ जवानों का उठायें ।

यह वह चीज है जिसकी तलाश में बूढ़े और जवान रातदिन लगे रहते हैं । मुल्के फ्रांस के एक तजुर्वेकार डाक्टर ने दुनियां में पैदा कर दिखाया है । आदमी कैसा ही नहीफ और सुस्त कमजोर क्यों न हो, एक गोली दूध के साथ खाने से आधे घन्टे बाद वह ताकत पैदा होती है कि बूढ़े, जवानों को भान्त करदे । एक बक्स एक आदमी को चौबीस मरतबे, चौबीस आदमी को एक मरतबे काफी है । फायदा न हो तो दुने दाम, इस खूबी पर फी बक्स का दाम १॥) ६० तीन बक्स एक साथ लेने से ४) ६० पारसल खरचा ।)

चन्द्रमुखीकरण ।

यह दया विलायती खुशबूदार फूलों की रुह है इसे एक बिलायत के मशहूर डाक्टर ने बनाकर अभी अभी खाने किया है सात दिन बदन और चेहरे पर मलकर न्हाने से स्याह रंगत भी गुलाब क फूल की भांति सुख और सफेद मक्खन के माफिक मुलायम हो जाती है जिस में से खुशबू की प्यारी प्यारी लहूर निकलने लगती हैं । सीतला माता के दाग, आंखों और गालों के स्याह दाग, झाई क्रीप, भुर्रायां, मुहासे आदि को मिटाकर पेसी खूब सूरती आजाती है कि चेहरा चांद के माफिक चमकने लगता है । तारीफ ये है कि जो रंगत और खूब सूरती इससे पैदा होती है, हमेशा कायम रहती है क्योंकि यह घह पोंडर नहीं है जिसे बाजारी औरत लगा कर घड़ी दो घड़ी को सफेद चमड़ी कर लेती हैं । अपनी प्राण प्यारी को चन्द्रमुखी बनाना है तो इसे जरूर मंगाइये । कीमत फी बोतल १॥) ६० पारसल खरचा ।-) तीन बोतल एक साथ लेने से पारसल खरचा माफ ।

खुशबूदार रमेश साबुन ।

बिना किसी तरह की तकलीफ के बालों को उड़ाकर जिल्द मुलायम और पेसी चमकदार कर देता है, मानों बाल यहां कभी हुए ही नहीं, इसका चन्द रोज का वर्ताव रहा तो इस जगह बाल मान ही बन्द होजायेंगे तीन टिकियों का बक्स का दाम ॥६) पारसल खरचा ।-)

पता—रमेशचन्द्र एण्ड को (ब्रांच नं० ८) स्वामीघाट मथुरा ।

स्त्रियों के लिये अत्यन्त उपयोगी अपूर्व हिन्दी पुस्तकें ।

जिनके लिये सरकार और देशी रियास्तों ने पारितोषिक दिए हैं । जिन्हें पुस्तकालयों इनामों और स्कूलों की पढ़ाई के लिए नियत किया है ।

१-आदर्श माता	६० आ० पा०	४-मनोहर कहानियां (सचित्र)	६० आ० पा०
२-माता और कन्या (सजिल्द)	०-६-०	५-हिन्दी बंगला शिक्षा ...	०-१-०
३-मारी पुष्पावली...	०-४-०	६-आदर्श माता (गुरुमुखी)	०-८-०

मिस्त्रों का पता—श्रीमती हेमन्त कुमारी चौधरी, लेडी सुपरिन्टेण्डेंट, विक्टोरिया स्कूल, पटियाला ।

भयंकर युद्ध.

प्राचीन समय में राम और रावण का महायुद्ध, पांडव और कौरवों का महायुद्ध फिर वर्तमान यूरोपीय भयंकर संग्राम को सुनने के लिए आप अतीव उत्सुक दीखते हैं। परन्तु आप को मालूम है कि अपने शरीररणांगण में कभी २ भयानक युद्ध होता रहता है? जीवनसत्ता को हटा देने के लिये या निर्मूल-नष्ट कर देने के लिये मृत्युसत्ता के अनुयायियों का बड़ा आक्रमण होकर कई प्रदेश छिन्नभिन्न होजाते हैं और अच्छे तत्वों की स्थानभ्रष्टता होकर दुःख, दर्द और मृत्यु की जो हुकमी चलती है, आप सचेत रहें, इससे बचने का केवल एकही उपाय है कि जीवन सकाको टिकानेवाले अच्छे तत्वों को बलवान बनाया जावे.

शारीरिक जीवनतत्वोंको बलवान बनानेके लिये आतंकनिग्रह गोलियाँ का सेवन करना यह प्रथम पंक्ति का उपाय है। जिसके प्रभाव से लज्जावधि मनुष्यों का जीवन सुरक्षित रहा है।

आतंकनिग्रह गोलियाँ पाचनशक्ति को बलवान बनाती हैं और रक्त तथा वीर्य आदिकी शुद्धि करती हैं। अशक्ति को हटाकर उत्तम शक्ति का साम्राज्य जमा देती हैं। किंवदुना ! आप अनुभव करें और शक्ति, सुख, दीर्घायु का लाभ प्राप्त करें।

मूल्य-गोली ३२ की डिब्बी १ का रु० १ एक.

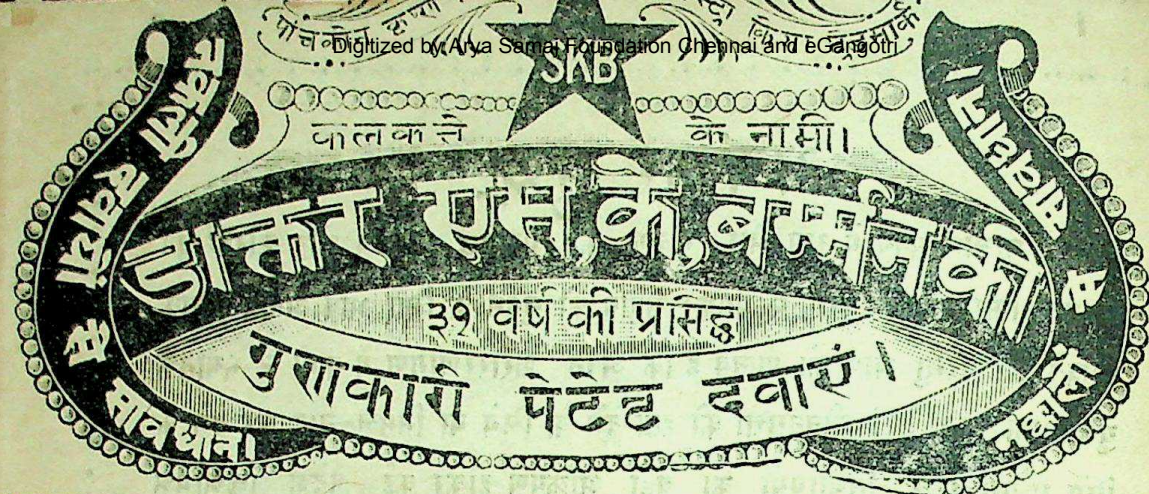
विशेष जानने के लिये सूचीपत्र मंगाकर देखो।

लाहौर एजन्सी-भारतवस्तु एजन्सी सुत्तर मंडी

यदि आप संसार सुख, संतानोत्पत्ति, आरोग्य, शरीर रक्षणादिक के मार्ग जानना चाहते हों तो हमारा-कामशास्त्र पुस्तक पढ़िये।

यह पुस्तक जो कोई मांगे-मंगावे उन्हीं को बिना मूल्य और बिना डाक खर्च के भेजा जाता है। आज ही एक कार्ड लिखकर मंगा लें।

वैद्यशास्त्री मणिशंकर गोविंदजी
जामनगर (काठियावाड़)



इस गर्मी के गोसिम में यह तीन दवाइयां आपके दुःख दर्द के सच्चे दोस्त हैं ।

पिपरमिण्ट का सत्त [फूल] ।

यह प्रायः सब कोई जानते हैं कि पेट के साधारण दर्द के लिये पिपरमिण्ट का सत्त व्ययहार होता है, परन्तु बड़ा पिपरमिण्ट के सत्त में प्रायः दूसरी चीज़ों की मिलावट रहती है, यही कारण है कि उससे उतना गुण नहीं होता ।

ग्राहकोंकी असल चीज़की चाहना देख कर डा० बर्मिन ने जापान के एक नामी कारखाने से असल चीज़ बनवाकर मंगाई है ।

मूल्य १०) छः आने शीशी डा० म० १०) पांच आने ।

डाक्टर एस. के. बर्मिन का क्लोरोडिन ।

यही अंगरेजों की प्रसिद्ध घरेलू दवा है । वाई दर्द व शूल चाहे किसी कारण से हो इस दवा के एक दो बार के सेवन से सेहत होती है । दस्त, आंवके दस्त, पेचिस मरोड़ पेटके दर्द वों पेटन के लिये क्लोरोडिन अत्यन्त गुणकारी है । डाक्टर बर्मिन ने इंग्लैण्ड के एक नामी औषधालय से यह क्लोरोडिन बनवाई है । जो कि पेटेट व अधिक मूल्य के क्लोरोडिन के सम्पूर्ण समान है । और दाम में सस्ती है । अतः प्रार्थना है, कि व्यर्थ अधिक मूल्य में "पेटेट" क्लोरोडिन न लेकर ग्राहक लोग इसे खरीदें ।

मूल्य १ शीशी १०) छः आने, दरजन ४) रुपया । डाक व्यय अलग ।

शिर दर्द व बाई की दवा ।

दर्द पलमें पहाड़ हो जाता है यह उसको पलमें पानी कर देती है । चमक, लहर अंगमें किसी प्रकार का दर्द हो मिट जावेगा आधे वा सारे शिर में कैसाही दर्द होता हो इस दवासे हट जायगा । दवाके सेवन से तत्काल ही सेहत पावेंगे ।

१२ टिकिया की एक शीशी का मूल्य १०) छः आने । डा० म० १ से ६ शीशी तक १०) पांच आने ।

हिन्दी चित्रमय जगत ।

राष्ट्र भाषा नागरी का सर्वमान्य चित्रपूर्ण मासिक पत्र ।

सम्पादक—भास्कर रामचन्द्र भाले, “काबिदास”

चार वर्ष से हिन्दी जगत की अपूर्व सेवा कर पांचवें वर्ष से नई सज धज के साथ प्रकाशित होगा । इस के महत्वपूर्ण लेख, सुप्रसिद्ध कवि-मयूरों के आलाप, विनोदी लेख, चटकीले गल्प, सरल और रोचक भाषा में लिखे हुए वैज्ञानिक एवं शास्त्रीय लेख पाठकों को चित्रवत् कर देते हैं । हिन्दी के सभी प्रसिद्ध प्रसिद्ध लेखकों एवं कवियों ने इसमें योग देने का वचन दिया है । वर्तमान हलचलों के सदा सर्वदा सचित्र वर्णन इसमें रहते हैं । इतने महत्वपूर्ण एवं चित्रपूर्ण पत्र रहने पर भी मूल्य केवल साधारण कागज़ की प्रति का ३) रुपया तथा मोटे कागज़ की प्रति का ५॥) रुपया रहा है ।

वर्ष के आरम्भ में जनवरी का खास मोटाचित्रपूर्ण अंक भी ग्राहकों को बिना मूल्य दिया जाता है । अन्यो से १) रुपया ।

५०० ग्राहक बढ़ जाने पर पृष्ठ संख्या डेढ़ी या दुगुनी कर दी जायगी ।

पता—मैनेजर—हिन्दी चित्रमय जगत, पुना सिटी ।

भारत की राजधानी

में

“हिन्दी-समाचार”

(साप्ताहिक)

अपने देश, अपनी जाति और अपनी भाषा (हिन्दी) का पक्षपाती भारत की राजधानी दिल्ली से निकलने वाला यह साप्ताहिक समाचार पत्र है । इस में अच्छे २ मुख्य लेखों, गवेषणापूर्ण निष्पन्न भाव भरी टिप्पणियों, ऐतिहासिक और साहित्य से सम्बन्ध रखने वाले विविध विषयों, उपदेश और शिक्षापूर्ण आख्यायिकाओं और उत्तमोत्तम भाव भरी रोचक कविताओं का समावेश है । साहित्य की बातों की कमी नहीं है । ताज़े ताज़े युद्ध समाचार व अन्य विविध देशी विदेशी खबरें देने का पूरा प्रबन्ध है । कागज़ और छपाई बढ़िया है । नमूना मुफ्त, वार्षिक मूल्य २॥) ६०, दीन छात्रों व धार्मिक संस्थाओं से २) मात्र । विज्ञापन देने और क्रोड़पत्र बंटवाने के लिये बड़ा सुभीता है । शीघ्र पत्रव्यवहार कीजिये ।

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ

सुधासिंधु

सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

कफ, खांसी, दमा, जाड़े का बुखार, हैजा, शूल, संप्रहणी, आंव लोह, अतिमार, पेटका
दर्द, कै का होना, जी मचलाना, हाथ पैर और कमर का दर्द, बच्चों के हरे पीले दस्त, कुकर
वांसी, दूध पटक देना आदि की स्वादिष्ट सुगन्धित दवा है। कीमत फी शीशी ॥)

२३ वर्ष का
आजमाया
हुआ

दद्रु गज केसरी

सरकार से
रजिस्ट्री किया
हुआ

बिना किसी तरह की तकलीफ या जलन के दाद को जल्द से खोने वाली दवा है
कीमत फी शीशी ॥)

हमारी दवा के प्रशंसापत्रों सहित सचित्र सुचीपत्र कलेक्टर मंगाने से सबको मुफ्त मिले।
मिलने का पता—**क्षेत्रपाल शर्मा मालिक मुख मंचारक कं. मथुरा**

साढ़ेसात रुपएमें हमारी सीनेकी कल



अधिकारी, व्यापारी,
स्त्रियां सभ्यजन सभी
इसकी प्रशंसा करते
हैं। अहमदाबाद ऑरि-
येंटल लायफ आफिस
से श्रीमती खुरशेदबाई
धनजी भाई जमशेद

जी मधेरा लिखती हैं—आपकी सीने की
मशीन बहुत संतोष दायक काम देती है।
एक और भेज दीजिए। कलका सब काम बहुत
सादा है। रुक, डिस्मिस और टेबल हुक सहित
इसका मूल्य ७॥)। पोस्टेज खर्च—॥॥)

भारती एण्ड कंपनी, बम्बई नं० ४

Fair sex—स्त्री जाति ।

केसरी का लोघ,

गमशिय के रोगोंके लिए सबसे अच्छी दानक है।

स्त्रियां के सब प्रकार के रोग जस कि मासिक
धर्म की खराबियां, ऋतुओं का दर्द से आना,
या बिल्कुल न आना, कबज लहू की कमी और
अन्य कई गुप्त रोग जिन से प्रायः नारियां पीड़ित
रहती हैं इस से झट दूर हो जाते हैं। मूल्य
बड़ी बोतल २) छोटी १॥८)

मिलने का पता—**डाक्टर के० एन० केसरी,**

“केसरी कुटीरम”

६, बन्दरस्ट्रीट, मदरास ।

सबका भित्र बह है जो दुःख में घर
और बाहिर सहायता करे । जिस को
कभी कोई पृथक् करना न चाहें, व्याधि
में, देशान्तर में, शोक में, दुःख में जो
सद्वैपधि का काम देवे ॥

कलियुग में कहते हैं सबका भित्र
नहीं मिलता है ॥

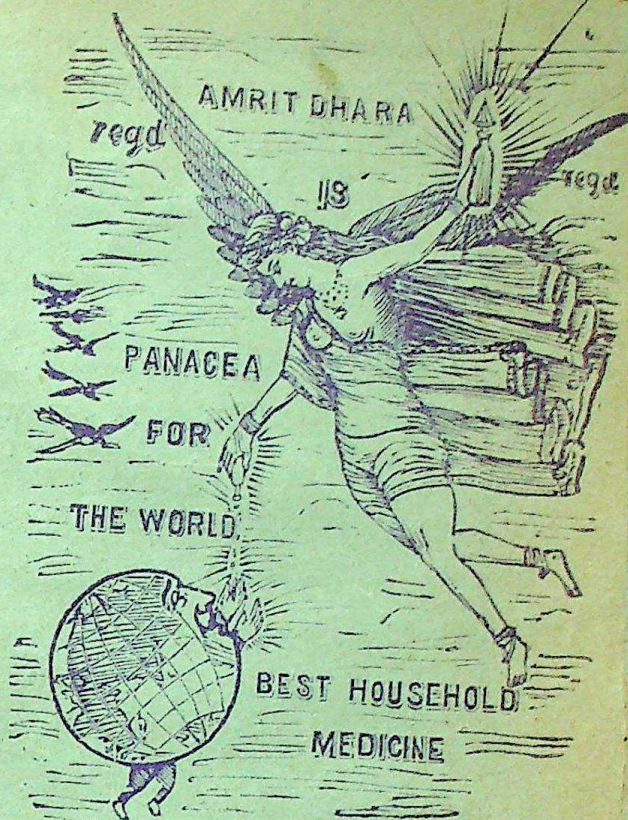
पं० ठाकुरदत्त शर्मा वैद्य, सम्पादक
उर्दू तथा हिन्दी वैद्यक पत्र देशोपकारक
की ईजाद की हुई सर्व रोगघ्न औषधि-
(राजेशर्डे "अमृतधारा" (reg.))

सच्चे भित्र का काम देती है, हम को
इस औषधि को निकाले हुए ८ वर्ष हुए
हैं, इस थोड़े काल के अन्दर लाखों स्त्री
पुरुष इस से लाभ उठा चुके हैं । लगभग

२० हजार सार्थीफिकेट हमारे पास मौजूद हैं, जिन में से कुछ 'अमृत' नाम पुस्तक में दिये हैं, जो
लिखने पर मुफ्त भेजी जाती है ॥ 'अमृतधारा' हर देश में, हर ऋतु में, हर घर में हर पुरुष की रखनी
चाहिये, न जाने किस समय कोई अचानक काट होजाय, जब यह उनको दूर करके सच्ची भित्रता
का प्रमाण देगी । अन्धम्भा है, परन्तु सर्वथा सत्य है, कि यह एकही औषधि प्रायः सर्व रोगों को
जो बूढ़ों, बालकों, जवानों, पुरुषों, तथा स्त्रियों को हाते रहते हैं, अचूक इलाज है । पशु, पक्षी
आदि के रोगोंको भी दूर करती है । इतिवास्ते जो १ बार आजमाता है, सदा के लिये भित्र बनता है ।
'अमृतधारा' सर्व प्रकार की बाह्य तथा अन्तर्गर्भ पीड़ा, जैसे शिर पीड़ा, कान दर्द, दन्त पीड़ा,
पेट शूल, गठिया, दरद, चोट आदि लगाने की पीड़ा, सर्व प्रकार के विष, जैसे-भिद, बिच्छू,
कुत्ता, सर्प, मूगा, आदि का डंक, किसी विष का खाया जाना, श्वाम, काम, जुकाम, विशूचिका
(हैजा), अरुचि, अफारा, अतिसार, संघटणी, वमन, अपस्मार, फोड़ा, फिंसी, दाद, चम्बल,
अर्श, रक्तपित्त, स्त्रीरोग, बाल रोग, वाईमोला, पीला, पेग, पाण्डु रोग, त्वच, प्रदर, सोम रोग
आदि २ रोगों को खाने या लगाने से शीघ्र नाश करती है ।

और अपूर्वता यह कि गुण तत्काल होता है-महीनों के रोग दिनों में और घण्टों के मिष्टों में नाश
कर तो आजमावे ॥ कीमत फी शीशी २॥, आधी शीशी १॥, नमूना फी छोटी शीशी ॥),

'अमृतधारा' का इस कदर नाम देख कर कई लोगों ने उन्हीं गुणों की
विज्ञापन दिये हैं, कोई मनुष्य 'अमृतधारा' के उसखे को नहीं जानता है,
निर्मित है, इस की नकल हम भी ॥) फी शीशी को बेचते हैं, इस
गौर 'अमृतधारा' के बिना कोई ऐसी औषधि न खरीदे, केवल





स्त्रियों, मर्दों और लड़कों के लिये । कामिनिआ आइल ।

(रजिस्टर्ड)

—: (*):—

बालों की शोभा बढ़ाने वाला यह एक अत्यन्त सुगंधित तेल है। गिरने वाले बालों को अटकाकर, सुन्दर, तेजस्वी गुच्छेदार, मुलायम और चमकीले बनाता है। सिर में मलते ही कामिनिआ की मधुर सुगंध से दिमागमें तरावट आने लगती है। विगड़ा हुआ मन प्रफुल्लित हो उठता है। शिरका दर्द दूर भागता है। इसलिए विद्यार्थियों, दिमाग से काम करने वालों, और अच्छे बालों वाली स्त्रियों, सभी को कामिनिआ ऑइल का नित्य व्यवहार करना चाहिये। कामिनिआ ऑइल के कई उत्तमोत्तम गुणों की परीक्षा करके मैसूर प्रदेश में उसे सोने का चान्द और कितने ही सर्टिफिकेट मिले हैं। बाज़ारी, सस्ता और हलका तेल खरीद कर अपने बाल खराब मत करो। खरीदते समय कामिनिआ आइल (रजिस्टर्ड) बराबर देखकर खरीदो।

कीमत १ शीशी रुपया १-०-० डाकमहसूल ०-५-०
२ " " रुपया २-१०-० " ०-७-०

भरपूर सुगंध से युक्त दिलपसंद । ओटो दिलवहार ।

(राजस्टर्ड)

ओटो दिलवहार को सेंट कहो या इत्र कहो क्योंकि उसमें स्फिरिट का नाम तक नहीं है। इस सेंट से रुमाल या कपड़े पर दाग नहीं पड़ता। यह सेंट कई किस्म के नये नये फूलों के अर्क से बनाया हुआ है। इस सेंट की दो या चार छूँदें कपड़े पर डालने से उसका सुगंध कई दिन तक बराबर कायम रहता है। ओटो दिलवहार का कार्ड ८) आने का टिकिट भेजने से मुफ्त मिलता है उस कार्ड के सुगंध से दिमाग तर होने के बाद ओटो दिलवहार सेंट की शीशियां मंगाइये।

दाम—छोटी शीशी ॥) आना, मझली ॥॥) आना, १ औंस की शीशी २) रुपये ।

डाक महसूल अलहदा ।

ह ३ ६ ३ ३

सोल एजेंट्स—दी ऐंगलो इण्डियन ड्रग एण्ड कमिकल कार्पोरेशन, बन्दरस्ट्रीट, मद्रास ।

भैरोप्रसाद प्रिण्टर के प्रबन्ध से पंजाब प्रिंटिंग, बन्दरस्ट्रीट, मद्रास ।

हं
लाय
म
लत ह
दिमा
मी क
मेनिअ
दर्शन
हलव
वरा

हैं है
अर्क
वराव
स का

परी,

स ।

ल ।

(रजिस्टर्ड)

सुगंधित तेल है
गुच्छेदार, मुलायम
आ की मधुर मधु
न प्रफुल्लि

करके मै

ह
आय
म

